एक अद्वितीय अविस्मरणीय अविलक्षण रचना

श्रुत मंथन महाकाव्य

रचयिता : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

एक अद्वितीय अविस्मरणीय अविलक्षण रचना

श्रुत मंथन महाकाव्य

रचयिता : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

कृति– श्रुत मंथन महाकाव्य

शुभाशीष	–	प.पू. सूरिगच्छाचार्य 108 श्री विरागसागर जी महामुनिराज
कृतिकार	–	उच्चारणाचार्य विनम्रसागर
संकलन	–	श्रमणी आर्यिका विमलश्री माताजी एवं श्रमणी संघ
प्रस्तुति	–	बा.ब्र. श्रिया शास्त्री (प्राची दीदी)
पावन प्रसंग	–	विरागोदय महामहोत्सव–2023
प्रथमावृत्ति	–	3000, पथरिया (म.प्र.) सन् 2023
प्राप्ति स्थान	–	❊ विरागोदय तीर्थ रक्षा समिति, पथरिया, दमोह (म.प्र.) ❊ धर्म प्रभावना (ट्रस्ट) न्यास, भिण्ड (म.प्र.) मो. 09826801542 ❊ समता तीर्थ धाम, सीपुर (राज.) मो. 09828613614 ❊ देवेन्द्र जैन, बीना (म.प्र.) मो. 07580223344 ❊ निर्ग्रन्थ श्रमण सेवा समिति, भिण्ड (म.प्र.) 09425127061 ❊ डॉ. हेमलता जैन धर्मपत्नि श्री संजय जैन, भारत स्टोन, खांदू कॉलोनी, बांसवाड़ा (राज.)

मुद्रक : ज्योति ग्राफिक्स, जयपुर
मो. 8290526049, 8619727900 jyotigraphics84@gmail.com

ज्ञानदान न्यौछावर राशि
1000/– मात्र

प्राक्कथन

जानिये इस ग्रंथ की रचना कैसे, कहाँ, कब और क्यों हुई

भरत क्षेत्र के भारत देश में ही विश्वज्ञातादृष्टा तीर्थंकर भगवान का आवागमन युग प्रारंभ से ही रहा है यहीं पर सभी तीर्थंकरों का जन्म और यहीं पर सभी कल्याणक होते हुए निर्वाण भी हुआ है। सम्पूर्ण विश्व में सिर्फ तीर्थंकर ही एक महापुरुष होते हैं जिनके पंचकल्याणक होते हैं और नियम से मोक्ष को प्राप्त होते हैं। तीर्थंकर की वाणी जिनवाणी और परम कल्याणी होती है उनकी वाणी में जो कुछ भी प्रतिपादित होता है वह अकाट्य सत्य होता है। आज तक ऐसी जिनवाणी परंपरागत अविचल रूप से आचार्यों के द्वारा प्रवाहित होती चली आ रही है। शास्त्रों में कहा है कि यह जिनवाणी पंचमकाल के अंत तक क्रम से आचार्य भगवन के द्वारा निरंतर प्रवाहित होती रहेगी।

परम पूज्य आचार्य कुंदकुंद भगवान के द्वारा प्रतिपादित महान ग्रंथ समयसार, प्रवचनसार, नियमसार आदि एवं अन्य-अन्य आचार्यों द्वारा कई ग्रंथ प्रकाशित किये गये हैं। आज जिनको पढ़कर संत भी श्रेष्ठ ज्ञान को प्राप्त होते हैं। श्रावक इन ग्रंथों के माध्यम से अपने कर्तव्यों का ज्ञान प्राप्त करता है और श्रमण बनने की प्रेरणा को पाकर श्रमणत्व भी प्राप्त कर लेता है। जब हमने परम पूज्य गुरुदेव के चरणों में दीक्षा धारण की तो हमने अपने गुरुदेव से एक ऐसा प्रश्न किया जो प्रश्न हर युवा संत के जीवन में उपलब्ध होता है कि आज के हीन संहनन में चलायमान मन को धर्म में निरंतर लगाने का क्या उपाय है? तब गुरुदेव ने सहज में सरलता पूर्वक जो उत्तर दिया वो हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया। गुरुदेव ने कहा हम ध्यान करेंगे तो आधा घंटे में ही हमारा ध्यान भंग हो जावेगा, स्वाध्याय करेंगे तो एक घंटे तक मन उसमें लगा रहे यही बहुत बड़ी बात है समायिक में मन एक घंटे मुश्किल से लग पाता है इतनी बड़ी जिन्दगी को संतत्वपूर्वक गुजारना कैसे संभव होगा। तो आप एक काम निरंतर करते रहें जीवन आराम से श्रमणत्व में निकल जाएगा पहला काम है जो शास्त्र गद्य में है उन्हें पद्य में रूपांतरित करिये और पद्य में जो शास्त्र हैं उन्हें गद्य में रूपांतरित करिये आपको अपना जीवन छोटा प्रतीत होने लगेगा, संयम-साधना-ज्ञान-ध्यान की अवस्था बहुत लम्बी प्रतीत होने लगेगी।

परम आराध्य गुरुदेव ने जब गद्य को पद्य में और पद्य को गद्य में करने को कहा तो हमारे अंदर जो कवित्व का लालित्य अंतस् में विराजित था वह बाहर में प्रकट होने के लिए प्रयत्नरत होने लगा और गुरुदेव की कृपा से हमारी लेखनी में काव्य रचना प्रस्फुटित होने लगी। मेरे पिता श्री बहुत अच्छे संगीतज्ञ थे उनकी आवाज में ही संगीत का माधुर्य विद्यमान था जब भी वो कोई भजन गाते थे सभी श्रावक व श्रमणगण बहुत ही ध्यान से सुनते थे उन्होंने यह संगीत मुम्बई में लक्ष्मीकांत प्यारेलाल के साथ में सीखा था उनकी प्रेरणा से हमारे कंठ में काव्यत्व का लालित्य और गीत भजन की सरगम उत्पन्न हुई। इस कारण मुझे काव्यकला में आनंद आने लगा, एक दिन हमने भिण्ड में "जीवन है पानी की बूँद" भजन सुना उसकी धुन मुझे बहुत प्रिय लगी इस कारण उस भजन की तर्ज पर हमने प्रारंभ में सन् 1999 में सैंकड़ों छंद लिखे। सन् 2001 में इस भजन को हमने अंग्रेजी में लिखा और गाया उसके साथ णमोकार महामंत्र को अंग्रेजी में प्राकृत की रिदम पर लिखकर गाया और उसका माहात्म्य भी गीत की तरह गाने वाला अंग्रेजी में लिखकर गाया जो बहुत ही सरल और अद्भुत कहा गया। इसके बाद हमने कई भजन जो आज कई आचार्य और मुनिगण गाते हैं लिखे। आज सम्पूर्ण भारत में ही नहीं विदेशों में भी वो गीत भारत के संगीतकार गाकर यशस्वी बने हुए हैं।

हमने एक ही तर्ज पर जब लगभग 3000 छंद लिख दिये तब सन् 2019–2020 में लगभग 15 माह तक कोरोना महामारी का काल चला साधुओं को भी मजबूरन एक स्थान पर एक वर्ष तक रहना पड़ा। इस एक वर्ष और कुछ माह के समय में हमने स्वयं को शास्त्रों के स्वाध्याय में लगाया और एक दिन में आठ घंटे तक स्वाध्याय करते हुए प्रत्येक गाथा पर पद्यानुवाद लिखते हुए एम.डी. जैन कॉलेज आगरा, धौलपुर, सोनागिर जी में लगभग 4500 छंदों से अधिक की रचना की। जिसमें समयसार, नियमसार, समणसुत्तं, प्रवचनसार, कार्तिकेयानुप्रेक्षा, योग प्राभृत, योगसार, तत्त्वसार, ज्ञानांकुश, भक्तामर स्तोत्र, कल्याण मंदिर स्तोत्र, सामायिक पाठ आदि–आदि और भी कई ग्रंथों पर पद्यानुवाद किया और अपने समय को पूर्ण श्रुत–सागर में डुबोकर हजारों मोतियों को एकत्र किया, वे मोती आज श्रमण व श्रावकों को बहुत ही कीमती व उपयोगी सिद्ध होंगे। जब कोई ग्रंथ की गाथा का अर्थ समझ में नहीं आयेगा तो ये पद्यानुवाद उस गाथा का अर्थ सरल भाषा में अभिव्यक्त करेगा।

आठ–आठ घंटे की निरंतर बैठक के कारण रीढ की हड्डी में L-for, S-1 की समस्या के साथ सर्वाईकल की समस्या शरीर में उत्पन्न हुई लेकिन सोनागिर में चन्द्रप्रभ भगवान की कृपा से दोनों परेशानी स्वयं ही कम हो गई। आज 7500 से भी अधिक छंद लिपिबद्ध होकर **"श्रुत मंथन महाकाव्य"** कृति के रूप में गुरुदेव के कर कमलों में समर्पित हो रही है इस पर मेरा मन बहुत ही प्रसन्न है। ये सब परम पूज्य गुरुदेव श्री विरागसागर जी महामुनिराज द्वारा दिये गये आशीष और अनुकंपा से सम्पन्न हो सका, मुझे गुरुदेव के आशीर्वाद और कृपा पर पूर्ण विश्वास ही नहीं बल्कि पूर्ण श्रद्धा है कि उनकी कृपा से सब कुछ कार्य सफल हो सकते हैं फिर चाहे भक्त की इच्छा मोक्ष पाने की ही क्यों न हो।

यह **"श्रुत मंथन महाकाव्य"** कृति परम आराध्य पूज्य गुरुदेव के आशीष से सम्पन्न हुई है, गुरुदेव की ही यह कृति है हम तो इसको सम्पन्न करने में निमित्त मात्र है। अत: यह कृति गुरुदेव के कर कमलों में श्रद्धा भक्तिपूर्वक हम समर्पित करते हुए अपने आपको बहुत ही सौभाग्यशाली समझते हैं। अंत में गुरुदेव के युगल चरणों में त्रयभक्ति युत् विनम्र नमोऽस्तु–3

उच्चारणाचार्य विनम्रसागर
विरागोदय तीर्थ, पथरिया, दमोह

वंदनीय
आचार्य परम्परा

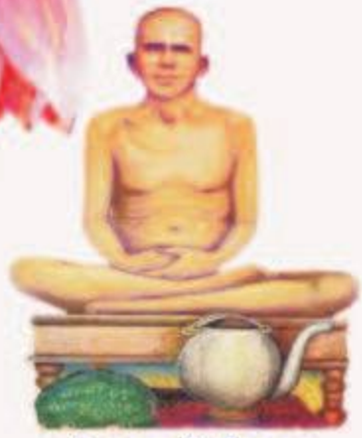

चारित्र चक्रवर्ती मुनि कुञ्जर
आचार्य श्री 108 आदिसागर जी महामुनिराज

तीर्थभक्त शिरोमणि, समाधि सम्राट
आचार्य श्री 108 महावीरकीर्ति जी महामुनिराज

वात्सल्य रत्नाकर
आचार्य श्री 108 विमलसागर जी महामुनिराज

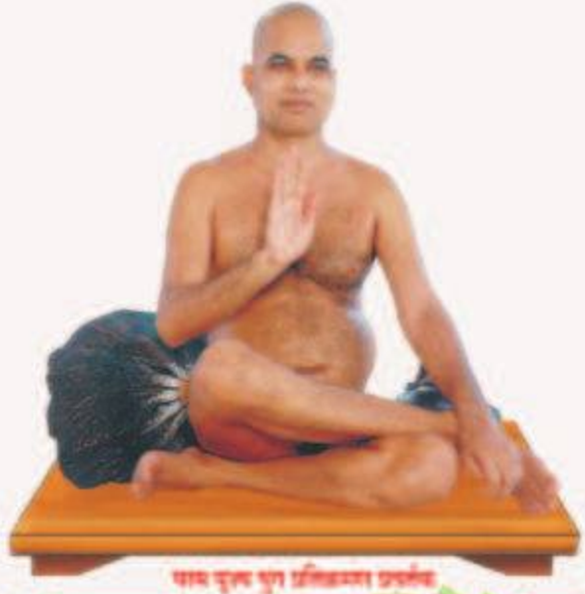

पाप दुख पुण्य प्रतिष्ठापना प्रवर्तक
मूलिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनिराज

तपस्वी सम्राट आचार्य
श्री 108 सन्मतिसागर जी महामुनिराज

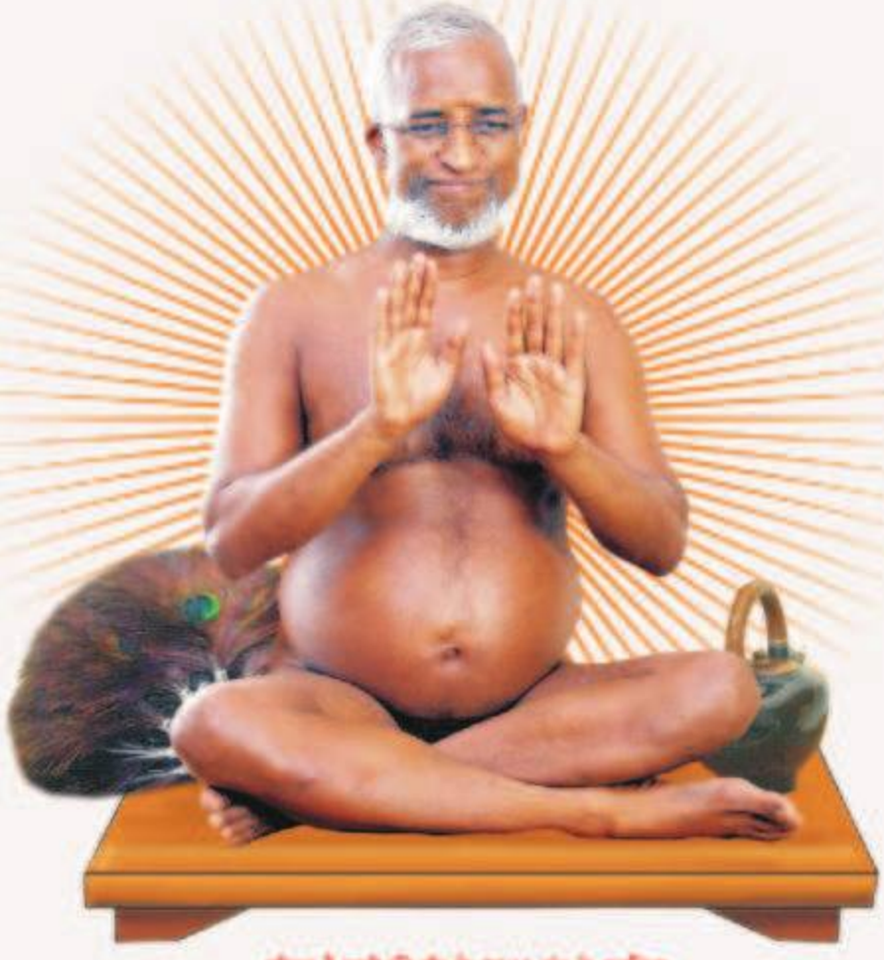

जीवन है चलती की मूंद के 7548 छंद के रचयिता

परम पूज्य भक्तामर महोदधि उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महामुनिराज

पुण्यार्जक परिवार

सवाई सिंघई विनोद–श्रीमती रंजना जैन

डॉ. विशाल–डॉ. रेशु, डॉ. वर्षा–अभिषेक, विकास–अंकिता

मा. विवान, रियाना, अबीर, अबीरा जैन

कोयला परिवार, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

पुण्यार्जक परिवार

श्री प्रदीप जैन 'आदित्य' पूर्व केन्द्रीय मंत्री
श्रीमती रीता जैन, सपरिवार, झाँसी (उ.प्र.)

श्रीमती गुणमाला जैन, श्री राजीव कुमार जैन अंजली जैन
सुहानी, राही, माही जैन, झाँसी (उ.प्र.)

श्रीमती नीलम जैन मनोज जैन (अछरोनी वाले)
शिरोमणि संरक्षक–गुरु सेवा संघ, झाँसी (उ.प्र.)

श्रीमती प्रमिला जैन धर्मपत्नि स्व. श्री सुभाषचंद जैन
पुत्र– स्व. श्री नीरज जैन पुत्रवधु–स्व.श्रीमती निर्जरा जैन (स्वीटी)
पुत्र–स्व. श्री अनुज जैन नातिन, स्व. रुही जैन नगरा झाँसी की स्मृति में
श्रीमती प्रमिला जैन श्री वीरचंद जैन की ओर से सप्रेम भेंट

परिचय के गवाक्ष में गुरुवर गणाचार्य 108 श्री विरागसागर जी महामुनिराज

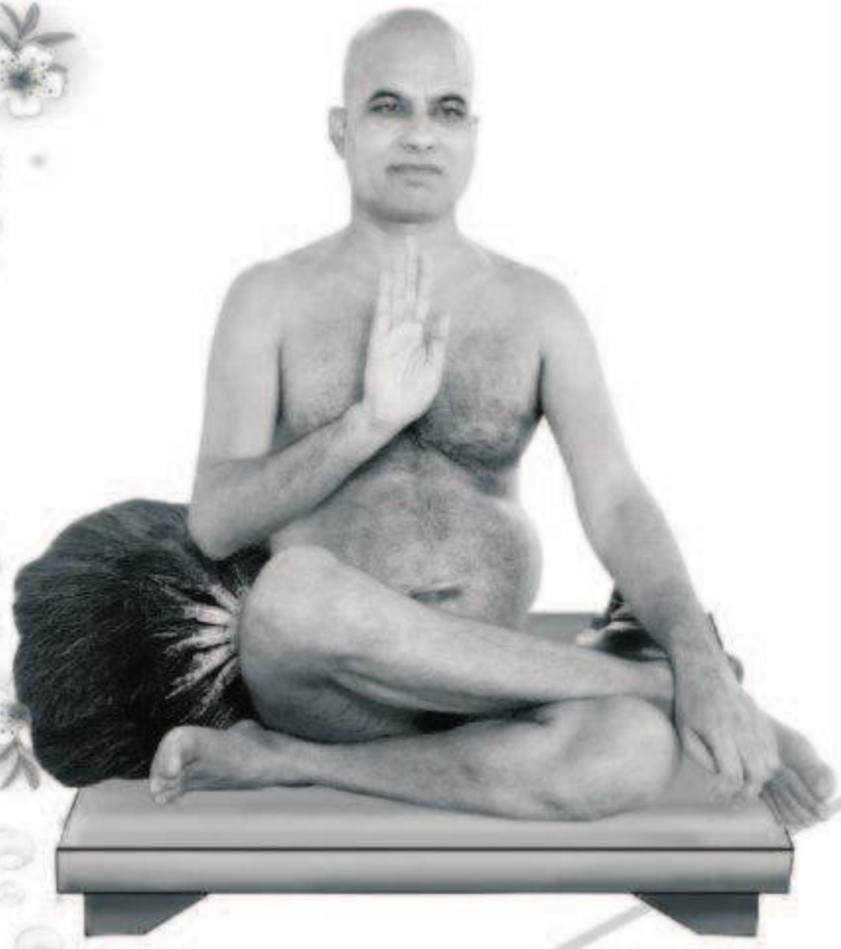

पूर्व नाम	–	अरविन्द जैन (टिन्नू)
जन्म स्थान	–	पथरिया (म.प्र.)
जन्म तिथि	–	2 मई, 1963, गुरुवार (वैशाख सुदी 9 वि.सं. 2020)
माता–पिता	–	श्रीमती श्यामादेवी जैन (समाधिस्थ आर्यिका विशांतश्री माताजी) श्रीमान् कपूरचन्द्र जी जैन (संघस्थ पू. क्षुल्लक विश्ववंद्यसागर जी)
बहिन	–	श्रीमती मीना जैन, श्रीमती विमला जैन
भाई	–	श्री विजय कुमार, श्री सुरेन्द्र कुमार, बा.ब्र. श्री नरेन्द्र भैयाजी
लौकिक शिक्षा	–	इण्टर, मध्यमा (पथरिया, श्री शांति निकेतन दि. जैन संस्कृत विद्यालय, कटनी (म.प्र.)
क्षुल्लक दीक्षा	–	20 फरवरी, 1980 (फाल्गुन शु. 5 सं. 2036 बुढार, शहडोल (म.प्र.)
नामकरण	–	पूज्य क्षुल्लक श्री 105 पूर्णसागर जी महाराज
क्षु. दीक्षा गुरु	–	प.पू. तपस्वी सम्राट आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महाराज
मुनि दीक्षा	–	9 दिसम्बर, 1983 (मगसर शु. 5, वि.सं. 2040, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
नामकरण	–	प.पू. मुनि श्री 108 विरागसागर जी महाराज
मुनि दीक्षा गुरु	–	प.पू. निमित्तज्ञानी, वात्सल्य रत्नाकर, आचार्य श्री 108 विमलसागर जी महाराज
आचार्य पद	–	8 नवम्बर, 1992 (कार्तिक शु. 13, 13 वि.सं. 2049) रविवार, द्रोणगिरि
संयम सृजन	–	आचार्य 8, गणिनी 4, मुनि 60, आर्यिका 53, ऐलक 6, क्षुल्लक 32, क्षुल्लिका 19 तथा ब्रह्मचारी भाई–बहिनें एवं कुल 182, प्रशिष्य 90
चातुर्मास	–	1980 से 2019 तक क्रमशः
साहित्य सृजन	–	बारसाणुपेक्खा ग्रंथ पर 1100 पृष्ठीय "सर्वोदया" संस्कृत टीका, 2. रयणसार ग्रंथ पर 1000 पृष्ठीय "रत्नत्रय वर्धिनी" संस्कृत टीका, 3 पाहुडद्वय (लिंग व शील पाहुड) पर "श्रमणप्रबोधिनी" संस्कृत टीका लिख रहे हैं। 4. अनेक शोधात्मक, चिन्तनीय, बालकोपयोगी कथा, अनुवाद, गद्य, संपादित साहित्य, जीवन एवं प्रवचन साहित्य 150 से अधिक पुस्तकें।
विशेष त्याग	–	कूलर, पंखा, लेपटॉप, मोबाईल, हीटर, नेलकटर सन् 1985 से, थूकने का त्याग सन् 1983 से।
पंचकल्याणक	–	लघु वृहद् मिलाकर 55
उपाधि	–	डाक्ट्रेट सहित 35 उपाधियाँ

जीवन के झरोखे से गुरुवर

परम पूज्य उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महामुनिराज

नाम	: रत्नस्वरूप जैन (नवरत्न)
पिता का नाम	: पं. श्री मेरचन्द जी जैन (समाधिस्थ मुनि 108 विश्वकीर्तिसागर जी)
माता का नाम	: श्रीमती चमेलीदेवी जैन
जन्म तिथि	: 01 अक्टूबर 1963, भिण्ड
शिक्षा	: एम.कॉम. (डिस्ट्रिक टॉप) 8 वर्ष सर्विस
ऐलक दीक्षा	: 09/08/1992, द्रोणगिरि
मुनि दीक्षा	: 08/06/2003, ललितपुर
आचार्य पदारोहण	: 12/12/2010, बाँसवाड़ा (राज.)
रुचि	: काव्य रचना, वैज्ञानिक, सैद्धान्तिक, मनोवैज्ञानिक खोज चिंतन, लेखन व गहन तर्कशालीलता
दीक्षा गुरु	: गणाचार्य श्री विरागसागर जी गुरुदेव

बचपन से ही तीक्ष्ण बुद्धि के धारक एम.कॉम की परीक्षा जिले में प्रथम स्थान विशेष योग्यता के साथ प्राप्त की। आठ वर्ष तक शिक्षक पद पर रहे, प्रोफेसर बनना तय हो गया था। ICSI और CA एवं PSC की तैयारी हो चुकी थी तभी आचार्य विरागसागर जी महाराज को पाकर वैराग्य हो गया। आपके मामाजी कलेक्टर, प्रोफेसर, जीजाजी अनुसंधान अधिकारी दिल्ली, चाचाजी बैंक मैनेजर, डॉक्टर हैं। भिण्ड जिले से लगभग 50 लोग मुनि हुए हैं उनमें सबसे ज्यादा लौकिक शिक्षा में आप ही पारंगत हुए। गुरुवर श्री में हिंदी, उर्दू, अंग्रेजी, संस्कृत, प्राकृत और ज्योतिष, हस्तरेखा आदि का ज्ञान समाविष्ट है।

आचार्य श्री ने आचार्य श्री से धवल जी, जयधवल जी, महाधवल जी, सिद्धांत, आगम-अध्यात्म, न्याय, नय, संस्कृत व प्राकृत व्याकरण एवं चारों अनुयोगों का विशेष अध्ययन किया है। शब्द विज्ञान के धनी व काव्य रचना में महाकवि हैं, जिन्होंने "जीवन है पानी की बूँद" पर 7500 छंद लिखे हैं जो सारे भारत में गूँज रहे हैं, "कितना प्यारा तेरा दुआरा", "धीरे-धीरे चलो जी मंदिर", "चेतन पिंजरे वाली ना", "कर ले आतम ध्यान बाबा", "मेरा जीवन कोरा कागज" एवं कई देश भक्ति के गीतों को धर्ममय बना दिया। आचार्यश्री ने लगभग 1000 कविताएँ, 500 भजन, 350 गजलें (उर्दू में) 2000 मुक्तक, 1500 पहेलियाँ, 2000 Engligh Quotation लिखे हैं तथा भक्तामर स्तोत्र को दस तरह से एवं कई स्तोत्रों का पद्यानुवाद करके अपने चिंतनों की पराकाष्ठा, विलक्षण काव्यशैली और अध्यात्म की उच्चतम संवेदना की अभिव्यक्ति का परिचय दिया है एवं अंग्रेजी में आचार्य कुंदकुंद वारस अणुवेक्खा पर राष्ट्रसंत गणाचार्य श्री विरागसागर जी द्वारा लिखित सर्वोदया टीका का अंग्रेजी में अनुवाद करके अपनी विलक्षण प्रतिभा को प्रदर्शित किया है वहीं स्वयं के द्वारा प्राकृत भाषा में सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका चौंतीस स्थान दर्शन का सृजन करके जैन वाङ्मय का वर्धित किया है।

लगभग 40 पुस्तकों की रचना करके जन-जन को कई तरीकों से धर्मज्ञान को सामने रखा है। English में Philosophy of Karma, Moral Science for children Part I,II,III, What is truth, Know your future एवं What is Life ये पुस्तकें आज की युवा पीढ़ी के लिये उपयोगी सिद्ध हैं। णमोकार महामंत्र व उसकी महिमा को अंग्रेजी में इस ढंग से सरल भाषा में लिखा है जिसे णमोकार मंत्र की तरह गा भी सकते हैं और अर्थ भी बहुत सरल है। ऐसा णमोकार मंत्र जैन जगत में पहली बार लिखा गया है।

आचार्य श्री तेरापंथ और बीसपंथ के विवादित झंझटों से दूर सिर्फ निर्ग्रन्थता के पोषक हैं। प्रवचन शैली सबसे निराली, आवाज में गीत-संगीत है, सिद्धांत और आध्यात्मिक बात को न्यायिक ढंग से स्पष्ट करने में माहिर, कभी भी विरोधाभास-आलोचनात्मक वचनों को नहीं बोलना, सरलता-सौम्यता, विद्वत्ता, विनम्रता से युक्त आगमानुकूल चर्या एवं सभी रूढ़िवादिताओं व हठाग्रह से दूर, तर्क में ओशो से भी गंभीर तेज और इतना होते हुए भी महाकवि-हर छंद पर कविताएँ, गजल एवं भजनादि लिखने व गाने की क्षमतायें सभी एक साथ एक व्यक्ति में होना आश्चर्य ही नहीं बहुत बड़ा चमत्कार है।

ऐसे सूरज, चाँद की तरह ज्योतिर्मय गुरुवर उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महामुनिराज के चरणों में श्रद्धा सहित विनम्र नमोऽस्तु-नमोऽस्तु-नमोऽस्तु।

वर्षायोग समिति-2018, भिण्ड

परमार्थ यात्रा दर्पण

मुनि श्री विरागसागर जी जब भिण्ड नगर में चातुर्मास रत थे, तब उनके दर्शन कर वैराग्य, निस्पृहता एवं चुम्बकीय व्यक्तित्व से आकर्षित हो हम उग्र वैरागी के दर्शन कर मन में वैराग्य के अंकुर फूट पड़े।

ब्रह्मचर्य व्रत – जनवरी 1988 में आचार्य विशुद्धसागर जी के साथ आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लावन गाँव में ग्रहण किया।

सप्तम प्रतिमा – जून 1991 में पन्ना में पूज्य गुरुदेव से सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण किए।

दशम् प्रतिमा – 21 नवम्बर 1991 को श्रेयांसगिरि अतिशय क्षेत्र पर दशम प्रतिमा के व्रत धारण कर वर्णीजी कहलाए।

ऐलक दीक्षा– वैराग्य अँगड़ाइयाँ लेने लगा और कर दिया गुरु चरणों में स्वयं को समर्पित, गुरुदेव ने भी भव्यात्मा जानकर श्रावण शुक्ला एकादशी, वीर संवत् 2048 को 9 अगस्त, 1992 द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्र पर ऐलक दीक्षा प्रदान की और नाम पाया ''ऐलक विनम्रसागर जी''।

मुनि दीक्षा – 11 वर्ष ऐलक अवस्था में रहकर आत्म साधक ने महती धर्म प्रभावना करते सहस्रो स्वाध्यायी व भक्त पुजारी तैयार किए हुए ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी संवत् 2060, 8 जून 2003 को ललितपुर के तुवन मैदान में 50,000 के विशाल जनसमूह की साक्षी में 21 दीक्षार्थियों में प्रथम मुनि पद पाया और नाम पाया ''मुनि श्री विनम्रसागर जी''।

आचार्य पद घोषित– मुनि धर्म का पालन करते हुए अपनी चर्या से भव्य जीवों को मोक्षमार्गी बनने की प्रेरणा दी तब आचार्य भगवन् गुरुवर श्री विरागसागर जी ने 13 फरवरी 2005 को कुन्थुगिरि में गणधराचार्य श्री कुन्थुसागर जी सहित 14 आचार्य 200 पिच्छियों के मध्य आचार्य पद घोषित किया।

आचार्य पद संस्कार – मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी संवत् 2067 रविवार, 12 दिसम्बर 2010 को बाँसवाड़ा (राजस्थान) में स्वगुरु आचार्य श्री विरागसागर जी के वरदहस्त द्वारा आचार्य पद संस्कार किए गये और नाम पाया ''आचार्य विनम्रसागर जी''।

तीर्थ यात्रा

गौरवमयी गिरनार यात्रा– आचार्य पदारोहण के पश्चात् पूज्य गुरुवर का आशीर्वाद लेकर सिद्धक्षेत्र गिरनार की यात्रा की।

ऐतिहासिक सम्मेदशिखर यात्रा– पंच आर्यिका दीक्षा देकर 11–12–2013 को अतिशय क्षेत्र सीपुर से 13 पिच्छियों के साथ (13 साधुओं) को लेकर ऐतिहासिक सम्मेदशिखर की यात्रा पर पहुँचे वहाँ विभिन्न संघों के 25 साधुओं सहित 1515 वंदना कर एक कीर्तिमान स्थापित किया। यात्रा में 108 शांति विधान हुए एवं प्रत्येक टोंक पर विधान व संघ के साधुओं ने 108–108 परिक्रमा की पश्चात् पंच पहाड़ी की यात्रा की।

संयम सृजन – बाँसवाड़ा 2011 में तीन दीक्षाएँ मुनि, ऐलक, क्षुल्लक 4–12–2011 को प्रदान की।

बाँसवाड़ा 13–8–2013 को पंच आर्यिका दीक्षाएँ प्रदान की।

बाँसवाड़ा 2013 में 2 क्षुल्लिका दीक्षाएँ प्रदान की।

सम्मेद शिखर 03–02–2015 को दो मुनि दीक्षा प्रदान की।

फिरोजाबाद 2016 में दो क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान की।

ग्वालियर 1–10–2017 को छह दीक्षाएँ प्रदान की। 1 मुनि, 1 ऐलक, 2 आर्यिका, 1 क्षुल्लक, 1 क्षुल्लिका।

सोनागिर 2018 को 1 मुनि दीक्षा।

भिण्ड 14–8–2018 को एक क्षुल्लिका दीक्षा।

अलवर 2019 को 1 मुनि, 2 ऐलक, 1 क्षुल्लिका दीक्षा।

सोनागिर 2022 को 2 मुनि, 1 आर्यिका, 1 क्षुल्लिका दीक्षा।

सल्लेखना समाधि

क्षुल्लक विश्वबुद्धसागर	गुना (म.प्र.)	1997
मुनि विश्वकीर्तिकसागर	बीना (म.प्र.)	2002
आर्यिका विदेहश्री	बाँसवाड़ा (राज.)	2013
क्षुल्लिका दिव्यश्री	बाँसवाड़ा (राज.)	2013
क्षुल्लक विजितेन्द्रसागर	झुमरी तलैया (बिहार)	2014
क्षुल्लक विश्वजयसागर	हस्तिनापुर	2016
आर्यिका विकुलश्री	ग्वालियर	2017
मुनि विश्वशांतसागर	सोनागिर (म.प्र.)	2018
क्षुल्लिका वियोगिनीश्री	भिण्ड (म.प्र.)	2018
आर्यिका विश्वश्री	अलवर (राज.)	2019
क्षुल्लिका श्री विश्रांति श्री	अलवर (राज.)	2019

आर्यिका विश्वश्री माताजी की अलवर में समाधि कराते हुए गुरुदेव

आराधक से आराध्य बनने का उपक्रम, आनन्दोत्सव
ऐतिहासिक श्रीमज्जिनेन्द्र पूजन प्रशिक्षण शिविर

1994	सागर	2000	चंदेरी	2010	पारसोला
1995	टीकमगढ़	2000	बामौर कला	2011	बाँसवाड़ा
1995	देवरी	2001	अम्बाह	2012	लोहारिया
1996	भोपाल	2002	बीना	2013	तलवाड़ा
1997	गुना	2003	चंदेरी	2015	आगरा
1998	आरौन	2004	केकड़ी	2016	फिरोजाबाद
1998	बबीना	2005	भीलवाड़ा	2016	इटावा
1999	ललितपुर	2006	अजमेर	2018	भिण्ड
1999	खानियाँधाना	2007	निवाई	2019	अलवर (राज.)
2000	टीकमगढ़	2008	देवली	2021	अम्बाह
2000	महरौनी	2009	उदयपुर	2021	धौलपुर

संस्कार यात्रा दर्पण

पंचकल्याणक व वेदी प्रतिष्ठा

1998	पावागिर सिद्धक्षेत्र	2013	कोहाला, बाँसवाड़ा	2016	उदी (भिण्ड)
1994	सागर मंगलागिरि	2006	भीलवाड़ा	2017	झाँसी
2004	देवपुरा, बूँदी	2014	गोहद, भिण्ड	2017	सोनागिर
2005	बड़गाँव, अजमेर	2006	नसीराबाद	2018	भिण्ड
2012	वीरपुरा, उदयपुर	2015	सम्मेदशिखर		
2000	गिरार जी अतिशय क्षेत्र	2017	इटावा		

अद्भुत ऋद्धि, सिद्धि महामृत्युञ्जयी भक्तामर प्रशिक्षण शिविर

1994	बीना	2004	केकड़ी	2016	अलवर
1994	सागर	2005	भीलवाड़ा	2016	फिरोजाबाद
1995	टीकमगढ़	2006	अजमेर	2016	फिरोजाबाद में 48 दिन भक्तामर विधान
1996	भोपाल	2007	निवाई	2017	झाँसी
1996	बंड़ा	2008	देवली	2017	ग्वालियर
1997	गुना	2009	उदयपुर	2017	ग्वालियर में 48 दिन भक्तामर विधान
1998	बबीना, आरौन	2010	पारसोला	2018	भिण्ड में 48 दिन भक्तामर विधान
1999	ललितपुर	2011	बाँसवाड़ा	2019	अलवर में 48 दिन भक्तामर विधान
2000	टीकमगढ़	2012	सीपुर में 48 दिन भक्तामर विधान	2019	गोरमी
2001	अम्बाह	2013	बाँसवाड़ा	2020	राजाखेड़ा
2002	बीना	2015	इटावा	2020	आगरा
2003	चंदेरी	2015	आगरा	2021	मुरैना
				2021	अम्बाह

साहित्य यात्रा दर्पण

काव्य

- बहुचर्चित भजन – "जीवन है पानी की बूँद" जिसके 3500 से अधिक छन्द देशभर में गूँज रहे।
- बहुचर्चित भजन – "मेरा जीवन कोरा कागज"
- बहुचर्चित भजन – चेतन पिंजरे वाली मा
- बहुचर्चित भजन – "कितना प्यारा तेरा दुआरा"
- बहुचर्चित भजन – धीरे-धीरे चलो जी मंदिर
- बहुचर्चित भजन – कल भी तू अकेला था

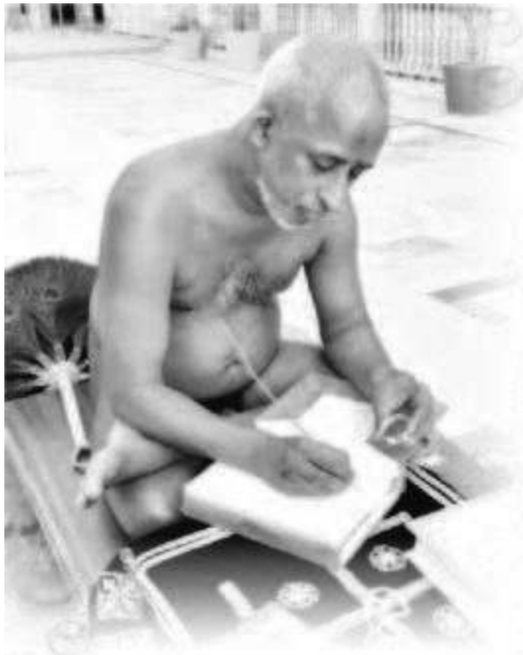

बहुचर्चित पुस्तक सचित्र भक्तामर स्तोत्र एवं सचित्र कल्याण मन्दिर स्तोत्र

1. सचित्र भक्तामर स्तोत्र
2. सचित्र कल्याण मंदिर स्तोत्र
3. श्रुत मंथन महाकाव्य (जीवन है पानी की बूंद पर आधारित)
4. भक्ति प्रबोधिनी टीका (संस्कृत)
5. कल्याण प्रबोधिनी टीका (संस्कृत)
6. सर्वोदयी टीका (अंग्रेजी) भाग-1-2
7. सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका (प्राकृत)
8. भक्तामर महामंडल विधान (वृहद्)
9. कल्याण मंदिर महामण्डल विधान (वृहद्)
10. श्री जिन सहस्रनाम महामण्डल विधान (वृहद्)
11. सिद्धान्त दिग्दर्शिका
12. उच्चारणाचार्य चरित्र
13. होनी अनहोनी
14. जीवन है पानी की बूंद
15. बूंद-बूंद में सागर
16. अंतस् का पराग
17. समंदर की लहरें
18. भक्ति की छलक
19. आस्था के स्वर
20. भक्तामर स्तोत्र
21. तन्मयता की वेला
22. श्रावक ज्ञान मंजरी
23. कल्याण मंदिर स्तोत्र
24. सामायिक पाठ
25. विराग सुमन
26. विराग वंदना (विराग शतक)
27. रत्नत्रय विधान
28. शांतिनाथ विधान
29. भक्तामर विधान
30. खजाने के मोती
31. तासीर के मंजर
32. गा लो गुरु गुणगान
33. गुनगुनाता संदेश
34. अनुभूतियों के भँवर
35. गजब की लाइनें
36. असरदार लाइनें
37. जिनसहस्रनाम स्तोत्र
38. Philosophy of Karma
39. Moral Science for Children-I
40. Moral Science for Children-II
41. Moral Science for Children-III
42. English Quotation
43. What is Truth
44. Know your future
45. What is Life
46. Moral Science (The Complete Book of Jainism for children)
47. ऐसा क्यों? भाग-1
48. जिन्दगी क्या है?
49. सच क्या है?
50. स्वर्ग यहां नरक यहां
51. जब मिल जायें रे
52. हकीकत का पैगाम
53. जमाने का सच
54. अपना भविष्य जानो
55. जानिए सम्यक् दीपावली
56. दैनिक कर्त्तव्य
57. बोलती कविताएं
58. सच्ची बात-1
59. सच्ची बात-2
60. सच्ची बात-3
61. मेरी पहेली का जवाब दो-1
62. मेरी पहेली का जवाब दो-2
63. तत्त्वार्थ सूत्र (प्राकृत,संस्कृत,अंग्रेजी,हिन्दी भाषा में अर्थ सहित)
64. गुरु महिमा (गुरु पूजन)
65. सम्मेद शिखर वंदना
66. छहढाला प्रश्नोत्तरी
67. प्रतिक्रमण हिंदी (श्रमण व श्रावक)
68. भक्तामर अखण्ड पाठ
69. ऐसा क्यों?-2
70. ऐसा ही है
71. चंबल के चंदन (काव्यमय जीवनगाथा)
72. आचार्य परमेष्ठी विधान (हिंदी, बुंदेली)
73. Philosophy of Soul जीव विज्ञान
74. सर्वोदया टीका (English)
75. श्रुत मंथन महाकाव्य

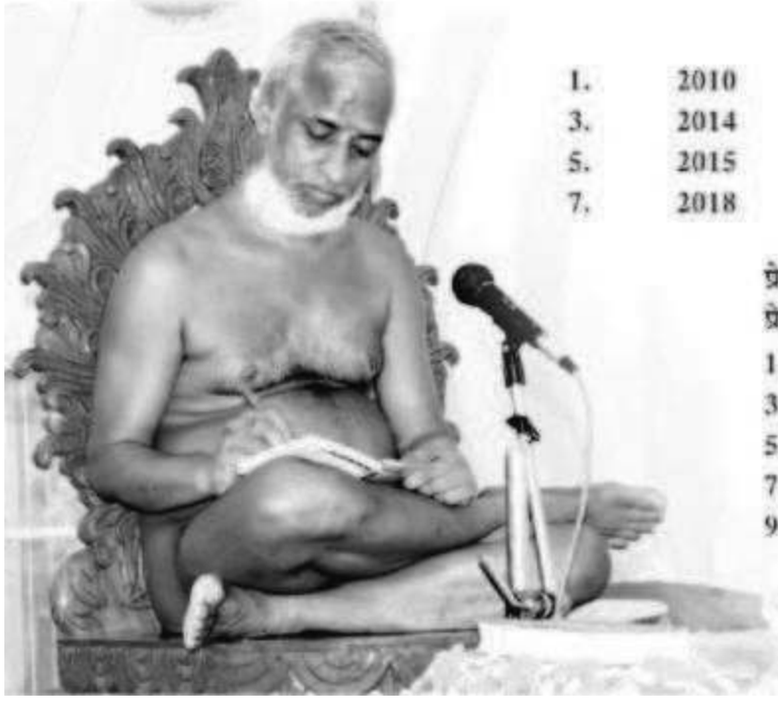

विद्वत संगोष्ठी

1.	2010	पारसोला	पूजन	2.	2013	बाँसवाड़ा	पूजन
3.	2014	सम्मेद शिखर	समयसार	4.	2014	सम्मेद शिखर	पुरुषार्थ सिद्धिउपाय
5.	2015	आगरा	कर्मकाण्ड	6.	2016	फिरोजाबाद	कर्मकाण्ड
7.	2018	भिण्ड	कर्मकाण्ड	8.	2019	अलवर	जीवकाण्ड

प्रेरणा से प्रकाशन-विरागाभिनंदन

प्रेरणा से स्थापन-

1.	भक्तामर स्तोत्र	11 पद्यानुवाद
3.	सामायिक पाठ	2 पद्यानुवाद
5.	एकीभाव स्तोत्र	2 पद्यानुवाद
7.	महावीराष्टक स्तोत्र	2 पद्यानुवाद
9.	इष्टोपदेश	

स्मारिका-जन्मभूमि महोत्सव, 2018

पद्यानुवाद

2.	कल्याण मंदिर	4 पद्यानुवाद
4.	महावीराष्टक	2 पद्यानुवाद
6.	लघु स्वयंभू स्तोत्र	2 पद्यानुवाद
8.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	1 पद्यानुवाद
10	अन्य कई पद्यानुवाद श्रुत मंथन महाकाव्य में	

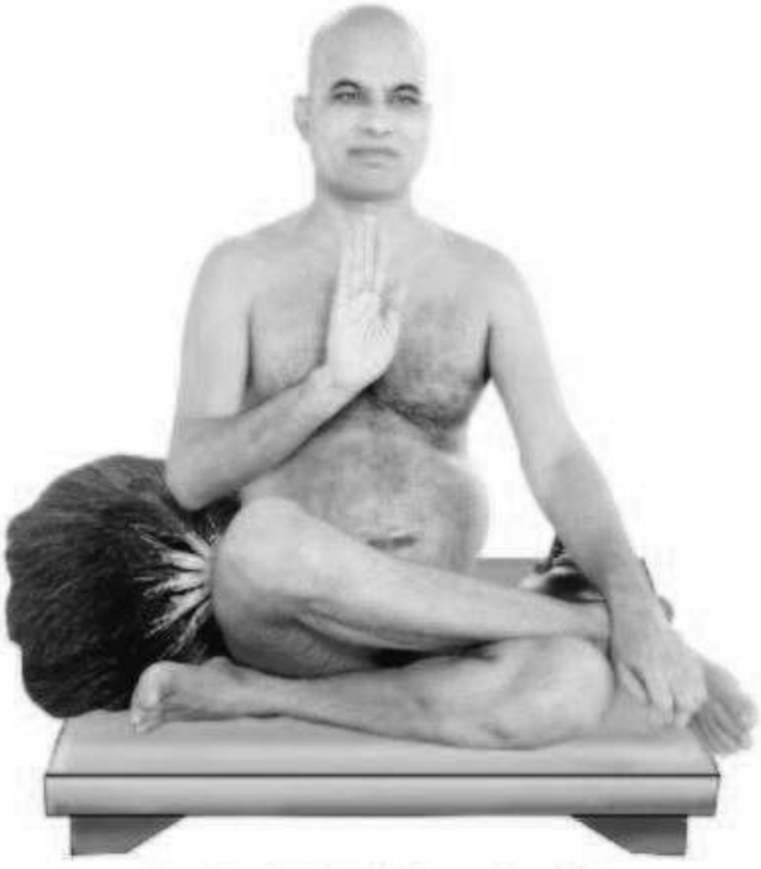

परम पूज्य युग प्रतिक्रमण प्रवर्तक
गणाचार्य 108 श्री विरागसागर जी महामुनिराज

ॐ

चिरकालीन प्रवाहरूप से प्रवाहमान
अर्हन्मोपदेश है। श्रवणीय तथा श्रावणीय
होने से, सम्पूर्ण श्रेयस्कर में "श्रुत"
नाम से बड़े आदर से, साथ उच्चारणीय
व प्रतिष्ठित को प्राप्त होता रहा है।
पूर्वाचार्यों की इसमें महती कृपा रही
कि उन्होंने उसे लिपिबद्ध कर के
'आगम' 'शास्त्र' 'सूत्र' आदि संज्ञाएँ
देकर समस्त जगत् का महान उपकार
किया है। निःसंदेह अनेकों आचार्यों
ने अपनी अपनी देशीय भाषाओं में
गद्य-पद्य रूप से निबद्ध कर भी
श्रुति को सुसंबद्ध किया है।
ऐसे ही हमारे सुधीगण
श्रमणाचार्य श्री चैतन्य सागर जी ने
गहन मनन-चिन्तन कर केवल एक ही
छंद में "जीवन है पानी की बूंद" में
सर्वाधिक ज्ञान हेतु निर्बलों को जन
मानस को समझाने का एक अनुपम
प्रशंसनीय प्रयास किया है। निश्चित
ही इसकी यह कृति जन-जन के मुखों से
गुंजती रहेगी।
मेरा इन्हें तथा उनके सब कार्य के लिए
शुभाशीष।
नमः
7/1/41/2549 पंचमी

।। णमो जिणाणं ।।

श्रुत मंथन महाकाव्य के रचयिता 108 विनम्रसागर जी को प्रति नमोऽस्तु!!!

आपने चारों अनुयोग के अध्ययन करते हुए अपने चित्त को चिंतन-मनन के माध्यम से सार-सार का मंथन कर अपने निजी ज्ञान का क्षयोपशम के बल पर श्रावक एवं श्रमण के लिए 7500 छंदों की सरल वाणी से रचना कर संयत-तप-त्याग-मोक्षमार्ग प्रशस्त किया। ये छंद सभी श्रावक-श्रमण के लिए उपयोगी रहेगा। ''तमसो माँ ज्योतिर्गमय'' अज्ञान अंधेरा-मिथ्यात्व दूर करने हेतु ज्ञान के प्रकाश से आलोकित करेगा ये 7500 छंद।

विनम्रसागर जी ने ये छंदों की रचना जिस तरह से मंथन करने वाली महिला दूध से दही, दही के मंथन करके मक्खन और मक्खन से घी सार रूप निकालती है वैसे ही महाराज जी ने चारो अनुयोग के अध्ययनरूपी दूध से चिंतन रूपी दही और उस चिंतन रूपी दही को विशेष मंथन करके ध्यान रूपी मक्खन से सार-सार छंदों रूपी घी को प्राप्त किया। जिस तरह घी शरीर के पुष्टी के लिये जरूरी है वैसे ही ये छंद रूपी घी आत्म गुणों की पुष्टि के लिये बहुत जरूरी है।

कहते हैं-

बनती है भूमिका प्रथमानुयोग से,
आती है योग्यता चरणानुयोग से
पकती है पात्रता करणानुयोग से,
तब झलकती है आत्मा द्रव्यानुयोग से।

''छंदों की आराधना-करो साधना''

विनम्रसागर जी द्वारा ये ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' अभियान उनके लिये भी एवं सबके लिए ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम हेतु कार्यकारी बने। आप सब अधिक से अधिक इसका उपयोग करें।

मेरा मंगल शुभशीर्वाद!प्रति नमोस्तु!!!

स्थविराचार्य संभवसागर
त्रियोग आश्रम
श्री सम्मेद शिखर जी

।। णमो आयरियाणं ।।

।। मंगल भावना

तीर्थंकरों की वाणी को प्रवाहित करने वाले गणधरों एवं परम्परा से प्रसारित करने वाले पूर्वाचार्यों ने अपने ज्ञान और अनुभव को प्राकृत-संस्कृत गाथाओं के माध्यम से अनेक ग्रंथों की रचना की है। सम्प्रति काल में संस्कृत व प्राकृत भाषा से लोग अनभिज्ञ होते जा रहे हैं। ऐसे समय में पूर्वाचार्यों की वाणी को जन-जन तक पहुँचाना सहज कार्य नहीं है फिर भी कहते हैं कि साधुओं के लिये कोई भी कार्य दुरूह नहीं होता है। इसी को चरितार्थ करते हुए इक्कीसवीं सदी के प्रथमाचार्य श्री आदिसागर अंकलीकर परम्परा के पर ओजस्वी संत गणाचार्य 108 श्री विरागसागर जी महाराज के परम सुयोग्य शिष्य उच्चारणाचार्य 108 श्री विनम्रसागर जी महाराज जो भक्तामर वाले बाबा के रूप में जगद् विख्यात हैं उनसे रूबरू होने का अवसर प्राप्त तो नहीं हुआ किंतु आते-जाते भक्तों द्वारा उनकी विनम्रता, सरलता व गुरु भक्ति के बारे में सुना है। उन्होंने ''जीवन है पानी की बूँद'' भजन को ऊँचाइयाँ देकर उसके ऊपर ग्रंथों, पद्यानुवाद कर लगभग 7500 छंदों की रचना कर जैन वाङ्मय को अर्द्धत्व प्रदान किया है। उनके इस अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य, उनके काव्य रसिकता एवं ज्ञान की अनुमोदता करते हैं। आपकी यह अनुपम रचना कालजयी बने और आपका जीवन यशस्वी बने।

आपका यह महाकाव्य भव्य जीवों के कल्याणकारी बने इन्हीं शुभकामनाओं व आशीर्वाद के साथ -प्रति नमोऽस्तु

आ. कुंथुसागर
कुंथुगिरि

।। णमो आयरियाणं ।।

भगवान महावीर प्रभु की निर्ग्रन्थ परम्परा की सारस्वती उत्तरावली में अनेक काव्यकला के ज्ञाता हुये हैं। उन्हीं काव्य सम्राटों में मुनि कुंजर आचार्य श्री आदिसागर जी महाराज अंकलीकर की परम्परा के तपोधन आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज के शिष्योत्तम कवि हृदय उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी द्वारा रचित ''जीवन है पानी की बूँद'' व अनेक भजन जन-जन के जुबान पर थिरकते हैं।

आज इस भजन ने ''महाकाव्य'' का रूप धारण कर लिया है जो अब ''श्रुतमंथन महाकाव्य'' के रूप में प्रस्तुत होने जा रहा है जिसमें लगभग 7500 छंद हैं। इस काव्य में आ. कुन्दकुन्द देव सा अध्यात्म; समन्तभद्र सा तर्कवाद, अकलंक देव सा न्याय परिलक्षित होता है।

उनकी इस अनुपम कृति की अनुमोदना करते हैं। यह कृति निश्चित ही काव्य रसिकों की प्रिय बनेगी। कविराज की कृति एवं स्वयं कविराज का यश दशों दिशाओं में फैले मंगल भावना के साथ प्रति नमोऽस्तु

आचार्य कनकनन्दी

।। णमो जिणाणं ।।

हे श्रमण संस्कृति के यशस्वी संत! भक्तामर विभूति! काव्यात्मा! श्रुतोन्नायक! उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर महाकवि।

आपका स्मरण आचार्य मानतुंग का दर्शन कराता है। आपके सम्मुख अब तक नहीं हुआ हूँ। आशा है अतिशीघ्र यह पिपासा पूर्ण होगी।

आपकी काव्य लेखनी से नि:सृत यह विलक्षण रचना ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' जन-जन की हितकारी बनेगी।

अत्यन्त शुभासंशाओं के साथ उच्चारणाचार्य विनम्रसागर जी व उनकी कृति को शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

आपकी इस कृति के अवलोकन की आशा में

आचार्य गुणधर नन्दी
नवग्रह तीर्थ

।। मंगल कामना ।।

भगवान महावीर स्वामी की निर्ग्रंथ श्रमण परम्परा के सशस्क्त हस्ताक्षर सप्तोपवासी मुनिकुंजर आचार्य श्री आदिसागर जी महाराज अंकलीकर की परम्परा के गौरव आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज के प्रमुख्र शिष्य कवि हृदय, सिद्धांतविद श्रमणाचार्य उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी मुनिराज के अनेक गीत-भजन जन-जन की जबान पर चढ़े हुए हैं।

उनके पूजन प्रशिक्षण शिविर तथा भक्तामर शिविर युवाओं के आकर्षण के केन्द्र हैं। वे मनस्वी साधक के साथ यशस्वी मनोज्ञ साहित्यकार-प्रवचनकार भी हैं।

उनकी नवीनतम कृति ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' निश्चित ही श्रुत के नवनीत को जन-मन का प्रेय बनाएंगी। कविराज के मंगलमय जीवन की हार्दिक मनोकामना।

-आचार्य सुनील सागर
शीतकालीन वाचना, सांगानेर, जयपुर

भारत वर्ष की पावन वसुन्धरा अनेकों साधु संतों से पवित्र बनी हुई है। आज भी इस धरा पर महापुरुषों, महात्माओं के द्वारा अध्यात्म एवं ज्ञान की गंगा सदा बहती रहती है। भारत देश ने आध्यात्मिक गुरु के रूप में समस्त विश्व को मानव जाति को सदाकाल से अहिंसा, सत्य, अनेकान्त, अपरिग्रह, विश्व एकता जैसे सार्वभौमिक सिद्धान्तों का उपदेश देकर सबको कल्याण का मार्ग बताया।

यही अनमोल कार्य आचार्य श्री विनम्रसागर जी ने किया है। ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' के रूप में अनेक ग्रंथों की गाथाओं, काव्यों, श्लोकों, छंदों को अपने ज्ञान रूपी बूँदों से अपनी सरल, सुबोध शैली में जैन वाङ्मय को 7500 छंदों में लिपिबद्ध कर जन-जन के लिये उपयोगी बनाया है।

चिरकाल से प्यासे चातक को स्वाति नक्षत्र में गिरा मेघ जल ही सन्तुष्ट कर सकता है, नदी, कुआँ, बावड़ी, तालाब का जल नहीं। कमलों को खिलने में रवि किरणें ही समर्थ हो सकती हैं, चन्द्रमा की शीतल किरणें नहीं, स्वाति नक्षत्र में मेघ से गिरने वाली जल बिन्दु ही मोती बन सकती है, अन्य नक्षत्रों में गिरने वाली बिन्दु नहीं। इसी प्रकार ''श्रुतमंथन महाकाव्य' भव्य जीवों को सदाचार, संस्कार, सभ्यता, ज्ञानार्जन के द्वारा परिणाम विशुद्धि बढ़ाने के लिये, आत्म हित के लिये प्रेरणा देने वाला है।

भक्ति मार्ग में प्रवृत्त हुआ प्रत्येक मानव निवृत्ति की साधना करता हुआ अपनी चिर चैतन्य स्वरूपी आत्मा को बहु सावद्य या अल्प पाप पुञ्जों से बचाकर उज्ज्वल बना सकता है। क्योंकि, श्रुतज्ञान रूपी कारण से केवलज्ञान रूपी कार्य की उत्पत्ति होती है। इसलिये श्रुतज्ञान का महत्त्व अचिन्त्य है। श्री सोमदेव सूरि ने कहा भी है।

श्रुताय येषां न शरीर वृद्धि; श्रुतं चारित्राय च येषु नैव ।
तेषां बलित्वं ननु पूर्व कर्म व्यापार भारो वहनाय मन्ये ।।

अर्थात् जिनका जीवन श्रुतज्ञान के लिये और चारित्र के लिये नहीं है तो फिर उनका बलिष्ठ होना पूर्व कर्म के अनुसार व्यापार के भार को ढोने के लिये माना गया है। श्रुतज्ञान से बढ़कर आत्मकल्याण के लिये कोई दूसरा ज्ञान है ही नहीं।

प्राचीनकाल से ही भूल-भटके जीवों को धर्म मार्ग में लगाने के लिये, उनकी धर्म के प्रति आस्था जगाने के लिये, और स्व-पर कल्याण के लिये स्वाध्याय और ग्रंथ लेखन की परम्परा चली आ रही है परन्तु सरल सरस शब्दों में आचार्य श्री विनम्रसागर जी ने अनेकों ग्रंथों को हिन्दी छंदों में लिखा है, वे एक सिद्धहस्त लेखक हैं, उनकी लेखनी चलती ही नहीं है अपितु बोलती है, और जगत् के अज्ञानी प्राणियों को नूतन दिशा दिखाकर उनमें नई स्फूर्ति का संचार करती है, उनकी इस कृति में आगम का सार भरा है। ''श्रुतमंथन महाकाव्य'' के स्वाध्याय से चारों अनुयोगों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। अमृत की एक कणिका के समान यदि इस महाकव्य की एक लाइन प्राणी जगत् के लिये जीवन निर्माण में सहयोगी बन जावे तो वह अमृत का कार्य कर आत्मिक सुख की प्राप्ति करा देगी।

प्रस्तुत कृति का एक-एक शब्द, मीठी औषधि के समान है जिसे आबाल जन ख्रुशी-ख्रुशी ग्रहण करते हैं जिससे चेहरे पर मुस्कुराहट आ जाती है, और अनुकूल स्वास्थ्य हो जाता है।

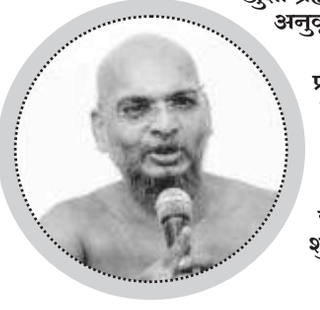

साधु मोमबत्ती की भाँति स्वयं जलकर दूसरों को प्रकाश प्रदान करते हैं अर्थात् साधु प्रज्ञा रूपी चक्षु प्रदान करने में समर्थ है। जिनके जीवन का हर पल नई-नई रचनाओं के लिये रहता है, जिनकी लेखनी, वाणी में सरस्वती का वास है ऐसे करुणा और वात्सल्यमयी आचार्य श्री विनम्रसागर जी महाराज की यह कृति समस्त प्राणियों के जीवन में कल्याण का कारण बने यही शुभेच्छा है।

आचार्य विवेकसागर

श्रुताम्ततताराधक-आचार्य विनम्रसागर

विषयाशा वशातीतो, निरारम्भो परिग्रहः
ज्ञान ध्यान तपोरक्तस, तपस्वीस् प्रशस्यते।।

साधु का स्वरुप बतलाते हुए आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने कहा है-जो विषय आशाओं से रहित है आरम्भ परिग्रह से विरक्त है तथा ज्ञान ध्यान तप में लीन रहते हैं वे प्रशस्त तपस्वी कहे जाते हैं साधु कहे जाते हैं।

आचार्य श्री विनम्रसागर जी जो कवि हृदय के रूप में कहे जाते हैं। साधु साधना करते हुए श्रुताराधक हैं उन्होंने अपनी पहचान कवि हृदय रुप से बनाई है जो हमेशा अनेक प्रकार से काव्य रचनाओं में उपयोग लगाते हैं और सिद्धान्त की बात को भी काव्य कला के रूप में प्रशस्तुत कर देते हैं।

विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ कि आचार्य श्री विनम्रसागर जी ने ''जीवन है पानी की बूँद'' भजन की तर्ज पर 7500 छन्दों में श्रुत मंथन महाकाव्य की रचना की है जो अपने आप में अनूठा संग्रह है जिसके माध्यम से गीत संगीत की मधुर ध्वनि से पूजा विधान आदि में अमृत घोलने का काम करते हैं।

जिसके ऊपर सरस्वती की कृपा बरसती है एवं जो निस्पृहवादी होकर माँ जिनवाणी की सेवा में उद्घृत होते हैं उनके द्वारा ही ये महत् कार्य सम्पन्न होते हैं।

इंसान के जीवन का तो अन्त हो जाता है किन्तु उनके द्वारा किए गये श्रुताराधना के कार्य जीवन्त रहते हैं। इतिहास साक्षी है पूर्व में जो आचार्य भगवन्त हुए हैं उनके द्वारा ग्रन्थों की रचनाएँ की गई हैं वे आदर्श बनकर भव्य जीवों के जीवन का मार्ग प्रशस्त कर रही हैं।

आज धरसेन स्वामी पुष्पदंत भूतबली जी नहीं है किन्तु उनके द्वारा रचित ग्रन्थ भव्य जीवों का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। आचार्य श्री कुन्द-कुन्द, आचार्य श्री समन्तभद्र, पूज्यपाद स्वामी नहीं है किन्तु साहित्य आज भी जीवित है।

एक दिन आचार्य कुलरत्न भूषण जी ने कहा विशदसागर जी आप कर्नाटक होकर आए हैं तब मैंने कहा नहीं। तब वो बोले आप गये हैं आप तन से पहुँचे हों या नहीं किन्तु साहित्य के द्वारा आप अवश्य ही गये हैं लोगों के मन में विराजित है। अतः सिद्ध है इंसान की ज्ञान कला न होने पर भी लोगों आह्लाद प्रदान करती है।

आचार्य श्री विनम्रसागर जी हमारे अनुज गुरुदेव विरागसागर जी के संघ में हमेशा काव्य कला के रुप में अपना स्थान बनाए रहे हैं। आज सम्पूर्ण देश में जहाँ पर भी विहार करते हैं अपनी छाप छोड़कर आते हैं। हमारा उनके लिए भाव भरा अभिनंदन है वे हमेशा इसी प्रकार श्रुत एवं गुरु की भक्ति आराधना प्रभावना का कार्य करते रहें इस भावना से प्रति नमोस्तु के साथ..

-आचार्य विशदसागर
श्री सम्मेद शिखर जी

।। णमो आयरियाणं ।।

जैन शासन में आत्मा को परमात्मा बनाने में जोर दिया है। आत्मा में ही परमात्मा विद्यमान है। जो भव्य जीव मोक्षमार्ग पर आरूढ़ होना चाहता है उसके लिए सर्वप्रथम भेद-विज्ञानी होना अति जरूरी है। भेद-विज्ञान ही सम्यग्दर्शन है और सम्यग्दर्शन ही मोक्षरूपी महल की प्रथम सीढ़ी है। जो आस्था और समर्पण से सरितावस्थता वाला होता है वही मोक्षमार्ग का राही होता है।

आचार्य भगवन्त कुन्दकुन्ददेव ने भी अपने समस्त ग्रन्थों में भेद-विज्ञान पर जोर दिया है। आचार्य देव ने अपने प्रत्येक ग्रन्थों में आत्मा की ही चर्चा और चर्या की बात की है। शुद्धात्मा ही उपादेय भूत है। शेष सब हेय है। अतः प्रत्येक मुमुक्षु को शुद्धात्मा पर ही दृष्टिगत होना चाहिये।

प.पू. मोक्षमार्ग के नेग, सरल-सहज साधना के धनी, भेद-विज्ञानी, प्रमत्त-अप्रमत्त गुणस्थान में झुलने वाले, आगमज्ञान में निष्ठ, आगम के कवि, जैनाचार्य श्री विनम्रसागर जी महाराज ने अपने समीचीन ज्ञान के माध्यम में ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' का सृजन किया है। जिसमें कुल 7500 छंद के द्वारा समयसार, नियमसार, मूलाचार, कर्म सिद्धान्त, मुनिचर्या, श्रावकचर्या, गृहस्थों के कर्त्तव्य आदि अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर ''जीवन है पानी की बूँद'' महाकाव्य तैयार किया है।

वास्तव में यह महाकाव्य प्रत्येक भव्य जीव के लिए भेदाभेद रत्नत्रय की प्राप्ति में सेतु का काम करेगा।

इस महाकाव्य में जिन-जिन महानुभावों ने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहयोग प्रदान किया है उन सबको आशीष।

आचार्य विनम्रसागर जी के महाकाव्य के लिए शुभकामना सहित नमोऽस्तु!

-आचार्य सुन्दरसागर
बांसवाड़ा (राज.)

मंगल भावना

भारत-भूमि रत्नगर्भा भूमि है; यहाँ अचैतन्य रत्न ही नहीं, अपितु चैतन्य रत्न भी उत्पन्न होते हैं। तीर्थंकर, गणधर, मुनिराजों को इस भूमि ने ही प्रसूत किया है। तत्त्वज्ञान, साहित्य सम्पदा से पूर्ण एवं तीर्थों से सुशोभित यह पावन भूमि है जहाँ शाश्वत सिद्धक्षेत्र श्री सम्मेदशिखरजी, गिरनार जी, सोनागिरि, गोपाचल, गोम्मटेश्वर बाहुबली जयपाती को दिगम्बरत्व के साथ विश्व-वसुन्धरा को वस्तु के वस्तुत्व का भूतार्थ बोध करा रहे हैं।

जब मेधा शक्ति प्रकट होती है तब प्रज्ञा नवीन-नवीन रचनात्मक कार्यों में संलग्न हो जाती है। ज्वालामुखी के स्फुटित होने पर लावादि स्वनिज प्राप्त होते हैं; उसी प्रकार कवि के अन्दर जब मेधा शक्ति वर्धमान होती है तो संस्कृति एवं साहित्य को उत्तुंगता प्रदान करता है।

सम्प्रति पंचल (सिन्ड) में जन्में, तस्करों के मध्य, कंकड़ों में वज्र के समान साधु पुरुष आचार्य श्री विनम्र सागर जी, हमारे ज्येष्ठाी अनुज, सिद्धान्त-परायण, कवि, वाग्मी, कुशल वक्ता, कवित्व भाव के आगर्भ हैं। आप अनेकों कृतियों के सृजक हैं। आपने "श्रुत मंथन महाकाव्य" कृति का सृजन कर वीतरागी श्रमण संस्कृति एवं वागीश्वरी के कोष को वर्धमान किया है। आपके सान्निध्य से माँ भारती की उपासना होती रहे। श्रीजिन नमोऽस्तु शासन जयवन्त रहे, यही मंगल भावना है।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सव

चौरई, म.प्र., (भारत)
15 जनवरी 2023

दिगम्बराचार्य
विशुद्ध सागर

श्रुताचार्य गुँ विनम्रसागर

श्रमण संस्कृति के स्वर्णिम कालजयी संत हस्ताक्षर
चैतन्य विरासत, भारत विभूति! विरल नंदन!
श्रमणाचार्य श्री 108 विनम्र सागर जी महाकवि!

आपको स्मरण कर मैं कुन्दकुन्द भगवान के
अध्यात्म को, अकलंक देव के न्याय को, समंत-
भद्र के तर्कवाद को, पूज्यपाद के लक्षणवाद,
जिनसेन के साहित्य को, रविषेण के पद्मचरित्र
को आप में पाता हूँ!

हे पूज्य तपोधन! आपके
अनंत उपकारों को याद कर मैं धन्य हूँ!
हे श्रुताचार्य आप सदा जयवंत हो।
मेरा नमोस्तु

आपका- विभव सागर
12.12.2022

|| णमो जिणाणं ||

अंतिम तीर्थेश भगवान महावीर की सारस्वती उत्तरावली में अनेक काव्यकला के साधक हुए हैं। काव्य में भाषाबद्धता कभी नहीं रहती, रोचकता परम आवश्यक है।

प्रस्तुत महाकाव्य अध्यात्मिक पृष्ठभूमि पर स्फुदित, संसारदर्शन के निमित्त समेटे हुए, मातृभाषा हिन्दी के प्रान्तीय रूप में है। शुभोपयोग की तरणि में निमग्न रहने और अध्यात्म को गुनगुनाने के लिए प्रस्तुत काव्य अत्यन्त मनोहारी है, उपयोगी है। रचनाकार मेरे आत्मीय गुरुभाई आदर्श व्यक्तित्व और अद्भुत काव्यार्थी है।

अत्यन्त शुभासंशाओं के साथ उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महाराज को शुभकामनाऐं प्रेषित करता हूँ।

आपका और कृति का यश सदैव वर्धित होता रहे।

-आचार्य विनिश्चयसागर
टीकमगढ़

भगवान महावीर स्वामी के निर्वाण के बाद से अनेको आचार्य ने उनकी परम्परा को व्यवस्थित रखते हुए अपनी वाक्पटुता से आगम की बातों को जन-जन को भेजने की जिम्मेदारी थी उसे निभाया है। तीर्थंकर भगवन भले ही हमारे बीच में नहीं है। मगर उनकी दिव्य देशना जो कि जिनवाणी के रुप में मौजूद है। उसे आचार्यजन आगे बढ़ाते है। उनकी बात को चाहे गाथा हो, चौपाई हो, गद्य और पद्य का उपयोग किया गया है छन्द का उपयोग किया गया है और इनके माध्यम से अपनी बातों को हम सब तक पहुंचाया है। उसी क्रम में प.पू. गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य भक्तामर प्रशिक्षण शिविर प्रणेता आचार्य विनम्रसागर जी महाराज एक सहज हृदय एवं सरल स्वभाव वाले संत है। जिनकी जिह्वा पर सरस्वती विराजमान है। जिन्होंने अपनी वाणी से जीवन है पानी की बूँद के 7500 छन्द पूरे किये है। जिन्होंने ये कारिका तैयार की है पुस्तक के रूप में और समाज एवं गुरु के चरणों में समर्पित की है। उन्होंने अपनी गुरु भक्ति, प्रभु भक्ति एवं इंसानियत का पैगाम देने वाली पंक्तियां सबको दी है। यह एक सराहनीय प्रशंसनीय कदम है और हमारे भाई है खुशी होती है। उन्होंने ये कारिका तैयार किया है मैं उन्हें साधुवाद देता हूँ और उनकी कारिका के लिए अनुमोदना करता हूँ कि सभी लोग उनकी इस मेहनत को पढ़कर सुनकर अपनी आत्मा में आत्मसात् करें इसे गुनगुनाए, सुनें और सुनाए, धर्म की प्रभावना करें ऐसी मेरी मंगल शुभकामनाएं।

-मुनि विहर्षसागर
(घोषित आचार्य)

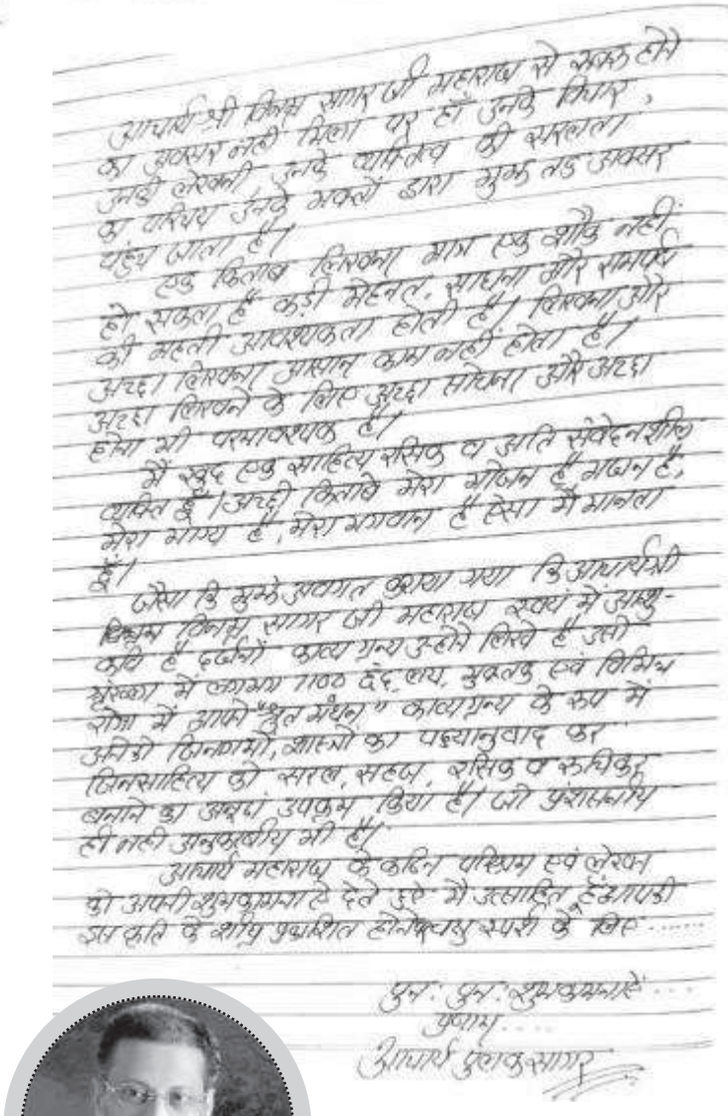

|| श्री महावीराय नमः ||

दिगम्बर जैन श्रमण परम्परा में युगों से अनेकों महान आचार्यों ने अपनी लेखनी से जिनवाणी को ग्रंथों के माध्यम से जिनागम को जन-जन तक पहुँचाया है। तीर्थंकर भगवान ने अपनी वाणी के द्वारा जिस अर्थ का प्रतिपादन किया उसे विषय क्रम के अनुसार गणधरों ने अक्षर रूप में ग्रंथित किया है। जो आज इन दुर्लभ ग्रंथों को पढ़ और सुन पा रहे हैं।

''तीर्थंकर की धुनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवर वानी शिव सुख दानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई ।।

गणधरों की अनुकम्पा से हमें आज इस पंचकाल में जिनेन्द्र भगवान की वाणी श्रवण करने मिल रही है। श्रुत का ज्ञान मिल रहा है। आचार्य धरसेन स्वामी से आचार्य पुष्पदंत भूतबलि एवं आचार्य कुंदकुंद से, आचार्य नेमिचंद्र स्वामी तक एवं आचार्य मानतुंग स्वामी से आचार्य कुमुदचंद्र स्वामी तक हमें जिनवाणी विविध रूपों में प्राप्त होती रही है।

ये समस्त आचार्य हमें गद्य-पद्य के माध्यम से प्रभु गुणगान करने की विधि हमें प्रदान कर गये। आज सम्पूर्ण दुनिया में भक्तामर आदि स्तोत्र विभिन्न पदों, छंदों एवं स्वरों में गाया जा रहा है।

इसी शृंखला में वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागर जी मुनिराज की परम्परा के आचार्य श्री विरागसागर जी के शिष्य उच्चारणार्थ 108 श्री विनम्रसागर जी मुनिराज ने अपनी श्रुतप्रज्ञा से अद्वितीय रचना ''जीवन है पानी की बूँद'' जैसी महानतम कृति हमें प्रदान की है। जिसे आज प्रत्येक उत्सवों-महोत्सवों, पूजा-विधानों में गाया जाता है। इस रचना के माध्यम से आचार्य श्री ने जीवन प्रत्येक क्षण को लिपिबद्ध करते हुये इसे 7500 छंदों में समाहित किया है।

इन छंदों के माध्यम नव पीढ़ी को नई ऊर्जा नई चेतना मिलेगी। क्योंकि आज की युवा पीढ़ी श्रुतज्ञान से दूर जाती जा रही है। इन्हें जिनधर्म-जिनवाणी से जोड़ने के लिये इस तरह की रचनाओं का सहारा लेना आज वर्तमान की आवश्यकता है।

आचार्य श्री विनम्रसागर जी की इस अनूठी रचना को वर्तमान में ''श्रुतमंथन महाकाव्य'' के नाम से प्रकाशित किया जा रहा है। श्रुत संवर्धन के महापुण्य कार्य की हम अनुमोदना करते हुये इसे संजोने में संघस्थ आर्यिका रत्न श्री विमल श्री माताजी एवं सभी संघस्थ साधु वृन्दों के सहयोग को मंगल शुभाशीर्वाद मेरी अनंत शुभकामनाओं के साथ.....

आचार्य प्रज्ञासागर
श्री महावीर तपोभूमि उज्जैन

अपनत्व आत्मीय भाव से ओतप्रोत, जैन संस्कृति को नई दिशा देने वाले, अप्रत्तिम साधक आचार्य श्री विनम्रसागर जी महाराज को सकल संघ सहित यथायोग्य नमन, वन्दन, आशीर्वाद एवं अनन्त शुभसंशाओं सहित श्रुत मंथन महाकाव्य की भाव अनुमोदना करते हैं।

आचार्य श्री आदिसागर जी अंकलीकर, आचार्य श्री महावीरकीर्ति जी, आचार्य श्री विमलसागर जी, आचार्य श्री सन्मतिसागर जी और आचार्य श्री विरागसागर जी जैसे ऋषियों और तपस्वियों की परम्परा से दीक्षित आचार्य श्री विनम्रसागर जी के प्रति उनके रत्नत्रय संवर्धन के अहोभाव सहित अभिवादन।

हे वीतरागिता के मूर्तिमान प्रतीक, आप अनुत्तर साम्ययोगी हैं। आपश्री का सौम्य मुखमण्डल समता, प्रशांतचित्तता एवं चैतसिक निर्मलता का प्रतीक है। समस्त प्रतिष्ठित आपकी चेतना को राग-द्वेष की ऊर्मियां छू भी नहीं पाती। आपके श्वास-प्रश्वास में वीतराग वाणी अनुगुंजित रहती है। महान श्रुतधर मनस्वी प्रवर के रूप में अपनी विशिष्ट मेधा और मनस्विता से आप जैनागमों में निबद्ध ज्ञान वारिधी का सतत् आलोकन कर रहे हैं एवं इस महाअनुष्ठान के पुरोधा बन आपने कई ग्रंथ-रत्न विद्वज्जगत को उपहृत किए हैं। आपश्री के द्वारा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को परिलक्षित करते हुए चिंतन-बिन्दुओं को गीतबद्ध कर जैन-चेतना के परिष्कार का आपने तो गुरु कार्य किया है,वह श्लाघनीय है, प्रशंसनीय है। चिंतन-बूंदों के विशाल समुच्चय को ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' के रूप में अभिप्रस्तुत कर जैन वाङ्मय का सारभूत जन-जन तक संप्रेषित किये जाने के युगांतकारी क्षणों की मैं हार्दिक अनुमोदना करता हूँ। यह प्रकल्प आपकी रत्नत्रयी आत्म-विशुद्धी के संप्रवर्तन को द्रुतता से वर्तमान तो करेगा ही, जन-जन को स्फूर्त भी करेगा एक नए सभ्य एवं शालीन समाज की निर्मिति हेतु। मेरी अनंत-अशेष शुभशंसायें।

-अंतर्मना आचार्य प्रसन्न सागर

।। ॐ ह्रूं पुष्पदन्त गुरवे नमः ।।

आत्मीय उच्चारणाचार्य श्री 108 विनम्रसागर जी महाराज को सिद्ध, श्रुत भक्ति सहित आपको शत्-शत् नमोस्तु-नमन।

आप एक श्रेष्ठ काव्य सृजनकर्ता है, विद्वान है, सरस्वती पुत्र है, गुरु आज्ञानुवर्ती है, संघ संचालक है, सधर्मी वात्सल्य प्रेमी है, आबालवृद्ध के उच्चारण के साथ आचरण को भी सम्यक्य करते हैं।

आपसे सोनागिर में प्रथम बार मिलना हुआ, आपने संघ सहित वात्सल्य की धारा बहाते हुए आत्मीय मिलन किया यही साधुओं की मोक्ष सिद्धशिला की अनुभूति है क्योंकि हम हमेशा कहते हैं जो साधु संत इस धरा पर नहीं मिलेगे वो सिद्ध शिला पर कैसे मिलेगे क्योंकि एक सिद्ध में अनन्त सिद्ध समाहित होते हैं।

आपका यह ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' कालजयी काव्य बने, यह ''णमोकार मंत्र' की तरह अनिधन हो क्योंकि आपने इसमें ''जीवन है पानी की बूँद'' के छंदों से सारी सृष्टि के संस्कार, अनुभव, शिक्षायें, संस्कृति, समर्पित भावों से श्रुत के सरोवर में परोस दी है। इस काव्य का जो भी रसपान करेगा वह भावों से कालजय होगा। नश्वर शरीर की नश्वरता को बताते हुए आपने कालजय आत्मा का सार इस ''महाकाव्य'' में सभी भव्यजीवों के कल्याणार्थ समर्पित किया है।

आपको बार-बार वन्दन, नमन, अर्चन।

-आचार्य प्रमुख सागर

पूरोवाक्

अनादि काल से तीर्थंकरों की वाणी रूपी गंगा इस भू पर प्रवाहमान है। उस वाणी में अवगाहन करने वाले काव्य रसिक और श्रुतधर भी अनादि काल से विचरण करते हुए इन्द्रिय प्रत्यक्ष होते है। मानव, पशु–पक्षी प्रत्येक प्राणी संगीत व काव्य से प्रेम करता हैं। काव्य का रसिक होना जितना सहज व सरल हैं भव्य का सृजक होना उतना ही दुष्कर है।

काव्य की रचना करना मात्र एक शौक नहीं हो सकता है इसके लिए देव–शास्त्र–गुरु के प्रति समर्पण, श्रद्धा, साधना और परिश्रम की अत्यावश्यकता होती है। काव्य का सृजन और उसकी उत्तमता का होना आसान नहीं होता है। यह सृजक के विचार, अध्ययन का प्रदर्शक होता है। अपनी रचना में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को परलक्षित करना अपने चिंतन बिन्दुओं को गीतबद्ध कर जन–जन की चेतना को परिष्कृत करना श्लाघ्नीय व प्रशंसनीय होता है और अत्यन्त आश्चर्य उपार्जित करने वाला होता है जब एक ही छन्द पर अचिन्त्य छन्दों की रचना हो।

ऐसी ही एक अद्वितीय विलक्षण रचना परम पूज्य भक्तामर वाले बाबा उच्चारणाचार्य के नाम से विख्यात पूज्य आचार्य भगवन् श्री विनम्रसागर जी के द्वारा ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' के रूप में अभिप्रस्तुत होने जा रही है। जिसमें ''जीवन है पानी की बूँद'' की ऋदम (तर्ज) पर 6300 छंदों की माला है। जिसका एक–एक मोती जैन वाङ्मय के सार को प्रस्तुत करता है।

पूज्य आचार्य भगवन् ऐसे संत है जिनकी सरलता का कोई अंत नहीं है। सारे संसार से विरक्त होकर स्वपर कल्याण की भावना से निरत हैं। जिनका अन्त:करण वात्सल्य और विश्वकल्याणी है, जो अध्यात्म का दर्शन कराते हैं तो आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी की छवि परिलक्षित होती है, जब करणानुयोग का अध्ययन करते हैं तब आचार्य वीरसेन स्वामी को समझ पाते हैं, जब चरणानुयोग को समझाते हैं तब शिवकोटि मुनिराज नजर आते हैं, जब प्रथमानुयोग दिखलाते हैं तो आचार्य रविषेण स्वामी जैसा वात्सल्य झलकता है और जब भक्ति के सरोवर में अवगाहन कराते हैं तो साक्षात् मानतुंग स्वामी की प्रतिकृति नजराती है। ऐसे आचार्य भगवन् की लेखनी जब गतिमान होती है तो ''एक ही छंद ''जीवन है पानी की बूँद'' जैसे भजन पर 7800 से भी अधिक छंदों की रचना हो जाया करती है। जो ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' के रूप में 6300 छंद , ''जीवन है पानी की बूँद'' पुस्तक में 600 छन्द, बूँद–बूँद में सागर पुस्तक में 600 छंद एवं होनी अनहोनी पुस्तक में 350 छन्द प्रकाशित होने के बाद भी 300 से अधिक छंद अप्रकाशित हैं।'' साथ ही पूज्य आचार्य भगवन् के द्वारा हजारों कविताएँ, सैकड़ों गजल, सैकड़ों भजन एवं हजारों मुक्तक व शेर का सृजन सहज ही हो जाता है।

मुझमें साहस नहीं कि चारों अनुयोग, सिद्धान्त, नय, न्याय, तर्क, अध्यात्म, आगम व दर्शन से ज्योतिर्मय दैदीप्यमान सूर्य की किरणों को गिन सकूँ। परमात्मा से यही प्रार्थना करती हूँ कि यह सूर्य युगान्त तक यूँ ही अपनी कैवल्य रश्मियों से स्फुरायमान रहे और यह कृति रत्नत्रयी आत्मविशुद्धि के संप्रवर्तन को द्रुतता से संवर्द्धित करे। मैं उत्साहित हूँ आप सभी के कर पात्रों में यह कृति परोसकर चक्षु स्पर्शित कराने के लिए...

इन्हीं मंगल भगवानाओं के साथ पूज्य आचार्य भगवन् के पावन पुनीत चरण कमलों में केवलज्ञान के अविभागी प्रतिच्छेदों बराबर अनन्तश: नमोऽस्तु–3

गुरु पाद पद्माराधिका
श्रमणी आर्यिका विमलश्री

श्रुतमंथन काव्यकृति
दो शब्द

श्रुतमंथन काव्यकृति में 7500 छंदों की भावपूर्ण अभिव्यक्ति को साकार रूप दिया गया है। यह काव्यकृति मूल रूप में ''जीवन है पानी की बूँद'' शीर्षक से विख्यात हुई है। इसमें जनसाधारण से लेकर असाधारण क्षमता वाले सामर्थ्य और संकल्पों को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

मानव जीवन में चिंतन की भावपूर्ण अभिव्यक्ति का नाम कविता है। जब संत कवि के हृदय में कविता की अनुगूँज होने लगती है तो कवि के मन में सांसारिक भोगों में लिप्त मानव के अंतहीन दु:खों के प्रति हूक उठने लगती है और जब ऐसा होता है तो करुणा के बादल कवि के अंतस में घुमड़ने लगते हैं। आहों की बिजलियाँ चमकने लगती है और अंतर का कोना–कोना पर्वत की पीर की तरह पिघलकर अंजान झरने की तरह कविता के रूप में प्रवाहित होने लगता है तभी तो जीवन है पानी की बूँद के 7500 छंदों का सृजन हुआ होगा।

भारतीय संस्कृति में बुद्धि का भ्रमित होना ही अनेक अनर्थों की जड़ माना गया है। यह बुद्धिभ्रम सत्संगति से दूर होता है ''बिन सत्संग विवके न होई'' सत्संग का ही प्रभाव है कि जल की एक बूँद नीम की जड़ में जाकर कटुता का रूप ले लेती है, वही बूँद सागर में जाकर लवणयुक्त हो जाती है, विषधर के मुँह में विष और स्वाति नक्षत्र में सीप में पड़कर मोती बन जाती है। स्वभाव और विभाव में यही अंतर है जिसकी अनुभूति इस काव्यकृति में सर्वत्र देखने से मिलती है।

संत वह है जिसकी सरलता का कोई अंत न हो। जिसके द्वारा सद्गुणों का अनंत प्रवाह अनवरत बना रहे। संत का पवित्र मन जब चिंतन के द्वारा समस्याओं की जड़ तक पहुँचता है तो वह निर्जीव को भी सजीव बना देता है। उसकी अभिव्यक्ति की ज्वाला इतनी प्रभावी होती है कि वह समस्याओं के अन्धकार को अपनी भावना से निर्मल बना देता है। चिंतन की अंतस गहराइयों में उतरकर जब संत का अंत:करण भाव विह्वल हो जाता है तो कवि की वाणी स्वयं प्रस्फुटित होने लगती है और इसी का जीवन स्वरूप है – ''जीवन है पानी की बूँद''।

कृतिकार की रचना एक कला है और यह कला अनवरत् साधना का फल है। इसके लिये साधक को अनवरत् निष्ठा, समर्पण और साधना के द्वारा अपनी कला को सँवारना पड़ता है। यह कलासमय होकर कलाकार की साधना को अमरत्व प्रदान करती है। रचनाकार अपनी कला के माध्यम से मानव संस्कृति का जयघोष करता है तथा उसमें सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् के स्वर प्रतिपादित करता है। कृतिकार की यह रचना युगों तक जीवन को संदेश प्रदान करती है।

वैसे देखा जाय तो जीवन सरिता की तरह सतत् प्रवहमान रहता है। जीवन रस है। रस का तात्पर्य आनंद है। आनंद ही जीवन का लक्ष्य है। परमशांति और आनंद की अनुभूति जीवन का मूल स्वर है। इसकी प्राप्ति के लिये व्यक्ति अनवरत परिश्रम करता है। जिस प्रकार सरिता सागर से संपृक्त होकर अपने अस्तित्व को उसी में समाहित कर देती है उसी प्रकार मानव मुक्ति के लिये अपने आपको उस परम सत्ता के चरणों में समर्पित कर सच्चिदानंद को प्राप्त करता है। यही उसके जीवन का लक्ष्य होता है। इस लक्ष्य को हासिल करने में ''जीवन है पानी की बूँद'' सांसारिक प्राण्डियों का पथ प्रशस्त करती है।

''जीवन है पानी की बूँद'' के 7500 छंद ''श्रुतमंथन'' महाकाव्य के कलेवर की पृष्ठभूमि तैयार करते हैं। इस महाकाव्य में समयसार से लेकर मंगलाष्टक तक समस्त वृहद् एवं लघु ग्रंथों का पद्यानुवाद देखने को मिलता है। ये छंद जीवन के उस शाश्वत् सत्य को उद्घाटित करते हैं जो हमें जीवन के वास्तविक मर्म से साक्षात्कार कराता है। महाकाव्य सृजन की एक ऐसी विद्या है जिसमें जीवन के समस्त बोध को रेखांकित किया जाता है, जिसके कारण जीवन की अनेक समस्याओं का समाधान स्वत: ही हो जाता है। ''श्रुतमंथन'' में लौकिक पक्ष के अंतर्गत कर्मकाण्ड, पूजा पद्धति, ईश्वर आराधना, व्रत, नियम, परिवार, समाज, राजनीति, धर्म आदि की व्याख्या के द्वारा उसके आदर्श रूप को प्रस्तुत किया गया है तथा अलौकिक पक्ष के अंतर्गत सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, संयम, तप, त्याग के अलावा शुद्धि और सात्विकता को व्याख्यायित किया गया है।

''श्रुतमंथन'' के इन छंदों में यदि एक ओर जीवन का सत्य है तो दूसरी ओर उस असत्य का भी साक्षात्कर होता है जो व्यक्ति के मानस को झिंझोड़कर पागल बना देता है। यह जीवन भ्रमों का जंजाल है। इसमें उलझना हमारी बेबसी है परन्तु इस जंजाल से सुलझना हमारी कुशलता है। पर इसके लिये आत्मबोध की आवश्यकता होती है। यह

आत्मबोध मुनि श्री के छंदों में सर्वत्र देखने को मिलता है। मुनि श्री का चिंतन इतना प्रगाढ़ और गांभीर्यता को लिये हुयेहैं कि वह बोध प्राप्त श्रावक मे तिलबिलाहट पैदा कर देता है। फिर मुनि श्री की काव्यात्मक प्रतिमा तो अपने आप में बेजोड़ है, वे शब्द शिल्पी होने के साथ–साथ शब्दों के एक ऐसे जादूगर है जो भाव के अनुरूप शब्दों को सहज में ही सँवारने की कला को जानते हैं। संक्षेप में यही कि–

''हुनर मिला है उन्हें अपनी बात कहने का
वो शब्द शब्द को साँचे में ढाल देते हैं।''

कर्म की सत्ता सर्वोपरि है। इस सत्ता के स्वरूप को जो व्यक्ति सही अर्थों में समझ लेता है वह कई अर्थों में अपने जीवन को सार्थक बना लेता है। संसार की यही नियति है कि हम खाली हाथ आते हैं और खाली हाथ जाते हैं। पर सत्य यही नहीं है बल्कि यह है कि हम भाग्य लेकर आते हैं और कर्म लेकर जाते हैं। इस सत्य को जयशंकर प्रसाद जी ने कामायनी महाकाव्य में इस रूप में कहा है –

कर्म का भोग भोग का कर्म,
यही जड़ चेतन का आनंद ।

इसी कर्म के मर्म को मुनि श्री ने अत्यंत सरल भाषा में अभिव्यक्त किया है जो हमारे अंतर्मन को स्पर्श कर जाता है। मुनि श्री की काव्य रचना का सबसे बड़ प्रयास यही है कि श्रोता/पाठक कहीं पर भी उलझना नहीं है। ऐसा लगता है कि सारी की सारी अभिव्यक्ति अंतर्मन की अनुगूँज हो, जो हमें आल्हादित कर देती है –

क्या लेकर तू आया था क्या लेकर तू जायेगा–2
अपना किसे बतायेगा–ऽऽ
खाली हाथों आया था, हाथ पसारे जायेगा–2
तेरा ही कर्म–3 तेरा साथ निभायेगा–ऽऽऽ

मानव जीवन में दु:खों का मूल कारण मन की चंचलता है। मन की चंचलता के कारण ही व्यक्ति कर्मरूपी कीचड़ में धँसता चला जाता है। दिगम्बर मुनि भी दीक्षा के उपरांत मन को मनाने का ही उपक्रम करते हैं क्योंकि सच्चे अर्थों में मुनि वही है जिसने अपने मन को मना लिया है। मन को मनाने में सफल होने पर व्यक्ति में निर्मलता आने लगती है। जब निर्मलता आने लगती है तो गंदगी छिटककर अपने आप दूर चली जाती है। मन की मलिनता दूर होने पर ही रत्नत्रय का प्रादुर्भाव होता है, और इस रत्नत्रय के आ जाने पर जीवन शिवपथ का अनुगामी होकर अपने लक्ष्य की सिद्धि की ओर अग्रस होने लगता है। मुनि श्री का मानना है –

मन निर्मल बन जायेगा मैल सभी धुल जायेगा–2
दिल तेरा खिल जायेगा–ऽऽ
रत्नत्रय धन आयेगा, फूला नहीं समायेगा–2
मन की निर्मलता–3 मल सभी मिटाये–ऽऽऽ

अत: हम कह सकते हैं कि ''श्रुतमंथन'' एक ऐसी काव्यकृति है

जिसमें समग्र जीवन का सार स्वरूप निहित है। यह कृति एक प्रकार से आध्यात्मिक मंथन का दर्पण है। सच तो यह है कि जीवन में चाहे अहंकार की बात हो, चाहे लोभ की बात हो, चाहे मोह की बात हो, सांसारिक मायाजाल की बात हो या धन के चकाचौंध की, पाप–पुण्य, सुख–दु:ख, न्याय–अन्याय या फिर सत्य–झूठ की जीवन का कोई भी कोना ''श्रुतमंथन'' से बाहर नहीं है। यह कृति एक प्रकार से आध्यात्मिक जीवन का महाकाव्य है।

–डॉ. के.एल. जैन

श्रुत मंथन महाकाव्य
प्राक्कथन

परम पूज्य उच्चारणाचार्य श्री 108 विनम्रसागर जी गुरुदेव के चरणों में शत–शत नमन करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है कि जिनागम के ज्ञाता यशस्वी साधक विनम्रता की प्रतिमूर्ति आचार्य भगवंत विनम्रसागर जी कृत महाकाव्य श्रुत मंथन का प्राक्कथन लिखने का सामर्थ्य न होते हुए भी मुझे यह अवसर प्राप्त हुआ है इसके लिए मैं गुरुदेव के श्री चरणों में कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। ''श्रुंत मंथन महाकाव्य'' गुरुदेव की कालजयी रचना है। इसमें ''जीवन है पानी की बूँद'' पर 7500 छंद लिखे। ये छंद समुद्र को बूँद और बूँद को सिंधु बना देने की सिद्धि से युक्त है। ग्रंथकारों ने दिगम्बर मुनियों की आठ अद्‌भुत सिद्धियों की चर्चा की है। इस ग्रन्थ को पढ़ते समय वे सिद्धियों साकार सी हो गयी है। इस ग्रन्थ के छंदों में जीवन की सर्वांगीता है, श्रावक का सम्पूर्ण आचार है, साधु परमेष्ठी के पंच महाव्रत है, सद्‌ग्रहस्थ का मार्गदर्शन है, साधक के लिए साधना का पवित्र मार्ग है। श्रुत मंथन आचार्य श्री के आध्यात्मिक मंथन का दर्पण है। अहंकार की बात हो, क्रोध की बात हो, लोभ की बात हो, मोह की बात हो, संसार माया का जाल हो या धन की चकाचौंध हो। साधना के इस सच्चे त्यागी ने मर्म की बात कही है। भक्ष्य–अभक्ष्य, पाप–पुण्य, सुख–दुख, न्याय–अन्याय, सत्य–झूँठ, जीवन का कोई कोना श्रुत मंथन से बाहर नही है। यह रचना आध्यात्मिक जीवन का ही महाकाव्य नहीं है बल्कि एक श्रावक को सदाचार के पथ से ले जाते हुए परमात्मा बनाने का सुगम मार्ग प्रदत्त करता है। बचपन से बुढ़ापे की गाथा, जन्म से मृत्यु की यात्रा, आत्मा से परमात्मा तक का सफर श्रुत मंथन में समाया है।

चंद दिनों का जीवन है, इसमें देखो सुख कम है–2
गम ही गम नजराता है–ऽऽ
जन्म सभी को है मालुम, मृत्यु किसी को नहिं मालूम–2
जाने जीवन की हो–3 कब शाम हो जाये रे–ऽऽ

गुरुदेव के आचार–विचार, करनी–कथनी और जैनागम की सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक् चारित्र की कसौटी श्रुत मंथन में है। पंचमहाव्रत व पंच अणुव्रत की एक–एक बूँद से निर्मित सागर श्रुत मंथन साहित्य जगत का अनुपम महाकाव्य है।

गुरुदेव लिखते है कि अहंकार के वशीभूत होकर ज्ञानी मुर्दा हो जाता है।

अहंकार गर लाएगा, ज्ञान कभी नहिं पाएगा–2
जीते जी मर जाएगा–ऽऽ
अहंकार विष पीता है, वो इंसा कब जीता है–2
इंसा हो मुर्दा–3 तो अकड़ दिखाऐ रे–ऽऽऽ

इन पंक्तियों में जीवन का सार छिपा हुआ है और श्रुत मंथन में ऐसी अनेको पंक्तियाँ हैं। श्रुत मंथन का लेखन गुरुदेव के प्रतिदिन के प्रवचनों के माध्यम से एवं जीवन की प्रत्येक घटना से जुड़ जाता है और बूँद–बूँद से सागर भरता गया तथा सिद्धक्षेत्र सोनागिर में 31वें चातुर्मास काल में 7500 छंद सम्पन्न हुए और लेखनी अनवरत चल रही

है। जिस सिद्ध भूमि पर साढ़े पाँच करोड़ मुनिराज मोक्ष गए, उस पवित्र धरा पर श्रुत मंथन के अमृत कलशों को पूरित होते हुए देखने मात्र से इस संसार की क्षण भंगुरता और शरीर की नश्वरता का बोध हो जाता है, वह अमृत कलश मानव को मोक्षमार्ग के पान कराने की सामर्थ्य रखता है। श्रुत मंथन की एक–एक बूँद सागर के समान है, साधक को श्रुत मंथन की गागर में सागर का आस्वाद मिलेगा जो ''भूतो न भविष्यति'' जान पड़ता है। आचार्य गुरुवर ने आचार्य मानतुंग रचित ''भक्तामर'' महाकाव्य को भक्तों का कण्ठाहार बनाकर तीव्र पापों के नाम की अचूक औषधि प्रदान की इसी तरह श्रुत मंथन का एक–एक छंद भौतिकतावाद की चकाचौंध में डूबे मानुष जीवन को कलुषिता के धुएं से उबारने में पूर्ण समर्थ होगा। गुरुदेव का विलक्षण ज्ञान, कवित्व शक्ति, वाक्पटुता, रचना धार्मिता अद्वितीय है।

गुरुवर का वात्सल्य भाव, समता भाव, सहजता व आगम सम्मतता जिस प्रकार उनके दैनिक जीवन में झलकती हैं, वही झलक ''श्रुत मंथन'' महाकाव्य में अथाह हिलोरें ले रही है। अत: ऐसे सरस्वती पुत्र, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, सरल सरस सौम्य प्रतिभा के धनी पूज्य गुरुदेव के चरणों में पुन: नमन करते हुए मैं अपनी लघुता, अल्पज्ञता व तुच्छता के लिए क्षमायाचना करते हुए ''श्रुत मंथन महाकाव्य'' की एक बूँद का सदैव अभिलाषी रहूँगा।

श्रुत मंथन महाकाव्य के लक्षण

संसार की असारता, जीवन की जीवन्तता, मानव जीवन के प्रत्येक पहलु से साक्षातकार कराने की शक्ति सत्साहित्य में हुआ करती है। सद् साहित्य हमारी संस्कृति को शृंगारित करता है। ऐसे ही संस्कृति के श्रृंगार में अपना अनुपम स्थान रखता है यह ''श्रुत मंथन महाकाव्य''।

महाकाव्य के विषय में विभिन्न विद्वानों के विभिन्न मत है, किन्तु कुछ लक्षण सामान्य से है, अत: उन्हीं के आधार पर हम इस रचना का मूल्यांकन करते है। ये लक्षण तथा उनका इस काव्य में निरूपण निम्न प्रकार है–

महाकाव्य के लक्षण :–

1. जिसमें सर्गों का निबंधन हो वह महाकाव्य कहलाता है।

   इस बिन्दु के अनुसार वर्तमान काव्य महाकाव्य के अंतर्गत आता है, क्योंकि विषयवस्तु विभिन्न सर्गों में विभाजित है।

2. महाकाव्य में देवता या सदृश क्षत्रिय जिसमें धीरोदात्तादि गुण हों, नायक होता है।

   इस बिन्दु के अनुसार महाकाव्य में नायक होना चाहिए। वर्तमान काव्य में सदृश नायक तो नहीं दिखायी देता किन्तु अदृश्य नायक के रूप में जिदेव हैं। प्रत्येक छंद की रचना के पीछे जिनदेव प्रवर्तक मार्ग ही है।

3. महाकाव्य में शृंगार, वीर या शांत रस में से किसी एक रस की प्रधानता होनी चाहिए।

   वर्तमान काव्य में शांत रस की प्रधानता दृष्टिगोचित होती है। कहीं–कहीं अन्य रस भी पाए जाते हैं।

4. कथा ऐतिहासिक अथवा सज्जनाश्रित होती है। चतुवर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) में से एक महाकाव्य का फल होता है। वर्तमान काव्य दोनों की बिंदुओं को संतुष्ट करता है। मानव क्रियाकलाप तथा मानव स्वभाव दोनों ही ऐतिहासिक भी होते हैं और उनका संबंध सज्जनाश्रित भी होता है। अत: इस दृष्टि से इसे महाकाव्य कहा

जा सकता है। महाकाव्य का फल धर्म के माध्यम से अर्थ और काम पर विजय प्राप्त कर मोक्ष की प्राप्ति है। अत: इस दृष्टि से भी इसे महाकाव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है।

5. आरम्भ में नमस्कार, आशीर्वाद या वर्ण्य वस्तु निर्देश होता है। स्थान–स्थान पर दुर्जनों की निंदा तथा सज्जनों की प्रशंसा का वर्ण होता है। इस रूप में भी वर्तमान काव्य महाकाव्य के अंतर्गत रखा जा सकता है। काव्य के प्रारंभ में ही नहीं बल्कि स्थान–स्थान पर इन तत्वों का समावेश दिखायी देता है।

6. सम्पूर्ण काव्य एक ही प्रकार के छंदों में छंदबद्ध है तथा विभिन्न सर्ग न ही अति दीर्घ है और न ही अत्यल्प। वर्तमान काव्य में संध्या, सूर्य, चंद्रमा, रात्री, प्रदोष, अंधकार, दिन, प्रात:काल, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, सागर, संयोग, विप्रलंभ, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ, संग्राम, यात्रा और विवाह आदि का वर्णन मिलता है। अत: वर्तमान काव्य को एक महाकाव्य कहा जा सकता है।

7. वर्तमान काव्य में केवल एक ही कमी नजर आती है कि इसकी कथावस्तु एक ऐतिहासिक नायक के ऊपर आधारित न होकर एक अदृश्य शक्ति को नायक के रूप में मानकर सृजित है। किन्तु इस कमी को इसलिए स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि महाकाव्य के लक्षण अनुसार कोई देव भी नायक हो सकता है। यहाँ सम्पूर्ण काव्य का सृजन ही जिनदेव द्वारा प्रतिपादित तथ्यों के आधार पर किया गया है। किसी एक ऐतिहासिक घटना के स्थान पर सम्पूर्ण जीव ही कथानक का आधार है।

– प्रो. जे.के. जैन
पी.जी. कॉलेज, अम्बाह, मुरैना

णमोकार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व साहूणं
एसो पंच णमोयारो सव्वपावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवई मंगलम्।

I bow to all Arihantas.
I bow to all Siddhas.
I bow to all Acharyas.
I bow to all Upadhyayas.
I bow to all Saints in the world.
This Namokar Mantra, about to distroy all sins.
and the first is auspicious in the all auspicious.

चत्तारि मंगलं, अरिहन्त मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलीपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवली पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते शरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलीपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

The four auspicious are in the world.
All Arihantas are auspicious.
All Siddhas are auspicious.
All Saints are auspicious.
Said by god are auspicious.

The four are the best in the world.
All Arihantas are the best.
All Siddhas are the best.
All Saints are the best.
Said by god are the best.

The four shelter are in the world.
I go to shelter of all Arihantas
I go to shelter of all Siddhas.
I go to shelter of all Saints.
I go to shelter of said by God.

- Acharya Vinamra Sagar

एक अद्वितीय विलक्षण रचना

श्रुत मंथन महाकाव्य

रचयिता : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

अनुक्रमणिका

1.	समयसार	001
2.	नियमसार	047
3.	प्रवचनसार	067
4.	तत्त्वसार	101
5.	योगसार	111
6.	योग प्राभृत	125
7.	रयणसार	181
8.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	199
9.	पुरुषार्थ सिद्धियुपाय	215
10.	कार्तिकेयानुप्रेक्षा	239
11.	इष्टोपदेश	291
12.	समण सुत्तं	299
13.	बारसाणुपेक्खा	377
14.	पंचास्तिकाय	389
15.	समाधि तंत्र	409
16.	दर्शन पाहुड़	421
17.	चारित्र पाहुड़	427
18.	भाव पाहुड़	433
19.	सूत्र पाहुड़	451
20.	लिंग पाहुड़	455
21.	बोध पाहुड़	459
22.	मोक्ष पाहुड़	467
23.	शील पाहुड़	479
24.	सम्यक्दर्शन के आठ अंग	485
25.	स्वयंभू स्तोत्र	503
26.	भक्तामर स्तोत्र	507
27.	कल्याण मंदिर स्तोत्र	513
28.	एकीभाव स्तोत्र	519
29.	विषापाहर स्तोत्र	523
30.	महावीराष्टक	529
31.	सामायिक पाठ	531
32.	ज्ञानांकुश स्तोत्र	537

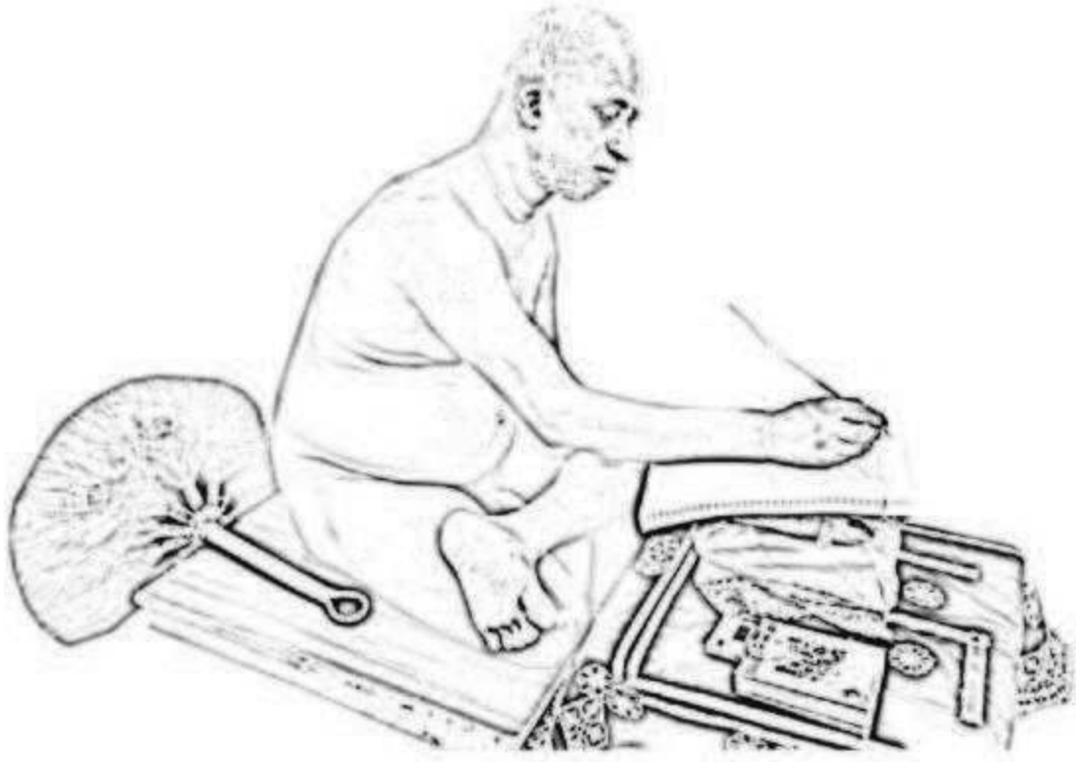

समयसार

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

मंगलाचरण

(1) अविनाशी अव्यय निर्मल, गति उपमा बिन परम अमल–2
सर्वसिद्ध को नमन विमल–SSS
भद्रबाहु ने बतलाया, कुंदकुंद ने समझाया–2
गुरु का वंदन कर हो–3 यह ग्रंथ बतायें रे–SS।।1।।

(2) घिरा कर्म हो पर समयी, लीन स्वयं में स्व–समयी–2
दोनों ही हैं समयमयी–SS
एक कहा व्यवहार समय, दूजा है निश्चयी समय–2
ऐसा हम जानें–हो–3 भ्रम दूर हटायें रे–SS।।2।।

(3) जो एकाकी है निज में, सुंदर उसको सभी कहें–2
विसंवाद है बंधन में–SS
मिटता है एकत्व जहाँ, होता है तब बंध वहाँ–2
कर्म का बंधन, हो–3 तन में बँधवाये रे–SS।।3।।

(4) कथा काम और भोगों की, समझी–सुनी है रोगों की–2
अनुभव की है योगों की–SS
निज की कथा सुलभ नहिं है, तभी हमें अनुभव नहिं है–2
दुर्लभ एकाकी हो–3 की कथा बतायें रे–SS।।4।।

(5) निज अनुभव दिखलाउँगा, शुद्ध तत्त्व बतलाउँगा
हूँ अल्पज्ञ बताउँगा–SS
बतलाने में रहूँ सफल, स्वीकृत करना ये है फल–2
चूक कर जाऊँ–हो–3 तो छल मत लाओ रे–SS।।5।।

(6) जो प्रमत्त अप्रमत्त नहीं, दोनों से उठ गया यहीं–2
जो है ज्ञायक भाव गृही–SS
वही कहा शुद्धात्म यहाँ, वही समझ परमात्म यहाँ–2
ज्ञानी ने गाया हो–3 गुरु हमें बताएँ रे–SS।।6।।

(7) दर्शन ज्ञान चरित्र अहा–समझो ये व्यवहार कहा–2
अभेद में है भेद अहा–SS
ज्ञायक में सब एक हुए, क्षीर शालि मधु खीर हुए–2
ज्ञायक का भाव हो–3 शुद्धात्म कहाए रे–SS।।7।।

(8) पारंगत जिस भाषा में, वो समझे उस भाषा में–2
वैसे ही व्यवहार हमें–SS
निश्चय को समझाता है–तभी समझ में आता है–2
गोरों को इंगलिश हो–3 झट समझ में आये रे–SS।।8।।

(9) किया यहाँ सिद्धांत मनन, पाये पूर्ण ज्ञानमयधन–2
कहें केवलीश्रुत भगवन्–SS
निज अनुभव में लाता जो, द्वादशांग का ज्ञाता वो–2
अंधियारे जग में–हो–3 वो दीप जलायें रे–SS।।9।।

(10) होता जब श्रुतज्ञान यहाँ, जाने सभी पदार्थ यहाँ–2
जानो श्रुतकेवली यहाँ–SS
कुंदकुंद कह गये यही, जिनवर ने भी कहा यही–2
ऐसे ज्ञानी को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–SS।।10।।

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(11) दृग-बुध-व्रत में दृढ़ता हो, अंतस् में दृढ़भावी हो-2
तीनों आत्म स्वभाव अहो-ऽऽ
आत्म भावना रोज करो, अपने में निश्चयी बनो-2
तब ही शुद्धात्म हो-3 शिवपथ को पाए रे-ऽऽ॥11॥

(12) माने आत्म स्वभाव यहाँ, तप में तत्पर वही यहाँ-2
कर्म करे मुनि क्षरण यहाँ-ऽऽ
सभी दुखों को नाश करे, जल्दी मोक्ष प्रवास करे-2
निज के भावों से हो-3 मुक्ती मिल जाये रे-ऽऽ॥12॥

(13) अभूतार्थ व्यवहार है नय, है भूतार्थ सुनिश्चय नय-2
जान इसे दृढ़ कर निश्चय-ऽऽ
भेद दृष्टि व्यवहार करे, समता निश्चय नय वर्ते-2
समता जो पाये हो-3 शुद्धात्म समाए रे-ऽऽ॥13॥

(14) जो शुद्धात्म समझते हैं, शुद्ध निश्चयी बनते हैं-2
निज स्वभाव में रमते हैं-ऽऽ
जो अशुद्धता लखते हैं, व्यवहारी बन रहते हैं-2
ज्ञानी निश्चय नय हो-3 पा खुश हो जाए रे-ऽऽ॥14॥

(15) जीव अजीव पदार्थ यहाँ, निश्चयनय से अर्थ यहाँ-2
कहते हैं सम्यक्त्व यहाँ-ऽऽ
इनका दृढ़ निश्चय लाओ, सम्यक्दर्शन पा जाओ-2
तब ही जीवन में हो-3 अध्यात्म समाये रे-ऽऽ॥15॥

(16) बंध रहित स्पर्श बिना, अन्य रहित संयोग बिना-2
पर विशेषमय रूप बिना-ऽऽऽ
चिदानंदमय रूपमयी, ऐसा जाने शुद्धनयी-2
शुद्धात्म पाकर हो-3 पर योग हटाओ रे-ऽऽऽ॥16॥

(17) बंध रहित अनुभवता है, पर से भिन्न समझता है-2
ज्ञानी की गुणवत्ता है-ऽऽऽ
द्रव्य-भाव श्रुतमय आगम, पाता द्वादशांग अधिगम-2
सारे ही श्रुत का हो-3 ज्ञाता कहलाए रे-ऽऽऽ॥17॥

(18) चाहे दर्शन ज्ञान रहे, संवर प्रत्याख्यान रहे-2
चारित संवर ध्यान रहे-ऽऽऽ
सबमें, सममय आतम है, यह विचार अध्यातम है-2
ऐसे ज्ञानी को हो-3 शुद्धात्म दिखाए रे-ऽऽऽ॥18॥

(19) दर्शन चारित्र ज्ञान यहाँ, सही समझकर मान यहाँ-2
होगा तब ही ज्ञान यहाँ-ऽऽऽ
निश्चय नय से जान यही, तीनों एक स्वरूप यही-2
रत्नत्रय में ही हो-3 निज आत्म समाए रे-ऽऽऽ॥19॥

(20) जो राजा से धन चाहे, करे भरोसा मन चाहे-2
राजा उसे समझ आये-ऽऽऽ
तदनुकूल आचरण कर, धन राजा से पा जाए-2
सेवा करने से हो-3 वो फल पा जाए रे-ऽऽ॥20॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(21) जो चाहे शिवरूप यहाँ, वो जाने निजरूप यहाँ–2
ध्याये शुद्ध स्वरूप यहाँ–SSS
शुद्ध रूप आचरण करे, खुद पर ही विश्वास रखे–2
तब ही रत्नत्रय, हो–3 का फल पा जाए रे–SS॥21॥

(22) द्रव्य–भाव–नोकर्म यहाँ, राग–द्वेषमय धर्म यहाँ–
हो प्रतीति मम कर्म यहाँ–SS
वो समझो अज्ञानी है, भटक रहा अभिमानी है–2
कर्मों में धर्म हो–3 नहिं समझ में आये रे–SS॥22॥

(23) कर्मों से संयुक्त रहे, देहादि संसक्त रहे–2
तभी कर्म का बंध लहे–SS
पुद्गल बंध कराता है, मोक्ष जीव दिलवाता है–2
भगवन् हम सबको हो–3 ये बात बताएँ रे–SS॥23॥

(24) शुद्धभाव से शुद्ध कहे, भाव अशुद्ध अशुद्ध कहे–2
निश्चय नय निश्चय रूप कहे–SS
पुद्गल कर्मों का कर्ता, ये व्यवहार कहे–2
जैसा हो भाव हो–3 कर्ता कहलाए रे–SS॥24॥

(25) स्त्री–सुत–मुकुट–मकान–महल, मेरे मैं इनका हर पल–2
समझ इसे अज्ञान पहल–SS
ज्ञानी अन्य समझता है, पर से भिन्न स्व–गुणता है–2
अज्ञानी पर में हो–3 निज भाव बताए रे–SS॥25॥

(26) ये भी पहले मेरे थे, मैं भी पहले था इनका–2
होऊँगा आगे इनका–SSS
इस प्रकार जो भाव करे, समझो उसको मूढ़ अरे–2
संयत निर्मोही हो–3 निज अनुभव पाए रे–SS॥26॥

(27) ठगी बुद्धि सा अज्ञानी, तन धन निज माने प्राणी–2
राग–द्वेषमय दुखदानी–SS
पुद्गल को अपना माने, निज को कभी न पहचाने–2
ऐसे भावों से हो–3 भव भ्रमण बढ़ाए रे–SS॥27॥

(28) जीव नित्य उपयोगी है–दर्शनज्ञान उपभोगी है–2
कहते प्रभु संयोगी हैं–SS
जीव न पुद्गल रूप हुआ, फिर कैसे मम रूप हुआ–2
मेरा तू कहता हो–3 नय ज्ञान न पाए रे–SS॥28॥

(29) जीव अगर पुद्गल होवे, पुद्गल जीव रूप होवे–2
तब निज कहना ठीक होवे–SS
ऐसा हुआ न होवेगा–ज्ञान तभी सच सोचेगा–2
पहले की भूल हो–3 तब ही मिट पाए रे–SS॥29॥

(30) जीव और तन एक नहीं, तो जिन गुरु थुति व्यर्थ कही–2
कहते हैं सब लोग यही–SS
तन आतम को एक कहे, समझ उसे बहिरात्म अरे–2
तन की स्तुति में हो–3 गुण आत्म न आये रे–SS॥30॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(31) जीव देह को एक कहे, समझे नय व्यवहार उसे–2
निश्चय नय तन भिन्न कहे–SS
अंतस वीतरागता हो, तो तन की थुति आतम हो–2
निश्चय से जीव हो–3 तन रूप न पाये रे–SS॥31॥

(32) गुणानुवाद करें तन का, फिर भी वंदन भगवन का–2
ऐसा कहना मुनिजन का–SS
चरण भले हम छूते हैं, पर फल में गुण होते हैं–2
व्यवहार नय ही हो–3 ये हमें बताए रे–SS॥32॥

(33) तन से प्रभु हैं भिन्न यहाँ, तो तन की थुति पुण्य कहाँ–2
निश्चय नय ये कहे यहाँ–SS
ज्ञान, दर्श, सुख गुण गाये, वो प्रभु की थुति कहलाए–2
निश्चय नय को बस हो–3 गुण ही नजराएँ रे–SS॥33॥

(34) रूप नगर का बतलाये–राजा का नहिं कहलाए–2
निश्चय नय ये समझाए–SSS
करे देह का गुणस्तवन, वे होते नहिं प्रभु के गुण–2
प्रभु गुण आराधन हो–3 प्रभु का कहलाए रे–SS॥34॥

(35) जो निश्चय में तत्पर है, अक्षजयी अति सुंदर है–2
निजानुभव का अनुचर है–SS
ज्ञान गुणों से पूर्ण हुआ, ध्यान किया परिपूर्ण हुआ–2
इन्द्रिय जो जीते हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥35॥

(36) जिसने मोह मिटाया है, निज स्वभाव तब पाया है–2
अनुभव आत्म समाया है–SS
मोह जीतता जो आकर, जिन कहते उसको ऋषिवर–2
मुक्ती के पथ पर हो–3 जितमोह कहाए रे–SS॥36॥

(37) मोह घटाता जाता है, इक दिन पूर्ण मिटाता है–2
क्षीणमोह कहलाता है–SS
निश्चय के ज्ञाता गणधर, उनको कहते हैं जिनवर–2
जिनवर की महिमा हो–3 सब वेद सुनाएँ रे–SSS॥37॥

(38) ज्ञान स्व–पर का भेद करे, भिन्न वस्तु को भिन्न कहे–2
ज्ञान कराये त्याग अरे–SS
निश्चय होता ज्ञान जहाँ, होता प्रत्याख्यान वहाँ–2
ज्ञान ही त्याग हो–3 भगवन बतलाएँ रे–SS॥38॥

(39) वस्तु न मेरी, जाने जब, झट से उसको छोड़े तब–2
ऐसा करते ज्ञानी सब–SS
पर वस्तु का त्याग करे, पर भावों का त्याग अरे–2
ज्ञानी गुण पाकर हो–3 परभाव हटाए रे–SS॥39॥

(40) पर से है संबंध नहीं, मोह मेरा अनुबंध नहीं–2
मैं तो हूँ निर्बन्ध यहीं–SS
जाने जो सिद्धांत यहाँ, वही मिटाता मोह यहाँ–2
ऐसे ज्ञानी को हो–3 निर्मोह बताएँ रे–SS॥40॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(41) मम स्वभाव उपयोग यहाँ, अन्य द्रव्य उपयोग कहाँ–2
द्रव्यों से संयोग कहाँ–SS
पर द्रव्यों से भिन्न कहे– निर्ममत्व का भाव लहे–2
उसको ज्ञानीजन हो–3 निर्मोह बताएँ रे–SS॥41॥

(42) मैं एकाकी शुद्ध अरे–ज्ञानी ऐसा भाव करे–2
पर से मम संबंध परे–SS
दर्शन ज्ञान स्वरूपी हूँ, पर से भिन्न अरूपी हूँ–2
अणु भी नहिं मेरा हो–3 ज्ञानी बतलाएँ रे–SS॥42॥

जीवाधिकार

(43) राग–द्वेष के भाव करे– उसे समझता जीव अरे–2
पर द्रव्यों को आत्म कहे–SS
समझें नहीं निजात्म यहाँ, परभावों में आत्म कहाँ–2
मूढ़ी रागादि हो–3 को आत्म बताए रे–SS॥43॥

(44) तन को कोई जीव कहे–मन को कोई जीव कहे–2
सुख–दुख को ही जीव कहे–SS
भव के अध्यवसानों में – तीव्र मंद के भावों में–2
जानें जो जीव हो–3 वे मूढ़ कहाएँ रे–SS॥44॥

(45) कर्म उदय को जीव कहें, कर्मों के फल जीव कहें–2
कोई मंद गुण जीव कहें–SS
मिथ्यादृष्टि की यही दशा, सारे ही ऋषिजन कहें–2
ज्ञानी के मन में हो–3 ये भाव न आएँ रे–SS॥45॥

(46) चौरासी लख पर्यायें, मिलें कर्म से बतलाएँ–2
कोई जीव समझा लेवें–SS
कर्मों के संयोग यहाँ, नाना रूप हैं दिखलाएँ–2
मूढ़ी पर्यायों हो–3 को जीव बताए रे–SS॥46॥

(47) मंद बुद्धि सब ही जानें, आत्म, अनातम को मानें–2
निज स्वरूप नहिं पहचानें–SS
समझो ये भव पंथी हैं, अज्ञानी भव ग्रंथी हैं–2
ऐसा ज्ञानीजन हो–3 हमको बतलाएँ रे–SS॥47॥

(48) द्रव्यकर्म की पर्यायें, ज्ञान न हो तो भटकाएँ–2
नहीं जीव की कहलाएँ–SS
भव की सभी अवस्थायें, कर्मोदय से आ जाएँ–2
ज्ञानी यह जाने हो–3 सबको समझाए रे–SS॥48॥

(49) आठ कर्म हैं पुद्गलमय, राग–द्वेष दिखलाते भय–2
कहते हैं जो हैं निर्भय–SS
सभी कर्म फलदायी हैं, फल उनके दुखदायी हैं–2
इनको नाशे बिन हो–3 सुख कहीं न पाए रे–SS॥49॥

(50) राग–द्वेषमय भाव करें, ये सब ही व्यवहार कहें–2
अध्यवसायी भाव कहें–SS
जिनवाणी ये कहती है, दिव्यध्वनि में बहती है–2
ऐसे जिनवर को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–SS॥50॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(51) राजा जब भी जाता है, सेना को ले जाता है–2
पर राजा कहलाता है–SS
यही समझ व्यवहार यहाँ, कहते, जो भवपार यहाँ–2
निश्चय से आतम हो–3 शुद्धात्म कहाए रे–SS॥51॥

(52) पर से हो संयोग यहाँ, उसे कहें व्यवहार यहाँ–2
राग–द्वेषमय भाव यहाँ–SS
निश्चय से भव भाव रहित, केवल दर्शन ज्ञान सहित–2
ऐसा जो जाने हो–3 वह तत्त्व समाए रे–SS॥52॥

(53) इन्द्रिय जिसमें लेश नहीं, गंध वर्ण रस रूप नहीं–2
शब्द, चिह्न अनुमान नहीं–SS
निराकार, अविकारी है, दर्शज्ञान सुखकारी है–2
निश्चय से आतम हो–3 ऐसा बतलाएँ रे–SS॥53॥

(54) रूप रंग आकार नहीं, गंध संहनन भार नहीं–2
कर्मों का व्यपार नहीं–SS
ये कर्मों से होते हैं, जीव स्वभाव न होते है–2
जीव इन सबसे हो–3 ही भिन्न कहाए रे–SS॥54॥

(55) राग–द्वेष नहिं मोह यहाँ, मिथ्याभाव न योग यहाँ–2
कर्म नहीं नोकर्म यहाँ–SS
ये सब नहीं स्वभाव मेरे, नजराते भव के फेरे–2
रागादि भाव हो–3 नहिं जीव बताएँ रे–SS॥55॥

(56) वर्ग वर्गणाएँ नहिं है, स्पर्धक जिसमें नहिं है–2
अनुभाग स्थान नहिं है–SS
शुद्ध जीव के भाव नहीं–ऐसा यहाँ स्वभाव नहीं–2
भव के ये लक्षण हो–3 ऋषिजन बतलाएँ रे–SS॥56॥

(57) जिसमें योग स्थान नहीं, बंध–उदय स्थान नहीं–2
मार्गणा स्थान नहीं–SS
सबसे भिन्न निराला है–शुद्ध स्वभावी वाला है–2
शुद्ध हो जीव हो–3 वह शिवपुर पाए रे–SSS॥57॥

(58) स्थिति बंध स्थान नहीं, संक्लेश का नाम नहीं–2
संयम लब्धि स्थान नहीं–SS
कोई शुद्धि स्थान नहीं, इनमें जीव स्वभाव नहीं–2
जीव निश्चय से हो–3 निर्बन्ध बताएँ रे–SS॥58॥

(59) होते जीव स्थान नहीं–कोई गुण स्थान नहीं–2
कर्मबंध परिणाम नहीं–SS
ये पुद्गल संयोग यहाँ, शुद्ध जीव में रहे कहाँ–2
ऐसा जो जानें हो–3 ज्ञानी कहलाएँ रे–SS॥59॥

(60) योग कर्म गुणस्थान कहे– उदय कर्म नोकर्म कहे–2
रूप गंध रस वर्ण कहे–SS
जीव में ये व्यवहार कहे–निश्चय इनसे दूर रहे–2
कहते प्रभु कुंद हो–3 सद्मार्ग दिखाएँ रे–SS॥60॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(61) वर्णादिक के संग रहे–संश्लेष संबंध रहे–2
जीव हमेशा भिन्न रहे–SS
नीर क्षीर में मिल जाये, नीर क्षीर नहिं बन जाये–2
जीव का भाव हो–3 उपयोग बताएँ रे–SS॥61॥

(62) पथ पे कोई पथिक लुटा, कहते हैं पथ लुटा–लुटा–2
ये समझो व्यवहार प्रथा–SS
पथ नहिं लुटता यहाँ कभी–लुटते पथ में पथिक सभी–2
जीव में वर्ण हो–3 व्यवहार बताएँ रे–SS॥62॥

(63) कर्म और नोकर्म कहे– वर्णदेखकर जीव कहे–2
ऐसा सब व्यवहार कहे–SS
जीव वर्ण से भिन्न यहाँ, गुण से रहे अभिन्न यहाँ–2
कहते हैं जिनवर, हो–3 प्रभु कुंद बताएँ रे–SS॥63॥

(64) रूप गंध स्पर्श यहाँ, तन के सब आकार यहाँ–2
ये सब है व्यवहार यहाँ–SS
निश्चय नय अपनाया है, उनने ये बतलाया है–2
ऐसे गुरुवर को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–SS॥64॥

(65) गंध वर्ण संबंध यहाँ, भव में हो अनुबंध यहाँ–2
सिद्धों में संबंध कहाँ–SS
वर्ण सहित संसारी है, वर्ण बिना त्रिपुरारी है–2
गुरुवर बतलाकर हो–3 हमको समझाएँ रे–SS॥65॥

(66) वर्ण आदि को जीव कहें–कैसे फिर हम भेद करें–2
जीव और पुद्गल द्रव्य में–SS
जीव से गुण तादात्म्य रहें, त्यों पुद्गल से वर्ण रहें–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥66॥

(67) पर से हो तादात्म्य कहाँ, जब हो जीव अमूर्त यहाँ–2
पुद्गल है बस मूर्त यहाँ–SS
जीव मूर्त नहिं होता है, तो रूपी क्यों होता है–2
पुद्गल नहिं जीव हो–3 किंचित हो पाये रे–SS॥67॥

(68) जीव और पुद्गल एक कहें, तो पुद्गल भी मोक्ष लहें–2
दोनों में नहिं भेद कहें–SS
जीव, अजीव नहीं होता, पुद्गल जीव नहीं होता–2
ऐसा जो मानें हो–3 वह ज्ञान बढ़ाए रे–SS॥68॥

(69) त्रस थावर पर्याप्त यहाँ, बादर संज्ञी सूक्ष्म यहाँ–2
नामकर्म के रूप यहाँ–SS
इनसे जीव निराला है, ज्ञान दर्शगुण वाला है–2
कर्मों से जीव हो–3 ऐसा हो जाए रे–SS॥69॥

(70) कर्म प्रकृतियों का कर ज्ञान, समझ आयेंगे जीवस्थान–2
तभी हो सके अपना भान–SSS
कर्मों से उत्पन्न हुए, तो फिर कैसे जीव कहें–2
जीव कर्मों से हो–3 अतिभिन्न बताएँ रे–SS॥70॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(71) सूक्ष्म कहें पर्याप्त कहें, अपर्याप्त स्थूल कहें–2
ये सब तन की संज्ञायें–SS
नय व्यवहार अभेद कहे–सभी जीव के कहलाएँ–2
ज्ञानी यह जाने हो–3 भ्रम ज्ञान मिटाए रे–SS॥71॥

(72) मोह कर्म का उदय जहाँ, गुणस्थान का उदय वहाँ–2
कहते हैं जिनदेव यहाँ–SS
शुद्ध जीव में कर्म कहाँ, कर्मोदय में जीव कहाँ–2
निश्चय ये कहता हो–3 अज्ञान मिटाए रे–SS॥72॥

कर्ता–कर्म अधिकार

(73) आत्म स्वभाव न जाना है, आस्रव नहिं पहचाना है–2
सही सही नहिं माना है–SSS
तब तक क्रोधी मानी है, जीव यहाँ अज्ञानी है–2
कर्ता बनकर वो हो–3 निज कर्म बढ़ाए रे–SS॥73॥

(74) क्रोध यहाँ जब जीव करे, कर्मों का तब बंध करे–2
राग–द्वेष मोहादि करे–SS
नये कर्म का बंध यहाँ–यही भ्रमण का ढंग यहाँ–2
जिनवर ही ऐसा हो–3 सबको समझाएँ रे–SS॥74॥

(75) राग–द्वेष से दूर रहे – आत्म भाव भरपूर रहे–2
वही कर्म से दूर रहे–SS
आस्रव में नहिं परिणमता, क्रोध कषाय नहीं करता–2
नूतन कर्मों से हो–3 वह बंध नहिं पाए रे–SS॥75॥

(76) आस्रव जड़ता जाना है, अशुचि भाव पहचाना है–2
इसको ही दुख माना है–SS
अनुभव जब हो जाता है, आस्रव से हट जाता है–2
ज्ञानी आस्रव को हो–3 जड़मूल हटाए रे–SS॥76॥

(77) शुद्ध ममत्व रहित हूँ मैं, निश्चय नय से एक हूँ मैं–2
समाधिस्थ निज लीन हूँ मैं–SS
सभी कर्म क्षय करता हूँ, निजानुभव में रमता हूँ–2
ज्ञानी आतम को हो–3 दृग ज्ञान रमाए रे–SS॥77॥

(78) क्रोधादिक दुखरूप यहाँ, अध्रुव अशरण रूप यहाँ–2
जिनके फल भवकूप यहाँ–SS
ये सब कर्मों के फल हैं, शुद्ध जीव अति निर्मल है–2
ज्ञानी ये जाने–हो–3 अति दूर हो जाए रे–SS॥78॥

(79) कर्मों के परिणाम नहीं, नो कर्मों का नाम नहीं–2
उपादान में कर्म नहीं–SS
ऐसा भाव समाए जो, ज्ञानी ही कहलाए वो–2
निज में ही रमकर हो–3 निजज्ञान बढ़ाए रे–SS॥79॥

(80) पाप पुण्य परिणाम करे, ऐसा तो व्यवहार कहे–2
कर्ता का जो भाव रखे–SS
निश्चय नय से जीव यहाँ, कर्ता कर्म न भाव करे–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥80॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–ऽऽ

(81) कर्म उदय में जब आयें, बनें पुद्गली पर्यायें–2
जीव उन्हीं में भरमाएँ–ऽऽ
ग्रहण नहीं परिणमन करें, उनमें राग न द्वेष करे–2
ज्ञानी ये जाने हो–3 पर नहिं भरमाए रे–ऽऽ॥81॥

(82) जीव कई परिणाम करे, ज्ञानी जाने भिन्न रहे–2
उनमें नहिं परिणमन करे–ऽऽ
निश्चय से वह जान रहा–कर्ता कर्म न भाव अहा–2
परद्रव्य को वह हो–3 बहु दुर हटाए रे–ऽऽ॥82॥

(83) सुख दुख पुद्गल कर्म यहाँ, ज्ञानी जाने इन्हें यहाँ–2
रमता पर में नहीं यहाँ–ऽऽ
निश्चय से नहिं ग्रहण करे, पर में ना परिणमन करे–2
अपने में ज्ञानी हो–3 रमकर सुख पाये रे–ऽऽ॥83॥

(84) जीव न पुद्गलमय होता, पुद्गल जीव नहीं होता–2
जीव न पुद्गल ग्रहण करे–ऽऽ
जीव ज्ञान में रमण करे, निज गुण में परिणमन करे–ऽऽ
ज्ञानी यह जाने हो–3 पर में नहिं जाये रे–ऽऽ॥84॥

(85) राग–द्वेष जब होता है, जीव कर्ममय होता है–2
चेतन गुण को खोता है–ऽऽ
वैसे ही इन कर्मों से–जीव रागमय होता है–2
ज्ञानी यह जाने हो–3 सब राग हटाए रे–ऽऽ॥85॥

(86) जीव कर्म रूपादिक में, कभी नहीं अपना माने–2
कर्मदशा वह पहचाने–ऽऽ
वैसे ही ये कर्म यहाँ, चेतनगुण नहिं निज माने–2
दोनों ही मिलकर हो–3 भव भाव बनाएँ रे–ऽऽ॥86॥

(87) निश्चय से निज भावों का, आतम कर्ता होता है–2
पर कर्ता में रोता है–ऽऽ
कर्मभाव नहिं जीव करे, कर्मोदय में राग धरे–2
निश्चय से आतम हो–3 निज भाव रमाए रे–ऽऽ॥87॥

(87) अपने भावों का कर्ता, अपने भावों का भोक्ता–2
पर भावों में नहिं होता–ऽऽ
निश्चय से यह जान यहाँ, दिल से कर सम्मान यहाँ–2
तब ही समता में हो–3 ज्ञानी रम पाये रे–ऽऽ॥88॥

(89) कई कर्म का कर्ता है, उनके फल का भोक्ता है–2
व्यवहार ऐसा कहता है–ऽऽ
नहिं होगा व्यवहार यहाँ, तो फिर ये संसार कहाँ–2
ऐसा जो जाने हो–3 वह निश्चय पाये रे–ऽऽ॥89॥

(90) जीव करे पर का वेदन, और करे निजभाव रमण–2
दोनों को भोगे चेतन–ऽऽ
ये द्विक्रियावाद कहता, जिनमत में ये नहिं रहता–2
मिथ्यावादी ही हो–3 ये सही बताएँ रे–ऽऽ॥90॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(91) शुद्ध–अशुद्ध विचार यहाँ, करता दोनों जीव यहाँ–2
निश्चय से ये कहें यहाँ–SS
यही द्विक्रियावाद कहें, व्यवहारी निश्चय कह दें–2
मिथ्यावादी को हो–3 ये समझ न आये रे–SS॥91॥

(92) कर्मोदय से भाव करे, पुद्गल कर्मन बंध करे–2
भव में आतम भ्रमण करे–SS
कर्मोदय से फल भोगे, सुख–दुख उनमें भाव धरे–2
निश्चय नहिं जाने हो–3 मिथ्यात्व बढ़ाए रे–SS॥92॥

(93) मिथ्यामोह अज्ञ अविरत, क्रोधादिक में रहता रत–2
पुत्रादिक निज कहे निरत–SS
दो प्रकार मिथ्यात्व कहा, समझो सम्यग्दृष्टि अहा–2
मिथ्या भावों को हो–3 अब दूर हटाओ रे–SS॥93॥

(94) अविरत अज्ञ योग मिथ्या, कर्मरूप ये कहे यहाँ–2
जानो सभी अजीव यहाँ–SS
इनमें हो उपयोग यहाँ, तो हो जाते अजीव यहाँ–2
ऐसे दो मिथ्या हो–3 को गुरु समझाएँ रे–SS॥94॥

(95) अविरति और मिथ्यात्व कहा, अनादि से अज्ञान रहा–2
ऐसा जानो यहाँ अहा–SS
सम्यक् भाव सजाएं हम, भव के बंध हटाएँ हम–2
तब ही यह मोह–हो–3 मिटता ही जाए रे–SS॥95॥

(96) जब जब जो परिणाम करे, तब तब कर्ताभाव रहे–2
जिन प्रभुवर ये बात कहें–SS
निर्विकार मम शुद्ध रहे, ऐसा ही नयशुद्ध कहे–2
होगा विभाव हो–3 कर्ता कहलाए रे–SS॥96॥

(97) मिथ्या जीव विचार करे, उसमें कर्ताभाव रहे–2
यही विकारी भाव कहें–SS
ऐसे भावों को पाकर, पुद्गल कर्म बनें आकर–2
फिर ये चेतन को, हो–3 भव भ्रमण कराएँ रे–SS॥97॥

(98) पर को जीव अपनाता है, खुद पर का बन जाता है–2
ये अज्ञान कराता है–SS
कर्मों का कर्ता होता, फिर उसके फल को ढोता–2
भव में अज्ञानी हो–3 नित कर्म उपाए रे–SS॥98॥

(99) खुद को नहिं पर रूप करे, पर को नहिं निजरूप करे–2
गणधर, ज्ञानी उसे कहें–SS
नये कर्म नहिं बांधे वो, समता उर में साधे जो–2
ज्ञानी कर्मों में हो–3 कर्तृत्व न लाये रे–SS॥99॥

(100) अविरति और मिथ्यादर्शन, विकारमय अज्ञान सघन–2
सचमाने अज्ञानी जन–SS
क्रोध मान मद रूप न मैं, अपने शुद्ध स्वरूप हूँ मैं–2
ऐसे भावों से हो–3 कर्तापन जाये रे–SS॥100॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(101) मिथ्या विकल्प आता है, अन्य द्रव्यमय भाता है–2
खुद को धर्म बताता है–SS
ऐसे करे विकल्प जहाँ, कर्ता उसका हुआ यहाँ–2
कर्ता का भाव हो–3 मिथ्यात्व बनाए रे–SS॥101॥

(102) पर पदार्थ अपना अपना, उसको नित माने अपना–2
आँख खोल देखे सपना–SS
अपने को पर रूप करे, कर्तापन का भाव धरे–SS
उसको अज्ञानी हो–3 ज्ञानी बतलाएँ रे–SS॥102॥

(103) निश्चय नय जब आता है–कर्ताभाव मिटाता है–2
दृढ़ता स्थिरता लाता है–SS
अप्रमत्तता प्रकटाकर, रत्नत्रय दिखलाता है–2
ऐसा ही ज्ञान हो–3 कर्तत्त्व मिटाए रे–SS॥103॥

(104) राग–द्वेष नित मोह करे, इन्द्रिय मन के भाव धरे–2
द्रव्य भावमय कर्म करे–2
क्रोधादिक भावों को कर, नो कर्मों में मोह धरे–2
ऐसे व्यवहारी हो–3 अज्ञान बढ़ाएँ रे–SS॥104॥

(105) पर द्रव्यों में भाव धरे, तन्मयता से उन्हें करे–2
पर तन्मयता नहीं वरे–SS
तो फिर कर्ता कैसे हो, जब उससे तन्मय नहिं हो–2
तन्मय बिन कर्ता हो–2 कैसे हो पाये रे–SS॥105॥

(106) जड़ पदार्थ नहिं जीव करे, तन्मय खुद को नहीं करे–2
सिर्फ योग–उपयोग धरे–SS
ये निमित्त कर्मादि करे, आतम बस उपयोग करे–2
इससे तन्मयता हो–3 कैसे हो पाये रे–SS॥106॥

(107) पुद्गल द्रव्य यहाँ बदले, बने कर्म सबको ठग ले–2
व्यवहारी कर्ता कह ले–SS
निश्चय कर्ता नहीं कहे, कर्मोदय से कर्म लहे–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥107॥

(108) अशुभ और शुभ भाव करे, वैसा ही वह कर्म भरे–2
उसका ही फल भोग करे–SS
अज्ञ भाव अज्ञानी के, ज्ञानभाव हों ज्ञानी के–2
भावों के फल में हो–3 सुख–दुख बन जाएँ रे–SS॥108॥

(109) जो गुण द्रव्य में होता है, वो पर में नहिं होता है–2
द्रव्य न निजगुण खोता है–SS
जब पर में नहिं जाता गुण, अन्य द्रव्य क्यों करे गमन–2
पर द्रव्य में निज गुण हो–3 नहिं कभी दिखाएँ रे–SS॥109॥

(110) पुद्गल रूप न जीव हुआ, जीव न पुद्गल रूप हुआ–2
कर्मरूप नहिं जीव हुआ–SS
जीव न कर्मों का कर्ता, और न ही उसका भोक्ता–2
आतम निश्चय से हो–3 निजभाव बनाए रे–SS॥110॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(111) पुद्गल को जब जीव मिले, राग-द्वेष का भाव चले-2
कर्मों की पर्याय बने-ऽऽ
जीव कर्म का कर्ता है-बात यही उपचार कहे-2
ज्ञानी यह जाने हो-3 वो बंध हटाए रे-ऽऽ॥111॥

(112) युद्ध किया योद्धाओं ने, कहें लड़ा है राजा ने-2
ये कहते व्यवहार अरे-ऽऽ
वैसे ही ये कर्म यहाँ, कहें जीव ने किये यहाँ-2
इसको ज्ञानीजन हो-3 व्यवहार बताएँ रे-ऽऽ॥112॥

(113) करता पुद्गल कर्म यहाँ, राग-द्वेष उत्पन्न यहाँ-2
ग्रहण करे सब जीव यहाँ-ऽऽ
कर्म सभी उपजाता है, कहते जीव घुमाता है-2
इन सबका कर्ता हो-3 व्यवहार बताए रे-ऽऽ॥113॥

(114) जनता में हो दोष जहाँ, राजा दोषी कहें यहाँ-2
जानो ये व्यवहार यहाँ-ऽऽ
वैसे ही ये कर्म यहाँ, करता है सब जीव यहाँ-2
ये तो व्यवहार हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-ऽऽ॥114॥

(115) मिथ्या कषाय योग हमें, अविरति दे दुख भोग हमें-2
कर्मबंध संयोग कहें-ऽऽ
कर्मबंध के मूल यहाँ, जीवों को भवशूल यहाँ-2
भटके प्राणी को हो-3 गुरुजन समझाएँ रे-ऽऽ॥115॥

(116) मिथ्यादृष्टि से लेकर, सयोगकेवलि तक जाकर-2
तेरह भेद कहें मुनिवर-ऽऽ
कर्मबंध के भेद कहें, मूल में उत्तर भेद कहें-2
इनको जाने बिन हो-3 सम्यक्त्व न पाये रे-ऽऽ॥116॥

(117) गुणस्थान चेतन नहिं है, कर्मोदय से बनते हैं-2
कर्मोदय से कर्म करें-ऽऽ
भोक्ता कर्मोदय से हों, तो फिर जीव न भोक्ता हो-2
कर्मोदय जीव हो-3 को कर्म कराए रे-ऽऽ॥117॥

(118) कर्म कर्म करवाते हैं, संज्ञा यही बनाते हैं-2
नाम जीव धरवाते हैं-ऽऽ
जीव न कर्मों का कर्ता, गुणस्थान ही है कर्ता-2
निश्चय से जानो हो-3 जिनवर बतलाएँ रे-ऽऽ॥118॥

(119) जीव से दर्शनज्ञान अभिन्न, वैसे हो क्रोधादि अभिन्न-2
तो फिर जीव अजीव न भिन्न-ऽऽ
इन दोनों में भेद करो-वर्ना भेदज्ञान नहिं हो-2
भिन्न जो जाने हो-3 ज्ञानी कहलाए रे-ऽऽ॥119॥

(120) जीव अजीव एक मानें, तो फिर कर्म जीव जानें-2
मिथ्यात्वादि जीव मानें-ऽऽ
फिर सम्यक्त्व जरूरत क्या, धर्म मोक्ष की सूरत क्या?
मंदिर व भगवन् हो-3 ये व्यर्थ कहाएँ रे-ऽऽ॥120॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(121) क्रोध अलग उपयोग अलग, कर्म अलग निज आत्म अलग-2
आतम से नोकर्म अलग-ऽऽ
ऐसा जब हम मानेंगे, दोष तभी हट पायेंगे-2
आतम कर्मों से हो-3 अतिभिन्न बताएँ रे-ऽऽ॥121॥

(122) पुद्गल स्वयं न बंधता है, और न खुद परिणमता है-2
जीव परिणमन करता है-ऽऽ
ऐसा यदि मानेंगे हम, तो फिर भूल करेंगे हम-2
पुद्गल परिणामी हो-3 कैसे कहलाए रे-ऽऽ॥122॥

(123) कर्म वर्गणा रहती हैं, कर्म स्वयं नहिं बनती हैं-2
जीव संग परिणमती हैं-ऽऽ
राग-द्वेष जब आता है, वो संसार भ्रमाता है-2
तब ही इस भव में हो-3 भव मोक्ष बताएँ रे-ऽऽ॥123॥

(124) जीव हठात परिणमता, पुद्गल कर्मरूप करता-2
ये कैसे है हो सकता-ऽऽऽ
जो परिणामी नहीं यहाँ, उसमें हो परिणमन कहाँ?-2
परिणामी में ही हो-3 परिणमन बताएँ रे-ऽऽ॥124॥

(125) जीव बंधा है कर्मों से, तभी क्रोधमय हो खुद से-2
कर्मोदय बिन क्रोध अरे-ऽऽ
जीव यहाँ परिणामी है-कर्म परिणमन करता है-2
पुद्गल परिणामी हो-3 नहिं कोई बताए रे-ऽऽ॥125॥

(126) क्रोध कर्म क्रोधी करता, जीव यहाँ फिर क्या करता-2
जो करता पुद्गल करता-ऽऽ
पुद्गल में परिणाम कहाँ, परिणामी है जीव कहा-2
जीव बिन कर्म हो-3 फल नहिं दे पाए रे-ऽऽ॥126॥

(127) जीव अपरिणामी होगा, तो क्रोधादि नहीं होगा-2
ये संसार नहीं होगा-ऽऽ
कर्मोदय से जीव रहे, राग-द्वेष के भाव करे-2
तब ही ये जीव हो-3 संसार भ्रमाए रे-ऽऽ॥127॥

(128) स्वयं आत्मा क्रोध करे, ऐसा जो श्रद्धान करे-2
क्रोध कर्म तो व्यर्थ अरे-ऽऽ
क्रोधी कर्म बनाता है, तो ये गलत कहाता है-2
द्वेष का भाव हो-3 क्रोधादि कराए रे-ऽऽ॥128॥

(129) क्रोधयुती है क्रोध करे, मानयुती अभिमान करे-2
मायायुत छलकपट करे-ऽऽ
लोभ भरा हो आतम में, जीव यहाँ तब लोभ करे-ऽऽ
कर्मों की रेखा हो-3 भव भाव बनाए रे-ऽऽ॥129॥

(130) दोनों छोड़ परिग्रह को, दर्शन ज्ञान उपयोगी जो-2
शुद्धातम अनुभवी है वो-ऽऽऽ
उसे कहें निर्ग्रन्थ यहाँ, गणधर साधू संत यहाँ-2
मुक्ती के राही हो-3 ये हमें बताएँ रे-ऽऽ॥130॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(131) पर से छोड़ा मोह यहाँ, निर्विकल्प की राह वहाँ–2
ज्ञान स्वभावी भाव वहाँ–SS
पर से मोह हटाते हैं, मोह रहित कहलाते हैं–2
तीर्थंकर हमको हो–3 ये बात बताएँ रे–SS॥131॥

(132) निश्चय निश्चय भजता है, और व्यवहार को तजता है–2
धर्मी स्वयं समझाता है–SS
ऐसे मुनि शुभ त्यागी हैं, वीतराग अनुरागी हैं–2
तत्त्वों के ज्ञाता हो–3 मुनि श्रेष्ठ बताएँ रे–SS॥132॥

(133) ज्ञानभाव में है ज्ञानी, अज्ञ भाव में अज्ञानी–2
भावों से हो परिणामी–SSS
जैसा करता भाव यहाँ, कर्ता उसका बने यहाँ–2
अपने भावों का हो–3 कर्ता कहलाए रे–SS॥133॥

(134) आर्त रौद्रमय भाव करे, यही अज्ञमय भाव कहे–2
अज्ञानी नित कर्म करे–SS
ज्ञानी नित्य विरागी है, भाव ज्ञानमय पागी है–2
ज्ञानी आतम से हो–3 नहिं कर्म बंधाए रे–SS॥134॥

(135) ज्ञान उदय से ज्ञान यहाँ, ज्ञानमयी विज्ञान यहाँ–2
कहते हैं भगवान् यहाँ–SS
ज्ञानकर्म का क्षरण करे, मुक्ति रमा को वरण करे–2
ज्ञानी के भाव हो–3 बुधमयी बताएँ रे–SS॥135॥

(136) उदय अगर अज्ञान रहे, अज्ञमयी तब भाव रहे–2
कुंदकुंद गुरुदेव कहें–SS
कर्मबंध का दौर चले, जगत भ्रमण की ओर ढले–2
अज्ञानी भव में हो–3 अज्ञान बढ़ाए रे–SS॥136॥

(137) बनते कुण्डल मुकुट यहाँ, आभूषण के रूप यहाँ–2
सोना सबका मूल यहाँ–SS
लोहे से सरिये बनते, गार्डर और कड़े बनते–2
वस्तु का भाव हो–3 पर्याय बनाए रे–SS॥1137॥

(138) स्वर्ण से बनें आभूषण, लोह बनाए आयुध घन–2
यही बात जानें जन जन–SS
ज्ञान, ज्ञानमय भाव करे, अज्ञानी अज्ञान करे–2
ज्ञानी सुखदायी हो–3 अज्ञान दुखाए रे–SS॥138॥

(139) होता जब मिथ्यात्व उदय, तत्त्व रुचि नाशे दे भय–2
समझें, जिनमें ज्ञानोदय–SSS
भाव असंयम का आये, त्यागभाव सब मिट जाये–2
कर्मों की लीला हो–3 में जीव भ्रमाए रे–SS॥139॥

(140) होता जब अज्ञान उदय, स्वच्छंदी बन करता भय–2
सही मानता कर्मोदय–SS
मलिन आत्म उपयोग करे, तत्त्वों में रुचि नहीं धरे–2
अज्ञानी हरदम हो–3 दुख ही उपजाए रे–SS॥140॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-SS
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-SS

(141) योग उदय में आयेगा-भाव शुभाशुभ लाएगा-2
मन वच काय चलाएगा-SS
तीव्र मंद जब भाव बने, वैसे ही तब योग रहें-2
योग मिट जाएँ हो-3 तो कर्म न आयें रे-SS॥141॥

(142) मिथ्या, अविरति, योग यहाँ, और कषाय परमाद यहाँ-2
कर्म बंध संयोग यहाँ-SS
इनसे आठ कर्म होते, ज्ञानावरण आदि होते-2
ये ही बंधन के हो-3 कारण बतलाएँ रे-SS॥142॥

(143) कर्म बंध जब जीव करे, तब मिथ्यात्वी भाव धरे-2
उसका कारण जीव कहें-SS
इनसे ही संसारचले, राग-द्वेष व्यापार चले-2
मिथ्याभावों से हो-3 भव बंधन आये रे-SS॥143॥

(144) जीव भाव रागादि करे, वैसे ही यदि कर्म करे-2
तो दोनों ही राग करे-SS
पर ऐसा नहीं होता है, कर्ता जीव ही होता है-2
जीव तो हरदम हो-3 निजभाव रमाए रे-SS॥144॥

(145) जीव अकेला राग करे, शुद्धजीव भी राग करे-2
ऐसा होता नहीं अरे-SS
जीव कर्म मिल भाव करे, तभी रागमय भाव धरे-SS
कर्मोदय के बिन हो-3 रागादि न आये रे-SS॥145॥

(146) कर्म अकेला राग करे, तो क्यों न बिन जीव करे-2
ऐसा होता नहीं अरे-SS
कर्म उदय जब आता हैं-जीव राग कर जाता है-2
कर्म अकेला हो-3 कुछ नहिं कर पाये रे-SS॥146॥

(147) कर्म जीव से बद्ध यहाँ, आत्म प्रदेश निबद्ध यहाँ-2
इसे कहे व्यवहार यहाँ-SS
निश्चय से हैं कर्म अलग, जीव कहा अति भिन्न विलग-2
दोनों को जाने हो-3 वह ज्ञान बढ़ाए रे-SS॥147॥

(148) जीव बंधा है कर्मों से, जीव भिन्न है कर्मों से-2
दोनों नय के पक्षों से-SS
समयसारमय आतम है, दोनों से हटकरके है-2
नय के पक्षों से हो-3 अतिभिन्न बताएँ रे-SS॥148॥

(149) परमानंद स्वरूप लखे, समयसार अंतस् लख ले-2
नय पक्षों से भिन्न रहे-SS
दोनों नय का ज्ञान उसे, पर उनसे अति दूर रहे-2
तब ही वे मुनिवर हो-3 निज गुण रम पाये रे-SS॥149॥

(150) समयसार में पक्ष कहाँ, वो है नय से भिन्न यहाँ-2
ज्ञानी में ये समझ यहाँ-SS
अन्य शब्द में कहना हो, तो सम्यग्दृग ज्ञान कहो-2
रत्नत्रय धारी हो-3 अनुभवी कहाएँ रे-SS॥150॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–ऽऽ

पुण्य पाप अधिकार

(151) अशुभ कर्म है पापमयी, अच्छा कर्म है पुण्यमयी–2
दोनों हैं संसारमयी–ऽऽ
शुभ से गर संसार मिले–2 अच्छा कैसे कहें उसे–2
मोही ही शुभ को हो–3 अच्छा कह जाएँ रे–ऽऽ॥151॥

(152) इक जंजीर हो सोने की, इक जंजीर हो लोहे की–2
बाँधे दोनों ही बेड़ी–ऽऽ
वैसे ही शुभ कर्म अशुभ, दोनों बंधन की बेड़ी–2
बंधन टूटे बिन हो–3 मुक्ती नहिं पाये रे–ऽऽ॥152॥

(153) अशुभ और शुभ कर्म यहाँ, हीन स्वभावी रहें यहाँ–2
इनसे करो न प्रीति यहाँ–ऽऽ
इनसे मत सम्बन्ध रखो, निज स्वभाव से प्रेम करो–2
दोनों आतम का हो–3 निजभाव मिटाएँ रे–ऽऽ॥153॥

(154) दुर्जन स्वभाव जिसका हो, उससे किसको प्रेम अहो–2
कौन करे सम्बन्ध कहो–ऽऽ
वैसे ही ये कर्म यहाँ, भटकाते संसार यहाँ–2
इनका स्वभाव हो–3 भव भ्रमण कराएँ रे–ऽऽ॥154॥

(155) ज्ञानी यही विचार करे, कर्म प्रकृति को बुरा कहे–2
फिर क्यों उनसे राग करे–ऽऽ
त्यज उनसे संबंध सभी, निज स्वभाव में लीन रहे–2
ज्ञानी की ज्ञानी हो–3 पहिचान बताएँ रे–ऽऽ॥155॥

(156) राग से होता बंध यहाँ, वैरागी निर्बन्ध यहाँ–2
कहते हैं सर्वज्ञ यहाँ–ऽऽ
यहाँ शुभाशुभ कर्मों में, रंजित मत होना पर में–2
तब ही कर्मों से हो–3 मुक्ति मिल पाए रे–ऽऽ॥156॥

(157) निश्चय से कैवल्यस्वरूप, परमारथ दृगज्ञान स्वरूप–2
शुद्ध–बुद्ध चैतन्य स्वरूप–ऽऽ
जिसमें ये सब दिखजाएँ, उसी रूप हम हो जायें–2
ऐसी तन्मयता हो–3 निर्वाण दिलाए रे–ऽऽ॥157॥

(158) निश्चय में जो रहे नहीं, पर में भटके फिरे यहीं–2
व्रत धारण वो करे सभी–ऽऽ
ये व्रत तप अज्ञानमयी, अज्ञानी को लगें सही–2
ऐसे तप व्रत से हो–3 भव नहिं मिट पाए रे–ऽऽ॥158॥

(159) ज्ञान रहित जो व्रत धारे, शील तपों को आचारे–2
नियम रूप रह सब पाले–ऽऽ
अज्ञानी के व्रत संयम, नहीं दिलाते मुक्ति परम–2
ऐसे अज्ञानी हो–3 निर्वाण न पायें रे–ऽऽ॥159॥

(160) नहीं जानते निश्चय को, लीन रहें व्यवहार अहो–2
धर्म समझते पुण्य अहो–ऽऽ
क्रियाकाण्ड में रमते हैं, नहिं परमार्थ समझते हैं–2
ऐसा ही पुण्य हो–3 भव में भटकाए रे–ऽऽ॥160॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(161) तत्त्व रुचि सम्यग्दर्शन, तत्त्वज्ञान है सम्यग्ज्ञान–2
है चारित्र निजात्म रमण–SS
विभाव भाव दूर करना, चारित का है रूप प्रथम–2
तीनों मिलने को हो–3 शिवमार्ग बताएँ रे–SS॥161॥

(162) निश्चय नय को छोड़ दिया, कर्तव्यों को पकड़ लिया–2
ज्ञानी बन वो नहीं जिया–SS
निज स्वरूप में लीन रहें, वही यतीश्वर मुक्ति वरें–2
कर्मों का क्षय कर हो–3 वे शिवपुर को पाएँ रे–SS॥162॥

(163) मैला वस्त्र जो होता है, श्वेतपने को खोता है–2
धवल मलिन सा होता है–SS
वैसे ही सम्यक्त्व धवल, मैला करता मिथ्यामल–2
संसारी जीव हो–3 फिर भ्रमण बढ़ाए रे–SS॥163॥

(164) मैल वस्त्र में लग जाये, श्वेतपना खुद मिट जाये–2
वैसे ही निज आतम में–SS
मल अज्ञान चिपक जाये, तो फिर ज्ञान निपट जाये–2
ज्ञान मिटते ही हो–3 सच नहिं दिख पाए रे–SS॥164॥

(165) धवलपना मिट जाता है, मैल जहाँ चढ़ जाता है–2
वस्त्र नहीं वह भाता है–SS
त्यों कषाय मल आता है, वो चारित्र मिटाता है–2
जीव फिर भव में हो–3 भटकन ही पाये रे–SS॥165॥

(166) जानन देखन वाला है, आत्म स्वभाव निराला है–2
कर्मों से मतवाला है–SS
कर्म ज्ञान दृग ढकता है, तब अज्ञान उपजता है–2
अज्ञानी भव में हो–3 कुछ जान न पाये रे–SS॥166॥

(167) आता जब मिथ्यात्व उदय, मिटता दर्शन ज्ञान उभय–2
मिथ्याकर्म दिखाता भय–SS
मोही बन दुख ढोता है, हरदम जग में रोता है–2
दुख का मिथ्यात्व हो–3 कारण बतलाएँ रे–SS॥167॥

(168) सूरज जब छिप जाता है, तम जग में छा जाता है–2
सुख मिट दुख आ जाता है–SS
आता जब अज्ञान यहाँ, छिप जाता तब ज्ञान यहाँ–2
अज्ञानी जग में हो–3 सच लख नहिं पाए रे–SS॥168॥

(169) भाव कषाय उदय आये, चारित्र भाव मिटा जाये–2
अविरत पना उभर आये–SS
हो कषाय जब मंद यहाँ, चारित भाव प्रकट जाये–2
कर्मों को जाने हो–3 वह ज्ञान बढ़ाए रे–SS॥169॥

(170) ये मिथ्यात्व योग अविरति, और कषायों की परिणति–2
चेतन को करते जड़मति–SS
इनका हो संयोग जहाँ, दुख के दे संयोग यहाँ–2
भेद–अभेद हो–3 परिणाम दिखाएँ रे–SS॥170॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(171) मिथ्यात्वादि कर्म यहाँ, आठ कर्म मय हुए यहाँ–2
भव में बंधन करे यहाँ–SS
राग–द्वेष फिर भाव बनें, मिथ्यामोह स्वभाव बनें–2
इन सबका कारण हो–3 यह जीव बताएँ रे–SS॥171॥

(172) सम्यग्दृष्टि रहे कहीं, करे कर्म का बंध नहीं–2
होता है निर्बन्ध यहीं–SS
जाने बंधित कर्म यहाँ, राग–द्वेष नहिं करे यहाँ–2
तब ही वे मुनिवर–हो–3 निर्बन्ध कहाएँ रे–SS॥172॥

(173) जीव राग अपनाएगा, नया बंध हो जाएगा–2
राग बंध का कारण है–SS
राग रहित हैं जीव यहाँ, कर्मबंध हों उन्हें कहाँ?
ज्ञाता–दृष्टा का हो–3 वह भाव बनाए रे–SS॥173॥

(174) तरु में फल पक जाते हैं, शाखा से गिर जाते हैं–2
फिर नहिं तरु जुड़ पाते हैं–SS
पक जाते हैं कर्म यहाँ, झड़ जाते हैं सभी यहाँ–2
फिर वे ही कर्म हो–3 नहिं उदय में आये रे–SS॥174॥

(175) पहले के जो कर्म बंधे, अज्ञ बने भव रमे रहे–2
मिट्टी सम ज्ञानी समझे–SS
उनका उदय भले ही हो, ज्ञानी राग रूप नहिं हो–2
आस्रव फिर खुद ही हो–3 उसके रुक जाए रे–SS॥175॥

(176) मिथ्यात्व अविरति योग कषाय, कर्मबंध के हेतु बताए–2
आत्मज्ञान इनसे ढक जाय–SS
ये ही ज्ञान–अज्ञान करे, नये कर्म का बंध करे–2
तब ही तो ज्ञानी हो–3 निर्बन्ध कहाए रे–SS॥176॥

(177) जब तक ज्ञान जघन्य रहे, वीतरागता दूर रहे–2
भले हि श्रेणी पर चढ़ ले–SS
गिरकर कर्मन बंध करे, राग–द्वेष के भाव धरे–2
क्षायिक हो ज्ञान हो–3 तो बंध न आये रे–SS॥177॥

(178) दर्शन ज्ञान चरित्र यहाँ, जब तक रहें जघन्य जहाँ–2
कर्मों का हो बंध वहाँ–SS
पूर्ण ज्ञान में बंध कहाँ? ज्ञानी हो निर्बन्ध वहाँ–2
थोड़ा हो ज्ञान हो–3 वो बंध कराये रे–SS॥178॥

(179) सम्यग्दृष्टि भाव लिए, कर्मबंध जो पूर्ण किये–2
वे सत्ता में रखे हुए–SS
राग भाव उपयोग रहे, तो कर्मों का बंध लहे–2
रागी नहिं होवे–हो–3 तो बंध न आये रे–SS॥179॥

(180) सत्ता में जो कर्म रहें, उदय पूर्व नहिं भोग्य कहें–2
उदय बिना नहिं राग रहे–SS
जैसे कन्या बाल कही, नहीं भोगने योग्य कहीं–2
युवती होते ही हो–3 वह राग बढ़ाए रे–SS॥180॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(181) सत्वकर्म नहिं भोग्य कहे, भोगें जिनका उदय रहे–2
वैसे ही वसुकर्म कहे–SS
कर्मोदय में राग बढ़े, आठ कर्ममय बंध करे–2
तब ही यह जीव हो–3 भव में बंध जाए रे–SS॥181॥

(182) सम्यग्दृष्टि कर्म करे, पर उसमें नहिं राग धरे–2
इसीलिए निर्बन्ध रहे–SS
भावास्रव का भाव नहीं, द्रव्यास्रव फिर रहे नहीं–2
सम्यग्दृष्टि को हो–3 नहिं कर्म बंधाए रे–SS॥182॥

(183) राग–द्वेष नहिं मोह धरे, सम्यग्दृष्टि शुद्ध अरे–2
भावास्रव नहिं भाव करे–SS
आस्रव बंध नहीं होता–मुनि स्वच्छंद नहीं होता–2
भाव बिन द्रव्य हो–3 आस्रव नहिं आये रे–SS॥183॥

(184) आठ कर्म का बंध करे, चउ प्रत्यय अनुबंध करें–2
राग–द्वेष संबंध करें–SS
राग भाव संबंध नहीं, तो फिर होता बंध नहीं–2
राग मिट जाये हो–3 तो कर्म न आए रे–SS॥184॥

(185) पुरुष करे आहार यहाँ, जठराग्नि अनुसार यहाँ–2
चर्बी माँस आकार यहाँ–SSS
कई रूप परिणमन करे, भोजन है इक रूप अरे–2
अपने समय पर हो–3 धातु बन जाए रे–SS॥185॥

(186) राग भाव अपना करके, मिथ्यात्वादि भाव धरके–2
नये कर्म बंधन करके–SS
आठ कर्ममय द्रव्य बने, फिर उनका फल यहाँ मिले–2
शुद्ध हो भाव हो–3 तो कर्म न आयें रे–SS॥186॥

अथ संवराधिकार:

(187) उपयोग हो उपयोग में, क्रोध रहेगा क्रोध में–2
क्रोध नहीं उपयोग में–SS
उपयोग में न क्रोध है–निश्चय नय का बोध है–2
क्रोध को छोड़ो हो–3 उपयोग में आओ रे–SS॥187॥

(188) कर्मों में नोकर्मों में, है उपयोग नहीं इनमें–2
उदयोग में ये नहिं है–SS
कर्म नहीं उपयोग करे, दर्शन ज्ञान उपयोग करे–2
उपयोग जीवन हो–3 को धन्य बनाए रे–SS॥188॥

(189) ज्ञान अगर विपरीत नहीं, होता शुद्ध उपयोग यहीं–2
मिटते सभी विकार यहीं–SS
निज स्वभाव में स्थित हो–खुद में होता लीन यहीं–2
ऐसा स्थिर ज्ञान हो–3 कैवल्य दिलाए रे–SS॥189॥

(190) सोना आग से तपता है–स्वर्णपना नहिं तजता है–2
ज्यादा और चमकता है–SS
कर्म सताये ज्ञानी को, ज्ञानपना नहिं छोड़े वो–2
ज्ञान से ज्ञानी हो–3 समता उर लाए रे–SS॥190॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(191) ज्ञानी शुद्धोपयोग में, अज्ञानी दुख भोग में–2
दोनों अपने योग में–SS
ज्ञानी ज्ञानामृत पीता, अज्ञानी तम में जीता–2
अज्ञानी भव में हो–3 नित राग बढ़ाए रे–SS॥191॥

(192) जो शुद्धात्म समझता है, खुद में अनुभव करता है–2
वही शुद्धमय बनता है–SS
आत्म अशुद्ध समझ आये,कभी शुद्ध नहिं हो पाए–2
वह तो कभी भी हो–3 शुद्धात्म न पाए रे–SS॥192॥

(193) पुण्य–पाप नहिं मन लाये, मन उसमें नहिं भटकाए–2
इच्छाओं से हट जाए–SS
वही स्वभाव समझता है, दर्श–ज्ञान में रमता है–2
कर्मों का संवर हो–3 वो यति कर जाये रे–SS॥193॥

(194) सभी परिग्रह तजता है, आत्म ध्यान को करता है–2
तभी स्वयं में रमता है–SSS
कर्म और नोकर्म विचार, मन से सभी विनशता है–2
संवर जीवन में हो–3 वो मुनि अपनाए रे–SS॥194॥

(195) विषय कषायों से हटकर, भाव दर्श–बुध में रमकर–2
ज्ञान स्वभावमयी बनकर–SS
शुद्धात्म को ध्याता है, तब संवर हो पाता है–2
साधू ही ऐसी हो–3 विधि अपना पाए रे–SS॥195॥

(196) शब्द, देशना जनवाती, ज्ञान सभी को करवाती–2
दुनिया ये कहती जाती–SS
वैसे मन से ग्रहण करे, वचनों से उच्चरित करे–2
मानो प्रत्यक्ष हो–3 ये गुरु समझाएँ रे–SS॥196॥

(197) केवलज्ञानी जान सकें, आत्मरूप प्रत्यक्ष लखें–2
और सभी मन से जानें–SS
मन से भी उसको जानें, जिसे केवली प्रभु जानें–2
लेकिन साक्षात् हो–3 भगवन् कर पाएँ रे–SS॥197॥

(198) मिथ्या परिणति योग यहाँ, जड़बुद्धि अविरति यहाँ–2
अध्यवसान हैं चार यहाँ–SS
राग–द्वेष और मोह करें, दुखदायी संयोग करें–2
इनके मिटते ही हो–3 आस्रव मिट जाए रे–SS॥198॥

(199) चारों हेतु मिटाता है, वो ज्ञानी कहलाता है–2
आस्रव तब रुक जाता है–SS
आस्रव के रुक जाने से, कर्मबंध रुक जाता है–2
तब ही संवर का हो–3 क्रम चलता जाये रे–SS॥199॥

(200) रुक जाता है कर्म जहाँ, रुक जाए नो कर्म वहाँ–2
तो फिर हो संसार कहाँ?–SS
ज्ञान उभरकर आता है, सारे कर्म मिटाता है–3
कर्म मिटने पर हो–3 मुक्ती पा जाये रे–SS॥200॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

अथ निर्जराधिकार

(201) वीतरागता मुनि धरे, विषय भोग फिर भले करे–2
फिर भी उसके कर्म झड़ें–SS
अंतस में जब राग नहीं, कर्म निर्जरा रहे वहीं–2
ऐसे ही साधू हो–3 विधिबंध मिटाएँ रे–SS॥201॥

(202) बाह्य शुभाशुभ वस्तु मिले, वेदनीय तब कर्म खिरे–2
उदय उदीरणा तभी दिखे–SS
कर्म सभी खिर जाते हैं, नये नहीं बंध पाते हैं–2
समदृष्टि उनमें हो–3 नहिं राग दिखाए रे–SS॥202॥

(203) विष खाकर नहिं वैद्य मरे, ऐसी शक्ति हृदय धरे–2
विष का फल नहिं प्राप्त करे–SS
वैसे ही ज्ञानी मुनिवर, कर्मों का फल नहीं चखे–2
भोगे कर्मों को हो–3 नहिं राग दिखाए रे–SS॥203॥

(204) मद्य अरति से पीता है, बिना नशे के जीता है–2
मतवाला नहिं होता है–SS
त्यूँ पदार्थ को समदृष्टि, राग रहित उपभोग करे–2
उसको कर्मों का हो–3 अनुबंध न आये रे–SS॥204॥

(205) भोग करे निर्बन्ध रहे, बिना भोग के बंध करे–2
ज्ञान, मूर्ख का खेल अरे–SS
बिनाभाव के कर्म करे, उसे नहीं हो बंध अरे–2
ज्ञानी भोगों में हो–3 नहिं भाव दिखाए रे–SS॥205॥

(206) पुद्गल कर्म उदय आये, राग भाव को उपजाए–2
सम्यग्दृष्टि समझ जाए–SS
ज्ञान स्वरूपी एक हूँ मैं, निश्चय से ज्ञायक हूँ मैं–2
कर्मों के चक्कर हो–3 में फँस नहिं पाये रे–SS॥206॥

(207) कर्म स्वभाव नहीं मेरा, तो उनका फल क्यों मेरा?–2
पुद्गल कर्म नहीं मेरा–SS
मैं ज्ञायक, जड़, कर्म यहाँ, देह से मैं हूँ भिन्न यहाँ–2
क्रोधादि कर्म हो–3 रागादि बढ़ाएँ रे–SS॥207॥

(208) वस्तु स्वरूप जानता है, निज स्वभाव मानता है–2
ज्ञायक भाव समझता है–SS
कर्मोदय को जान रहा, उन्हें न अपना मान रहा–2
ज्ञानी वैरागी हो–3 भव राग हटाए रे–SS॥208॥

(209) कई तरह के कर्म यहाँ, कई तरह के उदय यहाँ–2
कई तरह फल दिखे यहाँ–SS
ज्ञायक स्वभाव मेरा है, कर्म स्वभाव न मेरा है–2
अपना और पर का हो–3 ज्ञाता कहलाए रे–SS॥209॥

(210) रंच मात्र भी राग रहे, द्वादशांग का ज्ञान रहे–2
फिर भी आत्म न ज्ञान लहे–SS
खुद को नहीं जानता जो, गैरों को क्या जाने वो–2
रागी, सम्यक्त्वी हो–3 हो कभी न पाये रे–SS॥210॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(211) निज–पर का नहिं ज्ञान जिसे, कैसे हो सम्यक्त्व उसे–2
जीव–अजीव न भेद जिसे–SS
ज्ञान बिना सम्यक्त्व कहाँ–कभी न होवे उसे यहाँ–2
सम्यग्दृष्टि को हो–3 नहिं राग सुहाये रे–SS॥211॥

(212) भोग भाव मन आते हैं, वस्तु ज्ञान करवाते हैं–2
सभी नष्ट हो जाते हैं–SS
ज्ञानी इनको तजता है, ज्ञायक भावी रहता है–2
तब ही तो ज्ञायक हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥212॥

(213) एक बंध का भाव यहाँ, एक भोग का भाव यहाँ–2
दोनों से भव राग यहाँ–SS
ज्ञानी दोनों को जाने, राग नहीं, उनमें ठाने–2
तब ही वे मुनिवर हो–3 निर्बन्ध कहाएँ रे–SS॥213॥

(214) ये शरीर परद्रव्य यहाँ, मेरा होता कभी कहाँ?
मैं चेतन ये जीव कहाँ?–SS
मैं इन सबका ज्ञाता हूँ, राग–द्वेष नहिं भाता हूँ–2
परद्रव्य मेरे हो–3 हो सकें न होंगे रे–SS॥214॥

(215) द्रव्यभाव द्वयकर्म यहाँ, अस्थिर हो नष्ट यहाँ–2
कैसे अपना कहें यहाँ–SS
मम स्वभाव अनुभवमय है, स्थिर प्रत्यक्ष ज्ञानमय है–2
कर्म मिट जाते हो–3 निज भाव न जाये रे–SS॥215॥

(216) तन मेरा धन मेरा है, कहे वतन ये मेरा है–2
ये अज्ञान बसेरा है–SS
पर को अपना कहे नहीं, समझो ज्ञानी उसे यहीं–2
ज्ञानी पर में नहिं हो–3 निज भाव बनाए रे–SS॥216॥

(217) ये शरीर छिदभिद जाये, मिटे या कोई ले जावे–2
ज्ञानी कभी न घबरावे–SS
तन से मैं अतिभिन्न यहाँ, तन मेरा हो सके कहाँ–2
ऐसा निश्चय कर हो–3 वह स्वस्थ रहाये रे–SS॥217॥

(218) इच्छाएँ सब छोड़ यहाँ, मन आतम से जोड़ यहाँ–2
पर में सिर मत फोड़ यहाँ–SS
निज में ही संतोष धरो, अपने में तल्लीन रहो–2
तब ही शाश्वत सुख हो–3 तुझको मिल पाये रे–SS॥218॥

(219) मति–श्रुत–अवधि–मन:पर्यय, केवल, पाँच ज्ञान पर्यय–2
लेकिन ज्ञान एक सुखमय–SS
जो परमार्थ स्वरूप कहा, निश्चय मुक्तिदूत कहा–2
उसको पाकर के हो–3 मुनि मुक्ति पाये रे–SS॥219॥

(220) निश्चय ज्ञान न पाएगा, कर्म नहीं मिट पाएगा–2
बंध ही होता जाएगा–SSS
ज्ञान बिना कर्तव्य करे, मुक्तिपद नहिं उसे मिले–2
शुद्ध हो ज्ञान हो–3 वो मुक्ति दिलाए रे–SS॥220॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–ऽऽ

(221) इच्छा मन में नहीं धरे, इच्छा बिन, वह पुण्य करे–2
तभी परिग्रह नहीं रहे–ऽऽ
ज्ञानी तो बस ज्ञायक है, वीतरागता लायक है–2
ज्ञानी शिवनायक हो–3 खुद ही बन जाए रे–ऽऽ॥221॥

(222) पाप विचार न लाये जो, इच्छा बिन हो जाए वो–2
राग–द्वेष नहिं चाहे वो–ऽऽ
वह तो जाननहारा है, ज्ञानी उसे विचारा है–2
कोई परिग्रह हो–3 मन में नहिं लाए रे–ऽऽ॥222॥

(223) धर्म–अधर्म नहीं चाहे, शास्त्र ज्ञान भी नहिं चाहे–2
गतियों में सुख ना चाहे–ऽऽ
वह तो सबका ज्ञाता है, निज स्वभाव को भाता है–2
ऐसे ज्ञानी ही हो–3 ज्ञाता कहलाए रे–ऽऽ॥223॥

(224) भोजन की नहिं चाह करे, इच्छाएँ नहिं हृदय धरे–2
ज्ञानी उसको सभी कहें–ऽऽ
इच्छा बिन भोजन करता, वह तो बस ज्ञाता रहता–2
ज्ञानी दुनियाँ में हो–3 निस्संग कहाए रे–ऽऽ॥224॥

(225) पीने की भी चाह नहीं, समझो ज्ञानी उसे यहीं–2
पापों में वो लिप्त नहीं–ऽऽ
इच्छा बिन आसक्ति नहीं, उसे परिग्रह कभी नहीं–2
वह तो पानक का हो–3 ज्ञाता कहलाए रे–ऽऽ॥225॥

(226) राग–द्वेष सब भावों को, इच्छाओं की चाहों को–2
दूर है इनसे ज्ञानी वो–ऽऽ
ज्ञायक बनकर रहता है, रखता मन में समता है–2
पर के भावों में हो–3 वह मन नहिं लाये रे–ऽऽ॥226॥

(227) भोग त्याग का भाव धरे, पर भव फल नहिं चाह करे–2
भूतकाल नहिं भोग करे–ऽऽ
छोड़े भोग त्रिकाल यहाँ, उसको ज्ञानी समझ यहाँ–2
उसको निश्चित ही हो–3 मंजिल मिल जाये रे–ऽऽ॥227॥

(228) सब द्रव्यों से राग तजे, नया कर्म नहिं बंध करे–2
कीचड़ में ज्यों स्वर्ण रहे–ऽऽ
यूँ अलिप्त रहता ज्ञानी, कहती जिनवर की वाणी–2
ज्ञानी की परिणति हो–3 नित ज्ञान बढ़ाए रे–ऽऽ॥228॥

(229) द्रव्यों में नित राग रखे, कर्मों का नित बंध करे–2
अज्ञानी इसलिए कहें–ऽऽऽ
जैसे कीचड़ में लोहा, खाता रहता जंग यहाँ–2
अज्ञ की परिणति हो–3 नित बंध कराए रे–ऽऽ॥229॥

(230) नागफनी, थूहर की जड़, हथिनीमूत्र सिंदूर पकड़–2
शीशा धातु संग अग्नि रगड़–ऽऽ
पुण्योदय गर जीवन में, स्वर्ण बने झट बर्तन में–2
गुरुवर हम सबको हो–3 ये बात बताएँ रे–ऽऽ॥230॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(231) द्रव्य कर्म है कीट यहाँ, राग कालिमा कही यहाँ–2
ये विभाव दें हमें यहाँ–SS
रत्नत्रय परमौषधि है, भेद अभेद द्वयी विधि है–2
इसको पाकर के हो–3 विधि राग मिटाए रे–SS॥231॥

(232) आत्मध्यान की अग्नि जला, तप संयम की ज्योति कला–2
तब ही होगा यहाँ भला–SS
यही तरीका अपनाओ, वीतरागता उर लाओ–2
तब ही यह जीवन हो–3 मंजिल पा जाये रे–SS॥232॥

(233) जीव अजीव मिश्र भोगे, फिर वो श्वेतमयी होवे–2
काला रंग नहिं तन होवे–SS
निज स्वभाव में श्वेत रहे, वैसे ही यह जीव रहे–2
अपना गुण कोई हो–3 नहिं छोड़ जु पाए रे–SS॥233॥

(234) जीव अजीव मिश्र भोगे, फिर भी राग नहीं होवे–2
ये आश्चर्यमयी होवे–SS
ज्ञानी पर में रमे नहीं, रमण ज्ञान में करे यहीं–2
उसकी हर चर्या हो–3 में ज्ञान दिखाए रे–SS॥234॥

(235) वही शंख जब श्वेतपना, छोड़े होवे कृष्ण घणा–2
खो जाता तब श्वेत पना–SSS
जब निर्मलता खो जावे, आत्म कालुषमय हो जावे–2
तब तो आतम में हो–3 दुख ही दुख आये रे–SS॥235॥

(236) शंख तजे जब श्वेतपना, जीव तजे त्यों ज्ञानपना–2
हो काला, अज्ञानघना–SS
फिर ये जीव अज्ञानी हो, इसमें किसका दोष कहो?–2
खुद ही यह जीव हो–3 अज्ञान बढ़ाए रे–SS॥236॥

(237) ज्ञानी भी अज्ञानी हो, अज्ञानी भी ज्ञानी हो–2
ये अंतस् का भाव अहो–SS
जब विभाव आ जाता है, निज स्वभाव मिट जाता है–2
श्वेत हो शंख हो–3 काला हो जाए रे–SS॥237॥

(238) राजा की सेवा करता, धन वह तभी दिया करता–2
खुश हो यहाँ जिया करता–SS
सेवा बिन कुछ मिले नहीं, नियम है सब जगह यही–2
ऐसा ही ज्ञान हो–3 कर्तव्य बढ़ाए रे–SS॥238॥

(239) अज्ञानी नित कर्म करे, कर्मों को ही धर्म कहे–2
उसके फल में मस्त रहे–SS
कर्मों की सेवा करता, भोगों का फल ही चखता–2
निष्काम कर्म हो–3 ज्ञानी कर जाये रे–SS॥239॥

(240) फल इच्छा नहिं रखे यहाँ, फिर भी सेवा करे यहाँ–2
उसको कुछ नहिं मिले यहाँ–SS
ज्ञानी फल नहिं चाहता है, तभी कर्म नहिं मिलता है–2
कर्म नहिं आये हो–3 तो भव मिट जाए रे–SS॥240॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(241) फल इच्छा नहिं चाहत हो, कर्म करे नहिं आहत हो–2
उसके मन में राहत हो–SS
सम्यग्दृष्टि विरागी है, अनुभव का अनुभागी है–2
भव के सुख दुख में हो–3 संबंध न पाये रे–SS॥241॥

(242) समदृष्टि नि:शंक सदा, भय नहिं मन में रहे कदा,
वे मुनिवर गुणवान सदा–SS
सातभयों से मुक्त रहे, कर्तव्य में अनुरक्त रहे–2
ऐसे ही मुनिवर हो–3 शिवपद को पाए रे–SS॥242॥

(243) मिथ्यात्व अविरति कषाय योग, ये सब भव दुख के हैं रोग–2
इनमें नहिं देता उपयोग–2
इनको जिसने मिटा दिया, वह समदृष्टि यहाँ हुआ–2
उसको ये कर्म हो–3 दुख नहिं दे पाएँ रे–SS॥243॥

(244) चाह न कर्मफलों की हो, और न सब धर्मों की हो–2
उसमें ही नि:कांक्षित हो–SSS
इच्छाएँ नहिं जिसे यहाँ, सम्यग्दृष्टि समझ यहाँ–2
अंग नि:काक्षित हो–3 समदृष्टि पाये रे–SS॥244॥

(245) करे न ग्लानि पदार्थों में, और कभी नहिं मुनियों में–2
रत्नत्रय धारी यति में–SS
उसमें निर्विचिकित्सा गुण, सम्यग्दृष्टि यहाँ निपुण–2
कहते हैं ऋषिजन हो–3 जिनवर बतलाएँ रे–SS॥245॥

(246) सभी कर्म का उदय रहे, मोह मूढता नहीं धरे–2
भावों में सम्यक्त्व वरे–SS
अमूढ़ दृष्टि अंग उसे, तत्त्वज्ञानमय भाव जिसे–2
मिथ्या बातों में हो–3 मन नहीं लगाए रे–SS॥246॥

(247) धर्मी की त्रुटि ढकता है, सिद्धभक्ति में रमता है–2
सभी विभाव विनशता है–SS
उसमें हो उपगूहन अंग, मिथ्याभाव करे जो भंग–2
ऐसे मुनिवर ही हो–3 भव से तिर जाएँ रे–SS॥247॥

(248) उन्मार्गी जो लोग यहाँ, मन में जिसके भोग यहाँ–2
नहीं धर्म उपयोग यहाँ–2
धर्म में उनको स्थिर करता, स्थितीकरण अंग वरता–2
समदृष्टि उसको हो–3 जिनदेव बताएँ रे–SS॥248॥

(249) पाठक, साधु,सूरि, मुनिवर, प्रेम रखे हरदम उन पर–2
सेवा मन से करे प्रखर–SS
हो वात्सल्य अंग उसमें, समदृष्टि वो है भव में–2
ऐसा ही धर्मी हो–3 नित धर्म बढ़ाए रे–SS॥249॥

(250) आत्मानुभूति करे स्वपर, विद्यारथ, आरूढ़ होकर–2
मन के वेग सभी नशाकर–SSS
सम्यग्दृष्टि होता है जो, ज्ञान प्रकाशन करता वो–2
जिनवर का ज्ञान हो–3 वह जग फैलाये रे–SS॥250॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

बंध अधिकार

(251) फैली होवे धूल जहाँ, करता है व्यायाम वहाँ–2
कर लेकर हथियार यहाँ–SSS
तन पर तेल लगा करके, ताकत को पैदा करके–2
तन में कर राग हो–3 ऐसा कर जाए रे–SS॥251॥

(252) कैले के तरु को काटे, ताड़वृक्ष शाखा छाँटे–2
छेदे भेदे और बाँटे–SS
मेहनत जो कर जाता है, बहुत पसीना आता है–2
गीला होकर तन हो–3 चिकना हो जाए रे–SS॥252॥

(253) हाथ पाँव को चपल करे, फैलाए संकुचित करे–2
ऐसा वह जो रोज करे–SS
धूल वहाँ पर उड़ती है, तन पर खूब चिपकती है–2
धूल क्यों चिपकी हो–3 यह बात बताएँ रे–SS॥253॥

(254) तेल के कारण धूल यहाँ, चिपक गई बन मैल यहाँ–2
मैला तन हो गया यहाँ–SSS
कसरत से नहिं धूल लगे, तेल के कारण धूल लगे–2
तेल नहिं होता हो–3 तो धूल न आये रे–SS॥254॥

(255) वैसे ही यह जीव यहाँ, रागादि कर भाव यहाँ–2
नाना करता कर्म यहाँ–SS
कर्मधूलि आ जाती है, आतम से लग जाती है–2
इसको ही जिनवर हो–3 विधिबंध बताएँ रे–SS॥255॥

(256) तेल लगाये बिन श्रम हो, वहाँ धूलि तन पर नहिं हो–2
चाहे कितनी मेहनत हो–SS
मिट्टी भी खूब उड़े वहाँ, तन पर फिर वो लगे कहाँ?–2
मिट्टी तन छूकर हो–3 भू–पर गिर जाए रे–SS॥256॥

(257) ताड़ वृक्ष की जड़ काटे, केले के तरु को छाँटे–2
बाँस छेद भेदे बाँटे–SS
जीव अजीव का घात करे, बाहर में बहु काम करे–2
तन को वह अपने हो–3 मजबूत बनाए रे–SS॥257॥

(258) उपकरणों से घात करे, नाना विधि वो काम करे–2
तन से मेहनत खूब धरे–SSS
फिर भी चिपके धूल नहीं, ऐसा कहते सभी यमी–2
तेल नहिं तन पर हो–3 तो धूल न आये रे–SS॥258॥

(259) तेल नहीं होगा तन पर, धूल न चिपके मल बनकर–2
मेहनत कितनी भी तू कर–SS
तेल धूल चिपकाती है, मलिन हमें कर जाती है–2
मेहनत नहीं छोड़ो हो–3 तन तेल हटाओ रे–SS॥259॥

(260) योग, भोग में लगे मगर, राग नहीं उपयोग में कर–2
समदृष्टि का भाव प्रवर–SS
भव में वो वैरागी है, कर्मबंध नहिं पागी है–2
इकदिन कर्मों से हो–3 वह मुक्ति पाए रे–SS॥260॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(261) मार रहा कोई मुझको, मार रहा हूँ मैं सबको-2
मरवा सकता है मुझको-ऽऽ
मैं उसको मरवाता हूँ, अज्ञानी समझो उसको-2
ज्ञानी इन सबसे हो-3 विपरीत विचारे रे-ऽऽ॥261॥

(262) आयुक्षरण हो मरण तभी, आयुशेष नहिं मरण कभी-2
कहते हैं गुरुदेव सभी-ऽऽ
आयु न तू क्षय कर सकता, तुझसे कोइ न मर सकता-2
तूने फिर किसको हो-3 कब मार गिराया रे-ऽऽ॥262॥

(263) अपनी आयु लिये आये, जितनी हो जीकर जाये-2
तुझको कौन जला पाये-ऽऽ
अपनी अपनी आयु तक, जीव यहाँ पर जी पाये-2
कोई किसी को हो-3 नहिं यहाँ जलाये रे-ऽऽ॥263॥

(264) मैं सबको सुख देता हूँ, मैं सबको दुख देता हूँ-2
ये समझे मैं करता हूँ-ऽऽ
मूढ़ी अज्ञानी हैं वो, ऐसा यहाँ समझते जो-2
ज्ञानी इन सबसे हो-3 विपरीत विचारे रे-ऽऽ॥264॥

(265) साता उदय है सुख दाता, और असाता दुखलाता-2
जीव कर्म के फल पाता-ऽऽ
तू सुख दुख दे सकता है, ऐसा नहिं हो सकता है-2
अपने ही कर्म हो-3 सुख दुख दिलवाएँ रे-ऽऽ॥265॥

(266) कर्म नहीं दे सकता तू, तो सुख क्यों दे सकता तू-2
कैसे दुख दे सकता तू-ऽऽ
अज्ञानी मूरख बनकर, ऐसा यहाँ समझता तू-2
ऐसा भ्रमजाल हो-3 संसार बढाए रे-ऽऽ॥266॥

(267) कर्मोदय से सुख दुख हों, राग-द्वेष जब मन में हों-2
कर्तापन रग-रग में हो-ऽऽ
कोई कर्म नहिं देता है, तो सुख कैसे देता है?-2
कोई फिर तुमको हो-3 कैसे सुख लाये रे-ऽऽ॥267॥

(268) दुखी हुआ या मरता है, कर्मोदय सब करता है-2
कौन किसे क्या करता है-ऽऽ
खुद को कर्ता समझे तू, झूठ नहीं, क्या सच कह तू-2
मिथ्या बातों में हो-3 तू क्यों मन लाये रे-ऽऽ॥268॥

(269) दुखी नहीं, नहिं मरता है, पुण्योदय सब करता है-2
सुख कैसे तू करता है-ऽऽऽ
तूने मरने दिया नहीं, मिथ्या भ्रांति तू पाल नहीं-2
वर्ना ये कर्म हो-3 अज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ॥269॥

(270) सबको सुख दुख करता हूँ, जीता और जिलाता हूँ-2
मरना दूर कराता हूँ-ऽऽ
मिथ्या मोह मूढ बुद्धि, कर्मों की करती वृद्धि-2
इनसे बचना है हो-3 तो ज्ञान बढ़ाओ रे-ऽऽ॥270॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(271) सुखिया सबको मैं कर दूँ, अथवा दुखिया मैं कर दूँ-2
मैं दोनों कर सकता हूँ-ऽऽ
ऐसा अध्यवसान यहाँ, कर्मबंध का हेतु यहाँ-2
मिथ्याध्यवसाय हो-3 भव बंध कराए रे-ऽऽ॥271॥

(272) मार सकूँ मैं जिला सकूँ, जिता सकूँ मैं हरा सकूँ-2
मैं जो चाहूँ वही करूँ-ऽऽ
ऐसा करता भाव यहाँ, कर्मबंध के हेतु यहाँ-2
मिथ्याध्यवसाय हो-3 भव भ्रमण कराए रे-ऽऽ॥272॥

(273) जीव मरे या नहीं मरे, भाव मारने रूप करे-2
वो कर्मों का बंध करे-ऽऽ
यही बंध संक्षेप अहा, निश्चयनय ने हमें कहा-2
बंध का कारण हो-3 वह भाव बताएँ रे-ऽऽ॥273॥

(274) हिंसा, असत्य, चोरी का, और कुशील परिग्रह का-2
भाव हेतु अघ बंधन का-ऽऽ
इनका अध्यवसाय यहाँ, भव का बंधन करे यहाँ-2
इनके कारण ही हो-3 हम भव दुख पाएँ रे-ऽऽ॥274॥

(275) भाव अहिंसा का आये, सत्य अचौर्य ब्रह्म लाये-2
पुण्य बंध करवा जाये-ऽऽ
ऐसा अध्यवसाय यहाँ, पाप कराता दूर यहाँ-2
इक दिन ये पुण्य हो-3 भव पार कराए रे-ऽऽ॥275॥

(276) बाह्य वस्तु जब दिख जाये, राग तभी मन में आये-2
कर्म बंध फिर हो जाये-ऽऽऽ
बाह्य वस्तु से बंध न हो, राग भाव से बंध अहो-2
वस्तु आ जाये हो-3 पर राग न लाओ रे-ऽऽ॥276॥

(277) बांध सकूँ मैं छुड़ा सकूँ, सुखी दुखी मैं करा सकूँ-2
ज्ञानी सबको बना सकूँ-ऽऽ
मूढ़ मोहमय बुद्धि करे, मन में तू मिथ्यात्व भरे-2
ऐसी बातों में हो-3 नहिं तथ्य बताएँ रे-ऽऽ॥277॥

(278) अपने अपने अध्यवसान कर्मबंध के हैं स्थान-2
बंधते कई छूटते जान-ऽऽऽ
कर्ता बन तू अहं धरे, क्यों कर्मों का बंध करे-2
कर्ता का भाव हो-3 भव बंध कराए रे-ऽऽ॥278॥

(279) अपने अपने कर्म लिए, कर्मोदय से दुखी हुए-2
मैंने सबको दुखी किये-ऽऽ
ऐसी बुद्धि जो करता है, मूढ़बुद्धि बन मरता है-2
मिथ्या बातों से हो-3 वह दुक्ख बढ़ाए रे-ऽऽ॥279॥

(280) कोई किसी को दुखी करे, कोई किसी को सुखी करे-2
ये सब मिथ्या बात कहें-ऽऽ
अपने कर्मों से हो दुख, अपने कर्मों से हो सुख-2
ऐसा जो माने हो-3 वह ज्ञान बढ़ाए रे-ऽऽ॥280॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–ऽऽ

(281) मैं सबको दुख देता हूँ, ये सच यहाँ समझता हूँ–2
झूठ है ये मैं कहता हूँ–ऽऽ
निजकर्मों से जीव दुखी, बंध उदय में कहाँ सुखी?
कर्म हटाए हो–3 वो ही सुख पाये रे–ऽऽ॥281॥

(282) शस्त्रों से मैं दुखी करूँ, सभी मरें मैं नहीं मरूँ–2
वो हो जो मैं यहाँ करूँ–ऽऽ
मिथ्याभ्रांति रही तेरी, मिथ्यामय परिणति तेरी–2
अपने कर्मों से हो–3 सब दुखी दिखाएँ रे–ऽऽ॥282॥

(283) मैं करता हूँ सुखी यहाँ, मेरे बिन सुख नहीं यहाँ–2
मिथ्याबुद्धि लिये यहाँ–ऽऽ
अपने कर्मों से सुख हो, जब प्राणी प्रभु अभिमुख हो–2
भव के कामों में हो–3 नहिं सुख नजराए रे–ऽऽ॥283॥

(284) मिथ्या अध्यवसान यहाँ, भव करवाता भ्रमण यहाँ–2
सब पर्यय में मरण यहाँ–2
पुण्य पापमय हो जाता, धर्मसमझ में नहिं आता–2
अपने को परमय हो–3 माने अपनाए रे–ऽऽ॥284॥

(285) धर्म अधर्म व लोक यहाँ, जीव अजीव अलोक यहाँ–2
शुद्धातम से भिन्न यहाँ–ऽऽ
अध्यवसान करे ऐसा, कहे इन्हें अपने जैसा–2
खुद को पररूप हो–3 कर ज्ञान मिटाए रे–ऽऽ॥285॥

(286) अध्यवसान मिटाता है, पाप और पुण्य हटाता है–2
मोक्ष वही मुनि पाता है–ऽऽ
कर्मों से नहिं लिपते हैं, दोनों कर्म न बंधते है–2
तब ही वे मुनिवर हो–3 मुक्ति पा जाएँ रे–ऽऽ॥286॥

(287) हों संकल्प विकल्प यहाँ, तभी शुभाशुभ बंध यहाँ–2
करें जीव छद्मस्थ यहाँ–ऽऽ
जब तक केवलज्ञान नहीं, तब तक होगा बंध यहीं–2
आतम में थिरता हो–3 निर्बन्ध कराए रे–ऽऽ॥287॥

(288) मति व्यवसाय चित्त विज्ञान, भाव बुद्धि और अध्यवसान–2
वैभाविक सारे परिणाम–ऽऽ
आठ नाम पर भाव है एक, एक शब्द के अर्थ अनेक–2
सबके अर्थों में हो–3 इक भाव समाए रे–ऽऽ॥288॥

(289) निश्चय नय का अवलम्बन, करता है जो कर्म क्षरण–2
दिलवाता है मुक्ति परम–ऽऽ
निश्चय नय में सार यहाँ, छुड़वाए व्यवहार यहाँ–2
निश्चय का आश्रय हो–3 मंजिल दिलवाए रे–ऽऽ॥289॥

(290) तप व्रत, शील समिति पाले, गुप्ति चरित में दिखला ले–2
कितना भी वह सब कर ले–ऽऽ
अभव्य नहिं होता ज्ञानी, कहते हैं केवलज्ञानी–2
मिथ्या अज्ञान हो–3 वह छोड़ न पाये रे–ऽऽ॥300॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(291) शास्त्र पढ़े उपदेश करे, भव्यों का कल्याण करे-2
नहीं तत्त्व श्रद्धान धरे-ऽऽ
आत्म तत्त्व न समझता है, शुद्ध तत्त्व नहिं लखता है-2
भव में अभव्य हो-3 गुण कभी न पाये रे-ऽऽ॥301॥

(292) श्रद्धा करता रुचि करता, और प्रतीति भी करता-2
चारित भी धारण करता-ऽऽ
भोगों की नित चाह लिये, कर्मनष्ट नहिं भाव किये-2
ऐसा अभव्य हो-3 भवरीति बढ़ाए रे-ऽऽ॥302॥

(293) रुचि तत्त्वार्थ कहे दर्शन, ज्ञान कहें सिद्धांत मनन-2
जीवों की रक्षा संयम-ऽऽ
ये सब है व्यवहार यहाँ- पुण्य रूप आधार यहाँ-2
व्यवहार भव में हो-3 कर्तव्य कराए रे-ऽऽ॥303॥

(294) निज आतम ही दर्शन है, आतम ही सद्ज्ञान है-2
आतम चरित प्रधान है-ऽऽ
आतम प्रत्याख्यान है, संवर, योग निधान है-2
निश्चय ये कहता हो-3 जो ज्ञान कराए रे-ऽऽ॥304॥

(295) अध: कर्म अवगुण सारे, पुद्गल में हों उच्चारे-2
श्रावक के कर्तव सारे-ऽऽ
ज्ञानी तो शुद्धात्म लखे, निश्चय में ही लीन रहे-2
करता आहार हो-3 निर्बन्ध बताएँ रे-ऽऽ॥305॥

(296) निर्विकल्पमय रहता है, निज स्वभाव में बहता है-2
बना अकर्मक रहता है-ऽऽ
नहीं आहार विकल्प करे, राग-द्वेष नहि कल्प अरे-2
वह तो समाधि हो-3 का भाव बनाए रे-ऽऽ॥306॥

(297) औद्देशिक सब कर्म यहाँ, पर में हैं परकृत्त यहाँ-2
पुद्गल में हैं नित्य यहाँ-ऽऽ
ये मेरे क्यों हो सकते, इनमें हम क्यों हो सकते-2
इन सबसे आतम हो-3 अतिभिन्न बताएँ रे-ऽऽ॥307॥

(298) पर के लिए बनाया है, पर द्रव्यों की माया है-2
पुद्गल की नित छाया है-ऽऽ
मैं चेतन दृग ज्ञानमयी, ये मेरा न कराया है-2
ज्ञानी पुद्गल में हो-3 नहिं भाव लगाए रे-ऽऽ॥308॥

(299) जैसे स्फटिक मणी निर्मल, वैसे ही शुद्धात्म विमल-2
पर संयोग से आये मल-ऽऽ
मणि में जैसा रंग लगे, मणि में वैसी रंग दिखे-2
भावकर्मों से हो-3 रागादि समाए रे-ऽऽ॥309॥

(300) नहीं उपाधि मन में हो, भाव नहीं रागादिक हो-2
शुद्धभाव में ज्ञानी हो-ऽऽ
कर्मोदय हो तीव्र यहाँ, तब हो जाता राग यहाँ-2
ज्ञानी बाहर की हो-3 नहिं चाहत लाये रे-ऽऽ॥310॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–ऽऽ

(301) राग–द्वेष से दूर रहे, मोह कषाय न हृदय लहे–2
ज्ञानी ज्ञान स्वभाव रहे–ऽऽ
रागादिक नहिं कर्ता वो, निजानुभव में रमता जो–2
तब ही तो ज्ञानी हो–3 निर्बन्ध कहाए रे–ऽऽ॥311॥

(302) राग–द्वेष कर्मादि उदय, क्रोधादिक भावों की लय–2
हो परिणाम विकारी भय–ऽऽऽ
अज्ञानी फिर हो करके, कर्म बांधता जी भरके–2
रागादि कर्ता हो–3 बन कर्म बँधाए रे–ऽऽ॥312॥

(303) राग उदय जब होता है, वह कषाय में खोता है–2
फिर पर भाव संजोता है–ऽऽ
पर को अपना कहता है, राग बंध कर रहता है–2
विधि के बंधन में हो–3 ज्योति मिट जाए रे–ऽऽ॥313॥

(304) द्विविध कहा अप्रतिक्रमण, द्विविध समझ अप्रत्याख्यान–2
कहते कुंदकुंद भगवन्–ऽऽ
मुनि–पापों के हर्ता हैं, कर्मों के नहिं कर्ता हैं–2
कर्ता प्रतिक्रम हो–3 और त्याग दिखाए रे–ऽऽ॥314॥

(305) द्रव्य–भाव अप्रत्याख्यान, द्विविध रूप अप्रतिक्रमण–2
कहते कुंदकुंद भगवन्–ऽऽऽ
कर्तापन में प्रतिक्रमण, राग त्यागमय करता मन–2
निश्चय से आतम हो–3 कर्ता न बताएँ रे–ऽऽ॥315॥

(306) जब तक प्रतिक्रमण करता, त्याग भाव करता रहता–2
तब तक वह कर्ता रहता–ऽऽऽ
निश्चय में जब आयेगा, कर्मबंध रुक जाएगा–2
बंध का सार हो–3 प्रभु यही बताएँ रे–ऽऽ॥316॥

अथ मोक्षाधिकार

(307) बहुत काल से बंध हुआ, राग–द्वेष में कसा हुआ–2
तीव्रमंद परिणाम हुआ–ऽऽ
सब बातों का ज्ञान हमें, फिर भी हुआ न मोक्ष हमें–2
ऐसा जाननपन हो–3 नहिं लक्ष्य दिलाए रे–ऽऽ॥317॥

(308) ज्ञान आचरण करें नहीं, बंधन उसके कटें नहीं–2
ज्ञान कर्मक्षय करे नहीं–ऽऽ
ज्ञान सिर्फ जनवाता है, पार न भव करवाता है–2
संयम बिन ज्ञान हो–3 भव में भटकाए रे–ऽऽ॥318॥

(309) चारों कर्मों के बंधन, इन्हें जानकर करो यतन–2
तजो राग कर विशुद्ध मन–ऽऽ
रागादिक गर तजना हो, तो संयम आचरण में हो–2
तब ही बंधन से हो–3 मुक्ति मिल पाए रे–ऽऽ॥319॥

(310) बँधा हुआ दुख व्यक्त करे, उस पर खूब विचार करे–2
इससे मुक्ति नहीं मिले–ऽऽ
चिंतन मात्र करेगा जो, मुक्त यहाँ नहिं होगा वो–2
बंधन का चिंतन हो–3 नहिं मुक्त कराए रे–ऽऽ॥320॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(316) बंधन को जो काटेगा, वही मुक्त हो पायेगा–2
वर्ना बँधा कहाएगा–SS
जीव कर्म को काटे जो, मुक्त यहाँ हो पाये वो–2
कर्मों के क्षय बिन हो–3 नहिं मंजिल पाये रे–SS॥321॥

(312) नहीं हथकड़ी खोलेगा, क्यों स्वतंत्र तू होवेगा–2
बंधन में ही रोवेगा–SS
कर्मबंध रुक जायेगा, मोक्ष तभी तू पायेगा–2
बंधन रोके बिन हो–3 मुक्ती नहिं पाये रे–SS॥322॥

(313) सारे बंधन हट जायें, तभी सुखी हम हो पाएँ–2
बंधन में दुख दिख जाएँ–SS
कर्म बंध जब तोड़ेगा, मोक्ष तुझे तब जोड़ेगा–2
बंधन तोड़े बिन हो–3 नहिं शिवपुर पाये रे–SS॥333॥

(314) निज स्वभाव पहले जानो, कर्मबंध फिर पहचानो–2
भेदज्ञान निज में ठानो–SS
काट सकेगा कर्म वही, तप, व्रत, संयम धरे वही–2
उसको निश्चित ही हो–3 मंजिल मिल जाए रे–SS॥3314॥

(315) जीव, बंध को जानेंगे, लक्षण से हम मानेंगे–2
कैसे मिले, जुदे होंगे–SSS
प्रज्ञा से यह जान यहाँ, तभी भिन्न हो सके यहाँ–2
प्रज्ञा की छैनी हो–3 इनमें मिट जाए रे–SS॥315॥

(316) जीव–बंध लक्षण जानो, निश्चय करके ही मानो–2
पृथक्–पृथक् करना जानो–SSS
ऐसे पृथक् करो ज्ञानी, आत्म भिन्न हो कल्याणी–2
आतम को पाकर हो–3 सब बंध मिटाओ रे–SS॥316॥

(317) प्रज्ञा निर्णय करे यहाँ, शुद्धातम को गहे यहाँ–2
करे बंध को पृथक यहाँ–SS
प्रज्ञा पैनी छैनी है, शुद्ध बनाती जैनी है–2
इसके बिन सच्चा हो–3 निर्णय नहिं आये रे–SS॥317॥

(318) मैं चेतन्य निराला हूँ, नंत गुणों का प्याला हूँ–2
समरस पीने वाला हूँ–SS
इसे छोड़ जो भाव मेरे, मुझसे भिन्न, नहीं मेरे–2
मैं तो चिद्रूपी हो–3 चिद् आत्म स्वभावी रे–SS॥318॥

(319) तर्क बुद्धि से जान यहाँ, खुद को चेतन मान यहाँ–2
निज में दर्शन ज्ञान यहाँ–SS
मैं तो दर्शन रूपी हूँ, पर से भिन्न अरूपी हूँ–2
दृष्टा का भाव हो–3 सबकुछ दिखलाए रे–SS॥319॥

(320) ज्ञान हूँ मैं और ज्ञाता हूँ, बुद्धि विवेक विधाता हूँ–2
निज में निज को लाता हूँ–SS
अन्य भाव नहिं मेरे हैं, अज्ञ ज्ञेय भव फेरे हैं–2
मैं तो हूँ ज्ञाता हो–3 ज्ञायक स्वभाव मय रे–SS॥320॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(321) सुख स्वभाव अति प्यारा है, सभी जनों को प्यारा है-2
सबने इसे दुलारा हैं-ऽऽ
इससे भिन्न भाव हैं जो, कभी नहीं हों मेरे वो-2
सुखमय स्वभावी हो-3 मम रूप बताएँ रे-ऽऽ॥321॥

(322) खुद को चिन्मय समझ रहा, शुद्धातम में सँवर रहा-2
पर भावों को जान रहा-ऽऽऽ
फिर भी पर अपना माने, ज्ञानी ऐसा नहिं ठाने-2
चिन्मात्र भाव हो-3 अपना बतलाएँ रे-ऽऽ॥322॥

(323) कोई मुझको मार न दे, कोई मुझको बाँध न दे-2
चोर यहाँ हरदम सोचे-ऽऽ
अपराधी शंकित होता, फिर भटकता सा रोता-2
शंकित हो जो भी हो-3 वह दुख उपजाए रे-ऽऽ॥323॥

(324) अपराधी नहिं चोर यहाँ, रहे निडर नि:शंक यहाँ-2
रहे किसी भी देश यहाँ-ऽऽ
उसे न कोई बाँध सके, कहीं न उसको रोक सके-2
वह तो आजाद हो-3 पंछी कहलाए रे-ऽऽ॥324॥

(325) अपराधी बँध जाएगा, निरपराध खुल जाएगा-2
द्वन्द न आड़े आएगा-ऽऽऽ
शंका बाँधे कर्म यहाँ, नि:शंकित निष्कर्म यहाँ-2
ज्ञानी दोनों में हो-3 निर्द्वन्द बताएँ रे-ऽऽ॥325॥

(326) साधित, राध और सिद्धि, आराधित और संसिद्धि-2
सबमें एक अर्थ सिद्धि-ऽऽ
राध रहित हो जो आतम, अपराधी वो है आतम-2
नि:शंक आतम हो-3 अपराध न लाये रे-ऽऽ॥326॥

(327) निंदा, गर्हा निर्वृत्ति, प्रतिक्रमण धारण शुद्धि-2
प्रतिसरण त्यागी वृत्ति-ऽऽ
कर्तापन की बू इनमें, तभी इन्हें विषकुंभ कहें-2
ज्ञानी शुद्धातम हो-3 में लीन रहाए रे-ऽऽ॥327॥

(328) करे सभी कर्तव्य यहाँ, कर्तापन के भाव यहाँ-2
अमृत तब प्रतिक्रमण यहाँ-ऽऽ
दोनों भाव समझना है, सही ज्ञान में रमना है-2
ज्ञानी दोनों को हो-3 समझे समझाए रे-ऽऽ॥328॥

(329) द्रव्य उपजता है गुण से, भिन्न न होता द्रव्य गुण से-2
पर्यय सब बनती गुण से-ऽऽ
कड़े आदि पर्यायों में, सोना लिप्त रहे उनमें-2
आतम अकर्ता हो-3 ही समझ में आए रे-ऽऽ॥329॥

(330) जीव रहे अपने गुण में, हो अजीव अपने गुण में-2
अन्य नहीं अपने गुण में-ऽऽ
द्रव का जो परिणाम यहाँ, उसी रूप हो द्रव्य यहाँ-2
जीव अपने ही हो-3 परिणाम रहाए रे-ऽऽ॥330॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-SS
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-SS

(331) नहीं किसी से पैदा हो, करे न पैदा जो पर को-2
कार्य हेतु से दूर अहो-SSS
तभी आत्मा कार्य नहीं, कारण भी बन सके नहीं-2
इनसे यह आतम हो-3 अतिभिन्न बताएँ रे-SS॥331॥

(332) कर्म उदय से कर्ता हो, कर्ता बनें तो कर्म भी हो-2
ऐसा यहाँ नियम से हो-SS
अन्य तरह से सिद्धि नहीं, कर्ता कर्म ये आतम ही-2
कर्तापन जाये हो-3 तो कर्म न आये रे-SS॥332॥

(333) जीव भोगने आता है, कर्म उसे ले आता है-2
जन्म-मृत्यु दिलवाता है-SS
जैसे होवें कर्म यहाँ, वैसे मिलें निमित्त यहाँ-2
जीव, कर्मों का हो-3 संबंध दिखाए रे-SS॥333॥

(334) जैसा हो परिणाम यहाँ, करे परिणमन आत्म यहाँ-2
राग-द्वेष के भाव यहाँ-SS
जीव कर्म मिल जाते हैं, कर्मबंध करवाते हैं-2
कर्मों का बंध हो-3 संसार भ्रमाये रे-SS॥334॥

(335) मोह राग जब हावी हों, तब ही ज्ञान प्रभावी हो-2
असंयमी मिथ्यात्वी हो-SS
मोह राग मिट जाता है, मुनि ज्ञाता बन जाता है-2
रागादि परिणति हो-3 अज्ञान बढाए रे-SS॥325॥

(336) कर्मफलों का त्याग करे, परिणति से नहिं बंध करे-2
संयम से अनुबंध करे-SSS
देखे सब नहिं राग करे, पर का कभी न भोग करे-2
ऐसे वे मुनिवर हो-3 दृष्टा कहलाएँ रे-SS॥336॥

(337) कर्मफलों को भोग रहा, वो कर्मों को जोड़ रहा-2
अज्ञानी, नहिं शोभ रहा-2
ज्ञानी सिर्फ जानता है, कभी न उन्हें भोगता है2
ज्ञानी की चर्या हो-3 निर्लिप्त बताएँ रे-SS॥337॥

(338) कर्म उदय में आता है, वो समता अपनाता है-2
कर्म स्वयं खिर जाता है-SS
हो नि:शंक स्वयं जाने, निजानुभव करके माने-2
ज्ञानी आराधन हो-3 अनुभव में लाए रे-SS॥338॥

(339) शास्त्रों में भी पढ़ करके, अभव्य मुनि भी बनकरके-2
घोर तपस्या भी करके-SS
राग भाव नहिं छोड़ें वो, कर्मों से मन जोड़ें वो-2
ज्यों पय, अहि पीकर हो-3 विष त्याग न पाये रे-SS॥339॥

(340) वैरागी होता ज्ञानी, करे कभी न मनमानी-2
फल भोगों में अज्ञानी-SS
होता है वह निर्वेदी, सुख दुख एक समां वेदी-2
ज्ञानी कर्मोदय हो-3 में भाव न लाए रे-SS॥340॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(341) कर्म अनेक न करता है, और न फल में रमता है-2
रखे हमेशा समता है-ऽऽ
बंध, कर्मफल जान रहा, उनसे हरदम दूर रहा-2
तब ही तो ज्ञानी हो-3 निर्बन्ध कहाए रे-ऽऽ॥341॥

(342) देख रहा सबको लोचन, करे न मन से स्पर्शन-2
भोगे नहीं न कर्तापन-ऽऽऽ
ज्ञानी सिर्फ जानता है, कर्ता नहीं मानता है-2
तब ही तो उसमें हो-3 रागादि न आये रे-ऽऽ॥342॥

(343) मत विख्यात बताते हैं, सबको विष्णु बनाते हैं-2
प्रभु सबमें समझाते हैं-ऽऽऽ
यति भी ऐसा ही मानें, तो आतम कर्ता मानें-2
फिर तो जीवों को हो-3 भगवान बनाए रे-ऽऽ॥343॥

(344) लोगों का और संतों का, दोनों का मत एक कहा-2
दोनों में क्या भेद रहा-ऽऽ
कौन संत फिर पूजेगा, संत जगत में डूबेगा-2
इसको ही जग में हो-3 जगमूढ़ बताएँ रे-ऽऽ॥344॥

(345) लोक, श्रमण दोनों कर्ता, कोई न कर्मों के हर्ता-2
मोक्ष न प्राप्त कोई करता-ऽऽ
कर्तापन में मोक्ष कहाँ?, कर्मबंध का सत्व वहाँ-2
ऐसे रागी जन हो-3 भव भ्रमण बढ़ाएँ रे-ऽऽ॥345॥

(346) द्रव्य तत्त्व का ज्ञान करे, पर को अपना मान रहे-2
ये व्यवहार विचार कहें-ऽऽ
तन धन कुछ नहिं मेरा है, ये जग में जग डेरा है-2
निश्चय से ज्ञानी हो-3 ये भाव बनाए रे-ऽऽ॥346॥

(347) राज्य, देश और ग्राम नगर, कहे मेरा है मेरा घर-2
कहता है मोही बनकर-ऽऽ
कहने से क्या हो जाते, पर ही हैं पर रह आते-2
मोही प्राणी ये हो-3 अपना बतलाए रे-ऽऽ॥347॥

(347) पर को पर ही जाना है, फिर भी अपना माना है-2
ज्ञानी नहिं अंजाना है-ऽऽऽ
निश्चय से अपना माने, पर को, निज नहिं पहचाने-2
ऐसे ज्ञानी को हो-3 मिथ्यात्व बताएँ रे-ऽऽ॥348॥

(349) मैं पर का नहिं कभी हुआ, पर मेरा नहिं कभी हुआ-2
ज्ञानी को यह ज्ञान हुआ-ऽऽ
पर को जो अपना माने, ये मिथ्यादृष्टि जानें-2
कर्ता का भाव हो-3 मिथ्यात्व बनाए रे-ऽऽ॥349॥

(350) कर्ता कहें क्षणिक कर्ता, कर्ता हर हमेश कर्ता-2
जाने ये वो नहिं कर्ता-ऽऽऽ
इनमें है एकांत नहीं, स्याद्वाद से सिद्ध यहीं-2
करने से कर्ता हो-3 नहिं हो ही जाए रे-ऽऽ॥350॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(351) कुछ भोगे आजीवन को, कुछ क्षणभर के जीवन को–2
जाने, ज्ञानपने में जो–SS
भोगे वह भोक्ता भी हो, और अभोक्तामय भी हो–2
भोगे तो भोक्ता हो–3 हो ही नहिं जाए रे–SS॥351॥

(352) कर्मों का जो कर्ता हो, उसका वो ही भोक्ता हो–2
ऐसा ही जो माने वो–SS
उसको मिथ्यादृष्टि कहा, उसको जिनमत ज्ञान कहाँ–2
कर्म का कर्ता हो–3 भोगे, नहिं भोगे रे–SS॥352॥

(353) कर्ता कोई और यहाँ, भोक्ता कोई और यहाँ–2
ऐसा समझे मूढ़ यहाँ–SS
जिनमत को नहिं जान रहा, मन में आये तान रहा–2
ऐसा अज्ञानी हो–3 भव में भटकाए रे–SS॥353॥

(354) कर्म न मूढ़ बनाता है, जीव स्वयं बन जाता है–2
दोष कर्म पर लाता है–SS
मोही बन मिथ्यात्व धरे, और कर्म को भाव कहे–2
ये तो है मिथ्या हो–3 ज्ञानी समझाएँ रे–SS॥354॥

(355) सम्यक्त्व सम्यक् प्रकृति करे, जीव यहाँ कुछ कर न सके–2
तो फिर पुद्गल सम्यक् दे–SS
ऐसा होता कभी नहीं, माने तो सम्यक्त्व नहीं–2
जिनवर की वाणी हो–3 मिथ्यात्व मिटाए रे–SS॥355॥

(356) पहले मिथ्याकर्म बंधे, उससे मिथ्या भाव करे–2
ऐसा जो निश्चित समझे–SS
तो पुद्गल मिथ्यात्वी है, जीव नहीं मिथ्यात्वी है–2
आतम तो हरदम हो–3 अतिशुद्ध कहाए रे–SS॥356॥

(357) जीव, कर्म द्वय मिल करके, पुद्गल को मिथ्यात्व करें–2
तो फल दोनों को हि मिले–SSS
ऐसा होता नहीं यहाँ, फिर ये कैसे सही यहाँ–2
जीव अकेला हो–3 ही क्यों फल पाये रे–SS॥357॥

(358) कर्म करे ना जीव करे, पुद्गल को मिथ्यात्व अरे–2
क्या वह खुद मिथ्यात्व करे–SS
ऐसा कैसे हो सकता, कभी नहीं ये हो सकता–2
सच को जाने बिन हो–3 सच समझ न आये रे–SS॥358॥

(359) कर्म बनाते अज्ञानी, कर्मों से होता ज्ञानी–2
कहते है मुनिवर ज्ञानी–SSS
कर्म सुलाता है सबको, कर्म जगाता है सबको–2
कर्मों की लीला हो–3 गुरुवर समझाएँ रे–SS॥359॥

(360) कर्मों से हों सुखी सभी, कर्मों से हो दुखी सभी–2
कहते हैं गुरुदेव सभी–SSS
कर्मों से मिथ्यात्व यहाँ, कर्म असंयत करे यहाँ–2
इनको जाने बिन हो–3 सुख कोइ न पाये रे–SS॥360॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(361) कर्मों से त्रयलोक भ्रमें, कर्मों से शुभ भाव बनें–2
अशुभ भाव ये कर्म करें–SSS
कर्म कराता गमन यहाँ, गतियों में परिणमन यहाँ–2
कर्म मिट जायें हो–3 तो भ्रम मिट जाये रे–SS॥361॥

(362) देता, हरता कर्म यहाँ, सब कुछ करता कर्म यहाँ–2
जीव अकर्ता समझ यहाँ–SSS
कर्म कराते करम यहाँ, तो फल क्यों हो जीव यहाँ–2
कर्म है कर्ता–हो–3 फल जीव क्यों पाये रे–SS॥362॥

(363) स्त्री की हो अभिलाषा, पुरुष वेद जब फल आता–2
ऐसा आगम बतलाता–SS
स्त्रीवेद जु आता है, पुरुष चाह करवाता है–2
कर्म कर्ता है–हो–3 यह जीव बताएँ रे–SS॥363॥

(364) कर्म सभी कुछ करवाये, जीव व्यर्थ ही हो जाए–2
कर्तापन ही मिट जाए–SS
कर्म सभी भोगी होंगे, जीव ब्रह्मचारी होंगे–2
ऐसा ही माने हो–3 मिथ्यात्व बढाए रे–SS॥364॥

(365) गैरों को जो मार रहा, गैर मुझे भी घात रहा–2
नाम कर्म परघात कहा–SSS
क्यों इसको अपराध कहा, जीव को फल क्यों यहाँ मिला–2
कर्म, कर्मों से हो–3 कर्म करवायें रे–SS॥365॥

(366) जीव न कोई घात करे, दण्ड जीव को नहीं मिले–2
कर्म जीव का घात करे–SS
कर्म उदय में आता है, कर्म घात करवाता है–2
ऐसा जो माने हो–3 वह ज्ञान न पाये रे–SS॥366॥

(367) कर्म हि सारे कर्म करे, जीव अकर्ता बना रहे–2
सांख्यमती एकांत कहे–SS
माने ऐसा श्रमण यहाँ, समझो मत वो श्रमण यहाँ–2
ये तो मूरख की हो–3 पहचान बताएँ रे–SS॥367॥

(368) कोई ऐसा यहाँ कहे, उसी बात में स्वयं बहे–2
आतम तो निजरूप रहे–SS
ये कहना भी गलत यहाँ, कर्मरूप फिर कौन यहाँ–2
कर्ता–अकर्ता हो–3 फिर भेद न आये रे–SS॥368॥

(369) आतम नित्य अमर जानो, असंख्यात देशी मानो–2
हीनाधिक तुम मत मानो–SS
ये सिद्धांत बताता है, निश्चय ज्ञान कराता है–2
सच में मानेगा हो–3 तब समझ में आये रे–SS॥369॥

(370) जितने लोकाकाश प्रदेश, उतने ही हैं जीव प्रदेश–2
कम ज्यादा नहिं एक प्रदेश–SS
जिनवर के ये वचन सुनो, उस पर नित श्रद्धान करो–2
तब ही यह जीव हो–3 कुछ समझ में आये रे–SS॥370॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(371) आतम ज्ञान स्वभावी है, हरदम ज्ञायक भावी है–2
राग–द्वेष अभावी है–SS
रागी और विरागी हो, तब खुद का कर्ता क्यों हो–2
कर्ता–अकर्ता हो–3 द्वय रूप बताएँ रे–SS॥371॥

(372) आतम में दृग बुध व्रत हों, पुद्गल में ये कभी न हों–2
पुद्गल दृग व्रत घाते क्यों?–SS
विषय अगर आतम में हो, तो रत्नत्रय घातें वो–2
जीव से खुद ही हो–3 वह घाता जाये रे–SS॥372॥

(373) रत्नत्रय चेतन में हो, नहीं अचेतन में वो हो–2
चेतन किसका घात करे–SS
नहीं घातने को कुछ भी, पुद्गल घाते नहीं कभी–2
चेतन चेतन का हो–3 नहिं घात कराए रे–SS॥373॥

(374) दर्शन ज्ञान चरित्र यहाँ, चेतन में ही रहे यहाँ–2
पुद्गल में ये रहें कहाँ–SSS
व्रत नहिं करे विघात यहाँ, गुण देता विख्यात यहाँ–2
रत्नत्रय भव में हो–3 भव पार कराए रे–SS॥374॥

(375) दर्शन ज्ञान चरित्र यहाँ, इनको घाते कर्म यहाँ–2
घाते–कर्म न कर्म यहाँ–SS
रत्नत्रय सुंदर गुण है, कर्म सभी ही अवगुण हैं–2
रत्नत्रय पाकर हो–3 हम गुण पा जायें रे–SS॥375॥

(376) ज्ञानादिक गुण जीव में हो, अन्य द्रव्य में ये नहिं हों–2
सम्यक्त्वी गुण चाहक हों–SS
राग जीव का गुण नहिं है, सम्यक्त्वी में ये नहिं है–2
सम्यक्त्वी गुण में हो–3 अनुराग दिखाये रे–SS॥376॥

(377) राग–द्वेष परिणाम सभी, जीव से अन्य रहें न कभी–2
शब्दादिक में नहीं कभी–SS
रागादिक आत्मा के हैं, नहिं समझो पुद्गल के हैं–2
अज्ञानी इनसे हो–3 नित कर्म बँधाये रे–SS॥377॥

(378) सभी द्रव्य अपने गुण से, उपजें घाते अपने से–2
घात किसी का नहिं पर से–SSS
जीव न पर गुण घात करे, जीव का कोइ न घात करे–2
अपने भावों से हो–3 बनते मिट जायें रे–SS॥378॥

(379) जीव बहुत से कर्म करे, लेकिन कभी न कर्म बने–2
निज स्वभाव द्रव्य नहीं तजे–SSS
त्यों पुद्गल नहिं जीव हुआ, जीव न पुद्गल कभी हुआ–2
जीव पर रूप हो–3 हो कभी न जग में रे–SS॥379॥

(380) शिल्पी ले औजारों को, बनाए चूड़ी कुण्डल को–2
उसमें हो तन्मय नहिं वो–SSS
त्यों रागादिक जीव करे, तन्मय होकर नहीं रहे–2
कर्म करके भी हो–3 उस रूप न होवे रे–SS॥380॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(3831 शिल्पी मूर्ति बनाता है, तन्मय नहिं हो जाता है–2
वैसा भी नहिं होता है–SS
त्यों ही भोगे कर्मों को, तन्मय जीव कभी न हो–2
निश्चय से जीव हो–3 निजभाव रहाए रे–SS॥381॥

(382) उपकरणों को ग्रहण करे, तन्मय उनमें नहीं रहे–2
ज्ञानी निज में लीन रहे–SS
जीव काय को ग्रहण करे, तन्मयता नहिं कभी धरे–2
ज्ञानी को कर्म हो–3 अतिभिन्न दिखाए रे–SS॥382॥

(383) कर्म करें कर्तव्य करें, इन सबको व्यवहार कहें–2
निश्चय को भी हम समझें–SS
राग–द्वेष परिणामों में, कार्य हुआ जो है भव में–2
ये ही है निश्चय हो–3 निश्चय कर मानो रे–SS॥383॥

(384) शिल्पी मूर्ति बनाता है, तो तन्मय हो जाता है–2
पृथक् नहीं हो पाता है–SS
त्यों ही जीव करे कुछ भी, तन्मयता रहती उसकी–2
जीव भावों में हो–3 तन्मय हो जाए रे–SS॥384॥

(385) शिल्पी अपना काम करे, चिंता हरदम उसे रहे–2
दुख उससे नहिं भिन्न रहे–SS
जीव यहाँ जब कर्म करे, तब तक चिंता दुक्ख रहे–2
आतम से पीड़ा हो–3 नहिं भिन्न बताएँ रे–SS॥385॥

(386) भीत को जो रंगीन करे, उसे जान तू ज्ञेय अरे–2
विषय ज्ञान का ज्ञेय रहे–SS
त्यों निज पर को जाने जो, उसे यहाँ ज्ञायक समझो–2
निज में तन्मय हो हो–3 ज्ञायक कहलाए रे–SS॥386॥

(387) किया भीत को श्वेत यहाँ, खड़िया ही थी श्वेत यहाँ–2
खड़िया करती श्वेत यहाँ–SS
देखा सब पर द्रव्यों को, देखे वह जो दर्शक हो–2
दर्शन आतम का हो–3 गुण है बतलाएँ रे–SS॥387॥

(388) खड़िया सहज सफेद यहाँ, भीत करे वह श्वेत यहाँ–2
ऐसा निश्चय कहें कहाँ?
नहीं त्यागने से संयत, अपने भावों से संयत–2
भावों से धर्म हो–3 की अलख जगाओ रे–SS॥388॥

(389) भीत पे जब खड़िया आई, तभी सफेदी नजराई–2
खड़िया सहज श्वेत भाई–SS
पर वस्तु का दर्श हमें, देता है श्रद्धान हमें–2
श्रद्धा आतम में हो–3 तो सहज बताएँ रे–SS॥389॥

(390) दर्श–ज्ञान–चारित्र महां, निश्चय नय ने किया बयां–2
निश्चित निश्चय समझ यहाँ–SS
अब आगे व्यवहार कहें, लघु वचनों में समझ उन्हें–2
रत्नत्रय हमको हो–3 द्वय नय बतलाएँ रे–SS॥390॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(391) खड़िया भीत सफेद करे, उसका यही स्वभाव अरे–2
पर को वह रंगीन करे–SS
ज्ञान स्वभावी जीव यहाँ, तभी जानता सभी यहाँ–2
निज पर को जाने हो–3 ज्ञायक कहलाए रे–SS॥391॥

(392) भीत पे लग जाती खड़िया, भीत श्वेत दिखती बढ़िया–2
श्वेत स्वभाव रहे खड़िया–SS
त्यों ही दर्शभाव द्वारा, जीव देखता जग सारा–2
दृष्टा होते ही हो–3 निज पर दिख जाये रे–SS॥392॥

(393) खड़िया यहाँ स्वभाव धरे, पर द्रव्यों को श्वेत करे–2
बिना किए वो स्वयं करे–SS
वैसे ही जो संयत हो, वो परद्रव का त्याग करे–2
संयत निज पर को हो–3 अच्छे से जाने रे–SS॥393॥

(394) खड़िया सबको श्वेत करे, उसका ऐसा भाव अरे–SS
इसमें संशय नहीं धरे–SS
त्यों जो श्रद्धाभाव धरे, वो निज पर श्रद्धान करे–2
ऐसा स्वभाव हो–3 उसको बतलाएँ रे–SS॥394॥

(395) पर से निज का काम करे, पर के बिन कुछ कर न सके–2
उसको ही व्यवहार कहें–SSS
नहीं अपेक्षा पर की हो, उसको ही निश्चय समझो–2
और भी बातें हो–3 व्यवहार बताएँ रे–SS॥395॥

(396) कई शुभाशुभ कार्य हुए, उनमें नाना दोष हुए–2
वे सब हमसे लिप्त हुए–SS
उनको मिथ्यारूप कहे, तौबा उनसे दूर रहे–2
प्रतिक्रम रूपी वह हो–3 आतम कहलाए रे–SS॥396॥

(397) पूर्व शुभाशुभ कर्म किए, जिनके कारण दुक्ख हुए–2
ज्ञानी ने सब त्याग दिए–SS
ज्ञानी ही अब ज्ञान यहाँ, तब ही प्रत्याख्यान यहाँ–2
ज्ञानी की महिमा हो–3 ज्ञानी समझाए रे–SS॥397॥

(398) पहले हमने कर्म किए, उनसे हमको दुक्ख हुए–2
त्याग भावना लिए हुए–SS
अब मैं बचना चाहता हूँ, उन्हें मिटाना चाहता हूँ–2
तब ही आलोचक हो–3 आतम कहलाए रे–SS॥398॥

(399) प्रतिक्रमण नित करता है, प्रत्याख्यानी रहता है–2
नित आलोचन करता है–SS
नित आतम को शुद्ध करे, ज्ञानी बने प्रबुद्ध रहे–2
चारित्रवान् हो–3 निश्चय बतलाए रे–SS॥399॥

(400) निंदा और प्रशंसा सुन, रोष–तोष हो मन में धुन–2
तो समझो अज्ञान सघन–SSS
ये सब पुद्गल की माया, फिर भी उसमें भरमाया–2
क्रोधादि करके हो–3 वह खुशी मनाए रे–SS॥400॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(401) शब्द तो पुद्गल है ज्ञानी, इस पर क्यूँ तू अभिमानी–2
भिन्न वो तुझसे है ज्ञानी–SS
छोड़ यहाँ तू रोष यहाँ, निश्चय को तू सोच यहाँ–2
शब्दों से आतम हो–3 अतिभिन्न बताएँ रे–SS॥401॥

(402) शब्द कहे नहिं मुझे सुनो, और कहे नहिं क्रोध करो–2
पुद्गल को पुद्गल समझो–SS
कर्ण इन्द्रिय का शब्द विषय, निज स्वरूप से सुनती वह–2
शब्दों में आतम हो–3 नहिं दौड़ लगाए रे–SS॥402॥

(403) आत्म शुभाशुभ वस्तु लखे, वस्तु न कहती देख मुझे–2
निज स्वभाव से वस्तु दिखे–SS
चक्षु का ये विषय कहा, आँख देखती सभी अहा–2
दर्शन गुण द्वारा हो–3 वस्तु दिख जाए रे–SS॥403॥

(404) गंध शुभाशुभ नहिं बोले, भिन्न जीव से गुरु बोले–2
घ्राण अनुभवे सभी हौले–SS
घ्राण इन्द्रिय का अनुभव है, राग करे तो दुख भव है–2
निज का स्वरूप हो–3 अनुभव में लाओ रे–SS॥404॥

(405) नहीं शुभाशुभ रस बोले, मुझको आकर तू चख ले–2
रसना उसको खुद चख ले–SS
निज स्वभाव से रसधारी, पर से नहीं है गुणकारी–2
अपने ही गुण से हो–3 रस में रस पाये रे–SS॥405॥

(406) नहीं शुभाशुभ स्पर्शन, छूने को कहता जबरन–2
छू लेते ये मेरा मन–SS
शक्ति विराजित आतम में, उससे हम स्पर्श करें–2
वस्तु से ये गुण हो–3 हममें नहिं आयें रे–SS॥406॥

(407) बाह्य वस्तु नहिं कहे तुझे, जान मुझे तब ज्ञान तुझे–2
मेरे बिन नहिं ज्ञान तुझे–SS
ज्ञान आतमा का गुण है, गुण में ही उसकी धुन है–2
ज्ञान को आतम हो–3 नहिं दौड़ लगाए रे–SS॥407॥

(408) अच्छे बुरे द्रव्य सारे, कहें न मुझे जान प्यारे–2
जो आतम से अति न्यारे–SS
बुद्धि स्वयं ग्रह लेती है, जान वस्तु को लेती है–2
ज्ञान आतम में हो–3 तादात्म बताएँ रे–SS॥408॥

(409) इतना सबकुछ जान यहाँ, पाये न उपशम भाव यहाँ–2
समझो उसको मूर्ख यहाँ–SS
उसे बुद्धि नहिं मिल पायी, पर में ही नित भरमाई–2
सम्यक् हो ज्ञान हो–3 कल्याण दिलाए रे–SS॥409॥

(410) कर्मोदय से भोग मिले, उन्हें देख मन खूब खिले–2
अपनाकर ले खूब मजे–SS
ये अज्ञान चेतना है, जिसमें बड़ी वेदना है–2
दुःखों के कर्म हो–3 फिर उसे बँधाएँ रे–SS॥410॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–SS
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–SS

(411) मैंने ऐसा कर्म किया, अपना उसको मान लिया–2
कर्म चेतना इसे कहा–SS
बहु कर्मों का बंध करे, फिर दुखिया हो यहाँ मरे–2
कर्म चेतन ही हो–3 फल पा दुख पाये रे–SS॥411॥

(412) मुझे कर्मफल खूब मिले, मेरे खूब यहाँ जलजले–2
कर्मफलों में फूले फले–SS
जान कर्म फल चेतन ये, कर्मबंध दुख देती ये–2
अज्ञानी फिर से हो–3 वसुकर्म बँधाएँ रे–SS॥412॥

(413) शास्त्र शब्द का पुंज कहा, ज्ञान आत्मगुणरूप कहा–2
श्रुत से जो अति भिन्न अहा–SS
ज्ञान व शास्त्र एक नहिं है, भिन्न–भिन्न दो वस्तु हैं–2
ऐसा जिनबंधु हो–3 सबको बतलाएँ रे–SS॥413॥

(414) ज्ञान, शब्द से भिन्न यहाँ, आतम कही अभिन्न यहाँ–2
अलग–अलग द्वय वस्तु यहाँ–SS
ज्ञान सभी को जान रहा, शब्द नहीं कुछ जान रहा–2
शब्द, पुद्गल की हो–3 पर्याय बताएँ रे–SS॥414॥

(415) पुद्गल का गुण रूप कहा– आतम का गुण ज्ञान रहा–2
रूप न कुछ भी जान रहा–SS
जानेगा वह ज्ञान कहा, जो पुद्गल से भिन्न रहा–2
ऐसा जिनवर ही हो–3 सबको समझाएँ रे–SS॥415॥

(416) रंग कोई भी ज्ञान नहीं, आतम का गुण कहा नहीं–2
पुद्गल का गुण जान यहीं–SS
ज्ञान जानता है रंग को, रंग न जाने ज्ञान कभी–2
ज्ञान और वर्ण हो–3 अति भिन्न बताएँ रे–SS॥416॥

(417) पुद्गल का गुण गंध यहाँ, आतम का गुण ज्ञान यहाँ–2
दोनों कैसे एक यहाँ?–SS
गंध क्षणिक है ज्ञान रहित, ज्ञान है गुण तादात्म्य सहित–2
दोनों आपस में हो–3 अतिभिन्न बताएँ रे–SS॥417॥

(418) रस नहिं ज्ञान कराता है, रस को ज्ञान बताता है–2
ज्ञान न रस हो जाता है–SS
रस, रस है नहिं ज्ञान यहाँ, ज्ञान, ज्ञान, रस–नहीं यहाँ–2
दोनों ही गुण से हो–3 अतिभिन्न बताएँ रे–SS॥418॥

(419) नहीं ज्ञान स्पर्शन में, ज्ञान रहे नित चेतन में–2
झलके स्पर्श ये आतम में–SS
स्पर्श–स्पर्श है ज्ञान नहीं, ज्ञान में है स्पर्श नहीं–2
ज्ञान, स्पर्शन हो–3 से भिन्न बताएँ रे–SS॥419॥

(420) कर्म ज्ञान नहिं कहलाए, ज्ञान कर्म नहिं बतलाए–2
कर्म, ज्ञान से मिट जाए–SS
ज्ञान कर्म सब जान रहा, कर्म–कर्म नहिं जान रहा–2
कर्म दुखदायी हो–3 सुख ज्ञान बताएँ रे–SS॥420॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे–ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो–3 निज में रम जाएँ रे–ऽऽ

(421) धर्मद्रव्य का गुण गति है, ज्ञान जानने की मति है–2
एक मानने में क्षति है–ऽऽ
धर्म निमित्त चलाने में, वस्तु निमित्त जानने मे–2
धर्म और ज्ञान हो–3 अति भिन्न बताएँ रे–ऽऽ॥421॥

(422) द्रव्य अधर्म रोकता है, ज्ञान हमें बोधता है–2
दोनों में न एकता है–ऽऽ
अधर्म द्रव्य ही कहलाए, ज्ञान, जीवगुण कहलाए–2
दोनों फिर एक हो–3 कैसे हो पाएँ रे–ऽऽ॥422॥

(423) काल द्रव्य परिणमन में, ज्ञान सभी जानने में–2
अंतर बहुत है दोनों में–ऽऽ
काल यहाँ जड़ द्रव्य कहा, ज्ञान स्वभावी रूह अहा–2
ज्ञान से भिन्न हो–3 वह काल बताएँ रे–ऽऽ॥423॥

(424) जाने नहिं आकाश यहाँ, सिर्फ जानता ज्ञान यहाँ–2
दोनों लगते एक कहाँ?
ये आकाश अजीव कहा, ज्ञान है गुण जीवंत अहा–2
दोनों आपस में हो–3 अतिभिन्न बताएँ रे–ऽऽ॥424॥

(425) अध्यवसान ज्ञान नहिं है, ज्ञान में अध्यवसान न है–2
दोनों अन्य अन्य ही हैं–ऽऽऽ
अध्यवसान हटाएगा, ज्ञान उभरकर आयेगा–2
ज्ञान में कोई हो–3 नहिं राग समाये रे–ऽऽ॥425॥

(426) ज्ञानी जाने सब जग में, ज्ञायक रहता है निज में–2
ज्ञायक, ज्ञाता नहिं भव में–ऽऽ
ज्ञायक में है ज्ञान यहाँ, ज्ञान न उससे भिन्न यहाँ–2
ज्ञायक से ज्ञान हो–3 नहिं भिन्न बताएँ रे–ऽऽ॥426॥

(427) धर्म, अधर्म समझ ये ज्ञान, अंगपूर्व समदृष्टि ज्ञान–2
दीक्षा, संयम भी है ज्ञान–ऽऽऽ
ये सब ज्ञानी के ही हो, ज्ञान बिना कुछ भी नहिं हो–2
संयम के पथ को हो–3 ज्ञानी दिखलाए रे–ऽऽ॥427॥

(428) मूर्तिक पुद्गल को जानो, आत्मा को अमूर्त मानो–2
निश्चय नय से पहचानो–ऽऽऽ
जीव करे आहार यहाँ, पुद्गल का व्यवहार यहाँ–2
निश्चय से आतम हो–3 आहार न पाये रे–ऽऽ॥428॥

(429) आत्मा कहें अमूर्तिक है, पुद्गल दिखता मूर्तिक है–2
दोनों नहिं दिखते इक है–ऽऽ
अमूर्तिक पुद्गल ग्रहण करे, कैसे है ये बात बने–2
पुद्गल को जीव हो–3 कैसे ग्रह जाए रे–ऽऽ॥429॥

(430) नहीं किसी को ग्रहण करे, नहीं किसी को त्याग करे–2
निज में निज को ग्रहण करे–ऽऽ
चिद् स्वरूप निश्चय चेतन, नहीं भटकती है भव वन–2
आतम पुद्गल को हो–3 छू भी नहिं पाये रे–ऽऽ॥430॥

समयसार की महिमा हम, यहाँ सुनाएँ रे-ऽऽ
जिसका अनुभव कर हो-3 निज में रम जाएँ रे-ऽऽ

(431) पाखण्ड़ी अनगार सभी, करते ग्रही विचार यही-2
भेष दिलाता मुक्ति सही-ऽऽ
मूढ़ी, ज्ञान न लाते हैं, भेष से मोक्ष बताते हैं-2
अज्ञानी साधु हो-3 अज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ॥431॥

(432) बाह्य भेष इस तन का है, शुद्ध भाव चेतन का है-2
अज्ञानी भव वन का है-ऽऽ
बाह्य भेष पर ध्यान न धर, रत्नत्रय पे ध्यान तू धर-2
बाहर का भेष हो-3 नहिं मोक्ष दिलाए रे-ऽऽ॥432॥

(433) छलकपटी, ढोंगी स्वादू, कहते हैं खुद को साधू-2
सच्चे कभी न ये साधू-ऽऽ
रत्नत्रय आ जाता है, राग त्याग कर जाता है-2
ऐसे निर्ग्रन्थ हो-3 शिवमार्ग दिखाएँ रे-ऽऽ॥433॥

(434) द्रव्यलिंग शिवपथ नहिं है, गृहस्थ भेष शिवपथ नहिं है-2
राग-द्वेष शिवपथ नहिं है-ऽऽ
रत्नत्रय में लगो यहाँ, ज्ञान ध्यान में रहो यहाँ-2
निज में तन्मयता हो-3 शिवमार्ग बताएँ रे-ऽऽ॥434॥

(435) निज में नित्य निहारो तुम, शुद्ध स्वरूप विचारो तुम-2
निज को भव से तारो तुम-ऽऽ
बाहर नहीं विचार करो, निज में सदा विहार करो-2
तब ये मुक्तीपथ हो-3 तुझको मिल जाए रे-ऽऽ॥435॥

(436) पाखण्डी गृहभेषो में, मोह किये गृह देशों में-2
उलझे भेष व केशों में-ऽऽ
समयसार क्या समझेंगे, लोग डुबाकर डूबेंगे-2
जीवन का सार हो-3 वे लख नहिं पाये रे-ऽऽ॥436॥

(437) मुनि श्रावक शिवपंथी दो, कहता है व्यवहार अहो-2
अब निश्चय जो कहे सुनो-ऽऽ
निश्चय दोनों नहिं माने, वो शुद्धात्म तत्त्व जाने-2
ज्ञायक स्वभाव हो-3 शिवपथ बतलाएँ रे-ऽऽ॥437॥

(438) समयसार को पढ़ करके, तत्त्व व अर्थ समझ करके-2
उसमें स्वयं ठहर करके-ऽऽ
सार समय में पाकर के, तन्मय निज में जा करके-2
उत्तम सुख पाये हो-3 वह फल पा जाये रे-ऽऽ॥438॥

(इति समयसार)

पद्यानुवाद करना गुरु ने सिखाया,
शिवमार्ग दे नित हमें चलना बताया।
ऐसे विराग गुरुवर जय हो तुम्हारी,
हो वंदना चरण में प्रतिपल हमारी॥

सार मानव के जीवन का, बताया ज्ञान है हमको।
ज्ञान में सार कुछ भी है, तो वो श्रद्धान है हमको॥
मिले संयम, समाधि हो, सभी गम हो गमन मेरे।
समय का सार पा जाऊँ, मिले कल्याण अब हमको॥

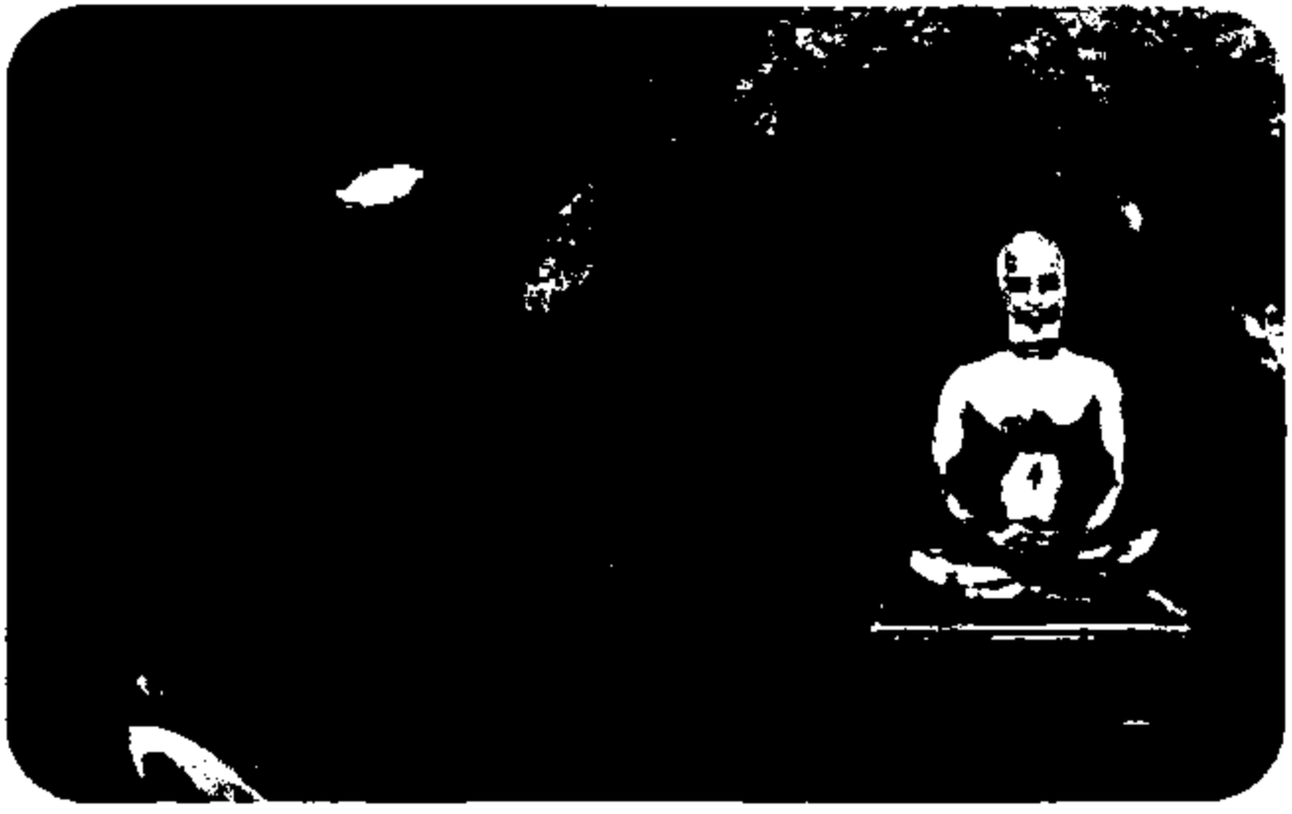

नियमसार

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य कुन्दकुन्द देव
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

मंगलाचरण

(1) दर्शन–ज्ञान अनंत जहाँ, जिनका नित्य स्वभाव यहाँ–2
वर्धमान प्रभु कहे यहाँ–SS
नमस्कार उनको करके, केवली श्रुत उर में धरके–2
नियमसार को हो–3 कहता हूँ भक्ती से–SS॥439॥

(2) जिनशासन में मार्ग कहा, मार्ग का फल भी बहुत कहा–2
दोनों का विस्तार अहा–SS
मार्ग है मुक्ति उपाय यहाँ, फल उसका है मोक्ष यहाँ–2
कहते हैं जिनवर, हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS॥440॥

(3) नियम से करने योग्य है जो, समझो उसको नियम है वो–2
दर्शन ज्ञान चरित्र है वो–SS
मिथ्या का परिहार करे, सम्यक का उपचार करे–2
निश्चय से सार हो–3 ये नियम बताएँ रे–SS॥441॥

(4) मोक्ष उपाय नियम समझो, उसका फल निर्वाण अहो–2
गुरुमुख से ये बात सुनो–SS
चारित दर्शन ज्ञान यहाँ, अलग–अलग अब कहें यहाँ–2
गुरु कुंदकुंद हो–3 हमको बतलाएँ रे–SS॥442॥

(5) आगम आप्त व तत्त्व यहाँ, इनका हो श्रद्धान जहाँ–2
होता है सम्यक्त्व वहाँ–SS
सकल दोष से रहित है जो, सभी गुणों से युक्त है जो–2
उसको ही आप्त हो–3 आगम बतलाएँ रे–SS॥443॥

(6) क्षुधा तृषा भय रोष नहीं, राग मोह मद क्षोभ नहीं–2
निद्रा जन्म उद्वेग नहीं–SS
चिंता मृत्यु पसीना भी, खेद बुढ़ापा कभी नहीं–2
दस अठ थे दोष हो–3 प्रभु रहित बताएँ रे–SS॥444॥

(7) सब दोषों से रहित यहाँ, केवलज्ञान से सहित यहाँ–2
वो परमातम कहें यहाँ–SS
इससे जो विपरीत रहे, वो परमातम नहीं यहाँ–2
कहते हैं गुरुवर हो–3 ये बात बताएँ रे–SS॥445॥

(8) प्रभु मुख से जो निकला हो, जिसमें कोई दोष न हो–2
शुद्ध वचन आगम है वो–SS
सात तत्त्व जो बतलाये, नव पदार्थ को समझाये–2
आगम की बातें हो–3 उत्तम बतलाएँ रे–SS॥446॥

(9) जीव और पुद्गल काया, धर्म अधर्म को बतलाया–2
काल आकाश भी दिखलाया–SS
नाना गुण पर्यायों से, युक्त कहें तत्त्वार्थ इसे–2
इनको जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–SS॥447॥

(10) जीव सहित उपयोग यहाँ, द्विविध कहा उपयोग यहाँ–2
ज्ञान–दर्शमय रूप यहाँ–SS
द्विविध है ज्ञान उपयोग कहा, स्वभाव और विभाव अहा–2
कहते हैं गुरुवर हो–3 सबको समझाएँ रे–SS॥448॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(11) इन्द्रिय ज्ञान रहित है जो, कोई न जिसका सहाय हो–2
उसको केवलज्ञान कहो–SS
स्वभाव ज्ञान कहा उसको, उसके हैं दो भेद अहो–2
मिथ्या और सम्यक् हो–3 दोनों कहलाएँ रे–SS॥449॥

(12) सम्यग्ज्ञान के भेद यहाँ, गुरु बतलाएँ चार यहाँ–2
मतिश्रुत अवधि मन:पर्यय –SS
कुमति–कुश्रुत विभंगावधि, मिथ्याज्ञान हैं तीन यहाँ–2
इनको जाने बिन हो–3 नहिं ज्ञान समाये रे–SS॥450॥

(13) दो दर्शन उपयोग कहा – स्वभाव और विभाव अहा–2
केवल दर्श स्वभाव कहा–SS
इन्द्रिय बिन रहता है जो, पर पदार्थ नहिं सहाय हो–2
ऐसा जाने बिन हो–3 सम्यक्त्व न पाये रे–SS॥451॥

(14) चक्षु–अचक्षु–अवधि दर्शन, तीनों हैं विभाव दर्शन–2
ऐसा जाने सम्यक मन–SS
स्वपरापेक्ष और निरपेक्ष, पर्यय के द्वय भेद शुभम्–2
ऐसा जो जाने हो–3 वह ज्ञान बढ़ाए रे–SS॥452॥

(15) नर–नारक तिर्यंच यहाँ, और देव पर्याय यहाँ–2
ये सब कहीं विभाव यहाँ–SS
कर्म उपाधि के बिन जो, उसको समझ स्वभाव यहाँ–2
दोनों का अंतर हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS॥453॥

(16) कर्म भूमि के हैं मानव, भोग भूमि के हैं मानव–2
दो प्रकार जानो मानव–SS
सभी नारकी, नरकों में, सात नरक ही कहते हैं–2
सात प्रकार हो–3 नरक बतलाएँ रे–SS॥454॥

(17) चौदह भेद तिर्यंचों के, चार भेद हैं देवों के–2
ज्ञानी जाने भेद उनके–SS
लोक विभागिक ग्रंथों में, इन सबका विस्तार कहें–2
इन सबका ज्ञान हो–3 उसमें मिल जाये रे–SS॥455॥

(18) पुद्गल कर्मों का कर्ता, आतम खुद भोक्ता होता–2
नय व्यवहार यही कहता–SS
निश्चय से है कर्म जनित, भावों का कर्ता–भोक्ता–2
ऐसा जो जाने हो–3 वह बुद्धि बढ़ाए रे–SS॥456॥

(19) द्रव्यदृष्टि से जीव अहो–2 सब पर्यय से भिन्न कहो–2
जो भी पहले कहीं अहो–SS
पर्यायार्थिक नय से हों – दो प्रकार पर्याय कहो–2
दोनों ही नय से हो–3 निज आतम जानो रे–SS॥457॥

(20) दो प्रकार पुद्गल जानो, अणु–स्कंध भेद मानो–2
दो प्रकार अणु को जानो–SS
छह प्रकार स्कंध कहा, कहते आये भेद अहा–2
इनको जाने बिन हो–3 कुछ समझ न आये रे–SS॥458॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(21) स्थूल स्थूल और स्थूल अहा, स्थूल सूक्ष्म, सूक्ष्म स्थूल कहा–2
सूक्ष्म और अतिसूक्ष्म अहा–SS
पृथ्वी जल आतप आदि, पुद्गल के छह भेद अहा–2
ये सब विभाव हो–3 पुद्गल कहलाएँ रे–SS॥459॥

(22) भू–पर्वत, काष्ठादिक तन, स्थूल स्थूल कहते गुरुजन–2
ये पुद्गल हैं स्कन्धन–SS
तेल, दूध, घी को जानो, इन्हें स्थूल तुम सब मानो–2
पुद्गल के भेद हो–3 श्रुत में बतलाएँ रे–SS॥460॥

(23) छाँव–धूप–उद्योत यहाँ, स्थूल सूष्म तू समझ यहाँ–2
ये सब हैं स्कंध यहाँ–SS
नाकादिक के विषय यहाँ, सूक्ष्म स्थूल हि जान यहाँ
इन सबको पुद्गल हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS॥461॥

(24) बनती कर्म वर्गणाएँ, राग–द्वेष जब भाव आयें–2
सूक्ष्म स्कंध वे बतलाएँ–SS
वर्ग रूप स्कंध सभी, सूक्ष्म सूक्ष्म ही कहलाएँ–2
ये सब स्कंध हो–3 पुद्गल बतलाएँ रे–SS॥462॥

(25) धातु चतुष्क बनाता जो, वो कारण परमाणु हो–2
अणु के बिन स्कंध न हो–SS
स्कंधों का अंत यहाँ, कहा कार्य परमाणु यहाँ–2
ऐसा जो जाने हो–3 वह ज्ञान बढ़ाए रे–SS॥463॥

(26) स्वयं आदि और मध्य यहाँ, स्वयं ही होता अंत यहाँ–2
कभी न इन्द्रिय गम्य यहाँ–SS
अविभागी जो रहे सदा, समझ उसे परमाणु यहाँ–2
स्कंध अणु के बिन हो–3 नहिं समझ में आये रे–SS॥464॥

(27) एक रूप–रस–गंध अहो दो स्पर्श स्वभावी हो–2
वो स्वभाव गुण वाला हो–SS
जिसमें सब गुण प्रकट रहें, वो विभाव गुण वाला हो–2
जिनवर ने श्रुत में हो–3 ये बात बताई रे–SS॥465॥

(27) पर की नहीं अपेक्षा हो, फिर भी द्रव्य परिणमन हो–2
स्वभाव पर्यय उसे कहो–SS
हो स्कंध परिणमन जो, वो विभाव पर्याय कहो–2
दोनों पुद्गल की हो–3 पर्याय बताएँ रे–SS॥466॥

(29) निश्चय नय से कहें यहाँ, अणु को पुद्गल द्रव्य यहाँ–2
ऐसा हे उपदेश यहाँ–SS
नय व्यवहार से कहें यहाँ, स्कंध है पुद्गल द्रव्य यहाँ–2
दोनों ही नय से हो–3 पुद्गल बतलाएँ रे–SS॥467॥

(30) चलने और ठहरने में, धर्म अधर्म निमित्त रहें–2
जीव और इन पुद्गल में–SS
जीव आदि सब द्रव्यों को, नभ निमित्त अवगाहन में–2
ये सब जाने बिन हो–3 सम्यक्त्व न पाये रे–SS॥468॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(31) समय और आवलि जानो, दो या तीन भेद जानो–2
ये व्यवहार काल जानो–SS
संख्यात आवली काल अतीत, गुणित हो तो संस्थान जानो–2
ऐसा प्रमाण हो–3 वह काल बताए रे–SS॥469॥

(32) जीव व पुद्गल दोनों से, अनंतगुणे हैं समय कहे–2
वर्तमान के समझ उसे–SS
नभ में सभी प्रदेशों पर, विद्यमान हैं काल प्रवर–2
ऐसा वह काल हो–3 परमार्थ कहाए रे–SS॥470॥

(33) जीव आदि सब द्रव्यों में, परिवर्तन का हेतु कहें–2
काल द्रव्य ही हेतु रहे–SS
धर्म आदि चउ द्रव्यों में, स्वाभाविक गुण पर्यायें–2
द्रव्यों का ज्ञान हो–3 निर्णय करवाये रे–SS॥471॥

(34) होते हैं छः द्रव्य यहाँ, जिनशासन में कहे यहाँ–2
कालद्रव्य है अस्ति यहाँ–SS
अस्तिकाय पच द्रव्य कहे, बहु प्रदेश से युक्त रहे–2
एक प्रदेशी हो–3 बस काल बताए रे–SS॥472॥

(35) संख्य–असंख्य अनंत प्रदेश, मूर्त द्रव्य के तीन हैं भेद–2
धर्म अधर्म असंख्य प्रदेश–SS
जीव असंख्य प्रदेशी हैं, निश्चय से ही बात ये है
इनका ही ज्ञान हो–3 सद्राह दिखाए रे–SS॥473॥

(36) अमित प्रदेशी लोकाकरण, अनंत प्रदेशी है आकाश–2
काय नहीं है काल के पास–SS
एक प्रदेशी काल यहाँ, तभी नहीं हैं काय यहाँ–2
ज्ञान की आँख हो–3 ये सब दिखलाये रे–SS॥474॥

(37) पुद्गल द्रव्य कहा मूर्तिक, बाकी द्रव्य हैं अमूर्तिक–2
जीव है चेतन रूप सहित–SS
पाँचों द्रव्य अचेतनमय, जीव अकेला चेतनमय–2
इनका ही ज्ञान हो–3 निर्णय करवाए रे–SS॥475॥

(38) कर्मयुक्त हो जीव यहाँ, जीव हैं ऐसे हेय यहाँ–2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ–SS
कर्ममुक्त जो जीव यहाँ, उपादेय वो जीव यहाँ–2
ज्ञानीजन उनका हो–3 नित ध्यान लगाए रे–SS॥476॥

(39) मान अपमान भाव नहिं हैं, हर्ष भाव स्थान नहिं है–2
द्वेष भाव स्थान न है–SS
जीव के स्वभाव स्थान नहिं हैं, निश्चय से ये सभी कहें–2
निश्चय से जीव हो–3 नित शुद्ध बताएँ रे–SS॥477॥

(40) जीव के स्थिति बंध नहीं, प्रकृति प्रदेश के बंध नहीं–2
उदय के भी स्थान नहीं–SS
अनुभाग बंध के स्थान नहीं, शुद्ध जीव में कोई नहीं–2
इन सबका ज्ञान हो–3 शुद्धात्म दिखाए रे–SS॥478॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(41) क्षायिक भाव स्थान नहीं, क्षयोपशम स्थान नहीं–2
औदयिक भाव स्थान नहीं–SS
उपशम भावस्थान नहीं, शुद्ध जीव में कोई नहीं–2
संसारियों में हो–3 ये भाव बताएँ रे–SS॥479॥

(42) चारों गति स्थान नहीं, जन्म मरण और रोग नहीं–2
शोक जरा कुलस्थान नहीं–SS
योनि व जीव स्थान नहीं, और मार्गणा स्थान नहीं–2
शुद्ध जीवों में हो–3 ये सब नहिं पाये रे–SS॥480॥

(34) निर्मम है सब द्वन्द्व रहित, शुद्धात्म है दण्ड रहित–2
राग रहित तन द्वेष रहित–SS
भय आलंबन रहित है जो, सभी मूढ़ता रहित है जो–2
ऐसी शुद्धात्म हो–3 का ध्यान लगाओ रे–SS॥481॥

(44) नीरागी निर्ग्रन्थ है जो, दोष रहित निःशल्य है जो–2
निष्कामी निष्क्रोध है जो–SS
शुद्धात्म में मान कहाँ, मद का नाम निशान कहाँ–2
ऐसी शुद्धात्म हो–3 को शीश झुकाएँ रे–SS॥482॥

(45) वर्ण गंध रस रहित है जो, स्त्री नर नहीं नपुंसक जो–2
संस्थान नहिं संहनन हो–SS
शुद्ध जीव में ये नहिं हों, ये सब अशुद्धता में हों–2
ऐसा ही जिनवर हो–3 सबको बतलाएँ रे–SS॥483॥

(46) रूप रहित है गंध रहित, रस से रहित है वर्ण रहित–2
शब्द रहित है लिंग रहित–SS
संस्थान–संहनन रहित, चेतन गुण से रहे सहित–2
ऐसी आतम ही हो–3 गुरु शुद्ध बताएँ रे–SS॥484॥

(47) जैसे हैं सब सिद्ध यहाँ, वैसे ही भव बद्ध यहाँ–2
कहते हैं गुरु कुंद यहाँ–SS
जन्म मरण से रहित हैं सब अष्ट गुणों से युक्त हैं सब–2
द्रव्यार्थिक नय से हो–3 ये बात बताएँ रे–SS॥485॥

(48) अशरीरी अविनाशी हैं, लोक शिखर का वासी हैं–2
जैसे सिद्ध प्रवासी हैं–SS
निर्मल विशुद्ध आतम है ऐसे ही भव वासी है–2
कारण और कारज हो–3 समयसार बताएँ रे–SS॥486॥

(49) होता है व्यवहार जहाँ, बनते सारे भाव वहाँ–2
मुख्य रहे व्यवहार यहाँ–SS
शुद्ध नयों से कहते हैं, सिद्ध स्वरूपी सब ही हैं–2
सब ही संसारी हो–3 ही शुद्ध बताएँ रे–SS॥487॥

(50) व्यवहारी सब भाव यहाँ, कहलाते हैं हेय यहाँ–2
पर द्रव्यों से बने यहाँ–SS
अंतरंग का तत्त्व यहाँ, उपादेय निज आत्म यहाँ
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥488॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(51) तत्त्व में सही विचार करे, तब ही हो श्रद्धान अरे–2
उसको ही सम्यक्त्व कहें–SS
संशय–विभ्रम विमोह बिना, जो हो सम्यग्ज्ञान कहें–2
दोनों ही युगपत हो–3 भवि को मिल जायें रे–SS॥489॥

(52) चल–मलिन न भाव जहाँ, अगाढत्व नहिं भाव जहाँ–2
होता है सम्यक्त्व वहाँ–SS
हेय उपादेय जाने अधिगम भाव जो पहचाने–2
सम्यक् का भाव हो–3 उसमें हो पाये रे–SS॥490॥

(53) जिनश्रुत ज्ञानी गुरु यहाँ, बनते बाह्य निमित्त यहाँ
पाते सम्यग्दर्श जहाँ–SS
दर्शमोह का उपशम हो, क्षयोपशमादिक बुद्धि हो–2
अंतरंग हेतु हो–3 ये भाव बताएँ रे–SS॥491॥

(54) सम्यक्दर्शन–ज्ञान रहे, उसको ही चारित्र कहें–2
मुक्ति प्राप्ति के लिये रहें–SS
व्यवहार और रहे निश्चय – दोनों से चारित्र कहें–2
उसको हे भविजन हो–3 तुम हृदय बसाओ रे–SS॥492॥

(55) हो व्यवहार चरित्र यहाँ, तप भी वैसा रहे वहाँ–2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ–SS
निश्चय हो चारित्र जहाँ, तप भी निश्चय रहे वहाँ–2
जैसा हो चारित हो–3 तप वही बताएँ रे–SS॥493॥

(56) जीव समास योनि जानो, कुल मार्गणास्थान जानो–2
उनका आरंभ त्याग करो–SS
यही प्रथम व्रत कहा यहाँ, जिसे अहिंसा कहें यहाँ–2
इसको जाने बिन हो–3 नहीं व्रती कहाए रे–SS॥494॥

(57) राग–द्वेष या मोह रहे, वहीं असत्य विचार रहे–2
झूठ वचन भी वही कहे–SS
मुनिजन इसका त्याग करें, दूजो व्रत को हृदय धरें–2
सत्य व्रतधारी हो–3 वो संत कहाएँ रे–SS॥495॥

(58) ग्राम, नगर वा जंगल में, पर की वस्तु देख उनमें–2
पाने का नहिं भाव करें–SS
उनको अचौर्य व्रत होता, ये व्रत उत्तम फल दाता–2
मुनिजन इस व्रत को, हो–3 हरदम अपनाएँ रे–SS॥496॥

(59) रूप स्त्रियों का लखकर, उनकी चाह न उर में धर–2
निज आतम का भाव प्रवर–SS
मैथुन संज्ञा को छोड़े, निज को वो निज में जोड़े
उसमें यह चौथा हो–3 व्रत गुरु बताएँ रे–SS॥497॥

(60) नहीं अपेक्षा रखे यहाँ, त्यागे सारी ग्रंथि यहाँ–2
अपरिग्रह का भाव यहाँ–SS
पंचम व्रत वो पाता है, उसमें चारित भाता है–2
मुनिजन इस व्रत को हो–3 दिल से अपनाएँ रे–SS॥498॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(61) होता प्रासुक मार्ग यहाँ, चार हाथ लख भूमि यहाँ–2
दिल में करते गमन यहाँ–SS
करे भाव जो श्रमण यहाँ, उसमें ईर्या समिति यहाँ–2
ईर्या समिति ही हो–3 व्रत यहाँ बताएँ रे–SS॥499॥

(62) हास्य न कर्कश भाव करे, परनिंदा पैशून्य तजे–2
आत्मप्रशंसा वचन तजे–SS
स्व–पर हितकर वचन कहे, उसमें भाषा समिति रहे–2
भाषा समिति ही हो–3 मन शुद्ध बनाए रे–SS॥500॥

(63) कृत कारित नहिं मोदन हो, प्रासुक प्रशस्त भोजन हो–2
मायाचारी रहित अहो–SS
एषणा समिति रहे उसमें शुद्ध भाव से शोधन हो–2
सात गुणों युत् हो–3 ये समिति बताएँ रे–SS॥501॥

(64) वस्तु ग्रहण व त्याग करें, देखभाल कर रक्षा करें–2
जिससे कोई न जीव मरें–SS
हो आदान व निक्षेपण, इसमें हरदम रहे प्रयत्न–2
हिंसा का त्यागी हो–3 ये समिति समाए रे–SS॥502॥

(65) लखकर प्रासुक भूमि यहाँ रोक–टोक नहिं रहे जहाँ–2
त्याग करे मल मूत्र वहाँ–SS
उसे प्रतिष्ठा समिति कहें, जिसे सभी मुनिराज गहे–2
ऐसी समिति ही हो–3 नित पुण्य बढ़ाए रे–SS॥503॥

(66) चित्त कलुषता त्याग करे, राग–द्वेष और मोह तजे–2
चारों संज्ञा दूर करे–SS
अशुभ भाव को त्यागे जो, मनोगुप्ति उसमें ही हो–2
ऐसा व्यवहार हो–3 नय हमें बताए रे–SS॥504॥

(67) स्त्री–राज व चोर कथा, वचनों में नहिं भोज कथा–2
पाप हेतु की सभी कथा–SS
लोक वचन भी त्याग करे, वचन गुप्ति उस श्रमण रहे–2
वचनों की गुप्ति, हो–3 नित प्रेम बढ़ाए रे–SS॥505॥

(68) आकुंचन नहिं मारण हो, बंधन नहीं प्रसारण हो–2
छेदन भाव नहीं मन हो–SS
काय क्रिया से निर्वृति हो – उसको काय की गुप्ति हो–2
ऐसी गुप्ति ही हो–3 शुभ ध्यान कराये रे–SS॥506॥

(69) मन में राग–द्वेष नहिं हो, वीतराग का भाव अहो–2
अंतरंग से मौन जो हो–SS
वचनों से निर्वृत्त है जो, वचन गुप्ति उसमें ही हो–2
ऐसी गुप्ति से हो–3 मन शांति पाये रे–SS॥507॥

(70) काय क्रिया से निर्वृत जो, उसको कायोत्सर्ग कहो–2
काय गुप्ति में वो भी हो–SS
हिंसा आदि से निर्वृति, वो भी काय की गुप्ति अहो–2
कायगुप्ति बिन हो–3 नहिं ध्यान हो पाये रे–SS॥508॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(71) घाति कर्म से रहित हैं जो, केवलज्ञान सहित हैं जो–2
चौंतीस अतिशय युक्त हैं जो–SS
परमगुणों से सहित हैं जो वे ही हैं अरिहंत प्रभो
उनके ही गुण में हो–3 नित लगन लगाओ रे–SS॥509॥

(72) कर्मबंध का नाश किया, अष्ट गुणों को प्राप्त किया–2
जिनका है लोकाग्र ठिया–SS
नित्य निरंजन अविनाशी, सिद्ध हैं वो शिवपुर वासी–2
सिद्धों का ध्यान हो–3 शुद्धात्म दिखाए रे–SS॥510॥

(73) पालन पंचाचार करें, पंचेन्द्रिय का दलन करें–2
धैर्यशील गंभीर रहें–SS
शिष्यों को शिक्षा–दीक्षा, देकर यहाँ सुशील करें–2
ऐसे आचार्य को हो–3 शीश झुकाएँ रे–SS॥511॥

(74) रत्नत्रय से युक्त हैं जो, भाव विशुद्ध बुद्ध हैं जो–2
उपाध्याय परमेष्ठी वो–SS
भव्य कमल विकसित करते, उनको सूर्य समान हैं जो–2
उनको वंदन कर हो–3 हम नित गुण गायें रे–SS॥512॥

(75) हैं लौकिक व्यापार रहित, हैं निर्ग्रन्थ व मोह रहित–2
आराधन में लीन निरत–SS
अखण्ड तप नित धरते हैं, मौन साधना करते हैं
ऐसे साधु को हो–3 हम हृदय बसायें रे–SS॥513॥

(76) ऐसी करे भावना जो, वो चारित व्यवहार कहो–2
जो निश्चय का कारण हो–SS
आगे निश्चय चारित को, कहता हूँ तुम उसे सुनो
व्यवहार के बिन हो–3 नहिं निश्चय पाये रे–SS॥514॥

(77) नारक नहिं तिर्यंच नहीं, मनुज नहीं मैं देव नहीं–2
इनका कर्ता कभी नहीं–SS
नहीं कराने वाला मैं, और नहीं अनुमोदक मैं–2
इन सबसे भिन्न हो–3 मैं एक स्वभावी रे–SS॥515॥

(78) नहीं मार्गणास्थान हूँ मैं, गुणस्थान भी हूँ नहिं मैं–2
जीवस्थान नहीं हूँ मैं–SS
इन सबका नहिं कर्ता हूँ, नहीं कराने वाला हूँ–2
इनका अनुमोदक हो–3 का भाव न मेरा रे–SS॥516॥

(79) बाल नहीं हूँ वृद्ध नहीं, तरुण नहीं मैं हेतु नहीं–2
इनका कर्ता कभी नहीं–SS
नहीं कराने वाला मैं, और नहीं अनुमोदक मैं–2
इनसे मैं भिन्न, हो–3 हूँ ज्ञान स्वभावी रे–SS॥517॥

(80) राग रोष नहिं द्वेष न मैं, मोह न उनका कारण मैं–2
कभी न इनका कर्ता मैं–SS
नहीं कराने वाला हूँ, कभी नहीं अनुमंता हूँ–2
वीतरागी मैं हो–3 निर्मोह बताएँ रे–SS॥518॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(81) क्रोध मान मय नहीं हूँ मैं, माया लोभ न है मुझमें–2
कर्ता कारणवान न मैं–SS
नहीं कराने वाला हूँ, और नहीं अनुमोदक मैं–2
शांत स्वभावी हो–3 निज आत्म बताएँ रे–SS॥519॥

(82) ऐसा भेद ज्ञान जब हो, तभी जीव माध्यस्थी अहो–2
जीव में तब चारित्रिक हो–SS
चारित को दृढ़ हेतु यहाँ, प्रतिक्रमण को समझ यहाँ–2
इन सबको साधु हो–3 नित ही अपनाए रे–SS॥520॥

(83) छोड़ वचन की रचना को, सब रागादिक भावों को–2
मौन का भाव प्रशस्त करो–SS
मौन जहाँ पर होता है, वही अनुभवी होता है–2
आतम का ध्यान हो–3 वह संत सजाए रे–SS॥521॥

(84) विराधना को छोड़ यहाँ, आराधन से जुड़े यहाँ–2
समझ वो प्रतिक्रमण यहाँ–SS
जब वह प्रतिक्रमण होगा, तब वह प्रतिक्रमण होगा–2
भव भव के पाप हो–3 झट से मिट जायें रे–SS॥522॥

(85) अनाचार को छोड़ यहाँ, मन में ले आचार यहाँ–2
स्थिर कर ले भाव यहाँ–SS
प्रतिक्रमण हो जायेगा, जब मन स्थिरता लायेगा–2
स्थिरता में ये मन हो–3 तन्मय हो जाये रे–SS॥523॥

(86) जो उन्मार्ग यहाँ छोड़े, जिनेन्द्र पथ से मन जोड़े–2
स्थिर भाव नहीं तोड़े–SS
समझो ये भी प्रतिक्रमण, कहते कुंदकुंद भगवन्–2
इससे कर्मों की हो–3 हानि हो जाये रे–SS॥524॥

(87) साधु शल्य भाव छोड़े, भाव निशल्य निरत जोड़े–2
मन को निश्चय से जोड़े–SS
ये भी समझो प्रतिक्रमण, कहते हैं जिनवर भगवन
इससे परिणाम हो–3 निर्मल हो जाएँ रे–SS॥525॥

(88) त्यागे भाव अगुप्ति का, पावे भाव सुगुप्ति का–2
निश्चय से शुभ परिणति का
समझो उसको प्रतिक्रमण, कहते कुंदकुंद भगवन–2
इससे अघकर्म हो–3 झट से मिट जाये रे–SS॥526॥

(89) आर्त रौद्र ध्यान तज कर, धर्म शुक्ल ध्यानी बनकर–2
मन से शुद्ध भाव भज कर–SS
समझो वो है प्रतिक्रमण, कहते हैं ये जिन भगवन्–2
इससे भावों में हो–3 निर्मलता आये रे–SS॥527॥

(90) जीव ने मिथ्या भाव किये, बहुत काल तक यहाँ जिये–2
असंयमी बन खूब जिये–SS
कभी न सम्यक भाव किये, संयम पाकर नहीं जिये–2
सम्यक अनुभव बिन हो–3 दुख ही दुख पाये रे–SS॥528॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(91) मिथ्यादर्श ज्ञान–व्रत को, पूर्ण रूप से यहाँ तजो–2
सम्यक ज्ञान–चरित्र भजो–SS
ऐसी करे भावना जो, प्रतिक्रमण का स्वरूप वो–2
ऐसा ही भाव हो–3 अघ दूर हटाए रे–SS॥529॥

(92) आतम उत्तम अर्थ अहा, उसमें स्थित मुनि महा–2
होते तब ही कर्म सफा–SS
ध्यान ही सच्चा प्रतिक्रमण, कहते कुंदकुंद भगवन्–2
निश्चय मन ध्यान हो–3 सब कर्म नशाए रे–SS॥530॥

(93) ध्यान में साधु लीन यहाँ, दोष करे सब त्याग यहाँ–2
अन्तर्मुख का भाव यहाँ–SS
अतिचारों का प्रतिक्रमण, ध्यान ही कहते सभी श्रमण–2
ध्यान ही आतम हो–3 को शुद्ध बनाए रे–SS॥531॥

(94) प्रतिक्रमण में सूत्र प्रवर, जैसा उसमें भाव प्रखर–2
वैसी यहाँ भावना कर–SS
उसी समय हो प्रतिक्रमण, ऐसा कहते हैं भगवन्–2
जाने बिन भाव हो–3 हो कभी न पायें रे–SS॥532॥

(95) सभी जल्प को छोड़ यहाँ, भाव शुभाशुभ तोड़ यहाँ–2
निज आतम से जोड़ यहाँ–SS
शुद्धातम का ध्यान करे, उसमें प्रत्याख्यान कहें–2
निश्चय में त्याग हो–3 ये ही बतलाएँ रे–SS॥533॥

(96) केवलज्ञान स्वभावी हूँ, केवल दर्शनभावी हूँ
सुखमय शक्ति स्वभावी हूँ–SS
ज्ञानी चिंतन यही करे, तब ही निज में लीन रहे–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥534॥

(97) नहिं छोड़े निज भाव यहाँ, गहे नहीं परभाव यहाँ–2
जाने–देखे सभी यहाँ–SS
वो है जो वह मैं ही हूँ, ज्ञानी चिंतन करे यहाँ–2
ऐसा ही ध्यान हो–3 सब कर्म नशाये रे–SS॥535॥

(98) प्रकृति प्रदेश बंध नहिं हैं, स्थिति अनुभाग बंध नहिं हैं–2
सभी बंध से रहित हूँ मैं–SS
ऐसा ज्ञानी भाव करे, उसमें ही स्थिर सदा रहे–2
तब ही चैतन्य हो–3 सुख ज्ञानी पाये रे–SS॥536॥

(99) छोड़ूँ भाव ममत्व यहाँ, निर्ममत्व स्थिर रहूँ यहाँ–2
आत्मालंबन करूँ यहाँ–SS
शेष सभी को त्याग करूँ, निज भावों में स्वयं रमूँ
ऐसा ही ज्ञानी हो–3 भवबंध मिटाए रे–SS॥537॥

(100) ज्ञान–दर्श और चारित में, प्रत्याख्यानी भावों में–2
योग व संवर भावों में–SS
सब में मेरी आतम है, आतम में ही ये सब हैं–2
ज्ञानी ये जाने हो–3 अज्ञान मिटाए रे–SS॥538॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(101) जीव अकेला जन्ता है, जीव अकेला जीता है–2
कर्ता भोक्ता होता है–SS
स्वयं अकेला मरता है, स्वयं सिद्ध वह होता है–2
कोई भी इसके हो–3 नहिं साथ में जाये रे–SS॥539॥

(102) मेरी आत्मा एक यहाँ, लक्षण दर्शन ज्ञान यहाँ–2
शाश्वत रूपी शुद्ध यहाँ–SS
शेष भाव सब बाह्य हैं, संयोगी लक्षणयुत् हैं
बाहर के भाव हो–3 सब निम्न बताएँ रे–SS॥540॥

(103) दुश्चरित्र मेरा है जो, तीन प्रकार तजूँ उसको–2
मैं मन–वच–तन से सबको–SS
मन–वच–तन से पूर्ण यहाँ, सामायिक मैं करूँ यहाँ–2
हो निर्विकल्प हो–3 निज में रम जाऊँ रे–SS॥541॥

(104) सब जीवों मे साम्य धरूँ, नहीं किसी से बैर धरूँ–2
यही भावना रोज करूँ–SS
आशा सभी छोड़ करके, भाव समाधि प्राप्त करूँ
भावों में शुद्धि हो–3 तब ही बन पाए रे–SS॥542॥

(105) जो कषाय से रहित रहे, सभी इन्द्रियाँ दमन करते–2
शूरवीरता यहाँ धरे–SS
भव से जो भयवीत यहाँ, उसमें प्रत्याख्यान यहाँ–2
उसमें ही सुख का हो–3 आधार दिखाए रे–SS॥543॥

(106) संयत हो पुरुषार्थ करे, कर्मभेद अभ्यास करे–2
जीव नित्य ये भाव धरे–SS
वो ही प्रत्याख्यान धरे, उसमें ही सामर्थ अरे–2
भेद विज्ञान हो–3 वो ही कर पाये रे–SS॥544॥

(107) कर्म बिना नोकर्म रहित, विभाव गुण पर्याय रहित–2
शुद्ध गुणों पर्याय सहित–SS
ऐसी आतम को ध्याते, आलोचना वो कर जाते–2
ऐसे श्रमण ही हो–3 भवकर्म मिटाये रे–SS॥545॥

(108) एक है लक्षण आलोचन, एक है लक्षण आलुंछन–2
एक कहा अविकृतिकरण–SS
चौथा भावशुद्धि कहते, चार कहे श्रुत में लक्षण–2
इनको जाने बिन हो–3 मन शुद्धि न पाये रे–SS॥546॥

(109) जो निर्मल परिणाम करे, निज में समता भाव धरे–2
शुद्धातम को यहाँ लखे–SS
निश्चय आलोचना यहाँ, येजिन का उपदेश यहाँ–2
ज्ञानी को अनुभव हो–3 तब ही हो पाये रे–SS॥547॥

(110) हो स्वकीय परिणाम यहाँ, निज स्वभावमय रूप यहाँ–2
हो स्वाधीन स्वरूप यहाँ–SS
कर्ममूल तब छेदन हो, आलुंछन तुम इसे कहो–2
शुद्ध स्वभाव हो–3 सब कर्म मिटाए रे–SS॥548॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(111) कर्मों से अति भिन्न हूँ मैं, विमल गुणों से युक्त हूँ मैं–2
मध्यस्थ भाव रखूँ नित मैं–SS
इसे कहा अविकृतिकरण, कहते कुंदकुंद भगवन्–2
शुद्धोपयोगी हो–3 का भाव बताएँ रे–SS॥549॥

(112) क्रोध मान नहिं माया हो, मद से रहित लोभ नहिं हो–2
उसके भाव विशुद्धि हो–SS
जिनवर ने ये बात कही, समझो बात है पूर्ण सही–2
जिनवर की बात हो–3 मिथ्या न बताएँ रे–SS॥550॥

(113) व्रत संयम का भाव धरे, समिति शील परिणाम करे–2
इन्द्रिय निग्रह भाव धरे–SS
करता जो अनवरत यहाँ, उसमें प्रायश्चित यहाँ–2
निश्चय प्रायश्चित हो–3 इसको बतलाएँ रे–SS॥551॥

(114) क्रोध कषाय मिटाना है, माया मान हटाना है–2
लोभ न मन में लाना है–SS
अपने गुण को पाना है, यही भावना भाना है–2
निश्चय से इसको हो–3 प्रायश्चित गाये रे–SS॥552॥

(115) क्रोध क्षमा से दूर करो, मान से मार्दव भाव धरो–2
माया से आर्जव भाव करो–SS
लोभ विजय संतोषी बन, यही उपाय धरो निज मन–2
इनसे कषायों हो–3 पर विजय बनाओ रे–SS॥553॥

(116) जो उत्कृष्ट ज्ञान पाये, अथवा बोधि को भाये–2
चित्त में निर्मलता पाये–SS
शुद्धातम में खोता है, प्रायश्चित नित होता है–2
ऐसा ही साधु हो–3 मन शुद्ध बनाए रे–SS॥554॥

(117) साधू करे महातप जो, छह महीने उपवास अहो–2
सहें ग्रीष्म में धूप अहो–SS
शीत में शीत लहर में हो, ये सब तप प्रायश्चित हो
कर्मों के क्षय के हो–3 ये हेतु बताएँ रे–SS॥555॥

(118) अनंतानंत भवों द्वारा, भाव शुभाशुभ के द्वारा–2
बाँधा बहुत कर्म खारा–SS
तप से कर्म विनष्ट यहाँ, होता कहते गुरु यहाँ–2
तप ही प्रायश्चित हो–3 ये बतलाएँ रे–SS॥556॥

(119) भाव शुभाशुभ आते हैं, इनको वही मिटाते हैं–2
जो निज आतम ध्याते हैं–SS
शुद्धातम के ध्यान बिना, भाव न मिटते कभी यहाँ–2
आतम का ध्यान हो–3 सब भाव मिटाये रे–SS॥557॥

(120) यहाँ शुभाशुभ वचन तजे, राग–द्वेष का भाव तजे–2
आत्मतत्त्व को नित्य भजे–SS
उसको यहाँ नियम से हो, नियमसार का सार अहो–2
उसमें निमय से हो–3 सब नियम समाये रे–SS॥558॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(121) परद्रव्यों का त्याग करे, निर्विकल्पना साथ रहे–2
निज आतम का ध्यान रहे–SS
कोई नहीं विकल्प जहाँ, होता कायोत्सर्ग वहाँ–2
निश्चय कायोत्सर्ग हो–3 तप श्रेष्ठ बताएँ रे–SS।।559।।

(122) सब वचनों का त्याग करे, वीतरागमय भाव धरे–2
शुद्धातम का ध्यान करे–SS
वो नहिं द्वेषी रागी हो, उसको परम समाधि हो–2
श्रमणों को भगवन् हो–3 ये बात बताएँ रे–SS।।560।।

(123) संयम–नियम व तप धरके, धर्मध्यान अनुभव करके–2
शुक्ल ध्यान में रम करके–SS
जो शुद्धातम ध्याता है, परम समाधि पाता है–2
श्रमणों की बातें हो–3 भगवन् बतलाएँ रे–SS।।561।।

(124) कायक्लेश तप यहाँ धरे, कठिन कठिन उपवास करे–2
वन में ही आवास करे–SS
स्वाध्याय नित मौन रहे, कभी न समता भाव धरे–2
द्रव्यलिंगी को हो–3 नहिं मोक्ष बताएँ रे–SS।।562।।

(125) सब सावद्य विरक्त यहाँ, तीन गुप्ति से युक्त यहाँ–2
करे इन्द्रियाँ रोध यहाँ–SS
उसको सामायिक होती, उसमें ज्ञानमयी मोती–2
जिनवर शासन में हो–3 ये बात बताएँ रे–SS।।563।।

(126) स्थावर त्रस सब जीवों में, समभावी बनकर इनमें–2
रंच न हिंसा हो मन में–SS
सामायिक स्थायी उसमें, रमण करे जो खुद निज में–2
केवलि शासन में हो–3 सबको समझाएँ रे–SS।।564।।

(127) इन्द्रिय के व्यापार रहित, संयम तप से पूर्ण सहित–2
जिसकी आतम नियम सहित–SS
जिसमें समता भाव अहो – स्थायी सामायिक वो हो–2
ऐसा जिनदेव हो–3 श्रुत में बतलाएँ रे–SS।।565।।

(128) जिसमें होता राग नहीं, नजर न आये द्वेष कहीं–2
निश्चलता का भाव यहीं–SS
मात्र शरीर परिग्रह हो, स्थायी सामायिक वो हो–2
नियमसार में हो–3 गुरु कुंद बताएँ रे–SS।।566।।

(129) आर्तध्यान नहिं करे कदा रौद्रध्यान नहिं रमें कदा–2
आत्मध्यान में रमे सदा–SS
रमण करें जो समता में, स्थायी सामायिक उसमें–2
भव्यों को जिनवर हो–3 ये बात बताएँ रे–SS।।567।।

(130) पाप भाव से मुख मोड़े, पुण्य भाव को भी छोड़े–2
शुद्ध भाव से मन जोड़े–SS
निज आतम में रमता जो, स्थायी सामायिक उसको–2
भव्यों को भगवन् हो–3 श्रुत में समझाएँ रे–SS।।568।।

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(131) हास्य और जो रति छोड़े, शोक–अरति से मुँह मोड़े–2
निज से ही निज को जोड़े–SS
नोकषाय को जीते जो, स्थायी सामायिक उसमें हो–2
गुरुवर शिष्यों को हो–3 सद्राह बताएँ रे–SS॥569॥

(132) छोड़ जुगुप्सा भय छोड़े, स्त्री पुरुष वेद छोड़े–2
वेद नपुंसक को तोड़े–SS
जो रमता नहिं हो इनमें, स्थायी सामायिक उसमें–2
गुरु कुंदकुंद हो–3 सबको समझाएँ रे–SS॥॥570॥

(133) धर्मध्यान जो नित्य करे, शुक्लध्यान में हृदय धरे–2
भव के सब व्यापार तजे–SS
स्थायी सामायिक उसमें, कुंदकुंद नित कहें हमें–2
गुरु की बातों में हो–3 नित सत्य दिखाएँ रे–SS॥571॥

(134) सम्यग्दर्शन ज्ञान अरे, चारित में नित भक्ति करे–2
वो ही भव को पार करे–SS
श्रावक हो या श्रमण यहाँ, इनसे ही तो मोक्ष यहाँ
ऐसा जिनवर जी हो–3 सबको बतलाएँ रे–SS॥572॥

(135) मोक्ष गये उन पुरुषों के, गुण भेदों को लख करके–2
ज्ञान में उनको धर करके–SS
उनकी करते भक्ति परम, ये समझो व्यवहार धरम–2
ऐसी भक्ति से हो–3 निश्चय मिल जाये रे–SS॥573॥

(136) निज आतम को जीव यहाँ, शिव पथ स्थापित करे यहाँ–2
निर्वृति भक्ति करे यहाँ–SS
गुण असहाय वही पाता, निज आतम को जो ध्याता–2
सारे ही गुण वो हो–3 भक्ति से पाये रे–SS॥574॥

(137) रागादिक का त्याग करे, विरागता से युक्त करे–2
निज आतम में साधु करे–SS
योग भक्ति से युक्त है जो, योग उसी में सारे हों–2
अन्य साधु में हो–3 क्यों योग दिखाएँ रे–SS॥575॥

(138) सभी विकल्प अभाव करे, निज आतम का भाव करे–2
साधु योग संयुक्त करे–SS
योग भक्ति से सहित है वो, अन्य श्रमण में कैसे हों–2
गुरुवर हम सबको हो–3 यह बात बताएँ रे–SS॥576॥

(139) जो विपरीत भाव छोड़े, जिनवर कथित तत्त्व जोड़े–2
अपनी आतम को जोड़े–SS
उसमें हो जिन भाव यहाँ, निज भावों का योग यहाँ–2
योगी में योग हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS॥577॥

(140) ऋषभ आदि जिनवर भगवन्, करके भक्ति योग परम–2
निर्वृत सुख पाय सघन–SS
तुम भी भक्ति श्रेष्ठ करो, धारण उत्तम योग करो–2
तब ही उत्तम गुण हो–3 तुमको मिल पाएँ रे–SS॥578॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(141) नहीं किसी के वश में हो, वही कर्म आवश्यक हो–2
योग वो कर्म विनाशक हो–SS
ये निर्वृति मार्ग अहो, यही मोक्ष का मार्ग कहो–2
इसके बिन कोई हो–3 शिवराह न पाये रे–SS॥579॥

(142) वश में नहीं अवश है जो, वही कर्म आवश्यक हो–2
ऐसा है जो भव्य अहो–SS
इससे भव्य निरवयव हो, उसको ही आवश्य कहो–2
ऐसी व्युत्पत्ति हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS॥580॥

(143) अशुभ भाव में श्रमण हो जो, श्रमण वो पर के वश में हो–2
उसमें आवश्यक नहिं हो–SS
मुन्याभास कहें उसको, द्रव्यलिंग से युक्त है वो–2
शिवपुर का वास हो–3 वो कभी न पाये रे–SS॥581॥

(144) श्रमण जो शुभ भावों में हो, वो निश्चित परवश में हो–2
उसे नहीं आवश्यक हो–SS
जब तक शुद्ध भाव नहिं हो, तब तक आवश्यक नहिं हो–2
इसके बिन साधु हो–3 भव अंत न पाये रे–SS॥582॥

(145) द्रव्य गुणों पर्यायों में, चित्त लगाता जो इनमें–2
श्रमण है वो भी पर वश में–SS
शुद्ध निजातम गुण में वो, चित्त लगाता नहिं है वो
शुभ को ही लक्ष्य हो–3 वो श्रमण बनाए रे–SS॥583॥

(146) तजे आत्म पर भाव यहाँ, पाये आत्म स्वभाव यहाँ–2
ध्याये जो शुद्धात्म यहाँ–SS
वही आत्मवश होता है, आवश्यक तब होता है–2
आतम हो वश में हो–3 आवश्य कहाये रे–SS॥584॥

(147) आवश्यक की इच्छा हो, आत्मभाव में स्थिरता हो–2
निज स्वभाव में रमना हो–SS
उसी जीव में सामायिक, गुण होता है पूर्ण अहो–2
शुद्ध निश्चय नय हो–3 अवश्य बताए रे–SS॥585॥

(148) श्रमण में आवश्यक नहिं हो, भ्रष्ट चरित्र श्रमण वह हो–2
शुद्ध उपयोग न उसमें हो–SS
उसे यहाँ अवश्य क्रम से, आवश्यक करना चाहिए–2
तब ही सामायिक हो–3 उसमें नजराए रे–SS॥586॥

(149) श्रमण जो आवश्यक युत हो, उसमें है श्रामण्य अहो–2
अन्तरात्मा श्रमण वो हो–SS
आवश्यक से हीन है जो, बहिरातम वो श्रमण अहो–2
ऐसा मुनि भव से हो–3 नहिं मुक्ति पाए रे–SS॥587॥

(150) अंतर बाहर जल्प करे, झूठे तप को खूब धरे–2
बहिरातम वो श्रमण अरे–SS
जो जल्पों में नहिं वर्ते, उसको अन्तर आत्म कहें–2
अंतर आतम ही हो–3 शुद्धातम पाये रे–SS॥588॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(151) धर्मध्यान में लीन है जो, शुक्ल ध्यान प्रवीण हैं जो–2
वो ही अन्तर आत्म अहो–SS
ध्यान विहीन है जो आतम, समझो वो है बहिरातम–2
उसमें रत्नत्रय हो–3 का भाव न आये रे–SS॥589॥

(152) निश्चय से चारित्र धरे, प्रतिक्रमण कर्तव्य करे–2
शुद्धातम का ध्यान करे–SS
वीतराग चर्या धरके, श्रमण स्वयं स्थिर भाव धरे–2
उसमें श्रामण्य हो–3 के गुण नजराएँ रे–SS॥590॥

(153) वचन रूप हो प्रतिक्रमण, वचन रूप हों सभी नियम–2
त्याग भाव में रहें वचन–SS
आलोचना वचनमय हो, ये सब स्वाध्याय समझो–2
वाचन परिवर्तन हो–3 स्वाध्याय बताएँ रे–SS॥591॥

(154) करने की सामर्थ्य है तो, ध्यानमयी आवश्यक हो–2
प्रतिक्रमण स्तुति वंदन हो–SS
जब तक शक्ति रहित हो तो, श्रद्धा नित्य हृदय में हो–2
ऐसे ही मुनिजन हो–3 भव भ्रमण मिटाएँ रे–SS॥592॥

(155) प्रतिक्रमण कर्तव्य करे, तत्त्व परीक्षा रोज धरे–2
अनुभव में शुद्धात्म धरे–SS
मौनव्रतों को धारण कर, कर्तव्यों को नित्य करे
ऐसा ही योगी हो–3 शिवमार्ग दिखाए रे–SS॥593॥

(156) कई तरह के जीव यहाँ, कई तरह के कर्म यहाँ–2
कई तरह उपलब्धि यहाँ–SS
छोड़ो सभी विवाद यहाँ, करो धर्म से प्रेम यहाँ
इसमें ही जीवन हो–3 का सार दिखाए रे–SS॥594॥

(157) दरिद्र को निधि मिल जाये, खुशी का अनुभव दिखलाए–2
फल सौजन्य यहाँ पाये–SS
ज्ञानी पर को छोड़ यहाँ, ज्ञान निधि को भोग यहाँ
आनंद अनुभव हो–3 वह निज में पाये रे–SS॥595॥

(158) सभी पुराण पुरुष भव में, आवश्यक धरके उर में–2
अप्रमत्त होकर निज में–SS
केवलज्ञानी हुए यहाँ, निज अनुभव में रमे यहाँ–2
आवश्यक के बिन, हो–3 कैवल्य न पाये रे–SS॥596॥

(159) सर्वलोक को जानें जो, लोक–अलोक देखते वो–2
नय व्यवहार बताए वो–SS
निश्चय से निज आतम को, जानें देखें यहाँ अहो–2
निज–पर प्रकाशक हो–3 जिनदेव बताएँ रे–SS॥597॥

(160) युगपत् दर्शन–ज्ञान रहें, उसको केवलज्ञान कहें–2
छद्मस्थों को नहीं रहें–SS
जैसे सूरज आता है, ताप–प्रकाश दिखाता है–2
दोनों ही युगपत हो–3 रवि में दिखलाएँ रे–SS॥598॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(161) ज्ञान दिखाता है पर को, दर्श दिखाता आतम को–2
स्व–पर प्रकाशक आत्मा हो–SS
निश्चय से माने यदि जो, इसमें दोष यहाँ समझो–2
ऐसा जो जाने हो–3 वो ज्ञान बढ़ाए रे–SS॥599॥

(162) पर प्रकाशक ज्ञान होगा, तो दर्शन से भिन्न होगा–2
खुद का ज्ञान नहीं होगा–SS
त्यों ही दर्शन समझ यहाँ, पर को जाने नहीं यहाँ–2
ऐसा ही आगम हो–3 में गुरु बतलाएँ रे–SS॥600॥

(163) पर प्रकाशक आत्मा हो, तो आतम से भिन्न अहो–2
दर्शन गुण को तुम समझो–SS
दर्शन निज में नित्य रहे, परद्रव्यों में नहीं रहे–2
ऐसा ही वर्णन हो–3 श्रुत में बतलाएँ रे–SS॥601॥

(164) ज्ञान तो पर प्रकाशक है, दर्शन भी पर प्रकाशक है–2
नय व्यवहार प्रकाशक है–SS
व्यवहारी नय कहता है, आत्मा पर प्रकाशक है–2
तो फिर दर्शन भी हो–3 ऐसा ही गाये रे–SS॥602॥

(165) ज्ञान आत्म प्रकाशक है, दर्शन स्व–प्रकाशक है–2
नय निश्चय प्रकाशक है–SS
आत्मा आत्मप्रकाशक है, तो दर्शन स्व–प्रकाशक हो–2
निश्चय नय ऐसा हो–3 संज्ञान दिलाए रे–SS॥603॥

(166) देखें आत्मस्वरूप यहाँ, वे केवलि भगवान यहाँ–2
नहिं जानें वो लोक यहाँ–SS
ऐसा कोई कहता है, उसको क्या क्या दूषण है–2
निश्चय–व्यवहार हो–3 से दोष न आये रे–SS॥604॥

(167) मूर्त–अमूर्त यहाँ जाने, चेत–अचेत द्रव्य जाने–2
स्व को, सर्व को जो देखे–SS
ज्ञान वही प्रत्यक्ष यहाँ, अतीन्द्रिय वह आत्म यहाँ–2
ऐसा ही ज्ञान हो–3 कैवल्य बताएँ रे–SS॥605॥

(168) कई गुणों पर्यायों को, पूर्वोक्त सब द्रव्यों को–2
अच्छी तरह न देखे जो–SS
उसकी दृष्टि परोक्ष यहाँ, कहते हैं जिनदेव यहाँ–2
उसको सर्वज्ञ हो–3 नहिं कोई बताए रे–SS॥606॥

(169) लोक–अलोक जानते हैं, आतम को न जानते हैं–2
ऐसे केवलि भगवन् हैं–SS
ऐसी कोई बात कहे, उसमें दूषण नित्य रहे–2
व्यवहार–निश्चय हो–3 से दोष न आए रे–SS॥607॥

(170) जीव स्वरूप है ज्ञान कहा, तभी तो आत्मा को जानता–2
आत्मस्वरूप है आतमा–SS
ज्ञान नहीं आतम जाने, तो आतम से भिन्न रहे–2
कहते हैं गुरुवर हो–3 सच सच दिखलाएँ रे–SS॥608॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(171) आत्मा को ही ज्ञान कहो, ज्ञान कहो तुम आतम को–2
इसमें नहिं संदेह करो–SS
स्व–पर प्रकाशक ज्ञान कहा, स्व–पर प्रकाशक दर्श कहा–2
ऐसा जो जाने हो–3 वो भ्रांति मिटाये रे–SS॥609॥

(172) इच्छा सहित नहीं जानें, इच्छा सहित नहीं देखें–2
तभी केवली उन्हें कहें–SS
इच्छाओं से कर्म बँधें, केवली को नहिं कर्म बँधे–2
इच्छा संसारी हो–3 जीवों में पायें रे–SS॥610॥

(173) भाव सहित जो वचन यहाँ, उनसे होता बंध यहाँ–2
ऐसा कहते गुरु यहाँ–SS
भाव रहित जो वचन कहें, बंध हेतु वे नहीं रहें–2
ज्ञानी के कर्म हो–3 का बंध न आये रे–SS॥611॥

(174) ईहापूर्वक वचन यहाँ, बंध के कारण कहे यहाँ–2
जीव में होते जभी यहाँ–SS
ईहा रहित वचन सारे, ज्ञानी को नहिं बंध यहाँ–2
मन का व्यापार हो–3 ही बंध कराये रे–SS॥612॥

(175) केवलि के विहार करना, बैठना हो या खड़े होना–2
इच्छापूर्वक नहिं होना–SS
उनको बंध नहीं होता, मोह से बंध सदा होता–2
मोह के वश में हो–3 संसारी बताएँ रे–SS॥613॥

(176) आयु का क्षय हुआ जहाँ, सभी कर्म का नाश वहाँ–2
पाते शिवपुर वास वहाँ–SS
एक समय में शीघ्र यहाँ, पा लेते लोकाग्र यहाँ–2
ये सब स्वाभाविक हो–3 सब ही बतलाएँ रे–SS॥614॥

(177) जन्म जरा मृत रहित रहें, आठ कर्म से रहित कहें–2
अविनाशी अच्छेद्य कहें–SS
अक्षय परमतत्त्वमय हैं, चार गुणों से युक्त कहें
ज्ञानादि भाव से हो–3 युक्त बताएँ रे–SS॥615॥

(178) अनुपम अव्याबाध परम, पुण्य–पाप निर्मुक्त धरम–2
नित्य अचल नहिं आलंबन–SS
पुनः आगमन रहित यहाँ, अतीन्द्रिय गुण युक्त यहाँ–2
ऐसी शुद्धातम हो–3 परमात्म कहाये रे–SS॥616॥

(179) सुख–दुख पीड़ा नहीं जहाँ, कोई बाधा नहीं वहाँ–2
जन्म मरण से रहित यहाँ–SS
होता है निर्वाण वहाँ, अखण्ड आतम तत्त्व जहाँ–2
ऐसी परमातम को हो–3 ध्येय बनाएँ रे–SS॥617॥

(180) इन्द्रिय और उपसर्ग नहीं, विस्मय निद्रा कभी नहीं–2
राग–द्वेष और मोह नहीं–SS
तृष्णा, क्षुधा व प्यास नहीं, समझो है निर्वाण वहीं–2
सिद्धों में ये सब हो–3 दुर्गुण नहिं पायें रे–SS॥618॥

नियमसार में कुंद गुरु, सब नियम बताएँ रे–2
मुनिगण पालन कर हो–3 शिवपुर पा जायें रे–SS

(181) कर्म और नोकर्म नहीं, चिंता आर्तध्यान नहीं–2
रौद्र ध्यान भी कभी नहीं–SS
धर्म व शुक्लध्यान नहीं, समझो है निर्वाण वहीं–2
आनंद रूप हो–3 वह आत्म बताएँ रे–SS॥619॥

(182) केवलज्ञान व सौख्य जहाँ, केवल दर्शन–वीर्य जहाँ–2
अमूर्तत्त्व अस्तित्व जहाँ–SS
प्रदेशत्व अवगाहन हो – ये सब स्वाभाविक गुण हों–2
सिद्ध भगवन् में हो–3 ये गुण नजराएँ रे–SS॥620॥

(183) सिद्ध ही है निर्वाण यहाँ, निर्वाण ही है सिद्ध यहाँ–2
कर्म रहित वो आत्म यहाँ–SS
कर्ममुक्त हो जाता जो, लोकाग्र भाग तक जाता वो–2
सिद्ध सिद्धि में हो–3 एकत्व बताएँ रे–SS॥621॥

(184) धर्मास्तिकाय जहाँ तक हो, पुद्गल जीव वहाँ तक हो–2
उसके आगे जीव न हो–SS
लोकशिखर तक गतिक्रिया, तभी वहाँ तक जीव गया–2
उसके आगे वो हो–3 इक इंच न जाये रे–SS॥622॥

(185) भक्ति का फल कहा यहाँ, नियम के फल को कहा यहाँ–2
भक्तिपूर्वक किया यहाँ–SS
इसमें कोई विरोध दिखे, बुधजन उसको शोध पढ़ें–2
गलती कर दूर हो–3 वो शुद्ध बनाएँ रे–SS॥623॥

(186) धरके ईर्ष्या भाव यहाँ, भले हो सुंदर मार्ग यहाँ–2
फिर भी निंदा करें यहाँ–SS
उनके वचनों को सुनकर, भक्ति छोड़ो नहीं यहाँ–2
जिन गुरु की भक्ति हो–3 भव पार कराए रे–SS॥624॥

(187) जिन उपदेश यहाँ सुनकर, हित उपदेश ध्यान रखकर–2
नियमसार हमने लिखकर–SS
सभी दोष से रहित हैं ये, निज आतम निमित्त धर कर–2
इसको उर धारे हो–3 वो शिवपुर पाये रे–SS॥625॥

(इति नियमसार)

कुंदकुंद आचार्य ने, नियमसार यह ग्रंथ ।
लिखा शुद्ध उपयोग कर, प्रकट किया शिवपंथ ॥
गुरु विराग की सत्कृपा, से पाया कुछ ज्ञान ।
पद्यानुवाद लिख दया शोध पढ़े धीमान ॥

तीर्थ विरागोदय शुभम्, जिसकी छटा महान ।
नियमसार पूरा हुआ, गुरु चरणों में आन ॥
उत्तम कवि मैं हूँ नहीं, मुझमें नहिं कुछ ज्ञान ।
गलती नजराएँ कहीं, शोध पढ़ें धीमान ॥

गुरु विराग वंदन करूँ, जोड़ूँ दोनों हाथ ।
तीन भक्ति से नमन कर, चरण झुकाऊँ माथ ॥

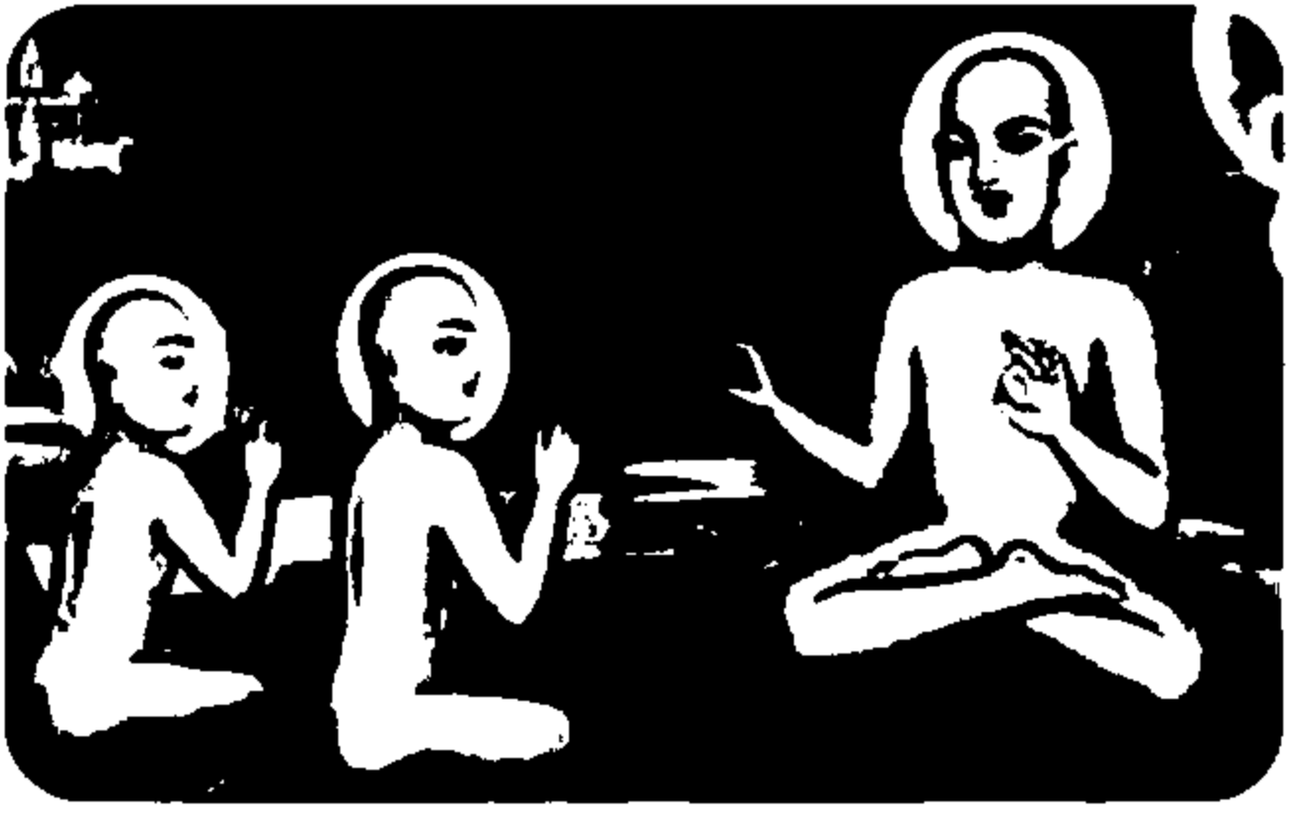

प्रवचनसार

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य कुन्दकुन्द देव
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

मंगलाचरण

(1) धर्मतीर्थ करने वाले, घातिकर्म धोने वाले-2
चार चतुष्टय धन वाले-SSS
वंदित इन्द्र नरेन्द्रों से, वर्धमान प्रभु गुण वाले-2
उनके चरणों में हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-SS॥626॥

(2) तेइस तीर्थंकर भगवन, सभी सिद्ध आचार्य नमन-2
पंचाचारी जो भगवन्-SSS
मन से भाव विशुद्ध करें, भक्ति से हम नमन करें-2
गुरु के वंदन से हो-3 हम गुण पा जायें रे-SS॥627॥

(3) मनुष दीप अरहंतों को, सर्वाचार्य व संतों को-2
सभी सिद्ध भगवंतों को-SSS
अलग अलग सबको ध्याऊँ, करूँ वंदना गुण गाऊँ-2
भक्ति विनय से हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-SS॥628॥

(4) जग में सब अरहंतों को, अनंत भगवन् सिद्धों को-2
गणधरमय आचार्यों को-SSS
उपाध्याय भगवंतों को, साधक कभी साधनों को-2
निर्मल भावों से हो-3 नित शीश झुकाएँ रे-SS॥629॥

(5) विशुद्ध दर्शन ज्ञान यहाँ, चारित तप श्रद्धान यहाँ-2
पाऊँ समता धार यहाँ-SSS
जिससे उत्तम ध्यान बने, परम सिद्ध निर्वाण मिले-2
जीवन का लक्ष्य हो-3 तब ही मिल पाये रे-SS॥630॥

(6) दर्शन ज्ञान प्रधान मिले, साथ में सम चारित्र मिले-2
पदवी इन्द्र नरेन्द्र मिले-SSS
इक दिन मुनि पद पा करके, उत्तम पद निर्वाण मिले-2
ज्ञान की महिमा हो-3 निर्वाण दिलाये रे-SS॥631॥

(7) चारित निश्चय धर्म कहा, धर्म है वह समभाव अहा-2
समतामय परिणाम कहा-SSS
मोह, क्षोभ बिन भाव यहाँ, निश्चय से समभाव यहाँ-2
वीतरागता हो-3 सम भाव कहाए रे-SS॥632॥

(8) जिन भावों परिणमन करे, उसी समय उस रूप धरे-2
द्रव्य परिणमन शील अरे-SSS
धर्मरूप परिणमन करे, धर्ममयी तब आत्म करे-2
परिणति में धर्म हो-3 धर्मी कहलाए रे-SS॥633॥

(9) अशुभ भाव परिणमन करे, जीव स्वयं हो अशुभ अरे-2
शुभ परिणति शुभ जीव कहें-SSS
जीव शुद्ध जब भाव करे, तभी जीव है शुद्ध अरे-2
शुद्ध आतम में हो-3 परमात्म दिखाये रे-SS॥634॥

(10) बिन परिणाम है अर्थ नहीं, बिना अर्थ परिणाम नहीं-2
उसका है अस्तित्व यहीं-SSS
द्रव्य गुणों पर्यायों में, एक पदार्थ ही है सबमें-2
वस्तु में ध्रुवता हो-3 को द्रव्य बताए रे-SS॥635॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(11) धर्म से परिणत हुआ यहाँ, शुद्धोपयोग युक्त यहाँ-2
वो पाता निर्वाण यहाँ-SSS
यदि मुनि शुभ भावों में हो, तो वह पाता स्वर्ग यहाँ-2
स्वर्ग और मोक्ष हो-3 उपयोग दिलाएँ रे-SS॥636॥

(12) अशुभोदय से यह आतम, नारक-पशु में करे गमन-2
बने कुमानुष ये आतम-SSS
लाखों दुख से दुखी रहे, नंतकाल तक भ्रमण करे-2
अच्छे परिणामों हो-3 से दुख मिट पाये रे-SS॥637॥

(13) शुद्ध करे परिणाम यहाँ, अनुपम गुण फिर मिलें यहाँ-2
नष्ट न हों वे कभी यहाँ-SSS
सुख अनंत अनुपम जग में, दर्शन अव्युच्छिन्न रहें-2
अतिशय आतम के हो-3 वे गुण पा जाएँ रे-SS॥638॥

(14) जिन सूत्रों को जान लिया, संयम तप संयुक्त किया-2
वीतराग मय भाव किया-SSS
सुख-दुख जिन्हें समान यहाँ, वे ही श्रमण प्रधान यहाँ-2
शुद्धोपयोगी हो-3 वे मुनि कहलायें रे-SS॥639॥

(15) जो उपयोग विशुद्ध यहाँ, घाति कर्म वो रहित यहाँ-2
ज्ञायक भावी वही यहाँ-SSS
ज्ञेय पार वह जाता है, अनंत दर्शन पाता है-2
सारी पर्यायें हो-3 फिर ज्ञान में आयें रे-SS॥640॥

(16) निज स्वभाव मय हुए यहाँ, सब इन्द्रों से पूज्य यहाँ-2
सर्वज्ञानमय हुए यहाँ-SSS
हुए हैं जो स्वयमेव हुए, तभी स्वयंभू प्रभू हुए-2
तीर्थंकर कर्म हो-3 ये सब दिखलाए रे-SS॥641॥

(17) हो उत्पाद, विनाश रहित, हो विनाश, उत्पाद रहित-2
शुद्धातम वो भाव सहित-SSS
होते हैं सब अलग अलग, फिर भी एक साथ हों सब-2
उत्पाद व्यय युत् हो-3 वह ध्रौव्य बताएँ रे-SS॥642॥

(18) हो उत्पाद नई पर्यय, पूर्व की हो विनाश पर्यय-2
द्रव्य में होती ध्रुव पर्यय-SSS
पर्यय बनतीं मिटती हैं, ध्रुवता हरदम रहती है-2
निश्चय से वस्तु हो-3 सत् रूप बताएँ रे-SS॥643॥

(19) देव असुर में प्रधान हैं, जगती पर भगवान हैं-2
सबसे बड़े महान हैं-SSS
उनको जो स्वीकार करें, उनके सारे दुक्ख मिटें-2
वे ही स्वयंभू हो-3 भू पर कहलाएँ रे-SS॥644॥

(20) घाति कर्म से रहित हैं जो, अनंतशक्ति सहित हैं जो-2
अतिशय तेजस्वी हैं जो-SSS
ज्ञान अतिन्द्रिय हुआ यहाँ, सुख में परिणत हुआ यहाँ-2
उनकी महिमा को हो-3 ये जग बतलाए रे-SS॥645॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(21) हुआ है केवलज्ञान जिन्हें, इन्द्रिय सुख दुख नहीं उन्हें-2
तन से उनको भिन्न कहें-SSS
ज्ञान अतीन्द्रिय हुआ यहाँ, अविचल क्षायिक समझ यहाँ-2
आतम के सुख में हो-3 लवलीन दिखाए रे-SS॥646॥

(22) ज्ञानरूप जो हुए यहाँ, सर्व द्रव्य पर्याय यहाँ-2
हो जाते प्रत्यक्ष यहाँ-SSS
वे मतिश्रुत की तरह यहाँ, नहीं जानते कहें यहाँ-2
केवलज्ञान में हो-3 निर्मलता आये रे-SS॥647॥

(23) हुए इन्द्रियातीत यहाँ, सभी गुणों से युक्त यहाँ-2
ज्ञानरूप स्वयमेव यहाँ-SSS
उन अरहंत केवली को, कुछ भी नहीं परोक्ष यहाँ-2
उनको सब कुछ ही हो-3 प्रत्यक्ष दिखाए रे-SS॥648॥

(24) आतम, ज्ञान प्रमाण कहा, ज्ञान को ज्ञेय प्रमाण कहा-2
ज्ञेय है लोकालोक अहा-SSS
आतम तन अवगाहन मय, ज्ञान सर्व में व्याप रहा-2
ज्ञान बराबर हो-3 आतम बतलाएँ रे-SS॥649॥

(25) आतम ज्ञान प्रमाण नहीं, कहते हैं कुछ लोग यहीं-2
उनका तर्क है सही नहीं-SSS
ज्ञान से आतम हीन रहे, ज्ञान आतम से हीन रहे-2
पूरी आतम को हो-3 फिर जान न पाये रे-SS॥650॥

(26) आतम, ज्ञान से हीन यहाँ, तो वह ज्ञान अचेत यहाँ-2
अचेत को हो ज्ञान कहाँ-SSS
आतम, ज्ञान से अधिक कहें, ज्ञान बिना कैसे जानें-2
आतम और ज्ञान हो-3 इक समां बताएँ रे-SS॥651॥

(27) अर्हत् जिन हैं सर्वगती, कहें बात ये सर्वयति-2
जानें जिनकी श्रेष्ठमति-SSS
ज्ञान में झलके सर्व जहां, व्यापा लोकालोक यहाँ-2
इससे ही भगवन हो-3 व्यापक कहलाएँ रे-SS॥652॥

(28) ज्ञानी, ज्ञान स्वभावी है, ज्ञेय ज्ञेयात्मक भावी है-2
वस्तु नेत्र का विषयी है-SSS
ज्ञान, ज्ञेय को जान रहा, सभी ज्ञेय में व्याप रहा-2
ज्ञान में ज्ञेय हो-3 संश्लेष न पाये रे-SS॥653॥

(29) ज्ञान कहो या आत्म कहो, दोनों में नहिं फर्क अहो-2
ज्ञान, आत्म बिन कैसे हो?-SSS
ज्ञान, अन्य गुण आतम में, आत्म कहो या ज्ञान कहें-2
दोनों आपस में हो-3 इक रूप दिखायें रे-SS॥654॥

(30) आँख में वस्तु प्रविष्ट न हो, फिर भी देखे आँख अहो-2
वैसे समझो ज्ञान अहो-SSS
क्षायिक होता ज्ञान यहाँ, झलके उसमें सभी जहां-2
ज्यों का त्यों जाने हो-3 सब दिखता जाये रे-SS॥655॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(31) इन्द्रनील हो दूध जहाँ, नीला दिखता दूध वहाँ-2
पय नीला सा हुआ यहाँ-SSS
वैसे ज्ञेय पदार्थ कहें, उसमें ज्ञान प्रवर्त करें-2
ज्ञेय में ज्ञानी हो-3 व्यापक बन जाये रे-SS॥656॥

(32) ज्ञान में सभी पदार्थ न हों, तो फिर सबका ज्ञान न हो-2
ज्ञान सर्वगत कैसे हो-SSS
सभी पदार्थ ज्ञान में हैं, ज्ञान सभी पदार्थ में है-2
इस ही कारण से हो-3 सर्वगत कहलाए रे-SS॥657॥

(33) केवलि प्रभु नहिं ग्रहण करें, नहिं उसमें परिणमन करें-2
वो पदार्थ को नहिं छोड़ें-SSS
फिर भी सभी पदार्थों को, युगपत् वो जाने देखें-2
क्षायिक ज्ञान में हो-3 ऐसा हो पाये रे-SS॥658॥

(34) निश्चय से स्वाभाविक में, श्रुत से आतम को जानें-2
खुद को ज्ञायकमय जानें-SSS
लोक प्रकाशित करते जो, कहे ऋषि श्रुतकेवली वो-2
ज्ञायक स्वभावी हो-3 जग में कहलाएँ रे-SS॥659॥

(35) पुद्गल वचनों के द्वारा, जिन प्रभु ने जो उच्चारा-2
निश्चय ज्ञान सूत्र न्यारा-SSS
द्रव्यरुत से ज्ञान जो हो, भाव श्रुत वह ज्ञान अहो-2
तीर्थंकर भगवन् हो-3 ये सूत्र बताएँ रे-SS॥660॥

(36) वस्तु जो जाने, ज्ञान यहाँ, ज्ञायक पन है ज्ञान यहाँ52
ज्ञान से ज्ञायक नहीं यहाँ-SSS
वस्तु ज्ञान में स्थित है, ज्ञान परिणमित हुआ यहाँ-2
ज्ञान में वस्तु हो-3 स्वयमेव आ जाये रे-SS॥661॥

(37) जीव ही समझो ज्ञान यहाँ, ज्ञेय है तीन प्रकार यहाँ-2
जनि-व्यय-ध्रौव्य स्वरूप यहाँ-SSS
आत्मद्रव्य और अन्य सभी, ज्ञेय स्वभाव सहित यहाँ-2
सारे ही द्रव्य हो-3 ज्ञेय बतलाएँ रे-SS॥662॥

(38) उन द्रव्यों की पर्यायें, सद्सद्भूत हैं गुण गायें-2
सभी ज्ञान में दिख जायें-SSS
एक साथ झलकें सारी, क्षायिक ज्ञान में नजराएँ-2
ऐसा वह ज्ञान हो-3 निर्मल हो जाए रे-SS॥663॥

(39) अभी न पैदा हुई यहाँ, होंगी भावी काल यहाँ-2
होकर हुई हैं नष्ट यहाँ-SSS
अविद्यमान सब झलकें, ज्ञान में वो प्रत्यक्ष रहें-2
ऐसा वह ज्ञान हो-3 अतिशय बतलाएँ रे-SS॥664॥

(40) भविष्य की पर्याय यहाँ, पूर्व की सारी क्रिया यहाँ-2
ज्ञान में ही स्पष्ट यहाँ-SSS
तभी ज्ञान है दिव्य यहाँ, अतिशय मय आश्चर्य यहाँ-2
ऐसा वह ज्ञान हो-3 भगवन् पा जायें रे-SS॥665॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(41) इन्द्रिय ग्राह्य पदार्थ हैं जो, जानें ईहापूर्वक वो-2
समझो तभी परोक्ष हैं वो-SSS
भूत भविष्य नही जानें, वर्तमान को ही जानें-2
ऐसा वह ज्ञान हो-3 असमर्थ कहाए रे-SS॥666॥

(42) जाने मूर्त-अमूर्त यहाँ, अतीतानागत सभी यहाँ-2
प्रदेश सहित वा रहित यहाँ-SSS
इन सबको जो जान रहा, उसे अतीन्द्रिय ज्ञान कहा-2
सबको जो जाने हो-3 कैवल्य कहाए रे-SS॥667॥

(43) ज्ञेय रूप परिणमन करे, क्षायिक ज्ञान वो नहीं अरे-2
ज्ञान वो क्षायोपशमिक रहे-SSS
जो युगपत् नहिं जान रहा, उसको तो मतिज्ञान कहा-2
कर्म क्षय करने हो-3 वाला कहलाये रे-SS॥668॥

(44) कर्मोदय से मोह करे, राग-द्वेष के भाव करे-2
नये कर्म फिर बंध करे-SSS
बंध-उदय अनुभव करता, वह भव में मरता फिरता-2
मोह छोड़े बिन हो-3 भव मिट नहिं पाये रे-SS॥669॥

(45) तीर्थंकर भी गमन करें, बैठें अथवा खड़े रहें-2
भव्यों को उपदेश करें-SSS
यह स्वाभाविक क्रिया यहाँ, बिना बुद्धि के रहें यहाँ-2
ज्यों मायाचारी हो-3 स्त्री में बतलाएँ रे-SS॥670॥

(46) पुण्य का फल अरहंत कहा, मोह रहित इसलिए कहा-2
पुण्य का मल संसार अहा-SSS
क्रिया भले औदयिकी है, मोह रहित वे क्षायिक हैं-2
ऐसा जिनवर ही हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-SS॥671॥

(47) आतम ही शुभ अशुभ यहाँ, सभी जीव हैं शुद्ध कहाँ-2
तभी सिद्ध-संसार यहाँ-SSS
पंचभाव संसारी के, सिद्धों में दो भाव यहाँ-2
संसारी मुक्त हो-3 द्वय जीव बताएँ रे-SS॥672॥

(48) सभी द्रव्य त्रयकाल रहें, नाना रूप अनादि धरें-2
एक साथ इनको जानें-SSS
भूत भविष्यत पर्यायें, युगपत् सर्वांगी जानें-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 क्षायिक कहलाए रे-SS॥673॥

(49) तीन लोक के द्रव्य यहाँ, जाने नहीं त्रिकाल यहाँ-2
पर्यायें इक साथ यहाँ-SSS
एक द्रव्य की पर्यायें, जान न सकता कभी यहाँ-2
ऐसी भी उसमें हो-3 नहिं शक्ति दिखाए रे-SS॥674॥

(50) एक द्रव्य की पर्यायें, जिनवर अनंत बतलाएँ-2
निश्चय से वे नहिं जानें-SSS
वे अनंत इन द्रव्यों की, अनंत पर्यय क्यों जानें-2
क्षायिक ही ज्ञान हो-3 सबको लख पाये रे-SS॥675॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(51) आतम में जो ज्ञान यहाँ, क्रम से हो उत्पन्न यहाँ-2
नित्य नहीं वो ज्ञान यहाँ-SSS
क्षायिक ज्ञान नहीं है वो, नहीं सर्वगत ही है वो-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 छद्मस्थ बताएँ रे-SS॥676॥

(52) त्रिकाल सम्बन्धी जानें, सकल पदार्थों को जानें-2
सभी कलाओं को जानें-SSS
युगपत् नित्य जानता जो, उसको केवलज्ञान अहो-2
ज्ञान की महिमा हो-3 वैचिन्त्य बतायें रे-SS॥677॥

(53) सभी पदार्थ जानता है, ग्रहण न उनको करता है-2
नहीं परिणमन करता है-SS
नहीं पदार्थ रूप होता, ऐसा केवलज्ञान होता-2
प्रभु का वह ज्ञान हो-3 निर्बन्ध कहाये रे-SS॥678॥

(54) देव मनुष्य समूह प्रवर, भक्तों की भक्ति गुणकर-2
नमन करें प्रभु को झुककर-SS
उसी तरह मैं नमन करूँ, भक्ति में उद्यत होकर-2
प्रभु को झुकने से हो-3 झोली भर जाये रे-SS॥679॥

(55) ज्ञान व सुख मूर्तिक होता, अमूर्तिकातिन्द्रिय होता-2
इन्द्रिय जन्य भी है होता-SSS
दोनों में उत्कृष्ट लगे, समझदार वह ग्रहण करे-2
ज्ञान अतीन्द्रिय हो-3 सुख श्रेष्ठ बताएँ रे-SS॥680॥

(56) जाने मूर्त-अमूर्तों को, संवृत सभी पदार्थों को-2
स्वयं अतीन्द्रिय पर सबको-SS
वही ज्ञान प्रत्यक्ष कहा, जिसमें अक्ष न लेश अहा-2
केवलज्ञानी में हो-3 यह ज्ञान दिखाए रे-SS॥681॥

(57) स्वयं अमूर्तिक जीव यहाँ, बंध से मूर्तिक हुआ यहाँ-2
मतिज्ञान-श्रुतज्ञान यहाँ-SSS
कभी पदार्थ मूर्त जाने, कभी मूर्त भी नहिं जाने-2
इन्द्रिय का ज्ञान हो-3 ऐसा बतलाएँ रे-SS॥682॥

(58) गंध-वर्ण-स्पर्श यहाँ, पुद्गल रस और शब्द यहाँ-2
इन्द्रिय के ये विषय यहाँ-SS
इन्द्रिय इनका भोग करे, एक साथ नहिं ग्रहण करें-2
शक्ति अनंत हो-3 इन्द्रियाँ न पायें रे-SS॥683॥

(59) सभी इन्द्रियाँ पर द्रव हैं, कर्म जनित इस तन में हैं-2
आत्म स्वभाव न इनमें हैं-SSS
इन्द्रिय स्वयं परोक्ष कहें, वे कैसे प्रत्यक्ष लखें-2
इन्द्रिय आतम का हो-3 अनुभव न दिलाये रे-SS॥684॥

(60) हो इन्द्रिय से ज्ञान यहाँ, वो तो सभी परोक्ष यहाँ-2
इन्द्रिय खुद पर रूप यहाँ-SS
जीव स्वयं जो भी जाने, वो प्रत्यक्ष सभी मानें-2
असहायी ज्ञान हो-3 प्रत्यक्ष बताएँ रे-SSS॥685॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(61) स्वयं स्वयं से पैदा हो, सब पदार्थ में फैला हो-2
दर्पणवत् जो निर्मल हो-SSS
अवग्रहादि न हों जिसमें, ज्ञान वो एकांतिक सुख हो-2
ज्ञान सुख दोनों हो-3 युगपत् ही आयें रे-SS॥686॥

(62) जो है केवलज्ञान यहाँ, वो ही सुख परिणाम यहाँ-2
वहाँ खेद का काम कहाँ?-SSS
घातिकर्म मिट गये जहाँ, ज्ञान-दर्श-सुख शक्ति वहाँ-2
श्रम सब मिट जाये हो-3 फिर बंध न आये रे-SS॥687॥

(63) सभी अनिष्ट विनाश हुए, इष्ट जो था सब प्राप्त हुए-2
तभी ज्ञान सुख रूप हुए-SS
ज्ञान वस्तु के पार हुआ, दर्शन का विस्तार हुआ-2
लोक अलोक हो-3 दर्पणवत् आये रे-SS॥688॥

(64) घातिकर्म का नाश किया, सर्वोत्तम सुख प्राप्त किया-2
सबने उन्हें प्रणाम किया-SSS
ऐसा सुन श्रद्धा न करें, उनको यहाँ अभव्य कहें-2
श्रद्धा जो धरते हो-3 वे भव्य कहायें रे-SS॥689॥

(65) पाया मानव जन्म यहाँ, इन्द्रिय पीड़ित हुआ यहाँ-2
सहन हुआ दुख नहीं यहाँ-SSS
सुख को इन्द्रिय रमण किया, समझ रहा सुख प्राप्त किया-2
दुख का प्रतिकार हो-3 सुख समझ में आये रे-SS॥690॥

(66) विषयों में जो रति करें, स्वाभाविक दुख उन्हें रहें-2
दुक्ख न उनका कभी मिटे-SSS
दुक्ख स्वभाव नहीं होता, तो व्यापार भी ना होता-2
भोगी का ऐसा हो-3 निज भाव बताएँ रे-SS॥691॥

(67) इन्द्रिय में सुख मान रहे, इष्ट विषय में व्याप रहे-2
उसमें ही वो सुखी रहे-SSS
जीव सुखी निज गुण से है, देह में सुख का लेश न है-2
अपना ही सुख है हो-3 पर में नजराए रे-SS॥692॥

(68) सुख स्वर्गों में नहीं यहाँ, विषयों में भी नहीं यहाँ-2
तन में भी सुख नहीं यहाँ-SSS
जीव में सुख दुख राजित है, वही विषय में दिखे यहाँ-2
विषयों का दुख भी हो-3 सुख ही नजराए रे-SS॥693॥

(69) ऐसी दृष्टि मिल जाये, अंधकार सब मिट जाये-2
काम न दीपक रह जाये-SSS
जब आतम सुख रूप यहाँ, विषयों का फिर काम कहाँ-2
उत्तम मिल जाये हो-3 फिर तुच्छ न भाये रे-SS॥694॥

(70) रवि रहता आकाश यहाँ, स्वयं ही ज्योतिर्वान यहाँ-2
तप्त देवता स्वयं यहाँ-SSS
त्यों प्रभु सिद्ध महान् यहाँ, स्वयं ज्ञान-सुखवान् यहाँ-2
देव स्वरूप हो-3 स्वयमेव कहाएँ रे-SS॥695॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(71) तेज, दृष्टि शुभ ज्ञान यहाँ, ऋद्धि सौख्य गुणवान यहाँ-2
तीनों लोक प्रधान यहाँ-SSS
उनको ही अरहंत कहें, महासंत भगवंत कहें-2
महिमा उन प्रभु की हो-3 तीनों जग गायें रे-SS॥696॥

(72) नर देवों के नाथ हैं जो, पुनर्जन्म से रहित हैं जो-2
सबसे ही गुण श्रेष्ठ हैं जो-SSS
ऐसे सिद्ध महान यहाँ, उनको करूँ प्रणाम यहाँ-2
उनके गुण मुझमें हो-3 जल्दी आ जायें रे-SS॥697॥

(73) देव-गुरु की पूजा में, आहारादिक दानों में-2
शीलों में उपवासों में-SSS
लीन रहे जो भी आतम, उसका हो उपयोग शुभम्-2
शुभ हो उपयोग हो-3 वह पाप मिटाये रे-SS॥698॥

(74) शुभोपयोगी जीव यहाँ, होता मानुष देव यहाँ-2
सुख पाता है सभी यहाँ-SSS
जितने काल रहे भव में, सुख से भव में रहे यहाँ-2
शुभ ही सुखों को हो-3 सबको दिलवाये रे-SS॥699॥

(75) देवों में वो सौख्य नहीं, जो स्वाभाविक सिद्ध यहीं-2
जिनवर ऐसा कहें यहीं-SSS
देह दर्द से दुखी यहाँ, रम्य विषय में रमें यहाँ-2
सिद्धों सा सुख भी हो-3 नहिं कहीं दिखाये रे-SS॥700॥

(76) यदि मानव-पशु-देव, यहाँ, और नारकी सभी यहाँ-2
देह से पैदा दुक्ख यहाँ-SSS
जीव भोगते दुख ही हैं, चाहे पुण्य पापमय हों-2
स्वाभाविक सुख बिन हो-3 सब दुख बतलाएँ रे-SS॥701॥

(77) शुभोपयोगी भाव चले, चक्रवर्ति पद इन्द्र मिले-2
पंचेन्द्रिय के विषय मिले-SSS
उनमें ही लवलीन रहें, इसीलिए सुख रूप लगें-2
लेकिन इन्द्रिय सुख हो-3 दुख रूप बताएँ रे-SS॥702॥

(78) अच्छे जब परिणाम करें, कई तरह के पुण्य करें-2
जिसके फल से देव बनें-SSS
पुण्य से देव विषय भोगें, तृष्णा पैदा यहाँ करे-2
पुण्य विषयों में हो-3 इच्छायें लाए रे-SS॥703॥

(79) तृष्णा जिनकी उदित यहाँ, भव में होते दुखी यहाँ-2
मरण समय पर्यन्त यहाँ-SSS
विषय सुखों की हो चाहत, होते हैं दुख उन्हें बहुत-2
उनको ही भोगें हो-3 और नर मर जायें रे-SS॥704॥

(80) इन्द्रिय से सुख प्राप्त हुआ, पर संबंधी युक्त हुआ-2
बाधा से संयुक्त हुआ-SSS
कर्मबन्ध का कारण है, नहिं संसार निवारण है-2
बाधा युत सुख को, दुख ही बतलाएँ रे-SS॥705॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(81) पुण्य पाप नहिं भेद यहाँ, दोनों से संसार यहाँ–2
मोही करता भेद यहाँ–SSS
वह अपार भव में भ्रमता, घोर दुखों में वह रहता–2
वो इस दुनियाँ में हो–3 मुक्ति नहिं पाये रे–SS॥706॥

(82) वस्तु स्वरूप को जाने जो, राग–द्वेष को त्यागे वो–2
पर वस्तु नहिं चाहे वो–SS
शुद्ध यहाँ उपयोग करे, देह दुखों को नष्ट करे–2
वो ही शुद्धातम हो–3 इक दिन पा जाये रे–SS॥707॥

(83) पाप रूप आरंभ तजे, शुभ चरित्र में खूब लगे–2
मोहभाव को नहीं तजे–SSS
चाहे कितना धर्म करे, शुद्धातम वो नहीं लखे–2
मोह त्यागे बिन हो–3 शुद्धात्म न पाये रे–SS॥708॥

(84) तप संयम से प्रसिद्ध हैं, देवेन्द्रों से पूजित हैं–2
जिनमें दोष न कोई हैं–SSS
स्वर्ग मोक्ष देने वाले, कर्म नष्ट करने वाले–2
लोक शिखर पर हो–3 वे सिद्ध विराजें रे–SS॥709॥

(85) इन्द्रों से आराध्य यहाँ, यतियों में अतिश्रेष्ठ यहाँ–2
तीन लोक के गुरु यहाँ–SSS
देवों के भी देव कहें, सभी मनुष्य प्रणाम करें–2
प्रभु के आराधक हो–3 अक्षय सुख पायें रे–SS॥710॥

(86) अरहंतों की जाने जो, द्रव्य गुणों पर्यायों को–2
जाने वह निज आतम को–SS
उस पर मोह लगा है जो, निश्चय ही उसका क्षय हो–2
सम्यक्त्व पाकर के हो–3 रत्नत्रय पाये रे–SS॥711॥

(87) मोहोदय का नाश जहाँ, आत्मभाव को प्राप्त वहाँ–2
सम्यक् मिले स्वभाव वहाँ–SSS
राग–द्वेष यदि छोड़े वो, प्राप्त करे शुद्धातम वो–2
जीवन का सार हो–3 वह खुद पा जाये रे–SS॥712॥

(88) सम्यग्दर्शन शुद्ध किया, निर्मल ज्ञान प्रधान किया–2
शुद्ध आचरण धार लिया–SSS
आदर, पूजा दान करो, नमन उन्हें सम्मान करो–2
उनकी सेवा से हो–3 भव सफल बनाओ रे–SS॥713॥

(89) रत्नत्रय अपना करके, घातिकर्म का क्षय करके–2
सभी यहाँ अरहंत हुए–SSS
वैसा ही उपदेश दिया, फिर सिद्धत्व को प्राप्त किया–2
उन सब सिद्धों को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–SS॥714॥

(90) द्रव्य न गुण, पर्यय जाने, जीव मूढ़ बुद्धि ठाने–2
लगा मोह को अपनाने–SSS
मोह से जो आच्छादित हो, राग–द्वेष कर दुख ही हो–2
सुख का नहिं लक्षण हो–3 उसमें नजराए रे–SS॥715॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(91) मोह रूप परिणमन करे, राग–द्वेष मय रूप धरे–2
विविध कर्म का बंध करे–SSS
राग–द्वेष यह मोह यहाँ, क्षय करने के योग्य यहाँ–2
इसको क्षय करने हो–3 का ध्येय बनाओ रे–SS॥716॥

(92) द्रव्य कहो गुण पर्यायें, सभी अर्थ ही कहलायें–2
इनमें स्वभाव बतलायें–SSS
द्रव्य कहो तो आत्म समझ, गुण बोला तो आत्म समझ–2
पर्यय गुण की है हो–3 वह आत्म कहाए रे–SS॥717॥

(93) जिनवर का उपदेश मिले, वही राग और मोह दले–2
द्वेष भाव को वह कुचले–SSS
तभी यहाँ सब दुक्खों से, शीघ्र वही मुक्ति पा ले–2
दूजा नहिं कोई हो–3 पथ यहाँ दिखाए रे–SS॥718॥

(94) तथ्य पदार्थ न ग्रहण करें, करुणा भाव न स्वयं धरें–2
विषयों की नित चाह करें–SSS
मोही ऐसा करे यहाँ, पाप कार्य में लगे रहें–2
इनको आतम का हो–3 नहिं रूप दिखाये रे–SS॥719॥

(95) जिनश्रुत का जो ज्ञान करें, तत्त्वों को प्रत्यक्ष करें–2
होता मोह विनाश अरे–SSS
शास्त्र अध्ययन को रोज करें, आत्म तत्त्व का ज्ञान करें–2
मोह मिटते ही हो–3 शुभ ज्ञान समाये रे–SS॥720॥

(96) ज्ञान स्वरूपी जीव यहाँ, जड़ है वही अजीव यहाँ–2
सभी द्रव्य से युक्त यहाँ–SSS
आत्म अनुभव जो नित्य करे, वस्तु तत्त्व को भी समझे–2
उसका यह मोह हो–3 क्षय खुद हो जाये रे–SS॥721॥

(97) पहले द्रव्यों को जानें, अपने पर को पहचानें–2
गुण पर्यय को भी जानें–SSS
गर निर्मोही बनना है, जिनवर आगम की मानें–2
आगम का ज्ञान हो–3 सब मोह मिटाये रे–SSS॥722॥

(98) जिन प्रभु ने जो बतलाया, उस पर श्रद्धा नहिं लाया–2
उसने भ्रम ही अपनाया–SSS
मुनि होकर वो मुनि नहीं, उसमें संभव धर्म नहीं–2
ऐसे ही लोग हो–3 जिनधर्म लजाएँ रे–SS॥723॥

(99) आगम में जो कुशल यहाँ, नष्ट हुआ है मोह यहाँ–2
वीतरागमय भाव यहाँ–SSS
संयम पर आरूढ़ रहे, उसी श्रमण को धर्म कहें–2
आगम उन मुनि को हो–3 ही धर्म बताए रे–SS॥724॥

(100) वीतराग मुनि देख यहाँ, प्रसन्न हो करें नमन यहाँ–2
उठकर वंदन करें यहाँ–SSS
पूजा कर सत्कार करे, वही धर्म को ग्रहण करे–2
उनकी सेवा से हो–3 रत्नत्रय पाये रे–SS॥725॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(101) मानव या तिर्यंच यहाँ, पा करके वह धर्म यहाँ-2
देव व नरगति धरें यहाँ-SSS
वैभव ऐश्वर्य पाते हैं, मनरथ पूर्ण सजाते हैं-2
धर्म की महिमा हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-SS॥726॥

ज्ञेय तत्त्व अधिकार

(102) सम्यक् संयमधारी हो, ज्ञान तपस्या धारी हो-2
उनको धोक हमारी हो-SSS
उनके गुण में रमता हूँ, समता धारण करता हूँ-2
परमार्थ निश्चय हो-3 का ज्ञान बताऊँ रे-SS॥727॥

(103) अर्थ, द्रव्यमय निश्चय से, द्रव्य, गुणात्मक सभी कहे-2
दोनों से पर्यय होवे-SSS
मूढ़ी मोहित पर्यय में, उन्हें यहाँ परसमय कहें-2
द्रव्य दृष्टि से हो-3 निज गुण मिल जायें रे-SS॥728॥

(104) पर्यायों में रमण करें, उनको ही परसमय कहें-2
अहंकार ममकार धरें-SSS
आत्मस्वभाव में स्थित जो, उनको ही निजसमय कहें-2
राग और द्वेष हो-3 उनके मिट जायें रे-SS॥729॥

(105) छोड़े नहीं स्वभाव यहाँ, जनि-व्यय-ध्रुव संयुक्त यहाँ-2
सर्वगुणों से सहित यहाँ-SSS
गुण और पर्यय युक्त कहा, वो ही समझो द्रव्य अहा-2
द्रव्य जाने बिन हो-3 कुछ समझ न आये रे-SS॥730॥

(106) द्रव्य हमेशा गुण युत है, जनि-व्यय-ध्रुव से संयुत है-2
नाना पर्यय सहित जो है-SSS
द्रव्य का ये अस्तित्व कहा, द्रव्य का यही स्वभाव कहा-2
द्रव्य को जाना हो-3 तो सब जन जाये रे-SS॥731॥

(107) नाना गुणमय द्रव्य यहाँ, लक्षण कई विशिष्ट यहाँ-2
सबमें व्यापक एक यहाँ-SSS
सद् अस्तित्व स्वरूप सभी, कहते हैं जिनदेव यहाँ-2
द्रव्य का ज्ञान हो-3 सम्यक्त्व दिलाये रे-SS॥732॥

(108) द्रव्य स्वभाव से सिद्ध यहाँ, वह सत्-सत्ता रूप यहाँ-2
निश्चय से ये जान यहाँ-SSS
जो आगम से सिद्ध कहा-नहिं माने पर समय कहा-2
ऐसे ही लोग हो-3 मिथ्यादृष्टि बताएँ रे-SS॥733॥

(109) स्वभाव में जो वस्तु रहे, वही द्रव्य सद्रूप रहे-2
वस्तु स्वभाव स्वरूप रहे-SSS
द्रव्य कहा गुण पर्यय युत्, जनि-व्यय-ध्रुव परिणाम संयुक्त-2
वह ही द्रव्य का हो-3 स्वभाव बताएँ रे-SS॥734॥

(110) व्यय बिन हो उत्पाद नहीं, बिन उत्पाद विनाश नहीं-2
दोनों हों ध्रुव बिना नहीं-SSS
तीनों का अस्तित्व रहे, तभी द्रव्य अस्तित्व रहे-2
तीनों बिन द्रव्य हो-3 नहिं द्रव्य कहाए रे-SS॥735॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(111) जनि-व्यय-ध्रुव हैं द्रव्यों में, तीनों हैं पर्यायों में-2
द्रव्य से ही पर्यायें हैं-SSS
द्रव्य बिना पर्याय नहीं, बिन पर्यय के द्रव्य नहीं-2
इनका ही ज्ञान हो-3 अज्ञान मिटाएँ रे-SS॥736॥

(112) जनि-व्यय-ध्रुव पर्यायों में, तीनों होते इक पल में-2
निश्चय से इक ही द्रव में-SSS
एकमेक है द्रव्य यहाँ, तीनों रहें अभिन्न यहाँ-2
द्रव्य तीनों ही हो-3 रूपों में आये रे-SS॥737॥

(113) द्रव्य की इक पर्याय बने, द्रव्य की इक पर्याय मिटे-2
कायम द्रव्य ध्रुवत्व रहे-SSS
द्रव्य का नहीं विनाश यहाँ, और न हो उत्पाद यहाँ-2
द्रव्य का ऐसा हो-3 निज भाव बताएँ रे-SS॥738॥

(114) द्रव्य यहाँ परिणमन करे, एक से दूजा रूप धरे-2
पर्यय सभी अभिन्न रहे-SSS
गुण हो या पर्यायें हों, सब ही द्रव्य स्वरूप कहें-2
द्रव्य दुनियाँ में हो-3 सब नित्य बताएँ रे-SS॥739॥

(115) द्रव्य स्वयं सत् रूपी है, रूपी कोई अरूपी है-2
द्रव्य की सत्ता रूपी है-SSS
सत्ता से जो भिन्न यहाँ, वो फिर होगा द्रव्य कहाँ-2
सत्ता बिन द्रव्य हो-3 कैसे रह पाये रे-SS॥740॥

(116) सत्ता रूप है द्रव्य यहाँ, गुण पर्यय इस रूप यहाँ-2
सबमें सत् विस्तार यहाँ-SSS
द्रव्य न गुण पर्याय यहाँ, संज्ञा लक्षण अर्थ यहाँ-2
इनकी अपेक्षा हो-3 ये भिन्न बताएँ रे-SS॥741॥

(117) द्रव्य से भिन्न प्रदेश यहाँ, अलग-अलग तब द्रव्य यहाँ-2
सत्ता उनकी एक कहाँ-SSS
जीव के भिन्न प्रदेश रहें, पुद्गल के भी भिन्न रहें-2
द्रव्य और सत्ता हो-3 द्वय भिन्न बताएँ रे-SS॥742॥

(118) द्रव्य है वो गुण नहीं यहाँ, गुण है वो नहिं द्रव्य यहाँ-2
निश्चय से ये समझ यहाँ-SSS
इससे अतद्भाव जानो, नहीं सर्वथा तुम मानो-2
निश्चय से प्रभु ने हो-3 ये बात बताई रे-SS॥743॥

(119) द्रव्य में सत् परिणाम यहाँ, गुण निश्चयी अभिन्न यहाँ-2
सत् ही द्रव्य स्वरूप यहाँ-SSS
जो स्वभावमय द्रव्य रहे, उसमें निश्चित सत् रहे-2
ऐसे जिन प्रभु का हो-3 उपदेश बताएँ रे-SS॥744॥

(120) अपने गुण में द्रव्य रहे, द्रव्यार्थिक नय अलग कहे-2
पर्यायार्थिक अलग कहे-SSS
सदसत् भाव युक्त होकर, नित उत्पाद को प्राप्त करे-2
अगली अगली वह हो-3 पर्यय पा जाये रे-SS॥745॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(121) दुनियाँ में तू देख यहीं, द्रव्य बिना गुण रहे नहीं–2
गुण बिन पर्यय बने नहीं–SSS
द्रव्य का भाव कहा गुणमय, गुण होता है पर्ययमय–2
द्रव्य तो खुद ही हो–3 सत् रूप बताएँ रे–SS॥746॥

(122) जीव परिणमन करता है, देव मनुज तन धरता है–2
अन्यरूप भी होता है–SSS
लेकिन द्रव्य वही रहता, उसे नहीं वह तजता है–2
द्रव्य नहिं बदले हो–3 तो एक रहाये रे–SS॥747॥

(123) देव, मनुष्य नहीं होता, मानुष देव नहीं होता–2
मानव सिद्ध नहीं होता–SSS
द्रव्य नहीं इक रूप रहा, पर्यय भी तो भिन्न रहा–2
बदलेंगे दोनों हो–3 ये बात बताएँ रे–SS॥748॥

(124) द्रव्यार्थिक नय कुछ कहता, पर्यायार्थिक कुछ कहता–2
इक अभिन्न इक भिन्न कहता–SSS
जैसी है पर्याय यहाँ, वैसा ही है द्रव्य यहाँ–2
तन्मयता होवे हो–3 वो अभिन्न कहाए रे–SS॥749॥

(125) कभी द्रव्य अस्ति रूप है, कभी द्रव्य नास्तिरूप है–2
कभी उभयरूपी द्रव्य है–SSS
अवक्तव्य भी कभी कहा, अन्य रूप भी कभी कहा–2
स्याद्वाद को जानो हो–3 तो समझ में आये रे–SS॥750॥

(126) कोई पर्यय नित्य नहीं, विभाव पर्यय रहे यहीं–2
ऐसा नहिं कि क्रिया नहीं–SS
कोइ क्रिया फल रहित नहीं, धर्मोत्तम फल बिना यहीं–2
धर्म इस भव में हो–3 नहिं फल दिलवाये रे–SS॥751॥

(127) नाम कर्म जब उदय रहे, तन गतियों में यहाँ धरे–2
भटके और आगे भटके–SSS
कर्म स्वभाव दिखाता है, आत्म स्वभाव दबाता है–2
इस ही कारण से हो–3 घर–घर भरमाए रे–SS॥752॥

(128) देव मनुज तिर्यंच यहाँ, नामकर्म से बने यहाँ–2
कर्म परिणमन करे यहाँ–SSS
शुद्ध स्वभाव न मिल पाता, कर्म ने स्वभाव भड़काया–2
निज का स्वभाव हो–3 फिर हमें दिखाए रे–SS॥753॥

(129) हो विनाश उत्पाद जहाँ, फिर भी न हो उत्पाद यहाँ–2
और न हो कुछ नष्ट यहाँ–SSS
द्रव्य में पर्यय आती है, वही विलय हो जाती है–2
उत्पाद–व्यय ध्रुव हो–3 अति भिन्न बताएँ रे–SS॥754॥

(130) द्रव्य से वस्तु कही स्थिर, पर्यय दृष्टि से है अस्थिर–2
कोई द्रव्य नहीं स्थिर–SSS
जीव क्रिया जब करता है, भव में तभी भ्रमणता है–2
कर्म जीव को हो–3 गति में भटकाएँ रे–SS॥755॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(131) कर्म मलिन जो आत्म यहाँ, कर्मयुक्त कर भाव यहाँ–2
फिर बंध जाते कर्म यहाँ–SSS
कर्म से ही परिणाम बनें, परिणामों से कर्म बंधे–2
आत्मानुभव से हो–3 नहिं कर्म जु आयें रे–SS॥756॥

(132) परिणाम स्वयं है आत्म यहाँ, क्रिया जीव की कर्म यहाँ–2
कर्म करायें भ्रमण यहाँ–SSS
निश्चय से यह आत्म यहाँ, कर्म का कर्ता नहीं यहाँ–2
कर्ता निज गुण का हो–3 आतम कहलाए रे–SS॥757॥

(133) चेतन तीन प्रकार रही, ज्ञान–कर्मफल कर्म कही–2
स्वभाव से परिणमन कही–SSS
ज्ञान चेतना ज्ञान में हो, कर्म चेतना कर्म में हो–2
कर्मफल चेतन हो–3 फल में बतलाएँ रे–SS॥758॥

(134) ज्ञान, जानता द्रव्य यहाँ, जीव करे सब कर्म यहाँ–2
जिसके भेद अनेक यहाँ–SSS
सुख दुख उन कर्मों का फल, जिससे सारे जीव विकल–2
ज्ञान चेतन ही हो–3 सुख रूप बताएँ रे–SS॥759॥

(135) आत्मा परिणाम स्वभावी है, परिणति ज्ञान स्वभावी है–2
कर्म–कर्मफल भावी है–SSS
ज्ञान–कर्मफल कर्म यहाँ, तीनों समझ यहाँ आत्मा–2
आतम के रूप हो–3 ये तीन बताएँ रे–SS॥760॥

(136) कर्ता कर्म हैं आत्म यहाँ, करण कर्मफल आत्म यहाँ–2
ऐसा निश्चय समझ यहाँ–SS
तभी पर परिणमन रुकता है, शुद्ध स्वरूप समझता है–2
वह ही आतम में हो–3 शुद्धत्व समाये रे–SS॥761॥

(137) जीव–अजीव द्रव्य दो हैं, जीव द्रव्य चेतनमय है–2
ज्ञान–दर्श उपयोगी है–SSS
अजीव–अचेतन समझ यहाँ, रूपी, पुद्गलमयी यहाँ–2
द्रव्य के भेद हो–3 दो मुख्य बताएँ रे–SS॥762॥

(138) जिस आकाश में जीव रहें, पुद्गल, धर्म, अधर्म रहें–2
काल द्रव्य भी साथ रहे–SSS
उसको तीनों कालों में, जिनवर गुरुवर लोक कहें–2
लोक के आगे हो–3 आलोक बताएँ रे–SS॥763॥

(139) जीवादि सब द्रव्यों में, जनि–व्यय–ध्रुव ये तीनों हैं–2
भेद व संघात पुद्गल में–SSS
हो संघात संयोगों में, होता भेद वियोगों में–2
जीव पुद्गल में हो–3 ये भेद बताएँ रे–SS॥764॥

(140) लक्षण से पहचान यहाँ, जीव अजीव को जान यहाँ–2
लक्षण बिन हो ज्ञान कहाँ–SSS
मूर्त–अमूर्त यहाँ जानो, भिन्न–भिन्न ये पहचानो–2
गुण ही वस्तु का हो–3 सद्ज्ञान करायें रे–SS॥765॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(141) इन्द्रिय से जो ग्राह्य यहाँ, द्रव्यों में है मूर्त यहाँ–2
कई भेद से रहें यहाँ–SS
पुद्गल द्रव्यों में होते, अन्य में रहें अमूर्त यहाँ–2
पुद्गल में मूर्त हो–3 सब अमूर्त बताएँ रे–SS॥766॥

(142) रूप गंध रस वर्ण यहाँ, पुद्गल में नित रहें यहाँ–2
सूक्ष्म हो या स्थूल यहाँ–SSS
शब्द भी है वो पुद्गल है, अनेक भेद से युक्त जो है–2
पुद्गल के भेद हो–3 श्रुत में बतलाएँ रे–SS॥767॥

(143) अवगाहन आकाश का गुण, धर्मद्रव्य का गमन है गुण–2
स्थित अधर्म द्रव्य का गुण–SSS
वर्तना काल द्रव्य का गुण, समझो इनमें बनो निपुण–2
गुण को जो जाने हो–3 वो ही गुण पाये रे–SS॥768॥

(144) आतम गुण उपयोग कहा, जिसकी महिमा महिम अहा–2
ज्ञानमयी उपयोग कहा–SSS
अमूर्त द्रव्यों के ये गुण, ज्ञान बढ़ाकर करें निपुण–2
द्रव्यों का ज्ञान हो–3 सम्यक्त्व दिलाये रे–SS॥769॥

(145) जीव व पुद्गल, धर्म यहाँ, अधर्म लोकाकाश यहाँ–2
असंख्य प्रदेशी कहे यहाँ–SSS
एक प्रदेशी काल कहा, पुद्गल संख्य अनंत यहाँ–2
द्रव्य में इतने हो–3 ही प्रदेश बतायें रे–SS॥770॥

(146) अस्तिकाय पच द्रव्य यहाँ, अस्तिकाय नहिं काल यहाँ–2
एक प्रदेशी काल यहाँ–SSS
बहु प्रदेशी द्रव्य हैं जो, काल द्रव्य नहिं उसमें हो–2
बहु प्रदेशी हो–3 वह द्रव्य कहाएँ रे–SS॥771॥

(147) लोक अलोक में आकाश हो, धर्म अधर्म लोक में हो–2
शेष जीव पुद्गल द्रव हो–SSS
उनकी यहाँ प्रतीति करे, उससे काल द्रव्य ठहरे–2
सारे द्रव्यों के हो–3 गुण ज्ञान में लाओ रे–SS॥772॥

(148) ज्यों आकाश प्रदेश यहाँ, त्यों सब द्रव्य प्रदेश यहाँ–2
अणु में एक प्रदेश यहाँ–SSS
अनेक प्रदेश उत्पन्न यहाँ, जिस कारण ये कहे यहाँ–2
इन सबको जानो हो–3 जो ज्ञान बढाएँ रे–SS॥773॥

(149) काल द्रव्य अप्रदेशी है, कहते जो अन्वेषी है–2
परम दिगम्बर भेषी है–SSS
मंदगति परमाणु चले, एक समय तक यहाँ कहे–2
आकाश प्रदेश हो–3 पर अणु जब जाये रे–SS॥774॥

(150) नभ प्रदेश पर गमन करे, मंद गति से अणु चले–2
एक समय तब यहाँ लगे–SS
फिर हो घंटा घड़ी यहाँ, काल की ये पर्याय यहाँ–2
आयें और जायें हो–3 द्रव काल कहाये रे–SS॥775॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(151) इक अणु जितनी जगह रहे, वो आकाश प्रदेश कहे-2
उसमें ही सब द्रव्य रहें-SSS
सबको स्थान यहाँ देता, ऐसी उसमें सक्षमता-2
देता अवकाश हो-3 आकाश कहाये रे-SS॥776॥

(152) हो उत्पाद विनाश यहाँ, दोनों हों इक साथ यहाँ-2
कहते हैं जिनदेव यहाँ-SSS
काल द्रव्य नहिं वैभाविक, रहे हमेशा स्वाभाविक-2
कहते हैं जिनवर हो-3 भ्रम सभी मिटायें रे-SS॥777॥

(153) एक प्रदेश नभ में हैं, संख्य असंख्य अनंत अणु हैं-2
समय भी उतने होते हैं-SSS
जितने हों परमाणु यहाँ, उतने हों कालाणु यहाँ-2
ऐसा निश्चय से हो-3 जिनदेव बताएँ रे-SS॥778॥

(154) जनि-व्यय-ध्रुव संज्ञा वाले, कालाणु विभाव वाले-2
एक समय होने वाले-SS
काल द्रव्य सद्भाव रहे, विद्यमान उत्पाद रहे-2
वर्तन का लक्षण हो-3 हर समय बताए रे-SS॥779॥

(155) बहुत प्रदेश न हों जिसमें, एक प्रदेश न हो जिसमें-2
लगता शून्य पदार्थ हमें-SSS
शून्य में हो अस्तित्व कहाँ, काल का है अस्तित्व यहाँ-2
जानोगे तब ही हो-3 ये समझ में आये रे-SS॥780॥

(156) निज प्रदेशों से युक्त यहाँ, भरे हैं सभी पदार्थ यहाँ-2
लोक सदा है नित्य यहाँ-SSS
इसको जाने जीव है वो, चार प्राण से युक्त है वो-2
ऐसा जिनवर ही हो-3 सबको बतलाएँ रे-SS॥781॥

(157) इन्द्रिय और बल प्राण यहाँ, आयु प्राण उच्छ्वास यहाँ-2
ये जीवों के प्राण यहाँ-SSS
इनसे जीता जीव यहाँ, इनसे मरता जीव यहाँ-2
प्राण के चार हो-3 गुरु भेद बताएँ रे-SS॥782॥

(158) इन्द्रिय हैं पच प्राण यहाँ, मन वच बल ये प्राण यहाँ-2
आयु, स्वासोच्छ्वास यहाँ-SSS
सभी प्राण दस होते हैं, पंचेन्द्रिय ये पाते हैं-2
जन्म करण की हो-3 पहिचान बतायें रे-SS॥783॥

(159) चार प्राण से जीता जो, जीता और जियेगा जो-2
समझो उसको जीव है वो-SSS
पुद्गल प्राण रचाते हैं, भव में साथ निभाते हैं-2
भव के मिटते ही हो-3 ये सब मिट जायें रे-SS॥784॥

(160) प्राण युक्त जो जीव रहे, वही कर्म से बद्ध रहे-2
कर्मफलों का भोग करे-SSS
नये कर्म का बंध करे, फिर वह आगे प्राण धरे-2
प्राण से प्राणी हो-3 प्राणांत करायें रे-SS॥785॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(161) प्राण युक्त जो जीव यहाँ, मोह द्वेष से सहित यहाँ–2
जीव घात वो करे यहाँ–SSS
नये कर्म का बंध करे, उदय में गतियाँ भ्रमण करे–2
प्राणों को लेना हो–3 हिंसा कहलाए रे–SS॥786॥

(162) कर्म से मैला जीव यहाँ, कर्म करे नित बंध यहाँ–2
बार–बार धर प्राण यहाँ–SS
त्यागे नहीं ममत्व यहाँ, प्राण करे अपनत्व यहाँ–2
प्राण प्राणी को हो–3 भव दुक्ख दिलाएँ रे–SS॥787॥

(163) इन्द्रियजयी स्वभावमयी, होता जब उपयोगमयी–2
ज्ञान–ध्यान निज रूपमयी–SSS
कर्मबंध नहिं उसको हो, प्राणों का अनुबंध न हो–2
उसका इस भव में हो–3 भ्रमना मिट जाये रे–SS॥788॥

(164) निज लक्षण निज स्वाद लिए, पर पदार्थ संयोग किये–2
तब पर्याय स्वरूप हुए–SSS
पर्यय कई प्रकार कही, उसके हैं आकार कई–2
जीव के भेद हो–3 फिर कई बताएँ रे–SS॥789॥

(165) नामकर्म का उदय रहे, देव नारकी पशु बने–2
कभी मनुष्याकार बने–SSS
निज स्वभाव से भिन्न यहाँ, होती ये पर्याय यहाँ–2
भव में पर्यायें हो–3 आकार में आयें रे–SS॥790॥

(166) निज स्वभाव को जाने जो, जनि–व्यय–ध्रुवमय माने जो–2
युक्त चतुष्टय जाने जो–SS
वो नहिं पर में मोहित हो, अपने से अनभिज्ञ न हो–2
आत्म स्वरूप हो–3 वह भूल न पाये रे–SS॥791॥

(167) जीव उपयोग स्वरूपी है, ज्ञान दर्शमय रूपी है–2
गुणमय शुद्ध स्वरूपी है–SSS
द्वय रूपी उपयोग कहा, शुभ और अशुभ स्वरूप अहा–2
आतम के भेद हो–3 शुभ अशुभ बताएँ रे–SS॥792॥

(168) शुभ उपयोग यहाँ होता, पुण्य कर्म संचय होता–2
ऐसा ये आगम कहता–SSS
जब उपयोग अशुभ आये, पाप कर्म भर भर जाये–2
दोनों नहिं होवें हो–3 तो कर्म न आयें रे–SS॥793॥

(169) जिन–सिद्धों को जान रहा, अनगारों को देख रहा–2
चरण कमल को पूज रहा–SSS
जीवों पर नित दया करे, कहते शुभ उपयोग उसे–2
पुण्य हो बंध हो–3 जब शुभ मन आये रे–SS॥794॥

(170) विषय कषायोपयोग में हो, कुशास्त्र को ही सुनता जो–2
ये मन दुश्रुति वाला हो–SS
उन्मार्गों में लगा रहे, खोटी चर्चा यहाँ करे–2
उसका उपयोग हो–3 नित अशुभ बताएँ रे–SS॥795॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(171) द्रव्यों में मध्यस्थ हूँ मैं, अशुभ भाव से रहित हूँ मैं–2
शुभ भावों से युक्त न मैं–SSS
शुद्धोपयोग को ध्याता हूँ, निज स्वरूप को पाता हूँ–2
ज्ञान स्वभावी हो–3 तब ज्ञान समाये रे–SS॥796॥

(172) देह नहीं नहिं मन हूँ मैं, वचन न उसका कारण मैं–2
कर्ता नहीं कभी भी मैं–SSS
नहीं कराने वाला मैं, और न अनुमोदक हूँ मैं–2
ज्ञान स्वरूपी हो–3 निज आत्म स्वभावी रे–SS॥797॥

(173) देह और मन वचन यहाँ, तीनों पुद्गल रूप यहाँ–2
पुद्गल द्रव्य स्वरूप यहाँ–SSS
भेद अनेक हैं पुद्गल के, कई पिण्डमय रहे यहाँ–2
पुद्गल में ऐसे हो–3 ही भाव बताएँ रे–SS॥798॥

(174) मैं नहिं पुद्गल रूप यहाँ, पुद्गल मेरे नहीं यहाँ–2
और न इनको किया यहाँ–SSS
इसीलिये मैं देह नहीं, देह का कर्ता कभी नहीं–2
ये सब पुद्गल की हो–3 पर्याय बताएँ रे–SS॥799॥

(175) प्रदेश बिना परमाणु यहाँ, शब्द रूप से रहित यहाँ–2
एक प्रदेशी मात्र यहाँ–SSS
गुण रूक्षत्व स्निग्ध मिले, परमाणु स्कंध बने–2
फिर ये शब्दों की हो–3 पर्यय पा जाये रे–SS॥800॥

(176) रूक्ष स्निग्ध गुणत्व कहे, परमाणु में नित्य रहें–2
इस कारण स्कन्ध बनें–SS
संख्यात और असंख्याती, और अनंत प्रदेश रहें–2
अणु का स्वभाव हो–3 स्कन्ध बनाये रे–SS॥801॥

(177) दो गुण अधिक गुणों में हों, तो ये अणु खुद बंधित हों–2
स्निग्ध या फिर रूक्ष हों–SSS
समान गुण असमान गुणी, फिर भी बंधन प्राप्त वो हों–2
कहते थे जिनवर हो–3 श्रद्धान जमाओ रे–SS॥802॥

(178) दो अणु स्निग्ध वाले हों, चार अणु स्निग्ध वाले हों–2
दोनों ही अनुबंधित हों–SSS
तीन गुणी रूक्षत्व यहाँ, पाँच गुणी से बंधित हों–2
दो गुण हों ज्यादा हो–3 तब बंध बताएँ रे–SSS॥803॥

(179) दो अणु आदि स्कन्ध यहाँ, दो प्रदेश से असंख्य यहाँ–2
सूक्ष्म या बादर रूप यहाँ–SSS
पृथ्वी जल अग्नि वायु, इन्हीं रूप परिणमन यहाँ–2
अणु ही स्कंध हो–3 का रूप बनाएँ रे–SS॥804॥

(180) योग्य अयोग्य वस्तुओं से, बादर सूक्ष्म स्कंधों से–2
ग्रहण योग्य अणु पिण्डों से–SSS
भरा हुआ यह लोक यहाँ, गाढ़ बहुत अवगाह यहाँ–2
दिखता आँखों से हो–3 पुद्गल बतलाएँ रे–SS॥805॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(181) कर्मयोग्य हैं पुद्गल जो, राग रूप परिणति से वो-2
कर्मरूप बन जाते वो-SSS
निश्चय कर नहिं परिणायें, वे खुद ही परिणम जायें-2
जीव की परिणति हो-3 हेतु बन जाये रे-SS॥806॥

(182) कर्म स्वयं परिणमन करें, जीव तभी परिणाम करें-2
फिर कर्मों का बंध करें-SS
बंधोदय में देह धरें, मर मर अगली देह वरें-2
ऐसे ही भव में हो-3 भ्रमता ही जाये रे-SS॥807॥

(183) औदारिक तन पाते हैं, वैक्रियिक तन पा जाते हैं-2
जो भव में भ्रम पाते हैं-SSS
तैजस आहारक तन है, कार्माणमय भी तन है-2
पुद्गलमय पाँचों हो-3 ये तन बतलाएँ रे-SS॥808॥

(184) रूप-गंध-रस रहित यहाँ, आतम में नहिं वर्ण यहाँ-2
अव्यक्त चेतन गुणी यहाँ-SSS
शब्द रहित है चिह्न रहित, निराकार है ज्ञान सहित-2
ऐसी हे आत्मन्! हो-3 निज आत्म विचारो रे-SS॥809॥

(185) मूर्त, रूप गुण पुद्गल में, वे आपस में बंधते हैं-2
ऐसा जिनवर कहते हैं-SSS
आत्म अमूर्त गुणों वाली, पुद्गल को कैसे बाँधे-2
निश्चय से आतम हो-3 नहिं कर्म बंधाये रे-SS॥810॥

(186) रूप रहित है आत्म यहाँ, रूपादिक का ज्ञान यहाँ-2
देखे सभी पदार्थ यहाँ-SS
त्यों कषायमय जीव यहाँ, करे कर्म का बंध यहाँ-2
ऐसा स्वभाव हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-SS॥811॥

(187) जीव उपयोग स्वभावी है, फिर भी मोही रागी है-2
द्वेषी है और भोगी है-SS
विषयों को वह प्राप्त करे, कर्मों का नित बंध करे-2
भाव और द्रव्य हो-3 द्वय बंध बताएँ रे-SS॥812॥

(188) जिन भावों से जान रहा, जिन भावों से देख रहा-2
राग उसी से रचा रहा-SSS
कर्मबंध उससे करके, भव में भ्रमता यहाँ रहा-2
भाव वही है हो-3 द्वय रूप दिखाएँ रे-SS॥813॥

(189) जीव राग के भावों से, पुद्गल रूप के भावों से-2
बँधते एकमेक जैसे-SSS
वह पुद्गल जीवात्मक है, बंध ही यहाँ भवात्मक है-2
इसको प्रदेश हो-3 गुरु बंध बताएँ रे-SS॥814॥

(190) जीव प्रदेश सहित ही है, कर्म वर्गणा आती हैं-2
प्रदेश में घुस जाती हैं-SS
निश्चित काल साथ रहकर, फल देकर झड़ जाती हैं-2
उससे ही आगे हो-3 फिर कर्म बँधाये रे-SS॥815॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(191) रागी कर्म बाँधता है, त्यागी कर्म त्यागता है-2
त्यागी मुक्ति पाता है-SSS
अल्परूप में बंध कहा, राग रहित निर्बन्ध अहा-2
निश्चय से जानो हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-SS॥816॥

(192) राग-द्वेष मोहादि धरे, ये परिणाम हैं बंधन के-2
जीव कर्म का बंध करे-SSS
मोह द्वेष ये अशुभ कहे, प्रशस्त हो तो शुभ कहते-2
पुण्य और पाप हो-3 शुभ अशुभ बनाएँ रे-SS॥817॥

(193) पर में शुभ परिणाम यहाँ, पुण्य रूप ही कहा यहाँ-2
जिसका फल स्वर्गादि यहाँ-SSS
पर में अशुभ विचार यहाँ, पाप रूप परिणाम यहाँ-2
अपने में परिणति हो-3 दुख क्षय कर जाये रे-SS॥818॥

(194) पृथ्वी आदिक जीव यहाँ, स्थावर त्रस समूह यहाँ-2
संसारी पर्याय यहाँ-SSS
शुद्ध जीव अति भिन्न रहे, इन पर्यय सा नहीं रहे-2
शुद्ध आतम ही हो-3 भव भ्रमण मिटाये रे-SS॥819॥

(195) निज पर स्वभाव पा करके, भेद ज्ञान को नहिं करके-2
पर के वश में हो करके-SS
मैं ऐसा ये मेरा है, पर द्रव्यों में डेरा है-2
मोह के कारण हो-3 ये भाव बनाए रे-SS॥820॥

(196) निज भावों में रहें सदा, निज भावों का है कर्ता-2
निश्चय से आगम कहता-SSS
पर का कर्ता जीव नहीं, पर में रमता जीव नहीं-2
अपने भावों का हो-3 कर्ता कहलाए रे-SS॥821॥

(197) जीव हमेशा साथ रहे, पुद्गल के ही बीच रहे-2
कभी न पुद्गल ग्रहण करे-SSS
कभी न छोड़े पुद्गल को, नहीं बनाए वो उनको-2
निश्चय से जीव हो-3 निज भाव को पाये रे-SS॥822॥

(198) राग-द्वेष जब जीव करे, अपने ही परिणाम धरे-2
अपने ही नित भाव करे-SSS
कर्म ग्रहण कर लेते हैं, कभी छोड़ भी देते हैं-2
ऐसा संबंध हो-3 दोनों का पायें रे-SS॥823॥

(199) राग-द्वेष परिणाम धरे, भाव शुभाशुभ जीव करे-2
निज भावों में नहीं रमे-SSS
कर्मधूलि तब आती है, जीव में वो मिल जाती है-2
शुद्ध भावों में हो-3 नहिं धूल समाये रे-SS॥824॥

(200) राग-द्वेष मोहादि करे, जीव कषैला भाव धरे-2
अपने आत्म प्रदेश रहे-SSS
कर्मों को संश्लेष करे, एकमेक हो बंध करे-2
ऐसा आगम में हो-3 जिनदेव बताएँ रे-SS॥825॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(201) बंध विषय संक्षेप कहा, निश्चय से ये समझ अहा-2
अरहंतों ने यहाँ कहा-SSS
नय व्यवहार से कथन करे, उसके भेद अनेक करे-2
पाये और छोड़े हो-3 व्यवहार बताएँ रे-SS॥826॥

(202) मैं ऐसा हूँ, मेरा है, शरीर धन सब मेरा है-2
कहे, यही जग डेरा है-SSS
वो मुनि होकर मुनि नहीं, वो उन्मार्गी श्रमण मुनि-2
ऐसे ही साधु हो-3 मिथ्यात्व बढ़ाएँ रे-SS॥827॥

(203) मैं पर का नहिं कभी यहाँ, पर मेरे नहिं कभी यहाँ-2
ज्ञान स्वभावी एक यहाँ-SS
यही ध्यान में ध्याता है, वही आत्मा ध्याता है-2
ऐसा ही ध्यान हो-3 शुद्धात्म दिखाये रे-SS॥828॥

(204) आतम ज्ञान स्वरूपी है, महान् दर्शन रूपी हो-2
अनंत चतुष्टय रूपी है-SSS
असहायी बन ध्याता हो, वह शुद्धातम पाता है-2
ध्रुवता वो पाकर हो-3 स्थिरता पाये रे-SS॥829॥

(205) तन धन सुख दुख मिले हमें, मित्र-शत्रु भी मिले हमें-2
ये नहिं शाश्वत यहाँ रहें-SSS
नित उपयोग स्वरूपी है, ध्रुव है आत्म अरूपी है-2
आत्मा ही शाश्वत हो-3 जिनदेव बताएँ रे-SS॥830॥

(206) सागारी अनगारी हो, निज पर भेद विचारी हो-2
आत्मध्यान अनुचारी हो-SS
विशुद्ध होकर ध्यान करे, मोह ग्रंथि वह नाश करे-2
निर्मोही बनकर हो-3 शुद्धात्म वो पाये रे-SS॥831॥

(207) मोह ग्रंथि को मिटा दिया, राग-द्वेष भी हटा दिया-2
श्रमणपना खुद दिखा दिया-SS
सुख-दुख में समभाव करे, अक्षय सुख वह प्राप्त करे-2
ज्ञान-दर्शन वो हो-3 सम्पूर्ण बनाये रे-SS॥832॥

(208) मोह का कालुष नाश किया, निज को विषय विरक्त किया-2
मन का यहाँ निरोध किया-SSS
निज स्वभाव में रम करके, शुद्धातम का ध्यान किया-2
वह ही आतम का हो-3 ध्याता कहलाए रे-SS॥833॥

(209) घाति कर्म को नाश किया, अर्थसार प्रत्यक्ष किया-2
अंत ज्ञेय को प्राप्त किया-SSS
लोकालोक ज्ञान में है, संशय बिन निज आत्म किया-2
जिन की महिमा को हो-3 सब योगी गायें रे-SS॥834॥

(210) मिटी यहाँ सब बाधायें, ज्ञान-दर्श में सुख पायें-2
सुखमय ध्यान यहाँ ध्यायें-SS
इन्द्रिय रहित अनिन्द्रिय जो, अर्हत् परमेष्ठी है वो-2
उनकी महिमा को हो-3 सब वेद सुनायें रे-SS॥835॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(211) जितने भी केवली हुए, तीर्थंकर या श्रमण हुए-2
इसी मार्ग से सिद्ध हुए-SS
शुद्ध ये मुक्ति मार्ग यहाँ, उसको हरदम नमन यहाँ-2
भव में यह मुक्ति हो-3 सब मन से चाहें रे-SS॥836॥

(212) सब ममत्व तू छोड़ यहाँ, पर से नाता तोड़ यहाँ-2
ज्ञायक भावी मान यहाँ-SSS
आत्मा ऐसा भान करे, निर्ममत्व का ध्यान करे-2
तब ही ज्ञायकपन हो-3 खुद में प्रकटायें रे-SS॥837॥

(213) दर्श ज्ञान से शुद्ध हैं जो, ज्ञानोपयोग से युक्त हैं जो-2
अव्याबाध गुणत्व हैं जो-SSS
शरीर बिन शाश्वत हैं वो, आत्मस्वरूप सहज हैं जो-2
ऐसे सिद्धों को हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-SS॥838॥

चारित्र अधिकार

(214) जिन सिद्धों को करूँ नमन, श्रमणों को करता वंदन-2
उपाध्याय के झुकूँ चरण-SSS
श्रमण पने को प्राप्त करो, दुख से गर बचना चाहो-2
परमेष्ठी जग में हो-3 परमार्थ दिलाएँ रे-SS॥839॥

(215) पूँछ के बन्धु वर्गों से, पुत्र, स्त्री परिवारी से-2
भव्य छूटता है सबसे-SS
रत्नत्रय को पाता है, शक्ति पूर्ण दिखाता है-2
दीक्षा लेकर के हो-3 निज ध्यान रचाये रे-SS॥840॥

(216) गण में रहें प्रधान यहाँ, गुण से हों परिपूर्ण यहाँ-2
वय कुल रूप में श्रेष्ठ यहाँ-SS
सबको ही जो इष्ट रहें, ऐसे गुरु को श्रेष्ठ कहें-2
करके निवेदन हो-3 तुम शीश झुकाओ रे-SS॥841॥

(217) बालक जैसा रूप यहाँ, केशलोंच से युक्त यहाँ-2
शुद्ध अहिंसामयी यहाँ-SS
रंच परिग्रह पास नहीं, शरीर का शृंगार नहीं-2
द्रव्यलिंग को हो-3 यह रूप बताएँ रे-SS॥842॥

(218) मेरे पर हैं नहीं यहाँ, पर का भी मैं नहीं यहाँ-2
ऐसे करे जो भाव यहाँ-SSS
वही जितेन्द्रिय होता है, यथाजात मुनि होता है-2
भावलिंगी की हो-3 पहचान बताएँ रे-SS॥843॥

(219) मूर्च्छा और आरंभ रहित, योग शुद्ध उपयोग सहित-2
पराधीनता भाव रहित-SSS
पुनर्जनम का नाशक जो, जैन संत का भेष है जो-2
दोनों ही लिंग हो-3 भवि पथिक बनाएँ रे-SS॥844॥

(220) भेष दिगम्बर धरे यहाँ, होकर व्रत से युक्त यहाँ-2
नमस्कार फिर करे यहाँ-SSS
प्रतिक्रमण का भाव करे, सुनकर उसे प्रयास करे-2
कर्तव्य करता हो-3 वो यति कहलाए रे-SS॥845॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(221) पंच महाव्रत समिति यहाँ, पंचेन्द्रिय का रोध यहाँ-2
षड् आवश्यक लोच यहाँ-SSS
भूमि शयन ठिदि भोज करें, अदंतधावन इक भुक्त यहाँ-2
अस्नान अचेल हो-3 ये गुण मुनि पालें रे-SS॥846॥

(222) मुनि के हैं गुणमूल यहाँ, होता कभी प्रमाद यहाँ-2
तब हो दीक्षा छेद यहाँ-SSS
प्रायश्चित कर शुद्ध करें, फिर पद पर स्थाप करें-2
जिससे उस पद को हो-3 फिर से पा जाये रे-SS॥847॥

(223) दीक्षा ले मुनि होते हैं, मुनि दीक्षा जो देते हैं-2
वे उनके गुरु होते हैं-SSS
छेद होने पर स्थाप करें, निर्यापक वे श्रमण कहें-2
प्रायश्चित देवें हो-3 वे गुरु कहलाएँ रे-SS॥848॥

(224) था सचेत मुनि सदा यहाँ, दोष हो गया काम यहाँ-2
तो आलोचना करे यहाँ-SSS
जानबूझ कर दोष करे, तो प्रायश्चित ग्रहण करे-2
जिनमत ये ही हो-3 उपस्थापन कहलाए रे-SS॥849॥

(225) बुद्धि पूर्वक दोष करे, प्रायश्चित वो ग्रहण करे-2
तब होता है शुद्ध अरे-SSS
उपस्थापना करे यहाँ, तभी भाव हों शुद्ध यहाँ-2
इसके बिन मुनि वो हो-3 दोषी कहलाएँ रे-SS॥850॥

(226) श्रमण अकेला हो भव में, अथवा हो साधु संग में-2
दोष न दिखें कभी उसमें-SS
दोष रहित श्रामण्य रहे, ऐसा ही जिनदेव कहें-2
बंधन को तजके हो-3 वह गमन बताएँ रे-SS॥851॥

(227) श्रमण यहाँ आहारों में, आवास उपवास में-2
विहार, देह उपाधि में-SSS
अन्य मुनि, विकथाओं में, राग-द्वेष के भावों में-2
राग नहीं करता हो-3 वो श्रमण कहाये रे-SS॥852॥

(228) बिना समिति बैठे चलना, करता शयन खड़े होना-2
ध्यान समिति का ना होना-SSS
जिसमें हिंसा होती है, अशुभ क्रिया वह होती है-2
ऐसी क्रिया से हो-3 व्रत छेद बताएँ रे-SS॥853॥

(229) जीव मरे या नहीं मरे, नहीं सचेत प्रवृत्ति करे-2
वो हिंसक है यहाँ अरे-SSS
समिति पालकर यहाँ चले, फिर भी कोई जीव मरे-2
बाह्य हिंसा से हो-3 वह बंध न पाये रे-SS॥854॥

(230) ज्ञान दर्श से युक्त रहे, शुद्ध आचरण यहाँ करे-2
कर्तव्यों का ध्यान धरे-SSS
मूलगुणों में यत्न करे, उसमें ही श्रामण्य अरे-2
ऐसे ही मुनिवर हो-3 भव पार हो जायें रे-SS॥855॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(231) ईर्या समिति से परिणत जो, करते गमन यहाँ पर वो-2
पैर उठाकर रखते जो-SS
उसी समय पग जीव आये, पग से यहाँ कुचल जाये-2
उससे कर्मों का हो-3 नहिं बंध बताएँ रे-SS॥856॥

(232) चलता प्रमाद युक्त यहाँ, उसको होता बंध यहाँ-2
कहते हैं भगवंत यहाँ-SS
मूर्च्छा से हो बंध यहाँ, यही परिग्रह कहा यहाँ-2
इसके बिन बंध हो-3 नहिं हो भी पाये रे-SS॥857॥

(233) यत्नाचार न रखे यहाँ, उसमें रहे प्रमाद यहाँ-2
वो मुनि हिंसक कहा यहाँ-SSS
कर्मों का वह बंध करे, जीवों का वध यहाँ करे-2
यत्न जो करता हो-3 निर्बन्ध कहाये रे-SS॥858॥

(234) काय चेष्टा हो जाये, जीव का मरण हो जाये-2
बंध हो या न हो पाये-SS
किंतु परिग्रह मूर्च्छा है, उससे बंध भी निश्चित है-2
तब ही श्रमणों को हो-3 वह त्याग बताएँ रे-SS॥859॥

(235) चाह न रखकर त्याग करे, निर्मल मन हो तभी अरे-2
भाव कर्म क्षय तभी करे-SS
चाह विशुद्धि मिटाती है, कर्मबंध करवाती है-2
निरपेक्ष भाव हो-3 नहिं बंध कराये रे-SS॥860॥

(236) वस्त्र भाण्ड गर रमण रखे, परिग्रही वह साधु रहे-2
ऐसा आगम यहाँ कहे-SS
वो आरंभ रहित कैसे? आलंबन बिन हो कैसे?-2
श्रामण्य उसमें हो-3 कैसे रह पाये रे-SS॥861॥

(237) खण्ड वस्त्र या कंबल हो, अन्य वस्तु रक्षा की हो-2
श्रमण ग्रहण कर रहता हो-SSS
आरंभी हो जाये वो, चित्त कलुष भी करता वो-2
उसका साधूपन हो-3 दूषित हो जाये रे-SS॥862॥

(238) खण्डवस्त्र और पात्र यहाँ, फटकारे और धोए यहाँ-2
यत्न से उसे सुखाए यहाँ-SSS
चोर आदि से बचता वो, उसकी रक्षा करता वो-2
उसकी चिंता भी हो-3 मन क्षोभ कराये रे-SS॥863॥

(239) करे श्रमण कर्तव्य यहाँ, असंयमी मन रहे यहाँ-2
मूर्च्छारंभ विचार यहाँ-SS
उसे विशुद्धि कैसे हो, आत्म सिद्धि भी कैसे हो-2
पर द्रव्य भावों की हो-3 वह शुद्धि मिटाये रे-SS॥864॥

(240) श्रमण जिसे भी ग्रहण करे, अथवा उसको त्याग करे-2
संयम में नहिं दोष लगे-SSS
उसको लेकर श्रमण यहाँ, काल, क्षेत्र मय वृत्ति करे-2
ऐसी निर्दोष हो-3 चर्या अपनाये रे-SS॥865॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(241) आगम में अग्राह्य है जो, असंयमी चाहें नहिं वो-2
मूर्च्छा पैदा करे न जो-SSS
अल्प रूप में ग्रहण करे, श्रमण न अपनी उसे कहे-2
ऐसी ही चर्या हो-3 मन शुद्ध बनाये रे-SS॥866॥

(242) पुनर्जनम नहिं चाह करे, देह से ममता भाव तजे-2
निस्पृह होकर यहाँ रहे-SSS
परमाणु नहिं मेरा है, तन कैसे फिर मेरा है?-2
ऐसा अवगाहे हो-3 श्रमणत्व वो पाये रे-SS॥867॥

(243) इस भव की इच्छा नहिं हो, परभव की न अपेक्षा हो-2
व्रत किस कारण यहाँ अहो-SSS
क्या स्त्री क्या पुरुष यहाँ, चाह सभी जब मिटी जहाँ-2
प्रश्न किया ये हो-3 अब उत्तर आये रे-SS॥868॥

(244) स्त्री रूप में जन्म है तो, पुरुष कभी नहिं होती वो-2
नियम से स्त्री मुक्त न हो-SS
स्त्री का प्रतिरूप है लिंग, कहते जिसे आर्यिका हम-2
मुनिवर, आर्यिका हो-3 द्वय लिंग बताएँ रे-SS॥869॥

(245) स्त्री रहें प्रमादमयी, प्रमदा उसको यहाँ कही-2
अंतरंग से मायावी-SSS
प्रवृत्तियों में प्रमाद हो, तो फिर हिंसा रहे अहो-2
तब ही निर्मलता हो-3 मन में नहिं पायें रे-SS॥870॥

(246) मन में मोह प्रमाद रहे, भय और ग्लानि सदा रहे-2
मायाचारी खूब रहे-SSS
चित्त शुद्धि नहिं कभी रहे, निर्विकल्पता नहीं रहे-2
स्त्री, निर्वाण हो-3 को कभी न पाये रे-SS॥871॥

(247) इतने दोष बताएँ हैं, नारी में दिखलाए है-2
दोष बिना नारी नहिं है-SS
तन इनका वीभत्स यहाँ, ढका हुआ तन रखें यहाँ-2
ढकना जरूरी हो-3 जिनदेव बताएँ रे-SS॥872॥

(248) चित्त चपल नित यहाँ रहे, रज स्खलन हो शिथिल रहे-2
सूक्ष्म मनुज उत्पाद रहे-SSS
पूर्ण नहीं चारित्र रहे, स्त्री में सब सहज रहें-2
तब ही स्त्री को हो-3 नहिं मोक्ष बताएँ रे-SS॥873॥

(249) स्त्री योनि में नाभि में, स्तनों के बीच में-2
सूक्ष्म मनुष्य हैं काँख में-SSS
स्त्री में बाहुल्य यहाँ, संयम कैसे उसे यहाँ?-2
कहते हैं ऋषिजन हो-3 जो समझ में आये रे-SS॥874॥

(250) स्त्री दर्शन से शुद्ध यहाँ, सूत्र अध्ययन से युक्त यहाँ-2
घोर तपस्या युक्त यहाँ-SSS
सकल निर्जरा नहिं होवे, शुद्ध ध्यान ही नहिं होवे-2
संयम धरकर भी हो-3 नहिं मुक्ति पाये रे-SS॥875॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(251) सवस्त्र स्त्रीलिंग यहाँ, उनसा ही प्रतिरूप यहाँ–2
योग्य करे आचरण यहाँ–SSS
कुल, वय, रूप देख करके, श्रमणी का आचरण यहाँ–2
अपने अनुकूल हो–3 व्रत–संयम धारे रे–SS॥876॥

(252) रोग रहित तप शक्ति हो, सुंदर, वयस्क गुणयुत् हो–2
दोष रहित वह प्रशस्त हो–SSS
वह निर्ग्रन्थ लिंग धारे, क्षमता समता को धारे–2
ऐसा करने से हो–3 भव मुक्ति न पाये रे–SS॥877॥

(253) रत्नत्रय का नाश यहाँ, समझो वही विनाश यहाँ–2
कहते हैं जिनदेव यहाँ–SSS
सल्लेखना न कर पाये, मरण समाधि न कर पाये–2
मन में स्थिरता हो–3 वो कभी न पाये रे–SS॥878॥

(254) रूप दिगम्बर शुद्ध यहाँ, यही उपकरण कहा यहाँ–2
समझो ये जिनमार्ग यहाँ–SS
गुरु के वचन, सूत्र अध्ययन, विनय भी है उपकरण यहाँ–2
ये ही उपकारी हो–3 सबको बतलाएँ रे–SS॥879॥

(255) यहाँ अपेक्षा नहीं करे, भविष्य की नहिं चाह करे–2
उचित अहार विहार करे–SSS
श्रमण कषाय रहित होवे, सभी प्रमाद रहित होवे–2
तब ही संयम का हो–3 आनंद वो पाये रे–SS॥880॥

(256) चार कषायें रहें यहाँ, विकथायें हों चार यहाँ52
पाँच इन्द्रिय के विषय यहाँ–SSS
निंद्रा और स्नेह धरे, पन्द्रह यहाँ प्रमाद करे–2
ये ही प्रमाद हो–3 सुख कम कर जायें रे–SS॥881॥

(257) निराहार निरहंकारी, अविकारी है अविचारी–2
ऐसे हों दीक्षा धारी–SSS
करें आहार विहार यहाँ, फिर भी हैं वो अनाहारी–2
अविहारी बनकर हो–3 सब पाप हटायें रे–SS॥882॥

(258) श्रमण देह में रहता है, देह न अपनी कहता है–2
मोह भाव को तजता है–SSS
देह से तप को करता वो, शक्ति नहीं छिपाता वो–2
तन में निर्ममता हो–3 श्रमणत्व दिखाये रे–SS॥883॥

(259) माँस की डली कच्ची हो, पकी हो या पक रही हो–2
किसी जीव का माँस वो हो–SS
उसी जाति के जीवों की, उत्पत्ति होती रहती–2
त्रस हों सब जीव हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS॥884॥

(260) मुनि भोजन इक बार करे, ऊनोदर रस त्याग करे–2
भिक्षा चर्या यहाँ धरें–SSS
माँस मधु से वर्जित हो, ऐसा वो आहार करे–2
आसक्ति भोजन हो–3 में कभी न लाए रे–SS॥885॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-SS

(261) माँस यहाँ पर लाता है, कच्चा पक्का खाता है-2
भारी पाप कमाता है-SS
जीव करोड़ों घात करे, महादण्ड मय पाप करे-2
उसके जीवन में हो-3 दुख घोर बताएँ रे-SS॥886॥

(262) कर में भोजन शुद्ध आये, किसी को नहीं दिया जाये-2
दे, तो अंतराय आये-SSS
देकर भी आहार करे, वह प्रायश्चित यहाँ करे-2
ऐसी विधि गुरुवर हो-3 हमको बतलाएँ रे-SS॥887॥

(263) श्रमण शुद्ध या बालक हो, थका हुआ या रोगी हो-2
दुखी हो खेद खिन्न भी हो-SSS
यूँ अपने कर्तव्य करे, मूलगुणों का छेद न हो-2
नवदीक्षित साधु हो-3 ये भाव बनाए रे-SS॥888॥

(264) श्रमण, काल श्रमशक्ति को, जाने फिर अपनाये वो-2
व्रत, उपवास यहाँ पर जो-SS
ऐसा वह आचरण करे, कम से कम सावद्य रहे-2
तब ही साधूपन हो-3 का सार दिखाए रे-SS॥889॥

(265) पदार्थ का निश्चय होगा, चित्त तभी एकाग्र होगा-2
ध्यान तभी निज में होगा-SSS
निश्चय, आगम ज्ञान करे, तब ही श्रेष्ठ प्रवृत्ति बने-2
उद्यम जो लाये हो-3 वो ज्ञान बढ़ाए रे-SS॥890॥

(266) जिसको आगम ज्ञान नहीं, स्व-पर भेद विज्ञान नहीं-2
होता है वो श्रमण नहीं-SSS
स्व-पर पदार्थ नहीं जाने, वो आतम क्या पहिचाने?-2
बाहर से साधु हो-3 का भेष दिखाये रे-SS॥891॥

(267) सभी जीव आँखों वाले, देव हैं अवधि नेत्र वाले-2
रमण चक्षु आगम वाले-SSS
हैं अर्हंत व सिद्ध प्रभु, सर्व आत्म चक्षु वाले-2
क्षायिक हो ज्ञान हो-3 सर्वांग बताएँ रे-SS॥892॥

(268) गुण पर्याय विचित्र यहाँ, आगम से सब सिद्ध यहाँ-2
श्रमण जानते सभी यहाँ-SS
लिखा हुआ लख लेते हैं, निश्चय वो कर लेते हैं-2
खण्डन नहिं जिसका हो-3 वो श्रुत कहलाए रे-SS॥893॥

(269) पंचमकाल में दृष्टि यहाँ, करे न आगम ज्ञान यहाँ-2
करे नहीं अनुसरण यहाँ-SS
उसको संयम नहिं होता, श्रमण कभी नहिं वो होता-2
सम्यक् बिन भेष हो-3 बस भार दिखाये रे-SS॥894॥

(270) तत्त्वों में श्रद्धान न हो, तो आगम से सिद्धि न हो-2
चाहे कितने मंत्र जपो-SSS
श्रद्धायुत् संयम होगा, तब ही मोक्ष मार्ग होगा-2
इसके बिन मुक्ति हो-3 वो कभी न पाये रे-SS॥895॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(271) अज्ञानी भव कोटि धरे, मुनि बन तप भी खूब धरे–2
कर्म यहाँ जो क्षरण करे–SS
ज्ञानी उतने कर्म यहाँ, श्वांस मात्र में क्षरण करे–2
ज्ञान की महिमा हो–3 जिनदेव बताएँ रे–SS॥896॥

(272) इन्द्रिय तन के विषयों में, मूर्च्छा अणु सम हो उनमें–2
पूर्ण ज्ञान भी हो उसमे–SS
कभी न उसको सिद्धि हो, चाहे कितना बुद्ध भी हो–2
मूर्च्छा से सिद्धि हो–3 खुद ही रुक जाये रे–SS॥897॥

(273) त्याग भाव जीवन में हो, अनारंभ भावों में हो–2
विरागता विषयों से हो–SSS
कषाय मन में नहीं रहें, उसको संयम यहाँ कहें–2
दीक्षा होने पर हो–3 ये सब नजरायें रे–SS॥898॥

(274) पंच समिति त्रय गुप्ति हों, पंचेन्द्रिय का निग्रह हो–2
कषायों को भी जीता हो–SSS
दर्श ज्ञान से पूर्ण है जो, उसमें ही ये संयम हो–2
संयम प्राणी के हो–3 भव दुक्ख मिटाये रे–SS॥899॥

(275) शत्रु में और मित्रों में, सुख में और सभी दुख में–2
निंदा और प्रशंसा में–SSS
जन्म–मरण, मृत सोने में, समता भाव रहे सब में–2
तब ही साधूपन हो–3 हमको नजराए रे–SS॥900॥

(276) दर्शन–ज्ञान चरित्र यहाँ, होता उद्यत श्रमण यहाँ–2
मन उसका एकाग्र यहाँ–SS
उसमें हो श्रामण्य यहाँ, परम धरम में रमण यहाँ–2
साधू को हो सब हो–3 निज दर्श कराएँ रे–SS॥901॥

(277) मोही रागी द्वेषी हो, पर द्रव्यों के आश्रित हो–2
कषाय से उद्वेलित हो–SSS
अज्ञानी वो श्रमण यहाँ, कर्मबंध नित करे यहाँ–2
साधूपन उसमें हो–3 नहिं रंच दिखाए रे–SS॥902॥

(278) पदार्थ में नहिं मोहित हो, ना रागी नहिं द्वेषी हो–2
वीतरागमय भेषी हो–SSS
वही श्रमण दृढ़ ध्यान धरे, कर्म निर्जरा यहाँ करे–2
इक दिन वह सारे हो–3 ही कर्म मिटाये रे–SS॥903॥

(279) सूत्र पदों को जाने जो, बहुत अधिक तप करता जो–2
शमन अधिक भी करता जो–SSS
श्रमण करे लौकिक संगत, मिट जाता उसका संयत–2
श्रमणों को लौकिक हो–3 संगत न सुहाये रे–SS॥904॥

(280) मुनि बन संयम यहाँ लिया, मुनि बन लौकिक कार्य किया–2
उसमें मुनि पन कहाँ रहा–SSS
बाहर से वो मुनि दिखे, भीतर मुनीम रूप दीखे–2
दीक्षित होकर भी हो–3 मुनि नहिं कहलाए रे–SS॥905॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(281) देशव्रती और महाव्रती, फल की चाह न करे यति–2
दयाभाव नित धरे यति–SS
धर्म अहिंसा अपनाओ, शुद्ध भाव मन में लाओ–2
शुभमय उपयोग हो–3 में लगन लगाओ रे–SS॥906॥

(282) भूखा प्यासा देख यहाँ, दुखित भाव जो करे यहाँ–2
दया भाव को धरे यहाँ–SS
सबका दुख अपना समझे, अनुकंपा ये कहें यहाँ52
उसमे ही धर्म हो–3 के अंश दिखाएँ रे–SS॥907॥

(283) रोगी, वृद्ध हों श्रमण यहाँ, बाल, युवा हों श्रमण यहाँ–2
वैयावृत्ति करें यहाँ–SS
वैयावृत्ति हेतु करें, लौकिक जन से बात यहाँ–2
तो भी यह कार्य हो–3 नहिं निंद्य बताएँ रे–SS॥908॥

(284) शुभोपयोग से युक्त श्रमण, शुद्धोपयोगी कोई श्रमण–2
आस्रव रहित सहित मुनि गण–SSS
विशुद्ध शुद्धोपयोग यहाँ, शुद्ध है शुभोपयोग यहाँ–2
दोनों से मन में हो–3 निर्मलता आये रे–SS॥909॥

(285) परमेष्ठी की भक्ति करे, आगम का अनुसरण करे–2
श्रमणों में वात्सल्य धरे–SS
शुभोपयोगी चर्या हो, काय वचन मन भी शुभ हो–2
तब ही जीवन में हो–3 कुछ धर्म दिखाए रे–SS॥910॥

(286) नमस्कार वंदन करना, गुरुओं के पीछे चलना–2
श्रम को दूर यहाँ करना–SSS
उठकर यहाँ खड़ा होना, साधू की सेवा करना–2
श्रमणों में ये सब हो–3 नहिं निंद्य बताएँ रे–SS॥911॥

(287) रत्नत्रय उपदेश करें, शिष्यों को जो ग्रहण करें–2
संयम से अनुराग करें–SS
योग्य बनाएँ शिष्यों को, प्रशस्त चर्या यहाँ करें–2
जिनवर की पूजा हो–3 सब सराग गायें रे–SS॥912॥

(288) चार तरह का संघ रहे, उनका जो उपकार करे–2
जीव हिंसा से रहित करे–SSS
ऐसे वो आचार्य यहाँ, सराग चर्या धरें यहाँ–2
श्रमणों में भी जो हो–3 मुनि श्रेष्ठ कहायें रे–SS॥913॥

(289) वैयावृत्ति श्रमण करे, जीवों को जो दुखी करे–2
मुनि पद उसमें कहाँ रहे–SSS
श्रावक ऐसा काम करे, जिसमें हिंसा जीव अरे–2
मुनि की सेवा में हो–3 हिंसा नहिं आये रे–SS॥914॥

(290) क्षुधा, तृषा से पीड़ित हो, श्रम से थका हुआ सा हो–2
अथवा रोग से दुःखित हो–SSS
ऐसा श्रमण दिखाई दे, सेवा उसकी खूब करे–2
साधू की सेवा हो–3 नीरोग बनाए रे–SS॥915॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(291) वैयावृत्ति करे यहाँ, प्रशस्त चर्या करे यहाँ–2
श्रमणों में ये रहे यहाँ–SSS
श्रावक में ये मुख्य रहे, श्रमणों में गुण रूप रहे–2
स्वर्ग, अपवर्ग हो–3 का सुख दिलवाये रे–SS॥916॥

(292) राग प्रशस्त जो होता है, कई रूप में फलता है–2
सबका फल शुभ मिलता है–2
कर्म अनेक यहाँ होते, अनेक फल उनके होते–2
धर्मी का प्रेम हो–3 नित धर्म बढ़ाए रे–SS॥917॥

(293) अल्पज्ञों की बात धरे, ध्यान–दान, व्रत यहाँ करे–2
स्वर्ग सुखों को प्राप्त करे–SS
केवली जैसा ध्यान करे, उससे उसको मोक्ष मिले–2
पुण्य मिल जाये हो–3 तो मोक्ष भी पाये रे–SS॥918॥

(294) नहिं जाने परमार्थ यहाँ, प्रचुर कषायें धरे यहाँ–2
उनकी सेवा करे यहाँ–SS
प्रीतिपूर्व दानादि करे, कुदेव–मानुष प्राप्त करे–2
पात्र हो जैसा हो–3 वो ही फल पाये रे–SS॥919॥

(295) त्यागी, समता भावी हो, ज्ञानी, गुण अनुरागी हो–2
मोक्षमार्ग का राही हो–SS
धर्मी से नित प्रेम करे, प्रभु भक्ति में नित्य रमें–2
ऐसे श्रमण को हो–3 शिव हेतु बताएँ रे–SS॥920॥

(296) मन में विषय कषाय धरें, उनको कैसे श्रमण कहें–2
इनको सब ही पाप कहें–SS
इनकी सेवा करने से, कैसे कोई यहाँ तिरें–2
डूबे ये खुद ही हो–3 ये किसे तिरायें रे–SS॥921॥

(297) श्रमण यहाँ कुछ ग्रहण करें, या फिर कुछ भी त्याग करें–2
विषय कषाय न कभी बढ़ें–SS
ऐसी श्रमण प्रवृत्ति करें, क्षेत्र काल का ध्यान धरें–2
साधू से धर्म हो–3 जीवित रह पाये रे–SS॥922॥

(298) छोड़ा अशुभ उपयोग यहाँ, धारा शुभ उपयोग यहाँ–2
या फिर शुद्ध उपयोग यहाँ–SS
यही श्रमण भव तिरते हैं, सबको यहाँ तिराते हैं–2
उनकी सेवा से हो–3 कल्याण हो जाये रे–SS॥923॥

(299) उत्तम मुनि मिल जायें गर, करो नमन उनको लखकर–2
उनका दर्शन है सुखकर–SS
गुण से व्यक्ति विशेष बने, गुणधारी ही पूज्य बने–2
उनका सत्कार हो–3 संसार मिटाये रे–SS॥924॥

(300) मुनि को देख खड़े होना, अंजलि धर प्रणाम करना–2
उपासना उर से करना–SSS
सेवा वैयावृत्ति करें, प्रशंसकाय के वचन कहें–2
ऐसी विनय ही हो–3 गुण शक्ति दिलाए रे–SS॥925॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे–2
निज शुद्धातम से हो–3 पर दूर हटाएँ रे–SS

(301) सूत्र, अर्थके ज्ञानी हैं, संयम तपमय ध्यानी हैं–2
विद्या के पारगामी हैं–SSS
श्रमण यहाँ सत्कार करे, झुककर उनकी विनय करे–2
वंदन पूजन के हो–3 वे योग्य बताएँ रे–SS॥926॥

(302) संयम, तप, श्रुतज्ञान धरे, मौनी बनकर ध्यान करे–2
प्रवचन अच्छे खूब करे–SSS
आत्म तत्त्व श्रद्धान न हो, उसको श्रमण न कभी कहो–2
आगम का अनुभव हो–3 श्रमणत्व बढ़ाए रे–SS॥927॥

(303) अधिक गुणी हो श्रमण यहाँ, उनकी विनय न करे यहाँ–2
गुणी करें मम विनय यहाँ–2
हीन गुणी ये भाव करे, दीर्घ भ्रमण है यहाँ उसे–2
मैं भी तो मुनि हूँ हो–3 ये तर्क बताए रे–SS॥928॥

(304) अधिक गुणी मुनि रहें यहाँ, हीन गुणी के साथ यहाँ–2
करें प्रवृत्ति साथ यहाँ–SS
भग्न चरित्र से युक्त हुए, दोनों असमय भाव हुए–2
दोनों मिथ्यात्व हो–3 से मोह बढ़ाएँ रे–SS॥929॥

(305) समान गुण के धारक जो, या हों श्रमण गुणाधिक जो–2
संग करे ऐसे मुनि जो–SS
गर भव से मुक्ति पाना, जीवन में गुण को पाना–2
तब ही दुनियाँ में हो–3 दुख दूर हो पाएँ रे–SS॥930॥

(306) आगम के अनुसार चले, फिर भी उनसे द्वेष रखे–2
विनय न कर, अपवाद करे–SS
ऐसा साधु श्रमण नहीं, उसमें है चारित्र नहीं–2
इनकी संगति से हो–3 व्रत संयम जाये रे–SS॥931॥

(307) अन्य अर्थ जो ग्रहण करें, उसको ही आगम समझें–2
ऐसा निश्चय किये रहें–SS
बहुत दुखों के फल पायें, भव में ही वो भरमायें–2
काल अनंत हो–3 भव में दुख पायें रे–SS॥932॥

(308) मिथ्या नहिं आचरण करे, निश्चय यथार्थ रूप करे–2
आत्मानुभव प्रशांत करे–SS
कर्म निर्जरा यहाँ करे, पूर्ण यहाँ श्रामण्य धरे–2
ऐसे ही मुनिवर हो–3 जल्दी तिर जायें रे–SS॥933॥

(309) अंतर बाहर निसंग हों, तत्त्वों में जो निशंक हो–2
विषयों में आसक्त न हों–SSS
अंतर बाहर शुद्ध यहाँ, शुद्धोपयोग युक्त यहाँ–2
सब ही आस्रव से हो–3 वे रहित बताएँ रे–SS॥934॥

(310) शुद्ध भाव में श्रमण रहे, ज्ञान दर्श वो प्राप्त करे–2
वो पाता निर्वाण अरे–SSS
सारे कर्म मिटाता वो, शुद्ध सिद्ध पद पाता वो–2
सर्व सिद्धों को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–SS॥935॥

प्रवचन का गुरु सार यहाँ, सबको बतलाएँ रे-2
निज शुद्धातम से हो-3 पर दूर हटाएँ रे-ऽऽ

(311) श्रावक हो या श्रमण यहाँ, चारित से हो सहित यहाँ-2
जिन शासन से युक्त यहाँ-ऽऽऽ
वो सिद्धांत सार पाता, इक दिन मुक्ति महल जाता-2
प्रवचन का सार हो-3 निर्वाण बताएँ रे-ऽऽ॥936॥

उपसंहार

कुंदकुंद भगवान ने, लिखा है प्रवचन सार।
दर्शन ज्ञान चारित्र का, है सबको आधार॥

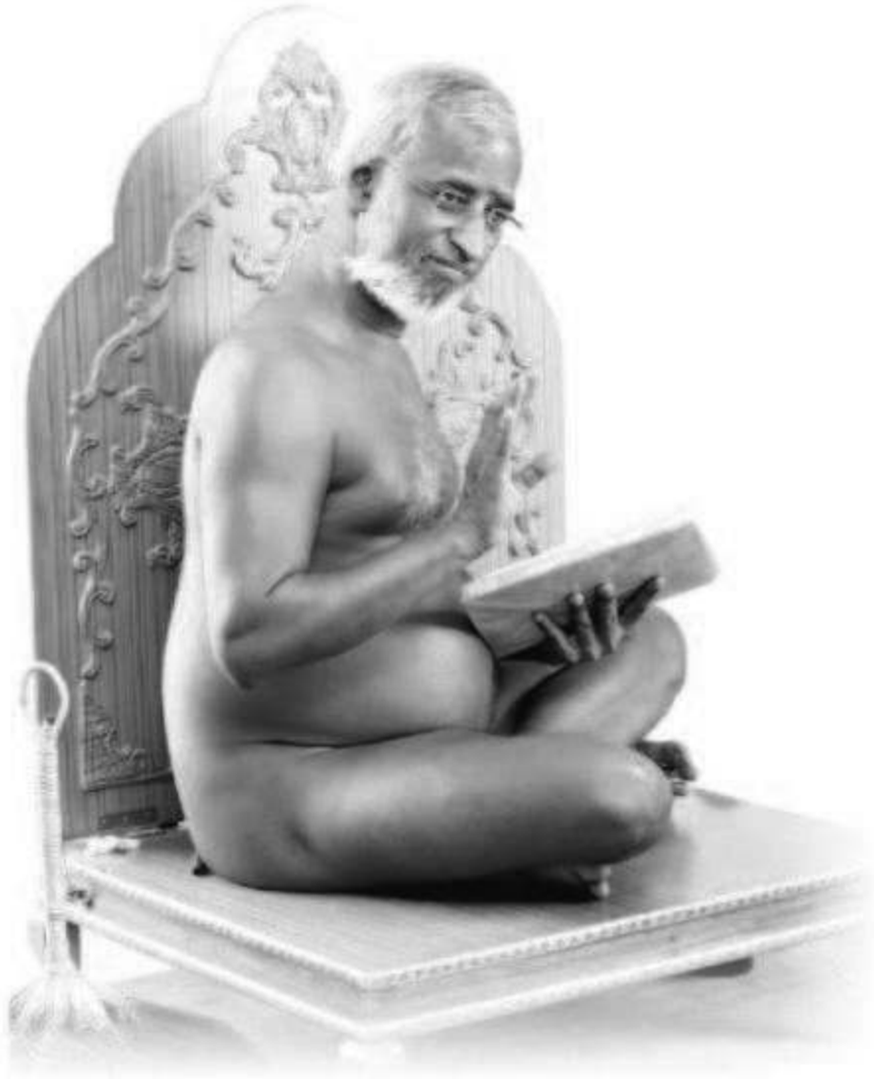

जीव

अजीव

आस्रव

बंध

संवर

निर्जरा

मोक्ष

तत्त्वसार

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य देवसेन

पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-SSS
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-SSS

मंगलाचरण

(1) आत्मध्यान की अग्नि से, अष्ट कर्म को नाश किये-2
निर्मल परम स्वभाव लिये-SSS
शुद्ध स्वरूपी सिद्ध सभी, प्रभु को नमस्कार करके-2
तत्त्वसार को हो-3 मैं कहना चाहूँ रे-SSS॥937॥

(2) धर्म प्रवर्तन करने को, भव्यों को समझाने को-2
तत्त्व प्रकाश कराने को-SSS
तत्त्व अनेक स्वरूप कहा, सरल भाष्य में व्यक्त किया-2
पूर्वाचार्यों ने हो-3 कई भेद बताए रे-SS॥938॥

(3) स्वगत तत्त्व है एक यहाँ, दूजा है परतत्त्व यहाँ-2
ऐसा जानो सभी यहाँ-SSS
स्वतत्त्व निज आतम जानो, परगत परमेष्ठी जानो-2
परमेष्ठी के गुण हो-3 निज में लख जाओ रे-SS॥939॥

(4) परमेष्ठी के वाचक हैं, बीजाक्षर हम उन्हें कहें-2
उन मंत्रों का ध्यान करें-SSS
इससे पुण्य बहुत आये, यही मोक्ष तक ले जाये-2
भव्यों को मंत्र हो-3 गुणकर बतलाएँ रे-SS॥940॥

(5) स्वगत तत्त्व द्वय भेद यहाँ, निर्विकल्प-सविकल्प यहाँ-2
विकल्प आस्रव युक्त यहाँ-SSS
निर्विकल्प संकल्प रहित, वही स्वगत आस्रव रहित-2
ऐसा जो जाने हो-3 वह ज्ञान बढ़ाए रे-SS॥941॥

(6) इन्द्रिय विषय विराम यहाँ, तब मन का विश्राम यहाँ-2
मिटते तभी विकल्प यहाँ-SSS
स्वगत तत्त्व जब आता है, निज आतम रम जाता है-2
आतम में ठहरें हो-3 आस्रव रुक जायें रे-SS॥942॥

(7) मन निश्चल हो जाता है, निर्विकल्पता पाता है-2
सभी विकल्प मिटाता है-SSS
मिटते सभी विकल्प जहाँ, होता शुद्ध स्वभाव वहाँ-2
स्थिरता आ जाती हो-3 तन्मयता पाये रे-SS॥943॥

(8) निश्चय शुद्ध स्वभाव जो है, वह तो शुद्ध आतम ही है-2
वह ही ज्ञान स्वभावी है-SSS
दर्श-ज्ञान-चारित्र मयी, शुद्ध चेतना रूपी है-2
शुद्ध स्वभाव हो-3 सिद्धत्व दिलाये रे-SS॥944॥

(9) निर्विकल्प है तत्त्व यहाँ, वही सार है समझ यहाँ-2
यही मोक्ष का हेतु यहाँ-SSS
शुद्ध तत्त्व का ज्ञान करो, होकर मुनि तुम ध्यान करो-2
जीवन का सार हो-3 तब समझ में आये रे-SS॥945॥

(10) अंतस् बाह्य परिग्रह को, मन वच तन से छोड़े जो-2
उसे कहें निर्ग्रन्थ अहो-SSS
जिनेन्द्र प्रभु का रूप यही, यही मुक्ति का मार्ग सही-2
निर्ग्रन्थ साधु हो-3 उत्तम बतलाएँ रे-SS॥946॥

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-sss
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-sss

(11) काल लब्धि जब पास आये, पुण्य उदय बढ़ता जाये-2
शुभ निमित्त मिलते जायें-sss
आर्यखण्ड संज्ञित्वपना, पंचेन्द्रिय पर्याप्ति पना-2
सद्गुरु उपदेश हो-3 ये पुण्य दिलाये रे-ss॥947॥

(12) लाभ अलाभ व सुख-दुख में, मित्रों में और शत्रु में-2
जीवन में और मृत्यु में-sss
समता भाव सदा रक्खे, बात ये योगी ही समझे-2
ध्यान करने में हो-3 सक्षम हो जाये रे-ss॥948॥

(13) बिना पैर के मेरु चढ़े, इच्छा ऐसी यहाँ करे-2
उसे सफलता नहीं मिले-sss
वैसे ध्यान बिना साधु, कर्म निर्जरा को चाहे-2
असफल यह सोच हो-3 दुख यहाँ बढ़ाए रे-ss॥949॥

(14) इन्द्रिय सुख की चाह रखें, विषयों में आसक्ति धरें-2
मुक्ति पथ से भ्रष्ट रहें-sss
शंकालु मन यहाँ करे, ऐसे ही ये बात कहें-2
ध्यान के योग्य हो-3 नहिं काल में गायें रे-ss॥950॥

(15) रत्नत्रय धारी यतिवर, आत्मध्यान को करें प्रखर-2
पाते स्वर्ग यहाँ आकर-sss
फिर मनुष्य उत्तम होकर, पा जाते हैं मुक्ति घर-2
आज भी ऐसे हो-3 मुनि हैं बतलाएँ रे-ss॥951॥

(16) शाश्वत सुख की चाहत है, पाने को दिल आहत है-2
राग-द्वेष ही बाधक है-sss
छोड़ इसे अभ्यास करो, शुद्धातम का ध्यान करो-2
ऐसा करने से हो-3 शाश्वत सुख पाये रे-ss॥952॥

(17) निश्चय से शुद्धात्म यहाँ, दर्शन ज्ञान प्रधान यहाँ-2
असंख्यात प्रदेशी यहाँ-sss
देह प्रभा, नहिं मूर्तिक है, ज्ञानस्वरूपी ज्ञायक है-2
ऐसा स्वभाव हो-3 निश्चय बतलाए रे-ss॥953॥

(18) राग विभाग भाव तजकर, बाह्य विकल्पों से हटकर-2
चित्त यहाँ एकाग्रित कर-sss
कर्म रहित शुद्धात्म लख, आत्मध्यान में खुद को रख-2
शुद्ध स्वरूपी हो-3 नित चिंतन लाओ रे-ss॥954॥

(19) क्रोध नहीं है मान नहीं, लोभ नहीं है शल्य नहीं-2
लेश्या, माया कोई नहीं-ss
जन्म जरा मृत रहित हूँ मैं, एक निरंजन शुद्ध हूँ मैं-2
निश्चय से ऐसा हो-3 आगम बतलाए रे-ss॥955॥

(20) संस्थान नहिं कला नहीं, मार्गणा का स्थान नहीं-2
जीव व गुण स्थान नहीं-sss
लब्धि व बंध स्थान नहीं, कोइ उदयस्थान नहीं-2
आतम निरंजन हो-3 गुणमय बतलाएँ रे-ss॥956॥

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-sss
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-sss

(21) कोई भी स्पर्श नहीं, रूप-गंध-रस शब्द नहीं-2
कर्म कालिमा कोई नहीं-sss
शुद्ध है चेतनभाव मयी, कर्म रहित है ज्ञानमयी-2
ऐसा चिंतन ही हो-3 अनुभव दिलवाए रे-ss॥957॥

(22) कर्म जनित सब पर्यायें, नोकर्मों की पर्यायें-2
जीव की हैं ये बतलाएँ-sss
भेद ये सब व्यवहार से हैं, निश्चय से ये नहीं रहें-2
जब हम जानेंगे हो-3 तब ही अपनाएँ रे-ss॥958॥

(23) कर्म स्वभाव यहाँ जानो, जीव स्वभाव यहाँ जानो-2
एकत्वपना भी पहचानो-sss
जीव कर्म का संबंध, दूध व जल के सम जानो-2
संश्लेष बंध हो-3 यह बात बताएँ रे-ss॥959॥

(24) बात तर्क से सिद्ध करें, दूध व जल का भेद कहें-2
ऐसा ज्ञानी पुरुष लखें-sss
ध्यान योग से योगी जन, जीव व पुद्गल भेद करें-2
तब ही योगी को हो-3 निज आत्म दिखाए रे-ss॥960॥

(25) पुद्गल जीव का भेद करें, कर्म जीव का भेद करें-2
अपना आत्म स्वरूप लखें-ss
सिद्ध स्वभाव यहाँ समझें, परम ब्रह्म को ग्रहण करें-2
भेद विज्ञान हो-3 उसको मिल जाये रे-ss॥961॥

(26) ज्ञानमयी, मलकर्म रहित, सिद्ध लोक में सौख्य सहित-2
सभी सिद्ध प्रभु ज्ञान सहित-sss
परम ब्रह्ममय आत्म यहाँ, देह में स्थित रहे यहाँ-2
वह ही परमातम हो-3 का ध्यान लगाये रे-ss॥962॥

(27) द्रव्यकर्म नोकर्म नहीं, राग-द्वेषमय भाव नहीं-2
अनंतगुणों से युक्त यहीं-sss
सिद्ध शुद्धमय नित्य हूँ मैं, निरालंब चैतन्य हूँ मैं-2
ऐसा ही चिंतन हो-3 गुण से भर जाये रे-ss॥963॥

(27) सिद्ध स्वरूपी शुद्ध हूँ मैं, तन प्रमाण हूँ नित्य हूँ मैं-2
गुण अनंत समृद्ध हूँ मैं-sss
मैं तो असंख्य प्रदेशी हूँ, निश्चय से अमूर्त मैं हूँ-2
ऐसा ही चिंतन हो-3 शुद्धात्म दिखाए रे-ss॥964॥

(29) मन के सब संकल्प रुकें, इन्द्रिय के व्यापार मिटें-2
तब ही सभी विकल्प हटें-ss
निज आतम का ध्यान करें, शुद्धातम तब प्रकट करें-2
ऐसे ही योगी हो-3 गुण ज्ञान समाएँ रे-ss॥965॥

(30) ज्यों ज्यों मन संचार रुके, इन्द्रिय विषय विकार रुके-2
पापमयी व्यवहार रुके-sss
त्यों त्यों शुद्ध स्वभाव मिले, आत्मस्वभावी रूप दिखे-2
जैसे आकाश हो-3 में सूर्य दिखाए रे-ss॥966॥

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-SSS
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-SSS

(31) योगी के त्रय योग यहाँ, निर्विकार हों जभी यहाँ-2
राग-द्वेष से रहित यहाँ-SSS
तब आतम निज रूप लखे, परमातम को प्राप्त करे-2
सारे ही कर्म हो-3 नहिं कुछ कर पायें रे-SS॥967॥

(32) तीन योग नहिं चंचल हों, कर्म बंध नहिं उसको हों-2
कर्म निर्जरा उसकी हो-SSS
बंधा हुआ जो कर्म यहाँ, उसका फल भी निष्फल हो-2
योगों को रोके हो-3 योगी कहलाए रे-SS॥968॥

(33) पर द्रव्यों में लगा है मन, खूब करे तप को धारण-2
मोक्ष नहीं पाता चेतन-SSS
शुद्ध भाव में लीन हो जब, पाता मोक्ष शीघ्र चेतन-2
शुद्ध स्वभाव हो-3 निर्वाण दिलाए रे-SS॥969॥

(34) देहादिक पर द्रव्य यहाँ, उनमें ममता रखे यहाँ-2
पर समयी व भव्य यहाँ-SS
जो भी रखे ममत्व यहाँ, उसे कर्म का बंध यहाँ-2
राग ही भव में हो-3 ममता बढ़वाये रे-SS॥970॥

(35) इन्द्रिय विषयासक्त यहाँ, अज्ञानी वह मूढ़ यहाँ-2
रुष्ट कभी संतुष्ट यहाँ-SSS
ज्ञानी रुष्ट नहीं होता, पर में तुष्ट नहीं होता-2
ज्ञानी विषयों से हो-3 आसक्ति हटाये रे-SS॥971॥

(36) दिखता वो चैतन्य रहित, नहीं दिखे चैतन्य सहित-2
मैं मध्यस्थ हूँ चाहूँ हित-SSS
किस पर मैं संतुष्ट रहूँ, किस किस पर मैं रुष्ट रहूँ-2
माध्यस्थ भाव हो-3 समता ले आये रे-SS॥972॥

(37) तीन भुवन में जीव यहाँ, सारे एक समान यहाँ-2
छोटा बड़ा न कोइ यहाँ-2
जो मध्यस्थ भाव रक्खे, रुष्ट न हो संतुष्ट यहाँ-2
ऐसा ही भाव हो-3 मन शांति दिलाए रे-SS॥973॥

(38) निश्चय से सब जीव यहाँ, जन्म मरण से रहित यहाँ-2
कहते हैं जिनदेव यहाँ-SSS
समान आत्मप्रदेशों से, गुण से ज्ञानस्वरूप यहाँ-2
निश्चय से सब ही हो-3 इक रूप कहाएँ रे-SS॥974॥

(39) दोनों नय से जाने जो, निज स्वभाव पहचाने वो-2
वस्तु स्वभाव को जाने वो-SSS
राग-द्वेष और मोह उसे, डंवाडोल नहिं करे उसे-2
उसको ही ज्ञान हो-3 अनुभव में आये रे-SSS॥975॥

(40) राग-द्वेष नहिं डिगा सके, जिसका मन नहिं हिला सके-2
डँवाडोल नहिं करा सके-SSS
वह निज तत्त्व देखता है, वही तत्त्व निज जान सके-2
इससे विपरीत हो-3 निज तत्त्व न पाये रे-SS॥976॥

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-sss
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-sss

(41) सरवर जल स्थिरता पाये, गिरा रत्न झट दिख जाये-2
त्यों ही बात समझ आये-sss
मन रूपी जल रुक जाये, निर्मल आतम नजराये-2
तब ही शुद्धातम हो-3 हमको मिल पाये रे-ss॥977॥

(42) विषय रहित हो जाने पर, निर्मल स्वभाव पाने पर-2
आत्म तत्त्व दिख जाने पर-sss
क्षण में ही उस योगी को, सिद्ध स्वरूपी अनुभव हो-2
शुद्धात्म द्रव्य हो-3 झट से लख जाये रे-ss॥978॥

(43) ज्ञान तत्त्व को छोड़ यहाँ, परगत सारे भाव यहाँ-2
उन्हें भाव से छोड़ यहाँ-sss
शुद्ध स्वभावी निज आतम, पाओ कहते हैं भगवन्-2
उसको पाने का हो-3 नित भाव बनाओ रे-ss॥979॥

(44) स्व-संवेदन करे यहाँ, चेतनादि गुण युक्त यहाँ-2
ध्याता वो शुद्धात्म यहाँ-sss
निर्मल रत्नत्रय पाता, वीतरागमय हो जाता-2
केवल्यज्ञान हो-3 वो इक दिन पाये रे-ss॥980॥

(45) योगी जब सचेत होता, शुद्ध भाव में स्थित होता-2
वही आत्मा को ध्याता-sss
उसको ही इस लोक यहाँ, दर्श ज्ञान चारित होता-2
आतम को ध्याये हो-3 रत्नत्रय पाये रे-ss॥981॥

(46) योगी ध्यान में स्थित हो, आत्मानुभव न करता हो-2
तो शुद्धात्म न पाता वो-sss
जैसे भाग्यहीन मानव, रत्नों को नहिं पाता हो-2
शुद्धातम अनुभव हो-3 ध्यानी ही पाये रे-ss॥982॥

(47) ध्यान यहाँ नित करता है, तत्त्व विचार न करता है-2
तन सुख में रत रहता है-sss
शुद्ध आत्म नहिं लख पाता, इसीलिए नहिं सुख पाता-2
आत्म स्वभाव हो-3 ज्ञानी ही पाये रे-ss॥983॥

(48) तन ये मूर्ख समान यहाँ, इसमें चेतन ज्ञान कहाँ-2
नाशवान तन जान यहाँ-sss
इसमें ममता करे यहाँ, वो बहिरातम रहे यहाँ-2
तन की सेवा में हो-3 अज्ञान लगाये रे-ss॥984॥

(49) देख देह की सड़न गलन, पतन जरा और जन्म-मरण-2
भव्य ध्यान करता आतम-sss
वही ज्ञान को पाता है, तन से मुक्त हो जाता है-2
वो ही शुद्धात्म हो-3 आतम में पाये रे-ss॥985॥

(50) तप से कर्म उदित होता, एक स्वयं ही उदित होता-2
फल दे करके नष्ट होता-sss
स्वयं उदय में आ जाता, उससे बहुत लाभ होता-2
इसमें कोई भी हो-3 संदेह न लाओ रे-ss॥986॥

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-sss
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-sss

(51) भव्य भगाता कर्म यहाँ, राग-द्वेष नहिं करे यहाँ-2
पूर्व कर्म वो नशे यहाँ-sss
नये कर्म नहिं बाँधे वो, जिसमें राग-द्वेष नहिं हो-2
ज्ञानी ही ऐसा हो-3 करके दिखलाए रे-ss॥987॥

(52) कर्मफलों को भोग रहा, अज्ञानी भव मोह रहा-2
भाव शुभाशुभ है कर रहा-sss
श्रमण कर्म को बाँध रहा, नहीं कर्म से छूट रहा-2
ऐसा जिनदेव हो-3 सबको बतलाएँ रे-ss॥988॥

(53) परमाणु सम राग यहाँ, छोड़ न पाये अगर यहाँ-2
मन से कोई श्रमण यहाँ-sss
भले सभी श्रुत ज्ञाता हो, कर्म से छूटे नहीं यहाँ-2
ऐसे ही लोग हो-3 अज्ञान दिखायें रे-ss॥989॥

(54) सुख दुख सब कुछ सहता है, ज्ञानी ज्ञान में रहता है-2
ध्यान में दृढ़ वह होता है-sss
तब तप कर्म निर्जरा के, लिये हेतु वह होता है-2
ऐसा गणधर प्रभु हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-ss॥990॥

(55) निज स्वभाव नहिं छोड़े जो, पर पदार्थ परिणति नहिं हो-2
आत्म मनन अनुभव में हो-sss
वही जीव निश्चय नय से, संवर निर्जरा रूप अहो-2
ऐसा ही साधु हो-3 निज कर्म खपाए रे-ss॥991॥

(56) अनुभव आत्म स्वभाव करे, पर भावों को यहाँ तजे-2
अपना निश्चल चित्त करे-sss
सम्यग्दर्शन ज्ञान उसे, सम्यक् चारित्र मिले उसे-2
ऐसा ही जान हो-3 शुभ भाव बनाओ रे-ss॥992॥

(57) निश्चय नय से जीव यहाँ, सिद्ध समां है शुद्ध यहाँ-2
वही आतमा ज्ञान यहाँ-sss
दर्शन-ज्ञान वही आतम, शुद्ध चेतनामय आतम-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 अनुभव करवाये रे-ss॥993॥

(58) राग-द्वेष मिट जाते हैं, तब आतम लख पाते हैं-2
शुद्धातम को पाते हैं-sss
आत्म योग की शक्ति से, आनंदित हो जाते हैं-2
ऐसा योगीगण हो-3 अनुभव में लाये रे-ss॥994॥

(59) जिससे आतम सुख नहिं हो, जिससे परमानंद न हो-2
जिसमें कोई शक्ति न हो-sss
ऐसे योग से करना क्या, जिसमें सुख का नाम न हो-2
आतम का सुख ही हो-3 सच्चा बतलाएँ रे-ss॥995॥

(60) योगी आसन योग्य धरे, आत्म तत्त्व का ध्यान करे-2
लेकिन मन ये चलित रहे-sss
उसे परम सुखदायी वह, परमानंद न कभी मिले-2
मन हो एकाग्र हो-3 तो ध्यान बढ़ाए रे-ss॥996॥

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-SSS
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-SSS

(61) सब विकल्प रुक जाने पर, मन स्थिर हो जाने पर-2
नित्य भाव आ जाने पर-SSS
आत्म स्वभाव उपजता है, यही मोक्ष ले चलता है-2
इस बिन कोई भी हो-3 नहिं शिवपुर पाये रे-SS॥997॥

(62) योगी आत्म स्वभावी हो, विषयों को नहिं जाने वो-2
कर्म भले ही उदय में हो-SSS
आत्म स्वभाव वो जान रहा, शुद्धातम वह देख रहा-2
उसको ही तत्त्व हो-3 अनुभव में आये रे-SS॥998॥

(63) शुद्ध तत्त्व मिल गया जिसे, उसे विषय विष समां लगे-2
राग-द्वेष नहिं विषय रमे-SSS
विषयों से निराश होकर, एकमेक निज आत्म रहे-2
ध्यान में रमकर हो-3 वह समाधि पाये रे-SS॥999॥

(64) पूर्ण मोह क्षय नहिं करता, तब तक भाव न मन मरता-2
भावों में जीता रहता-SSS
मोह नष्ट हो जाने पर, घाति कर्म त्रय नहिं रहता-2
तब ही कैवल्य हो-3 हो प्रकट बताएँ रे-SS॥1000॥

(65) मृत्यु नृप हो जाती है, सेना खुद मर जाती है-2
महिमा सब गल जाती है-SSS
मोही नृप पिट जाते हैं, घातिकर्म मिट जाते हैं-2
मोह घाति में हो-3 राजा बतलाएँ रे-SS॥1001

(66) घाति कर्म जब मिट जायें, केवलज्ञान प्रकट जाये-2
लोकालोक नजर आये-SSS
सारे द्रव्य पदार्थ यहाँ, तीनों काल नजर आयें-2
ऐसा यह ज्ञान हो-3 अतिशय बतलाएँ रे-SS॥1002॥

(67) तीन भुवन में पूज्य हैं जो, अर्हंत अवस्था में है वो-2
शेष कर्म क्षय करके वो-SSS
लोक के अग्रभाग जाकर, सिद्ध प्रभू हो गये प्रवर-2
कर्मों का क्षय कर हो-3 पद सिद्ध समाये रे-SS॥1003॥

(68) गमनागमन रहित हैं जो, हलन चलन से रहित हैं जो-2
अनंत सुख से सहित हैं जो-SSS
अष्ट गुणों से युक्त यहाँ, सभी सिद्ध परमात्म यहाँ-2
सब ही सिद्धों को हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-SS॥1004॥

(69) लोक और आलोक यहाँ, युगपत् क्रम से रहित यहाँ-2
सभी द्रव्य पर्याय यहाँ-SSS
सभी गुणों से युक्त यहाँ, मूर्त अमूर्त द्रव्य यहाँ-2
जाने और देखे हो-3 युगपत् बतलाएँ रे-SS॥1005॥

(70) धर्म द्रव्य नहिं रहे जहाँ, उसके आगे गमन कहाँ-2
कहते हैं जिनदेव यहाँ-SSS
लोक के अग्रभाग पर ही, रहते काल अनंत वहाँ-2
ऐसे सब सिद्ध हो-3 के गुण हम गायें रे-SS॥1006॥

तत्त्वसार यह ग्रंथ यहाँ सार बताये रे-sss
सार मिल जाये हो-3 तो सब मिल जाये रे-sss

(71) कर्म रहित जो जीव यहाँ, ऊर्ध्वगमन नित करे यहाँ-2
नीचे जाये नहीं यहाँ-sss
तिरछा आड़ा नहिं जाये, सीधा सिद्ध शिला जाये-2
ऊर्ध्वगमन तो हो-3 निज-भाव बताएँ रे-ss।।1007

(72) तन बिन सारे सिद्ध यहाँ, तन से कुछ कम रहें यहाँ-2
जन्म मरण तो नहीं यहाँ-sss
ज्ञायक भाव विराजित हैं अविनाशी गुण समकित हैं-2
सर्व सिद्धों को हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-ss।।1008।।

(73) जिसमें हो तल्लीन यहाँ, भयकारी भव उदधि यहाँ-2
उसको भी तिर गये यहाँ-sss
भव्यों को दें शरण यहाँ, स्व-पर तत्त्व नित वृद्धि यहाँ-2
उन सब सिद्धों को हो-3 वंदन कर जायें रे-ss।।1009।।

(74) देवसेन ने रचा यहाँ, तत्त्व सार यह ग्रंथ यहाँ-2
जिसकी महिमा अगम यहाँ-sss
सुनकर इसको भायेगा, शाश्वत सुख तू पायेगा-2
उसको हम वंदन हो-3 कर शीश झुकाएँ रे-ss।।1010।।

उपसंहार

तत्त्व जिसे मिलता यहाँ, सम्यग्दर्शन पाय।
सम्यग्ज्ञानी बन यहाँ, भवसागर तिर जाय।।
तत्त्व स्वयं ही सार है, वही वस्तु आधार।
सार यहाँ पाने सभी, होते हैं व्यापार।।
सार नहीं जाना यहाँ, तो मेहनत बेकार।
पुरुषारथ का फल यहाँ, कहें वस्तु का सार।।
सार मिले तो सब मिले, कहते है धीमान।
इसके बिन वैभव मिले, तो सब मिट्टी जान।।
सार मिले संसार में, जब सम्यक् मन लाय।
वर्ना इस संसार में, तू दुख ही दुख पाय।।
आत्म तत्त्व मिलता उसे, जिसे मिले भगवान्।
भगवन जब तक ना दिखे, होता है नहिं ज्ञान।।
दुनियाँ को जाने वही, जो जाने निज सार।
सार मिला जिसको यहाँ, वो भव से हो पार।।
तत्त्व आँख नहिं देखती, इसे देखता ज्ञान।
ज्ञान बिना नहिं तत्त्व का, होता नाम निशान।।
तत्त्व यहाँ अदृश्य है, आँख से नहिं दिख पाय।
आँख से जो दिखता नहीं, ज्ञान को वो दिख जाय।।
शब्दों में नहि तत्त्व है, तर्क तत्त्व आधार।
खुद से खुद में ही रहो, यही तत्त्व का सार।।

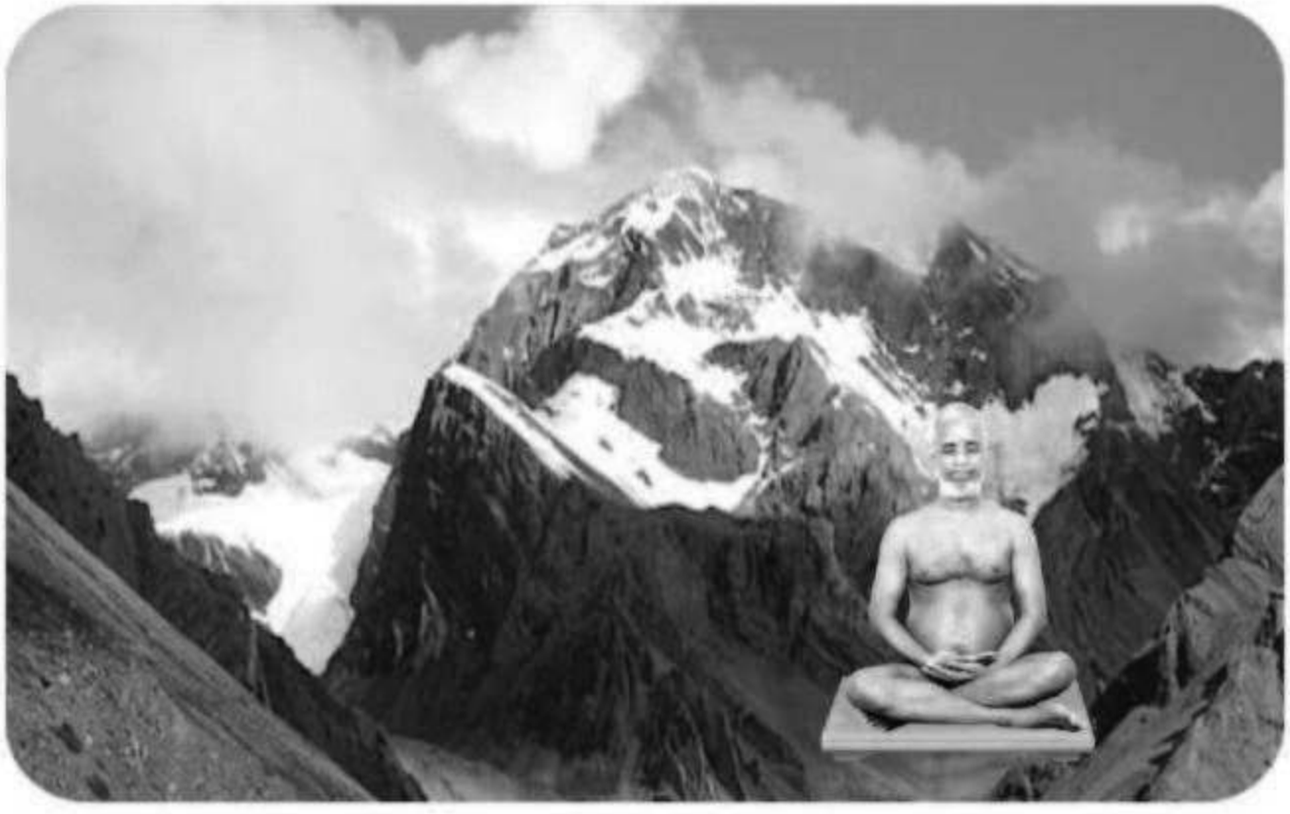

योगसार

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य योगीन्दु देव
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

मंगलाचरण

(1) कर्म मलों को भस्म किया, परमातम पद प्राप्त किया–2
ध्यान में खुद को लीन किया–SSS
वे अरहंत सिद्ध भगवन, भक्तिभाव से करूँ नमन–2
जिनके वंदन से हो–3 भव दुख मिट जाये रे–SS॥1011॥

(2) घाति कर्म को नष्ट किया, अनंत चतुष्टय प्राप्त किया–2
उन्हें यहाँ अरहंत कहा–SSS
उनके चरणों नमन करूँ, योगसार मय काव्य कहूँ–2
योगीन्दुदेव हो–3 खुश हो बतलाएँ रे–SS॥1012॥

(3) भव से जो भयवीत यहाँ, मोक्ष मिले ये चाह यहाँ–2
चलें मुक्ति की राह यहाँ–SSS
उनको हो नित संबोधन, हो एकाग्र करूँ लेखन–2
दोहों की रचना हो–3 दृढ़ योग बनाये रे–SS॥1013॥

(4) अनादि जीव व काल यहाँ, है अनंत संसार यहाँ–2
जिसमें दुख ही दुक्ख यहाँ–SSS
मिथ्यादर्शन से मोही, कभी न पायें सौख्य यहाँ–2
सम्यग्दर्शन ही हो–3 सद्राह दिखाए रे–SS॥1014॥

(5) चारों गति का भ्रमण यहाँ, करता है भयभीत यहाँ–2
बचना, तो पर त्याग यहाँ–SSS
निर्मल आतम ध्यान करो, जिससे शिवसुख प्राप्त करो–2
शुद्धातम के बिन हो–3 सुख रंच न पाये रे–SS॥1015॥

(6) बहिरातम अंतर आतम, और समझना परमातम–2
तीन भेदमय है आतम–SSS
बहि तज अंतर आत्म बनो, परमातम का ध्यान करो–2
भ्रांति मिटाकर हो–3 निज ध्यान लगाओ रे–SS॥1016॥

(7) मिथ्यादर्शन मोह करे, परमातम को नहिं समझे–2
उसको ही बहिरात्म कहें–SSS
जन्म मरण करता रहता, भव में परिभ्रमण करता–2
मिथ्यात्व त्यागे हो–3 भटकन मिट जाये रे–SS॥1017॥

(8) जो परमात्म समझता है, परभावों को तजता है–2
अंतरात्म वह होता है–SSS
त्याग वही भव करते हैं, जो संसार समझते हैं–2
ऐसे ही ज्ञानी हो–3 सब भ्रांति मिटायें रे–SS॥1018॥

(9) शुद्ध विष्णु जो निर्मल है, जिन शिव बुद्ध व निष्फल है–2
शिवमय शांत व उज्ज्वल है–SSS
उसको ही परमात्म कहें, इसमें कभी न भ्रांति करें–2
परमात्म भाव हो–3 तब समझ में आये रे–SS॥1019॥

(10) देह आदि पर वस्तु कहे, ये पदार्थ पर रूप लहे–2
मूर्ख इन्हें ही आत्म कहे–SSS
जिनप्रभु ने बहिरात्म कहे, फिर फिर भव में भ्रमण करे–2
बहिरात्म भव में, हो–3 नित भ्रमण बढ़ाएँ रे–SS॥1020॥

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(11) देह आदि पर वस्तु यहाँ, आत्म तत्त्व नहिं हुये यहाँ–2
ऐसा जान तू रहे यहाँ–SSS
आतम को आतम जानो, ज्ञान दर्श से पहचानो–2
तब ही परिणामों हो–3 में ज्ञान समाये रे–SS॥1021॥

(12) आतम को तू समझेगा, शिव सुख को तू पायेगा–2
शुद्धातम अपनायेगा–SSS
पर पदार्थ को आत्म कहें, आत्म स्वरूप न कभी लखें–2
तब ही आतम में हो–3 आतम नजराए रे–SS॥1022॥

(13) इच्छा रहित करे तप जो, और आतम को समझे वो–2
कर्म यहाँ क्षय करता वो–SSS
शीघ्र मुक्ति वह पायेगा, फिर भव में नहिं आयेगा–2
इच्छाएँ सबको हो–3 भव भ्रमण करायें रे–SS॥1023॥

(14) परिणामों से बंध यहाँ, परिणामों से मोक्ष यहाँ–2
परिणामों से धर्म यहाँ–SSS
ऐसा तू निश्चय कर ले, शुद्ध यहाँ परिणति कर ले–2
भाव ही भव में हो–3 सुख दुख दिलवाये रे–SS॥1024॥

(15) शुद्धातम नहिं जानेगा, धर्म पुण्य को मानेगा–2
उसको करता जायेगा–SSS
उत्तम सुख नहिं पायेगा, पुन: पुन: भ्रम जायेगा–2
आतम को जानो हो–3 सुख तभी दिखाये रे–SS॥1025॥

(16) निजानुभव नहिं हो पाये, आत्मदर्श कैसे पाये–2
कैसे मोक्ष यहाँ जाये–SSS
आत्म दर्श अनुभव में हो, यही मोक्ष कारण समझो–2
अनुभव ही मुक्ति हो–3 की राह दिखाए रे–SS॥1026॥

(17) गुणस्थान मार्गणा कहो, जीव समास प्राण समझो–2
ये सब ही व्यवहार अहो–SSS
निश्चय से सब आत्म समझ, सबमें आत्म स्वरूप अहो–2
जिससे परमेष्ठी हो–3 पद तू पा जाये रे–SS॥1027॥

(18) भले गृहस्थ बन रहते हैं, हेय अहेय समझते हैं–2
ध्यान निरंतर करते हैं–SSS
कर्तव्यों को प्रतिदिन कर, श्रद्धा हरदम करते हैं–2
शीघ्र वे भव में हो–3 मुक्ति पा जायें रे–SS॥1028॥

(19) जिनवर का चिंतन करो, उनका ही नित ध्यान करो–2
मन से शुद्ध स्मरण करो–SSS
जिनका क्षण भर ध्यान यहाँ, दिलवाता है मोक्ष यहाँ–2
ध्यान से कर्म हो–3 में मिट जाएँ रे–SS॥1029॥

(20) जिन प्रभु और शुद्धातम में, भेद न दिखता कोइ हमें–2
दोनों हमको एक लगें–SSS
ऐसा निश्चय से जानो, ध्यान में ऐसा पहचानो–2
तब ही शुद्धातम हो–3 का भाव समाए रे–SS॥1030॥

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(21) जैसे जिन भगवान यहाँ, वैसी है मेरी आतमा–2
निश्चय से ये समझ यहाँ–SSS
ये सिद्धांत सार समझो, हे योगी! माया छोड़ो–2
तब ही जीवन में हो–3 कुछ सार दिखाए रे–SS।।1031।।

(22) जैसा है परमात्म यहाँ, वैसी ही मैं हूँ आतमा–2
मैं हूँ वैसा परमातमा–SSS
ऐसा समझ के ध्यान करो, और न कोई विकल्प करो–2
तब ही शुद्धातम हो–3 अनुभव में आये रे–SS।।1032।।

(23) शुद्ध प्रदेश विचार करें, लोकाकाश प्रमाण कहें–2
निश्चय से ये बात कहें–SSS
उसे सदा आतम समझो, उसको ही तुम प्राप्त करो–2
जिससे जल्दी ही हो–3 मुक्ति मिल जाये रे–SS।।1033।।

(24) निश्चय नय से आत्म यहाँ, लोक बराबर जान यहाँ–2
तन प्रमाण व्यवहार यहाँ–SSS
ऐसा यहाँ समझता है, ज्ञानी वह ही बनता है–2
भव से जल्दी ही हो–3 वह पार हो जाओ रे–SS।।1034।।

(25) अनादिकाल से भटक रहा, चारों गति में अटक रहा–2
चौरासी लख भटक रहा–SSS
सम्यक नहिं गर पायेगा, अनंतकाल भटकायेगा–2
संदेह बिन ये हो–3 तू बात समझ ले रे–SS।।1035।।

(26) आत्म हमेशा शुद्ध यहाँ, नित्य, सचेतन बुद्ध यहाँ–2
केवलज्ञान स्वभाव यहाँ–SSS
मोक्ष की दिल में चाहत हो, तो ऐसा खुद को समझो–2
तब ही शुद्धातम हो–3 अंतस् नजराए रे–SS।।1036।।

(27) निर्मल आत्म स्वभाव यहाँ, करे न ऐसे भाव यहाँ–2
तब तक मोक्ष न मिले यहाँ–SSS
जैसा तुझको करना हो, वैसा ही तुम करो यहाँ–2
गुरुवर हम सबको हो–3 ऐसे समझाएँ रे–SS।।1037।।

(28) निश्चय नय वो आत्म कहे, जिसको हम भगवान कहें–2
लोक ध्येय भगवान रहें–SSS
इसमें भ्रांति न हमको हो, निज स्वभावमय भाव कहो–2
ऐसा ही जानो हो–3 तब ही लख पाये रे–SS।।1038।।

(29) शुद्ध भाव का ज्ञान नहीं, तो व्रत तप बेकार यहीं–2
ज्ञानी जन ये कहें यहीं–SSS
संयम व्रत तप मोक्ष न दें, तो ये जानो व्यर्थ यहीं–2
शुद्ध भावों का हो–3 तप मोक्ष दिलाए रे–SS।।1039।।

(30) व्रत संयम युत ज्ञान यहाँ, करे शुद्धातम भाव यहाँ–2
पहचाने शुद्धात्म यहाँ–SSS
फिर वह ध्यान लगाता है, शीघ्र सिद्धि वो पाता है–2
उसको उत्तम सुख हो–3 वैभव मिल जाये रे–SS।।1040।।

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(31) शुद्ध भाव का ज्ञान न हो, तो उसका कल्याण न हो–2
व्रत तप जप हैं व्यर्थ अहो–SSS
संयमशील भले कर लो, नहीं कार्यकारी ये हो–2
भावों का भव में हो–3 सब ही फल पायें रे–SS।।1041।।

(32) पुण्य से जीव स्वर्ग जाये, पाप नरक में ले जाये–2
कर्म जगत में भरमाये–SSS
दोनों तज आतम ध्याये, मोक्ष उसे ही मिल पाये–2
मोक्ष में आतम हो–3 आनंद मनाये रे–SS।।1042।।

(33) व्रत–तप–संयम–शील यहाँ, माने हैं व्यवहार यहाँ–2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ–SSS
मुक्ति का कारण शुद्धातम, यही लोक का सार यहाँ–2
सार जो पाये हो–3 संसार मिटाये रे–SS।।1043।।

(34) जो निज आतम को जाने, आत्मभाव से पहचाने–2
निश्चय से निज को माने–SSS
परभावों को त्यागे जो, निज में ही अनुरागे वो–2
उसको ही शिवपुर हो–3 का पद मिल जाये रे–SS।।1044।।

(35) सात तत्त्व छः द्रव्य यहाँ, नव पदार्थ को समझ यहाँ–2
जिनप्रभु ने जो कहे यहाँ–SSS
नय व्यवहार इन्हें कहता, कर प्रयत्न ये जान रहा–2
इनका अनुभव ही हो–3 नित ज्ञान बढ़ाए रे–SS।।1045।।

(36) जितने यहाँ पदार्थ दिखें, सभी अचेतन यहाँ कहें–2
चेतन केवल जीव कहें–SSS
सारभूत है जीव यहाँ, जिसे जान हो ज्ञान यहाँ–2
मुनिवर ये ज्ञान हो–3 भव से तिर जायें रे–SS।।1046।।

(37) त्याग करो व्यवहार यहाँ, निर्मल कर तू आत्म यहाँ–2
निश्चय में हो लीन यहाँ–SSS
तब ही आतम जानेगा, शुद्धातम तू मानेगा–2
शीघ्र इस भव से हो–3 तू पार हो जाए रे–SS।।1047।।

(38) जीव अजीव जानता जो, सब कुछ वही जानता वो–2
आत्म तत्त्व को माने वो–SSS
यही मोक्ष का कारण है, यह संसार निवारण है–2
ऐसा योगीजन हो–3 हरदम बतलाएँ रे–SS।।1048।।

(39) चाहे तू गर मोक्ष यहाँ, तो आतम को जान यहाँ–2
जिसमें केवलज्ञान यहाँ–SSS
शुद्ध स्वभावमयी आतम, उसको तू पहचान यहाँ–2
जैसा योगीजन हो–3 श्रुत में बतलाएँ रे–SS।।049।।

(40) समाधि पूजन कौन करे, मैत्री किससे कौन करे–2
कलह किसी से कौन करे–SSS
किससे बोले कौन कहे, स्पर्श करे वंचना करे–2
सब ही जगहों पर हो–3 इक आत्म दिखाए रे–SS।।1050।।

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(41) आकर जब तक जीव यहाँ, नहीं जानता आत्म यहाँ–2
भटके फिरे कुतीर्थ यहाँ–SSS
यहाँ धूर्तता करता है, राग–द्वेष में मरता है–2
जिन का ही ज्ञान हो–3 भव भ्रमण बचाए रे–SS॥1051॥

(42) तीर्थों में नहिं देव यहाँ, देवालय में देव कहाँ–2
केवलीश्रुत ये कहें यहाँ–SSS
देव तो देहालय में है, बात यही निश्चय से है–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥1052॥

(43) देहालय में देव रहे, मंदिर में सब ढूँढ रहे–2
इन लोगों से कौन कहे–SSS
सिद्ध हो गया कोइ यहाँ, भिक्षा को वह भ्रमण करे–2
ऐसे सुनकर के हो–3 हँसना आ जाये रे–SS॥1053॥

(44) देव नहीं देवालय में, पत्थर, लेप व चित्रों में–2
मूढी देव कहें उनमें–SSS
देहालय में देव रहें, बात ये तू निश्चित समझे–2
ऐसा जाने बिन हो–3 प्रभु मिल नहिं पाये रे–SS॥1054॥

(45) सभी यहाँ ये कहते हैं, देव हैं मंदिर तीरथ में–2
बात ये कैसे सही कहें–SSS
जाने देव जिनालय में, विरला पंडित उसे कहें–2
सच्चा ज्ञानी वह हो–सद्राह दिखाये रे–SS॥1055॥

(46) जरा मरण से डरता है, क्यों नहिं धर्म तू करता है–2
अधर्म में क्यूँ तू करता है–SSS
धर्म रसायन पान करो, अजर अमर हो यहाँ सको–2
जीवन का रस तब हो–3 अनुभव में आये रे–SS॥1056॥

(47) पढ़ लेने में धर्म नहीं, पुस्तक पिच्छी धर्म नहीं–2
मठ में रहना धर्म नहीं–SSS
केशलोच से धर्म न हो, पूजा से भी धर्म न हो–2
धर्म तो निर्मल हो–3 परिणति से आये रे–SS॥1057॥

(47) राग–द्वेष को यहाँ तजे, निज आतम में वास करे–2
ऐसा जिनवर यहाँ कहें–SSS
ऐसा धर्म समाता है, पंचमगति ले जाता है–2
धर्म बिना भवि हो–3 कभी मोक्ष न पाये रे–SS॥1058॥

(49) आयु घटे मन घटे नहीं, इच्छा आशा बढ़े यहीं–2
बढ़ता जाता मोह यहीं–SSS
हित आतम जो नहीं बढ़े, तो फिर भव में भ्रमण बढ़े–2
मोह प्राणी का हो–3 अज्ञान बढ़ाए रे–SS॥1059॥

(50) मन विषयों की चाह करे, विषयों का ही ध्यान करे–2
उसमें ही नित रमण करे–SSS
वैसे ही आतम चाहे, उसका ही नित ध्यान करे–2
तो फिर अतिशीघ्र हो–3 मुक्ति पा जाये रे–SS॥1060॥

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(51) कई छिद्रमय नरक यहाँ, वैसा ही तन समझ यहाँ–2
मलमूत्रादिक भरित यहाँ–SSS
इससे निर्मल आत्म वरो, शीघ्र भवोदधि पार करो–2
जीवन सार्थकता हो–3 तब ही नजराए रे–SS।।1061।।

(52) ज्ञानपने से अंधे हैं, जिनके गोरख धंधे हैं–2
सभी आचरण गंदे हैं–SSS
आतम का नहिं ज्ञान यहाँ, उनको नहिं निर्वाण यहाँ–2
ऐसा निश्चय से हो–3 जिनदेव बताएँ रे–SS।।1062।।

(53) शास्त्र बहुत पढ़ लिये यहाँ, निज स्वभाव नहिं ज्ञान यहाँ–2
जड़ बुद्धिमय रहे यहाँ–SSS
निश्चय से यह जाने जो, मोक्ष कभी नहिं पाते वो–2
शुद्ध स्वभाव हो–3 भव बंध मिटाये रे–SS।।1063।।

(54) मन इन्द्रिय से छुटकारा, दिलवाये श्रुत की धारा–2
ज्ञान दीप का उजियारा–SSS
राग–द्वेष जब रुक जाये, आत्म स्वभाव प्रकट जाये–2
ज्ञानी सहज से हो–3 सब कुछ पा जाये रे–SS।।1064।।

(55) जीव और पुद्गल भिन्न यहाँ, सब व्यवहार हैं भिन्न यहाँ–2
जीव है सबसे भिन्न यहाँ–SSS
पुद्गल छोड़ो जीव गहो, इस भव से तू पार हो–2
जीव को पाये हो–3 भव पार हो जाये रे–SS।।1065।।

(56) जीव को समझा नहीं यहाँ, पहचाना भी नहीं यहाँ–2
नहीं जानना हुआ यहाँ–SSS
यहाँ भ्रमेंगे जग सारा, नहीं मिलेगा छुटकारा–2
ऐसा जिनवर हो–3 सबको बतलाएँ रे–SS।।1066।।

(57) रत्न, दीप और सूर्य यहाँ, दही दूध पाषाण यहाँ–2
सोना चाँदी स्फटिक यहाँ–SSS
ये दृष्टांत समझना है, सत्य रूप को लखना है–2
आतम स्वभाव हो–3 ये द्रव्य बताएँ रे–SS।।1067।।

(58) जैसे है आकाश यहाँ, वैसी ही है आत्म यहाँ–2
शून्य रूप, चिद्रूप यहाँ–SSS
परम ब्रह्म वह पा लेता, केवलज्ञान प्रकाश यहाँ–2
ऐसे ही साधु हो–3 भव से तिर जायें रे–SS।।1068।।

(59) शुद्ध रूप आकाश यहाँ, वैसी ही है आत्म यहाँ–2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ–SSS
दोनों में अंतर इतना, एक है जड़ इक पुद्गलमय–2
अंतस् का भाव हो–3 चैतन्य दिखाये रे–SS।।1069।।

(60) नाक पे दृष्टि रख लेते है, अंतस् को वो लख लेते–2
फिर वे जन्म नहीं लेते–SSS
भव को नहिं धारण करते, वे भव पार यहाँ करते–2
माता का दूध हो–3 वो पान न करते रे–SS।।1070।।

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(61) मिथ्या मोह का त्याग करो, तन को अपना नहीं कहो–2
इस तन को जड़ ही समझो–SSS
सुंदर है निज आत्म यहाँ, कहते हैं परमात्म यहाँ–2
मोह प्राणी को हो–3 भव में भटकाये रे–SS॥1071॥

(62) जानें आतम से आतम, सारे फल पाते उत्तम–2
केवलज्ञान भी हो पावन–SSS
शाश्वत सुख पा जाता है, जो शुद्धातम ध्याता हो–2
आतम जाने बिन हो–3 सुख कहीं न पाये रे–SS॥1072॥

(63) परभावों का त्याग करें, निज आतम पहचान करें–2
निजात्म से मुनि ज्ञान करें–SSS
वे भव मुक्ति पाते हैं, केवलज्ञान सजाते हैं–2
त्याग का भाव हो–3 निज ज्ञान बढ़ाए रे–SS॥1073॥

(64) वे मुनिवर हैं धन्य यहाँ, परभावों को तजें यहाँ–2
निज स्वभाव में रमें यहाँ–SSS
उस आतम का ज्ञान जिन्हें, जिसमें सर्व प्रकाश यहाँ–2
उनकी महिमा को हो–3 सब लोग सुनायें रे–SS॥1074॥

(65) निज आतम में वास करे, श्रावक हो वा श्रमण रहे–2
ज्ञान उसी का यहाँ बढ़े–SSS
शीघ्र सिद्धि वो पाता है, जिन श्रुत यही बताता है–2
आतम का ज्ञान हो–3 हर काम बनाए रे–SS॥1075॥

(66) विरला तत्त्व समझता है, विरला उसको सुनता है–2
विरला उसको गुनता है–SSS
तत्त्व ध्यान विरले करते, धारण विरले ही करते–2
तत्त्व की महिमा हो–3 सब संत सुनाएँ रे–SS॥1076॥

(67) ये कुटुम्ब नहिं मेरा है, सुख–दुख का यह डेरा है–2
जिसमें घोर अंधेरा है–SSS
जो विचार ये लाते है, वे भव से तिर जाते हैं–2
ऐसे विचार हो–3 भव अंत कराएँ रे–SS॥1077॥

(68) इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र यहाँ, होते शरण न कोइ यहाँ–2
कहते हैं जिनदेव यहाँ–SSS
शरण रहित जग में माना, तब निज को निज से जाना–2
निश्चय से आतम हो–3 ही शरण बताएँ रे–SS॥1078॥

(69) जीव अकेला आता है, जीव अकेला जाता है–2
सुख–दुख एकल पाता है–SSS
नरक अकेला जाता है, मुक्ति अकेला पाता है–2
कोई कहीं भी हो–3 नहिं साथ में जाये रे–SS॥1079॥

(70) जब तू एकल रहे यहाँ, त्याग करो परभाव यहाँ–2
आत्मध्यान नित करो यहाँ–SSS
जिससे जल्दी ज्ञान मिले, शिव सुख तुझको जल्द मिले–2
तब ही जीवन में हो–3 सुख शांति दिखाए रे–SS॥1080॥

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(71) पाप को पाप सभी जानें, इसमें क्या विशेष मानें–2
पुण्य को पुण्य सभी मानें–SSS
ऐसा कोई विरला है, पुण्य को भी जो अघ माने–2
जग में वह इंसा हो–3 पंडित कहलाए रे–SS।।1081।।

(72) लोहे की सांकल–सांकल, सोने की सांकल, सांकल–2
दोनों को तू एक समझ–SSS
पुण्य पाप दोनों त्यागो, नहीं किसी में अनुरागो–2
निश्चय से वे ही हो–3 ज्ञानी कहलाएँ रे–SS।।1082।।

(73) मन के सारे ग्रंथ मिटे, मन तब ही निर्ग्रन्थ दिखे–2
तब ही आतम निर्ग्रन्थ अरे–SSS
जब तू है निर्ग्रन्थ यहाँ, मोक्षमार्ग का संत यहाँ–2
उसको इस भव में हो–3 मुक्ति मिल जाये रे–SS।।1083।।

(74) बड़ के तरु में बीज दिखे, त्यों उस बीज में वृक्ष रहे–2
ऐसा तर्क से सिद्ध अरे–SSS
वैसे ही इस देह में है, देव विराजित सिद्ध अरे–2
तीन भुवन में हो–3 जो मुख्य बताएँ रे–SS।।1084।।

(75) जैसे हैं जिनदेव यहाँ, वैसा भी मैं रहूँ यहाँ–2
भ्रांति छोड़ ये समझ यहाँ–2
मोक्ष हेतु नहिं मंत्र यहाँ, शुद्ध आत्म है तंत्र यहाँ–2
आतम का ध्यान हो–3 मुक्ति दिलवाये रे–SS।।1085।।

(76) दो, तीन गुण चार कहे, पाँच नौ कहे, सात कहे–2
छः पाँच और चार कहे–SSS
परमातम के लक्षण हैं, जिनका आगे वर्णन है–2
लक्षण का ध्यान हो–3 वह लक्ष्य दिखाये रे–SS।।1086।।

(77) सम्यग्दर्शन ज्ञान यहाँ, ये दो गुण वरदान यहाँ–2
राग–द्वेष कर त्याग यहाँ–SSS
दोनों गुण पा जाता है, मोक्ष उसे मिल जाता है–2
ऐसा जिनदेव हो–3 उपदेश सुनाएँ रे–SS।।1087।।

(78) सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चरित, राग–द्वेष और मोह रहित–2
तीन रत्न हैं ज्ञान सहित–SSS
रत्नत्रय गुण रहे जहाँ, शाश्वत सुख भी मिले वहाँ–2
ऐसा गणधर के हो–3 वाणी में आये रे–SS।।1088।।

(79) चार कषायें रहित हैं जो, संज्ञा यहाँ मिटाए जो–2
चार चतुष्टय पाये वो–SSS
उसको तू शुद्धात्म समझ, आत्म पवित्र भाव तू कर–2
इससे दुक्खों से, हो–3 मुक्ति मिल जाये रे–SS।।1089।।

(80) दस मुण्डन से रहित रहे, दस धर्मों से सहित रहे–2
दस गुणयुत् जो संत रहे–SSS
निश्चय से वह आत्म यहाँ, वंदनीय त्रयलोक यहाँ–2
ऐसी आतम ही हो–3 शाश्वत पद पाये रे–SS।।1090।।

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(81) दर्श–ज्ञान आतम समझो, चारित भी आतम समझो–2
इसे ही संयम शील कहो–SSS
तप और प्रत्याख्यान यहाँ, निश्चय आतम जान यहाँ–2
सर्वत्र आतम हो–3 के काम दिखाएँ रे–SS॥1091॥

(82) जिसने निज पर जान लिया, भ्रम को उसने मिटा दिया–2
पर का उसने त्याग किया–SSS
इसको ही सन्यास समझ, ऐसा ही जिनदेव कहा–2
जाने बिन सच्चा हो–3 नहिं त्याग हो पाये रे–SS॥1092॥

(83) रत्नत्रय से युक्त यहाँ, वो ही पावन तीर्थ यहाँ–2
मोक्ष का हेतु वही यहाँ–SSS
मंत्र मुक्ति के हेतु नहीं, रत्नत्रय है हेतु यहाँ–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाए रे–SS॥1093॥

(84) जिससे दिखे वो दर्शन है, निर्मल आतम ज्ञान है–2
ज्ञान ही गुण की खान है–SSS
भावना आत्म गुणों की हो, इसे कहा चारित्र अहो–2
तीनों ही मिलकर हो–3 शिवपुर दिलवाए रे–SS॥1094॥

(85) जहाँ आत्मा राजित हो, गुण सब वहीं शिवराज हो–2
केवलज्ञानी कहते यों–SSS
इसीलिए सब योगीजन, आतम या करते वेदन–2
वेदन करने से हो–3 सब गुण दिख जाये रे–SS॥1095॥

(86) इन्द्रिय विषय को त्याग करो, एकाकी बन जाप करो–2
मन–वच–तन की शुद्धि करो–SSS
फिर निज आतम जान यहाँ, शीघ्र मुक्ति तब मिले यहाँ–2
ऐसा कर जाये हो–3 वो मुक्ति पाये रे–SS॥1096॥

(87) बँधे हुए को मुक्त कहे, तो वह आगे और बँधे–2
निश्चय से यह बात कहे–SSS
सहज रूप में रमण करे, जल्दी ही वो मुक्ति वरे–2
बंध इस भव से हो–3 दुख दर्द बढ़ाए रे–SS॥1097॥

(88) सम्यग्दृष्टि जीव यहाँ, कुगति न पाये कभी यहाँ–2
कभी कदाचित् जाये यहाँ–SSS
तो नहिं वहाँ भटकता है, बल्कि कर्म क्षय करता हो–2
सम्यक् का इसमें हो–3 नहिं दोष बताएँ रे–SS॥1098॥

(89) सब व्यवहार यहाँ छोड़े, निज को आतम से जोड़े–2
शुद्धातम में मन मोड़े–SSS
सम्यग्दृष्टि जीव वही, पार होता भव शीघ्र वही–2
आतम स्वभाव हो–3 भव पार कराये रे–SS॥1099॥

(90) जिसमें है सम्यक्त्व यहाँ, समझो पंडित वही यहाँ–2
तीन लोक में श्रेष्ठ यहाँ–SSS
केवलज्ञान वही पाता, शाश्वत सुख में रम जाता–2
सम्यक् की महिमा हो–3 अतिशय बतलायें रे–SS॥1100॥

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(91) अजर अमर पद मिल जाये, आतम स्थिर हो जाये–2
कर्म बंध फिर नहिं पाये–SSS
पूर्व कर्म सब मिट जायें, गुण अनंत तब आ जायें–2
अपने में आतम हो–3 खुद ही रम जाये रे–SS॥1101॥

(92) कमल पंक जल में रहता, जल से लिप्त नहीं रहता–2
ऐसे ही ज्ञानी रहता–SSS
निज स्वभाव में रमता जो, कर्म लिप्त नहिं होता वो–2
ऐसे ही साधु हो–3 शिव पद पा जायें रे–SS॥1102॥

(93) शम और सुख में लीन यहाँ, जाने अपनी आत्म यहाँ–2
पंडित वो इंसान यहाँ–SSS
सभी कर्म को क्षय करके, पाता है निर्वाण यहाँ–2
कर्म मिटाये हो–3 जो राग न लाए रे–SS॥1103॥

(94) आतम पुरुषाकार यहाँ, है पवित्र गुण रूप यहाँ–2
निर्मल है दैदीप्य यहाँ–SSS
सभी प्रकाशित करती है, स्वयं शक्ति का रूप यहाँ–2
ऐसी शुद्धातम हो–3 गुणमय बतलाएँ रे–SS॥1104॥

(95) शुद्धातम को लखता है, तन से भिन्न समझता है–2
वही ज्ञान को पाता है–SSS
शाश्वत सुख में लीन हुआ, सभी शास्त्र का ज्ञाता है–2
ज्ञान होने पर हो–3 दुख सब मिट जाये रे–SS॥1105॥

(96) नहिं जाने परमात्म यहाँ, त्यागे नहिं पर भाव यहाँ–2
उसको होता ज्ञान कहाँ?–SSS
भले सभी श्रुत को पढ़ ले, चाहे कितने व्रत कर ले–2
लेकिन नहिं उसको हो–3 मुक्ति मिल पाये रे–SS॥1106॥

(97) सभी विकल्पों को तजकर, परम समाधि को भजकर–2
अपने अंतस में रमकर–SSS
आनंद अनुभव करते हैं, निर्विकल्प में रहते हैं–2
मोक्ष सुख इसको हो–3 ज्ञानी बतलाएँ रे–SS॥1107॥

(98) ध्यान यहाँ पिण्डस्थ करो, पदस्थ और रूपस्थ करो–2
समझके रूपातीत करो–SSS
जिन प्रभु ने ये बतलाए, पावन आतम हो जाये–2
ज्ञानीजन ऐसा हो–3 नित ध्यान लगायें रे–SS॥1108॥

(99) ज्ञानमयी सब जीव यहाँ, छोटा–बड़ा न कोइ यहाँ–2
ऐसा हो समभाव यहाँ–SSS
निश्चय से सामायिक है, जिनप्रभु ऐसा कहें यहाँ–2
समभाव समता हो–3 का भाव बनाये रे–SS॥1109॥

(100) राग–द्वेष के भाव तजे, उसमें ही समभाव रहे–2
सामायिक ही इसे कहें–SSS
ऐसा जिनप्रभु कहते हैं, जो निज में ही रहते हैं–2
जिनकी महिमा ये हो–3 सारा जग गाये रे–SS॥1110॥

योगों में उपयोग परम, गुरु समझायें रे–2
योगों की महिमा हो–3 योगी बतलाए रे–SS

(101) हिंसादिक सब पाप तजे, स्थिर निज की आत्म करे–2
वो संयम को यहाँ धरे–SSS
यह संयम गुण ले आये, पंचम गति में ले जाये–2
इसकी महिमा को हो–3 ये दुनियाँ गाये रे–SS॥1111॥

(102) मिथ्यात्व परिहार यहाँ, देता सम्यग्दर्श यहाँ–2
ये परिहार विशुद्ध यहाँ–SSS
इस संयम से शीघ्र यहाँ, मोक्ष सिद्धि भी मिले यहाँ–2
दर्श विशुद्धि हो–3 सब सिद्धि दिलाए रे–SS॥1112॥

(103) सूक्ष्मलोभ का नाश यहाँ, सूक्ष्म भाव अवशेष यहाँ–2
यही सूक्ष्म चारित्र यहाँ–SSS
शाश्वत सुख का स्थान यही, मुक्तिपथ का ज्ञान यही–2
मिटतीं कषायें हो–3 तो भव मिट जाये रे–SS॥1113॥

(104) आतम ही अर्हंत यहाँ, आतम ही है सिद्ध यहाँ–2
आतम ही आचार्य यहाँ–SSS
उपाध्याय मुनि आतम ही, निश्चय नय से बात कही–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–SS॥1114॥

(105) विष्णु है, शिवशंकर है, रूद्र, बुद्ध, जिन, ईश्वर है–2
वह अनंत ब्रह्मेश्वर है–SSS
वही सिद्ध निश्चय जानो, नाम सिद्ध के तुम जानो–2
तब ही सारा भ्रम हो–3 अपना मिट पाये रे–SS॥1115॥

(106) शुभ लक्षण से युक्त परम, देव देह में रहे शुभम्–2
उसको कहते परमातम–SSS
आतम और परमातम में, कोई भेद न दोनों में–2
ऐसा अनुभव कर हो–3 जो शुद्ध बनायें रे–SS॥1116॥

(107) सिद्ध हुए हैं अब तक जो, भविष्य में भी होंगे जो–2
हो रहे वर्तमान में जो–SSS
जितने अब तक सिद्ध हुए, आत्मदर्श से यहाँ हुए–2
ऐसा निश्चय से हो–3 समझो समझायें रे–SS॥1117॥

(108) भव भय से भयवीत यहाँ, रत्नत्रय से प्रीत यहाँ–2
कर मन को एकाग्र यहाँ–SSS
योगीन्दुदेव लिखे सभी–दोहे निज संबोध यहाँ–2
पढ़ता सुनता जो हो–3 भव सफल बनाये रे–SS॥1118॥

उपसंहार

योग अशुभ बनते तभी, चाहत हो जब भोग।
भोग चाह नहिं हो यहाँ, बन जाते शुभ योग॥

योग मिटा दे भोग सब, तो बनते शुभ योग।
योग नहीं शुभ हो अगर, तो फिर अशुभ है योग॥

योग अशुभ को त्यागकर, कर ले तू शुभ योग।
योग हो शुभ तो बन सके, अंतस् शुभ उपयोग॥

लक्ष्य शुद्ध उपयोग का, कार्य में हो शुभ योग।
उसको ही श्रुत में कहा, ज्ञानी शुभ उपयोग।।

सम्यक् बिन उपयोग शुभ, नहीं बने यह जान।
शुभ उपयोग के साथ हो, सम्यग्दर्शन ज्ञान।।

सम्यग्दर्शन ही करे, योग को शुभ उपयोग।
शुभ उपयोगी पा सके, ध्यान में शुद्ध उपयोग।।

शुभ से शुद्ध उपयोग कर, यही मोक्ष आधार।
ज्ञान दर्श में लीन हो–यही योग का सार।।

योग में सम्यक् साथ हो, तो मिलता है सार।
सम्यक् बिन सब योग से, हो भव का व्यापार।।

सम्यक योग से तुम करो, ऐसा अब व्यापार।
योग मिले उपयोग में, पाये योग का सार।।

*****

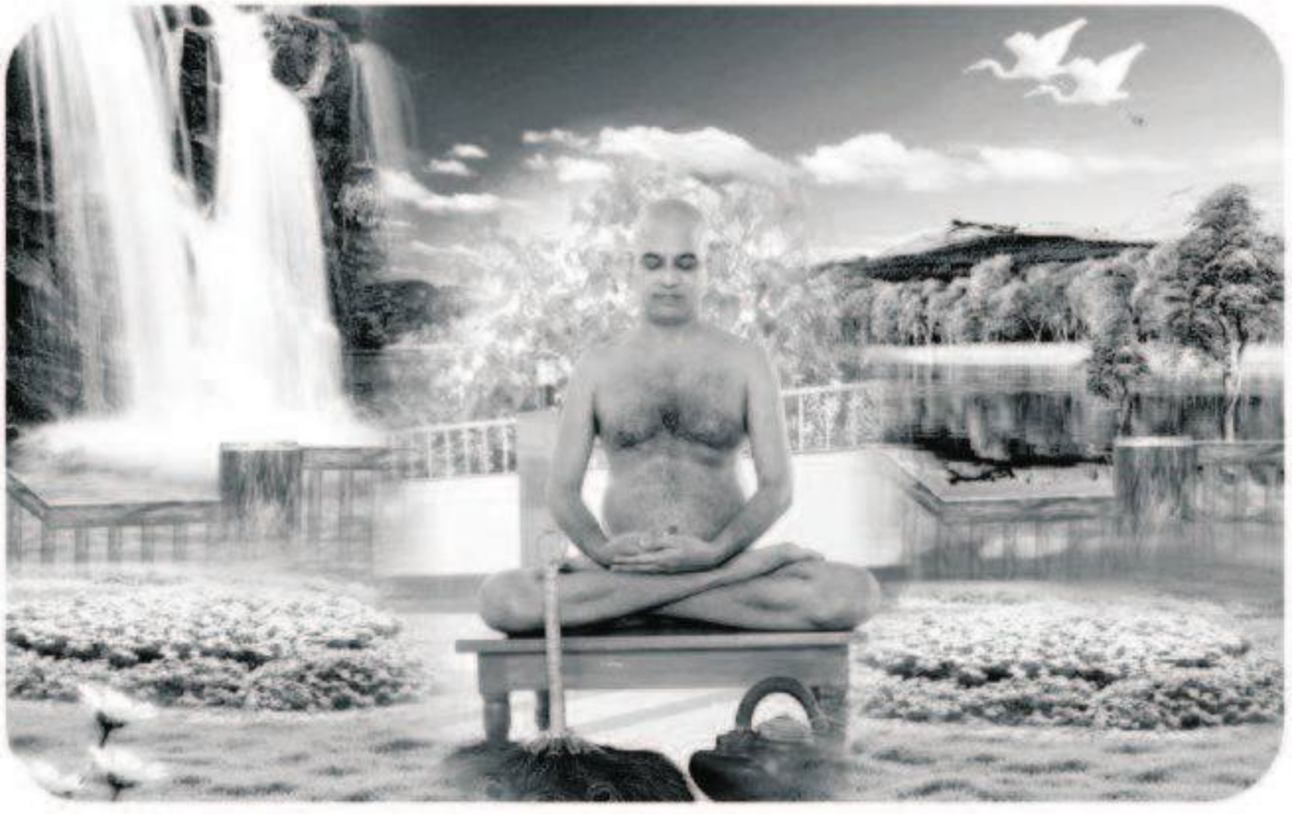

योगसार प्राभृत

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य अमितगति
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

मंगलाचरण

(1) शुद्ध वीतरागी हैं जो, ज्ञानमयी अविनाशी जो-2
नित्य परम सब सिद्ध प्रभो-SSS
निज स्वभाव को पाने मैं, सिद्धों की स्तुति करता मैं-2
अपने गुण पाऊँ हो-3 नित शीश झुकाऊँ रे-SS॥1119॥

(2) दुनियाँ में दो द्रव्य यहाँ, कहते जीव-अजीव यहाँ-2
इन्हें छोड़ कुछ नहीं यहाँ-SSS
जीव-अजीव द्रव्य जानो, उनके लक्षण पहचानो-2
तब ही निजरूप हो-3 का ज्ञान हो पाये रे-SS॥1120॥

(3) जीव-अजीव तत्त्व जानें, परमारथ से पहचानें-2
साधक अनुभव से जानें-SSS
वह अजीव परिहार करे, निज स्वरूप में लीन रहे-2
रत्नत्रय धारी हो-3 इक दिन बन जाये रे-SS॥1121॥

(4) निज स्वरूप में लीन है जो, उसको राग-द्वेष नहिं हो-2
कर्मास्रव भी उसे न हो-SSS
विभाव भाव न रह पायें, इक दिन वो मुक्ति पायें-2
धर्माराधन का हो-3 वो फल पा जायें रे-SS॥1122॥

(5) पर द्रव्यों से भिन्न यहाँ, जाने निज का रूप यहाँ-2
उसको पर में प्रीति कहाँ?-SSS
राग-द्वेष नहिं कभी करे, निज में ही लवलीन रहे-2
ज्ञायक स्वभावी हो-3 अनुभव में लाये रे-SS॥1123॥

(6) जीव का लक्षण कहा यहाँ, प्रभु कहते उपयोग यहाँ-2
इसके हैं दो भेद यहाँ-SSS
एक ज्ञान उपदेश कहा, एक दर्श उपयोग कहा-2
दोनों उपयोग हो-3 हर जीव में पायें रे-SS॥1124॥

(7) हो सामान्य वस्तु-वेदन, कहें दर्शनोपयोग वो हम-2
चार तरह का कहते जिन-SSS
चक्षु-अचक्षु अवधि केवल, जाने उसका दर्श विमल-2
दर्शन उपयोग हो-3 निराकार बताएँ रे-SS॥1125॥

(8) पाँच भेद मय ज्ञान यहाँ, पाँच हैं सम्यग्ज्ञान यहाँ-2
कहते गणधर देव यहाँ-SSS
मति-श्रुत अवधि मन:पर्यय, केवलज्ञान है श्रेष्ठ यहाँ-2
महावीर भगवन् हो-3 सबको बतलाएँ रे-SS॥1126॥

(9) तीन भेदयुत् ज्ञान यहाँ, समझो मिथ्याज्ञान यहाँ-2
इनसे हो भव भ्रमण यहाँ-SSS
कुमति, कुश्रुत कुअवधिज्ञान, तीनों हैं दुखदायी जान-2
इनसे कर तौबा हो-3 सम्यक् बुध पाओ रे-SS॥1127॥

(10) जब कर्मों का क्षय होता, केवलज्ञान प्रकट होता-2
ये तो क्षायिक ही होता-SSS
शेष सात क्षायोपशमिक-क्षयोपशम से ही होता-2
ज्ञान से कीमत हो-3 अपनी बढ़ जाये रे-SS॥1128॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(11) दर्शन ज्ञान सहज होते, दोनों ही युगपत् होते-2
पहले ये क्रम से होते-SSS
सात भेदमय ज्ञान यहाँ, क्रम से होते उदित यहाँ-2
ज्ञान की आँख हो-3 में सब नजराए रे-SS॥1129॥

(12) होता जब मिथ्यात्व यहाँ, ज्ञान गलत हो तभी यहाँ-2
सम्यक् से सद्ज्ञान यहाँ-SSS
जिनदर्शन का ज्ञान करो, उस पर नित बहुमान करो-2
तब ही जीवन में हो-3 सम दर्शन आये रे-SS॥1130॥

(13) गलत ज्ञान वस्तु का हो, वो ही मिथ्याज्ञान अहो-2
वे सब कारण झूठे हो-SSS
कर्मबंध का बाग रहे, जल सम मिथ्याज्ञान कहें-2
मिथ्या हो ज्ञान हो-3 भव बंध कराये रे-SS॥1131॥

(14) जब मिथ्यात्व उदय होता, तब गृहीत-अगृहीत होता-2
या संशय मिथ्यात्व होता-SSS
तीनों ही मिथ्यात्व यहाँ, भटकाते हैं हमें जहाँ-2
इसको हम जानें हो-3 तब ही तज पायें रे-SS॥1132॥

(15) होता है मिथ्यात्व जहाँ, जान न पाता तत्त्व वहाँ-2
अतत्त्व समझे तत्त्व यहाँ-SSS
स्वर्ण धतूरे को समझे, स्वर्ण स्वरूप नहीं समझे-2
ऐसा मिथ्यात्व हो-3 नट हमें बनाए रे-SS॥1133॥

(16) वस्तु रहे जिस रूप यहाँ, जाने उस ही रूप यहाँ-2
वो ही है सम्यक्त्व यहाँ-SSS
सम्यक्युत् हो ज्ञान अगर, जानो सम्यग्ज्ञान यहाँ-2
आतम की सिद्धि हो-3 यह ज्ञान दिलाए रे-SS॥1134॥

(17) तीन प्रकृति दर्शन मोही, चार कहीं चारित मोही-2
सात प्रकृति हैं दुखदायी-SSS
इनका उपशम क्षयोपशम, अथवा होता क्षायिकतम-2
सच्चा हो ज्ञान हो-3 तब ये हो पाये रे-SS॥1135॥

(18) सात प्रकृति का हो उपशम, तो होता सम्यक् उपशम-2
क्षायिक हो जब सात क्षरण-SSS
क्षयोपशम भी होता है, क्षायिक उत्तम होता है-2
क्षायिक है साध्य हो-3 दो साधन गायें रे-SS॥1136॥

(19) आत्मा ज्ञान प्रमाण कहा, ज्ञान ज्ञेय परिमाण कहा-2
ज्ञेय को लोकालोक कहा-SSS
ज्ञेय सर्वगत व्याप्त यहाँ, ज्ञान सर्वगत व्याप्त यहाँ-2
जितना हो ज्ञेय हो-3 वहाँ ज्ञान भी जाये रे-SS॥1137॥

(20) ज्ञेय बराबर आत्म यहाँ, ज्ञेय बराबर ज्ञान यहाँ52
ज्ञान बराबर आत्म यहाँ-SSS
ज्ञान अधिक हो आतम से, कुछ प्रदेश अज्ञान यहाँ-2
आतम अखंड हो-3 फिर क्यों रह पाये रे-SS॥1138॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(21) पय में इन्द्रनीलमणि हो, प्रभा दूध में व्याप्त अहो-2
नीला दिखता दूध अहो-SSS
ज्ञेय मध्य हो ज्ञान यहाँ, व्याप्त करे सब ज्ञेय यहाँ-2
तब वह ज्ञेयों का हो-3 सब कुछ बतलाए रे-SS॥1139॥

(22) आँख रूप रंग ग्रहण करे, स्वयं नहीं उस रूप रहे-2
अपने में वह आँख रहे-SSS
ज्ञान, ज्ञेय को जान रहा, ज्ञेय रूप नहिं व्याप रहा-2
ज्ञान तो ज्ञान हो-3 के रूप रहाये रे-SS॥1140॥

(23) चुम्बक रहती दूर यहाँ, लोहा खींचे पास यहाँ-2
उसका यही स्वभाव यहाँ-SSS
वस्तु रहतीं दूर यहाँ, ज्ञान जानता उन्हें यहाँ-2
चुम्बक जैसा ही हो-3 गुरु ज्ञान बताएँ रे-SS॥1141॥

(24) दीपक खुद को दिखलाता, पर पदार्थ भी दिखलाता-2
निज स्वभाव को बतलाता-SSS
ज्ञान स्वयं को भी जाने, पर वस्तु को भी जाने-2
ज्ञान स्वभाव हो-3 ऐसा बतलाएँ रे-SS॥1142॥

(25) चार घातिया कर्म मिटें, ज्ञान क्षयोपशम यहाँ मिटे-2
क्षायिक ज्ञान स्वयं प्रकटे-SSS
जो हरदम इक रूप रहे, व्यक्त रहे सम्पूर्ण रहे-2
क्षायिक ही ज्ञान हो-3 अतिशुद्ध कहाये रे-SS॥1143॥

(26) होता क्षायिक ज्ञान यहाँ, जाने सभी पदार्थ यहाँ-2
अव्यय अव्याघात यहाँ-SSS
त्रिकाल विषयक जाने जो, युगपत् ही पहचाने जो-2
ऐसा वह ज्ञान हो-3 प्रत्यक्ष कहाये रे-SS॥1144॥

(27) भूतकाल में रहे यहाँ, भविष्य में जो रहें यहाँ-2
उनको जानो असत् यहाँ-SSS
वर्तमान में पदार्थ जो, विद्यमान हैं वही यहाँ-2
विद्वान ऐसी हो-3 ही बात बताएँ रे-SS॥1145॥

(28) भूत भविष्यत कालों में, वर्तमान के हालों में-2
हों पदार्थ जिन रूपों में-SSS
त्रिकालवर्ती वस्तु को, वर्तमान सम देखे जो-2
केवलज्ञानी ही हो-3 ऐसा लख पाये रे-SS॥1146॥

(29) सकल वस्तु नहिं जाने जो, एक वस्तु नहिं जाने वो-2
फिर वो केवलज्ञान न हो-SSS
एक वस्तु में अनंत यहाँ, रहतीं है पर्याय यहाँ-2
एक जानेगा हो-3 तब ही सब जाने रे-SS॥1147॥

(30) क्रम से गर यह जानेगा, तो कब तक यह जानेगा-2
युगपत् ही यह जानेगा-SSS
पर्यायें हैं नंत यहाँ, नहिं होगा फिर अंत यहाँ-2
क्षायिक है ज्ञान हो-3 युगपत् सब जाने रे-SS॥1148॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(31) घाति कर्म क्षय हो जाये, शुद्ध स्वरूप उभर आये-2
प्रभु परमात्म प्रकट जाये-SSS
भव्य करे श्रद्धा उनपर, अभव्य न श्रद्धा कर पाये-2
उसका स्वभाव हो-3 भववर्ध बताएँ रे-SS॥1149॥

(32) जो है सबसे श्रेष्ठ कहा, आदि-अंत से रहित अहा-2
इन्द्रिय गोचर नहीं रहा-SSS
यही रूप श्रद्धान करो, निज में अनुभव ज्ञान करो-2
अविनाशी पद वो हो-3 निश्चित ही पाये रे-SS॥1150॥

(33) इन्द्रिय मन व्यापार न हो, अन्तर्मुख में झाँक अहो-2
क्षणभर थमकर अनुभव हो-SSS
शुद्ध रूप वह आतम का, ज्ञानात्मक उसको समझो-2
आतम का अनुभव हो-3 ऐसा बतलाएँ रे-SS॥1151॥

(34) पाता है श्रुत ज्ञान यहाँ, करता आतम ध्यान यहाँ-2
जाने इक शुद्धात्म यहाँ-SSS
श्रुत केवली उसे कहो, कहते ये जिनदेव यहाँ-2
ज्ञान परोक्ष हो-3 उनका कहलाए रे-SS॥1152॥

(35) राग-द्वेष से रहित रहे, ज्ञान रूप में वर्त रहे-2
वीतरागमय उसे कहे-SSS
कर्मनाश सब यहाँ करे, शुद्ध वही चारित्र अरे-2
ऐसा चारित्र हो-3 शिवपुर ले जाये रे-SS॥1153॥

(36) जब क्रोधादि कषाय आये, मन व्याकुल बहु हो जाये-2
आत्मस्थिर नहिं रह पाये-SSS
पंच महाव्रत अन्य भी व्रत, स्थिर बिन सब मिट जाये-2
व्रत का पालन फिर हो-3 कैसे हो पाए रे-SS॥1154॥

(37) ज्ञान, आत्म से परिणत हो, तब ही व्रत का पालन हो-2
अनुभव में निज आतम हो-SSS
हिंसा झूठ न चोरी हो, नहिं अब्रह्म परिग्रह हो-2
शुद्ध स्वभाव हो-3 उसको हो पाये रे-SS॥1155॥

(38) निर्मल दर्शन ज्ञान चरित, आत्मरूप में भाव सहित-2
अनुभव में संदेह रहित-SSS
योगी ध्यान रचाते हैं, बन्धन मुक्त हो जाते हैं-2
इसमें कोई भी हो-3 संदेह न आये रे-SS॥1156॥

(39) आत्म स्वभाव नहीं जाना, पर द्रव्यों में बेगाना-2
योगी राग में परवाना-SSS
रत्नत्रय सम्पन्न न वो, सम्यक् चारित उसे न हो-2
उसका संयम भी हो-3 भव में भटकाए रे-SS॥1157॥

(40) सम्यक् चारित लीन हैं जो, शुद्धातम अनुभवी हैं वो-2
वीतराग सम्यक्त्वी जो-SSS
वीतराग चारित्र रमें, शुद्ध आचरण नित्य धरें-2
निश्चय चारित्र हो-3 उनमें नजराये रे-SS॥1158॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(41) तत्त्वों में रुचि समदर्शन, शास्त्र ज्ञान सम्यग्ज्ञान-2
कहते ऐसा भगवान-SSS
व्रत-तप समचारित्र कहा, समझो ये व्यवहार अहा-2
निश्चय चारित्र हो-3 अति भिन्न बताएँ रे-SS॥1159॥

(42) दर्शन ज्ञान स्वभावी जो, अनुभव में अनुरागी जो-2
वीतराग सम भावी जो-2
ऐसी निर्मल आतम है, मोक्षमार्ग का साधन है-2
निश्चय से जानो हो-3 ये बात बताएँ रे-SS॥1160॥

(43) निश्चय नय से देख रहा, शुद्ध भाव से जान रहा-2
निज स्वरूप में लीन रहा-SSS
आतम को ही निश्चय से, दर्शन-ज्ञान-चरित्र कहा-2
आतम को तीनों हो-3 ही रूप बताएँ रे-SS॥1161॥

(44) मुक्ति की जो चाह रखें, वे शुद्धात्म स्वभाव वरें-2
उपासना निज आत्म करें-SSS
यही मोक्ष का कारण है, ये संसार निवारण है-2
ये ही शिवसुख का हो-3 आधार बताएँ रे-SS॥1162॥

(45) इन्द्रिय विषय हटा करके, आतम ध्यान लगा करके-2
निर्विकल्पता ला करके-SSS
शुद्धातम में लीन रहे, निज स्वरूप स्पष्ट लखे-2
तब ही परमातम हो-3 अनुभव में आये रे-SS॥1163॥

(46) इन्द्रिय नहीं सहायी हो, संशय विपर्ययादि नहिं हो-2
उसको केवलज्ञान कहो-SSS
जिसमें नहीं निमित्त कोई, असहायी वह ज्ञान अहो-2
उसकी महिमा को हो-3 सब वेद सुनायें रे-SS॥1164॥

(47) परवस्तु से राग यहाँ, सूक्ष्म से सूक्ष्म हो भले यहाँ-2
वो भी दुखमय कहा यहाँ-SSS
जब तक थोड़ा राग रहे, तब तक भव में बंध करे-2
कर्मों के बंधन हो-3 से मुक्ति न पाये रे-SS॥1165॥

(48) परमेष्ठी भी भक्ति करे, आत्म स्वरूप न ध्यान धरे-2
पुण्य बंध वह यहाँ करे-SSS
निजस्वरूप नहिं ध्याता वो, कर्म न क्षय कर पाता वो-2
योगी वो भव से हो-3 नहिं मुक्ति पाये रे-SS॥1166॥

(49) पर द्रव्यों को छोड़ यहाँ, निज आतम को जान यहाँ-2
उसमें रह तू लीन यहाँ-SSS
ऐसा नहिं कर जाएगा, कर्म रोक नहिं पायेगा-2
ये बात बिल्कुल हो-3 गुरु सत्य बताएँ रे-SS॥1167॥

(50) तीव्र मोक्ष की चाह रखें, पर की हरदम चाह करें-2
पूजा पर की नित्य करें-SSS
पर में सुख की आश रखें, वे ही भव में डूबे हैं-2
ऐसे भवि प्राणी हो-3 मुक्ति नहिं पायें रे-SS॥1168॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(51) पर चिंता में मग्न रहे, ज्ञानी उसको मूढ़ कहे-2
पर द्रव्यों सा हुआ रहे-SSS
निज आतम में मगन यहाँ, शुद्धातम में लीन यहाँ-2
वह ही मुक्ति पथ हो-3 को झट पा जाये रे-SS॥1169॥

(52) द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित, रूप गंध रस वर्ण रहित-2
अजर-अमर गुणभेद रहित-SSS
बंधन सब संबंध बिना, शुद्ध स्वभावी ज्ञान सहित-2
ज्ञानी निश्चय से हो-3 ऐसी बतलाएँ रे-SS॥1170॥

(53) चेतन में रस गंध यहाँ, वर्ण शब्द स्पर्श यहाँ-2
नहीं रहे इन्द्रियाँ यहाँ-SSS
निश्चय से कुछ भी नहिं हों, कभी किसी भी समय न हों-2
ऐसा जो जाने हो-3 वह स्वभाव पाये रे-SS॥1171॥

(54) धवल स्फटिक मणि यहाँ, लाल हरे गुल संग यहाँ-2
लाल हरी हो रही यहाँ-SSS
वैसे ही शुद्धात्म यहाँ, तन संग वर्णित हुई यहाँ-2
ऐसा व्यवहार हो-3 हमको बतलाएँ रे-SS॥1172॥

(55) राग-द्वेष मद क्रोध रहे, लोभ, मोह ये दोष रहे-2
कर्मोदय से भाव हुए-SSS
संसारी जीवों में हैं, भाव औदयिक सभी कहे-2
स्वाभाविक भाव हो-3 ये नहिं बतलाएँ रे-SS॥1173॥

(56) क्रोध स्वभाव यहाँ मानें, आत्म स्वभाव न वो जानें-2
क्रोध नहीं प्रभु में जानें-SSS
क्रोध बाद में मिट जाता, तो स्वभाव नहिं कहलाता-2
हरपल रहता जो हो-3 वो स्वभाव गायें रे-SS॥1174॥

(57) गुणस्थान पर्याप्ति यहाँ, जीवसमास और प्राण यहाँ-2
संज्ञा और मार्गणा यहाँ-SSS
कर्म से ही सब भाव बनें, शुद्ध जीव में नहीं रहें-2
आतम स्वभाव हो-3 ये नहिं कहलाएँ रे-SS॥1175॥

(58) मति-श्रुत अवधिज्ञान यहाँ, मन: पर्यय भी ज्ञान यहाँ-2
इनमें अशुद्ध जीव यहाँ-SSS
क्षायोपशमिक हों भाव उसे, शुद्ध जीव में नहीं यहाँ-2
कर्मों से होवें हो-3 वे शुद्ध न होवें रे-SS॥1176॥

(59) कर्म रहित रागादि रहित, जन्म जरा भय मरण रहित-2
ज्ञान दर्श निज भाव सहित-SSS
आत्म तत्त्व को ध्याता है, निर्विकल्पता पाता है-2
ऐसा ही योगी हो-3 मुक्ति पा जाये रे-SS॥1177॥

अजीवाधिकार

(60) धर्माधर्माकाश यहाँ, काल अरु पुद्गल पाँच यहाँ-2
कहते द्रव्य अजीव यहाँ-SSS
अरहंत आचार्यात्मज्ञ कहें, ज्ञाता हैं तत्त्वज्ञ यहाँ-2
जीव से इनको हो-3 अतिभिन्न बताएँ रे-SS॥1178॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(61) पाँचों अजीव द्रव्य यहाँ, रहते मिलकर खूब यहाँ-2
घुलमिल जाते गहन यहाँ-SSS
छोड़े नहीं स्वभाव कभी, निज स्वभाव में रहें यहाँ-2
अपना अस्तित्व हो-3 सब ही दिखलाएँ रे-SS॥1179॥

(62) धर्मादिक पच द्रव्य कहे, मूर्तिक पुद्गल एक रहे-2
चार अमूर्तिक द्रव्य कहे-SSS
ये चारों निष्क्रिय होते, पुद्गल क्रियाशील होता-2
रूप रस गंध हो-3 मूर्तिक में पायें रे-SS॥1180॥

(63) जीव सहित ये पाँच यहाँ, कहते हैं छः द्रव्य यहाँ-2
गुण पर्यय से युक्त यहाँ-SSS
द्रव्य में लक्षण नित्य रहें, लक्षण बिन नहिं द्रव्य रहें-2
ऐसा जिनदेव हो-3 सबको बतलाएँ रे-SS॥1181॥

(64) गुण पर्यय से द्रवित रहे, गुण पर्यय के रूप दिखे-2
जो अस्तित्व स्वरूप रहे-SSS
उसको कहते द्रव्य यहाँ, शाश्वत हैं छः भेद यहाँ-2
जिनवर हम सबको हो-3 सद्ज्ञान कराएँ रे-SS॥1182॥

(65) सत्ता या अस्तित्व यहाँ, सब पदार्थ में रहे यहाँ-2
व्याप रहा सर्वत्र यहाँ-SSS
अनंत पर्यय युक्त कहें, द्रव्य सभी हम सब समझें-2
सत्ता-असत्ता में हो-3 न विरोध जताएँ रे-SS॥1183॥

(66) द्रव्य दृष्टि से जब देखे-तो पर्याय दिखाइ न दे-2
व्यय उत्पाद न उसमें हो-SSS
जब दृष्टि पर्यायिक हो,तब ध्रुवता न दिखाइ दे-2
जैसी हो दृष्टि हो-3 वैसा द्रव्य पायें रे-SS॥1184॥

(67) गुण पर्यय बिन द्रव्य नहीं, द्रव्य बिना पर्याय नहीं-2
दोनों होते साथ यहीं-SSS
द्रव्य में गुण, गुण से पर्यय, द्रव्य के आश्रय हैं पर्यय-2
द्रव्य बिन दोनों हो-3 ही नहिं रह पायें रे-SS॥1185॥

(68) एक प्रदेश में अणु रहे, एक में ही कालाणु रहे-2
जीव अधर्म व धर्म रहे-SSS
सभी द्रव्य से भरा हुआ, ये आकाश है पटा हुआ-2
असंख्यात जीव हो-3 के प्रदेश बताएँ रे-SS॥1186॥

(69) आदि मध्य और अंत सहित, यहाँ विखण्डन रूप रहित-2
जो इन्द्रिय से ग्राह्य रहित-SSS
अग्नि शस्त्र से नाश न हो, इससे ही संसार अहो-2
ऐसा परमाणु हो-3 पुद्गल कहलाए रे-SS॥1187॥

(70) पुद्गल अनंतानंत यहाँ, और आकाश अनंत यहाँ-2
असंख्यात है लोक यहाँ-SSS
एक प्रदेशी परमाणु, कहते हैं जिनदेव यहाँ-2
केवलज्ञानी ही हो-3 ये बात बताएँ रे-SS॥1188॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(81) लोकाकाश प्रदेश यहाँ, असंख्यात ही कहें यहाँ-2
उतने ही कालाणु यहाँ-SSS
रत्न राशि सम रहते हैं, एक पे इक कालाणु यहाँ-2
ऐसा ही मानो हो-3 जो शास्त्र बताएँ रे-SS॥1189॥

(82) धर्म अधर्म दो द्रव्य रहें, लोकाकाश में व्याप रहे-2
आगम में ये बात कहें-SSS
इक दो तीन असंख्यात, पुद्गल इनमें रहे व्याप्त-2
लोकाकाश में हो-3 हरदम ही व्यापें रहे-SS॥1190॥

(83) संसारी भी व्याप रहे, असंख्यातवें भाग रहे-2
अपने तन आकार रहे-SSS
दीपक के प्रकाश सम ही, जीव सिकुड़ विस्तार करे-2
ऐसा सिद्धांत हो-3 जिनदेव बताएँ रे-SS॥1191॥

(84) जीव व पुद्गल गमन करे, धर्मद्रव्य उपकार करे-2
रुके, अधर्म उपकार करे-SSS
दे आकाश जगह सबको, कालद्रव्य वर्तना करे-2
द्रव्यों का सब पर हो-3 उपकार बताएँ रे-SS॥1192॥

(85) राग-द्वेष विकारों में, कर्म सहित जो रहते हैं-2
वे पर का उपकार करें-SSS
मुक्त जीव जितने भी हैं, वे निज में ही लीन रहें-2
पर का उपकार हो-3 वे नहिं कर पायें रे-SS॥1193॥

(86) जो भव वन में भ्रमण करें, पुद्गल भी उपकार करें-2
सुख दुखमय उपकार करें-SSS
जीव यहाँ जब कार्य करें, पुद्गल यहाँ निमित्त बनें-2
पुद्गल उपकारी हो-3 हैं ये बतलाएँ रे-SS॥1194॥

(87) सब पदार्थ की बात करें, निज में ही सब लीन रहे-2
निश्चय से ये बात कहें-SSS
पर का नहिं उपकार करें, अपने-अपने कार्य करें-2
निश्चय से ऐसा हो-3 सद्ज्ञान बताएँ रे-SS॥1195॥

(88) पुद्गल के चउभेद यहाँ, स्कन्ध देश प्रदेश यहाँ-2
और कहा अणुरूप यहाँ-SSS
सकल, अर्ध, अर्धार्ध कहें, अविभागी अंतिम कह लें-2
चार भेदों में हो-3 उनका रूप बताएँ रे-SS॥1196॥

(89) ठसाठस भरा घट जल से, रंच न खाली है जल से-2
सूक्ष्म-स्थूल उन जीवों से-SSS
भरा ये लोकाकाश यहाँ, रंचमात्र नहिं साँस यहाँ-2
ऐसा स्वीकारा हो-3 तब श्रद्धा आये रे-SS॥1197॥

(80) दो प्रकार के द्रव्य कहे, मूर्त व अमूर्त रूप कहे-2
मूर्त, मूर्तगुण सहित रहे-SSS
अमूर्त गुण जब आते हैं, तभी अमूर्तिक द्रव्य रहे-2
इन्द्रिय से मूर्त हो-3 गुण ही लख पायें रे-SS॥1198॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(81) कर्म के फल को भोगे जो, भाव शुभाशुभ रोपे वो-2
कर्म नये फिर बाँधे वो-SSS
ज्ञानावरण वर्गणाएँ, कर्म रूप फिर बंध जायें-2
भावों से पुद्गल हो-3 ही कर्म हो जायें रे-SS॥1199॥

(82) मन वच काय प्रवृत्ति करे, योग शुभाशुभ यहाँ करे-2
तब पुद्गल आस्रव करे-SSS
मोह कषायें राग करे, पुद्गल खुद ही कर्म बनें-2
ज्ञानावरणादि हो-3 वसु कर्म भी आयें रे-SS॥1200॥

(83) ज्ञान दर्शनावरण यहाँ, वेदनीय मोहनीय यहाँ-2
आयु नाम गोत्र विघ्न यहाँ-SSS
प्रकृति बंध के भेद कहे, ज्ञानी इनसे मुक्त रहे-2
इनको जाने बिन हो-3 वृष समझ न आये रे-SS॥1201॥

(84) मिथ्यात्वादि कषाय उदय, इनसे मोह रागादिक भय-2
नहिं हो पाता है निर्भय-SSS
निश्चय से निजभाव करे, कर्म का कर्ता नहीं रहे-2
अपने भावों का हो-3 कर्ता कहलाये रे-SS॥1202॥

(85) पुद्गल ही स्कंध बनें, कई तरह के रूप धरें-2
स्वयं कई आकार धरें-SSS
वैसे कार्य हो एक यहाँ, कर्म अनेक प्रकार यहाँ-2
अपने ही आप हो-3 ये सब हो जाये रे-SS॥1203॥

(86) जो निज में स्थिर रूप रहे, उस पर कर्म न व्याप रहे-2
वो कर्मों से भिन्न रहे-SSS
कर्म जीवपन पा जाता, जीव स्वभाव नहीं पाता-2
शुद्ध स्वभाव हो-3 नहिं कर्म बँधाये रे-SS॥1204॥

(87) जीव न कोई कर्म करे, उपादानमय जीव रहे-2
ऐसा निश्चय यहाँ कहे-SSS
शुद्ध जीव यदि कर्म करे, तो फिर कर्म जीव होवे-2
ऐसा कभी भी हो-3 हो ही नहिं पाये रे-SS॥1205॥

(88) उपादान से कर्म करे, कर्मों का नित बंध करे-2
तो फिर शुद्ध न कभी रहे-SSS
जीव जड़पना पा जाये, कर्म जीवमय हो जाये-2
ऐसा नहिं होगा हो-3 चाहे कुछ होवे रे-SS॥1206॥

(89) चेतन यहाँ अचेतन का, और अचेतन, चेतन का-2
उपादान गर हो जाता-SSS
जीव-अजीव में भेद यहाँ, पैदा होंगे दोष यहाँ-2
दोष फिर कैसे हो-3 हमसे हट पायें रे-SS॥1207॥

(90) वर्गणायें कार्माण यहाँ, हो जाती हैं कर्म यहाँ-2
मिले जीव का योग जहाँ-SSS
कर्म जीव का योग मिले, हो विभाव परिणाम यहाँ-2
कर्म वैभाविक हो-3 मयभाव बनाएँ रे-SS॥1208॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(91) राग-द्वेषमय भाव यहाँ, कर्म कराते सभी यहाँ-2
बात न जमती हमें यहाँ-SSS
जीव तो ज्ञान दर्शमय है, नहीं कर्म कर्तामय है-2
कर्म कराये हो-3 तो जीव हो जायें रे-SS॥1209॥

(92) मोह कर्म का उदय जहाँ, राग-द्वेषमय भाव वहाँ-2
फिर बँधते बसु कर्म यहाँ-SSS
द्रव्य कर्म फिर भाव कर्म, निमित्त नैमित्तिकी यहाँ-2
जानो और मानो हो-3 जो ज्ञान बढ़ाए रे-SS॥1210॥

(93) योद्धा जीतें युद्ध यहाँ, राजा जीता कहें यहाँ-2
ऐसा है व्यवहार यहाँ-SSS
जीव कर्म को करता है, राग-द्वेष भी करता हो-2
ऐसा व्यवहार हो-3 नय से बतलाएँ रे-SS॥1211॥

(94) संस्थान संहनन यहाँ, शरीर गति और जाति यहाँ-2
जीवों के जगरूप यहाँ-SSS
नामकर्म से पैदा हों, जीव न कर्मरूप में हो-2
कर्म-चेतन से हो-3 अतिभिन्न बताएँ रे-SS॥1212॥

(95) मिथ्या-सासादन दृष्टि, मिश्र असंयत समदृष्टि-2
देश-प्रमत्त विरत दृष्टि-SSS
अप्रमत्त अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म कषाय विनिस्तरण-2
ये सब गुण स्थान हो-3 सब कर्म बनाएँ रे-SS॥1213॥

(96) रहे मोह उपशांत यहाँ, होता है क्षय मोह यहाँ-2
सयोग केवली रहे यहाँ-SSS
अयोग केवली गुणस्थान है, कर्मों से सब निर्मित हैं-2
तेरह गुणस्थान हो-3 कर्मों से आयें रे-SS॥1214॥

(97) तन आतम को एक कहें, मोही ऐसे लोग रहें-2
गुणस्थान को जीव कहें-SSS
ज्ञानी कर्मोजनित कहें, ये पुद्गल के खेल कहें-2
निश्चय से लखकर हो-3 वे मुक्ति पायें रे-SS॥1215॥

(98) संयम ले वंदना करे, श्रेष्ठ पुण्य अनुबंध करें-2
जिससे फल उत्कृष्ट मिलें-SSS
उससे उत्तम भाव बनें, श्रेष्ठ सुखों के हेतु मिलें-2
मुनि बनके पुण्य हो-3 उत्तम मिल जाये रे-SS॥1216॥

(99) छठवें से तेरहवें में, मुनियों स्तुति वंदन में-2
पुण्यबंध अतिश्रेष्ठ करें-SSS
चेतन की स्तुति नहीं है ये, गुणस्थान की स्तुति है ये-2
पुद्गल की स्तुति हो-3 है ये बतलाएँ रे-SS॥1217॥

(100) देह की जो स्तुति करें, कर्मबंध नित यहाँ करे-2
चेतन की नहिं उसे कहें-SSS
म्यान का हम सौंदर्य कहें, कथन न वो तलवार कहें-2
चेतन की स्तुति में हो-3 कर्मादि न आयें रे-SS॥1218॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(101) देह तो चेतनमयी दिखे, पर प्रतीत नहिं हुआ करे–2
चेतन देह से भिन्न रहे–SS
चेतन प्रतीयमान् यहाँ, तन से है जो भिन्न यहाँ–2
जैसे रस से रंग हो–3 अतिभिन्न बताएँ रे–SS॥1219॥

(102) देह में चेतन राजित हो, फिर भी स्पष्ट प्रतीत न हो–2
तभी देह से भिन्न न हो–SS
निश्चय से तन भिन्न कहें, एकमेक मय यहाँ दिखें–2
ज्ञान नहिं होवे हो–3 वे एक बताएँ रे–SS॥1220॥

(103) इन्द्रिय से देखा जाये, अनुभव यहाँ किया जाये–2
अथवा जो जाना जाये–SS
वो सब यहाँ अचेतन है, कोई वस्तु न चेतन है–2
पुद्गल से जाने हो–3 पुद्गल कहलाए रे–SS॥1221॥

(104) देखे इन्द्रिय जिसे यहाँ, अनुभव इन्द्रिय करें यहाँ–2
वे सब पुद्गल कहें यहाँ–SS
पुद्गल, पुद्गल ही जाने, पुद्गल को चेतन माने–2
उसकी बुद्धि में हो–3 भूसा बतलाएँ रे–SS॥1222॥

(105) राग–द्वेष मद विकार हों, विभाव भाव चेतन में हों–2
कर्म जनित ही वे सब हों–SS
बादल के आ जाने पर, रवि में विकार पैदा हों–SS
वैसे ही कर्म हो–3 से राग आ जाये रे–SS॥1223॥

(106) कर्म जीव संबंध यहाँ, अनादिकाल से रहा यहाँ–2
कर्म हुआ नहिं जीव यहाँ–SS
जीव कर्ममय नहीं हुआ, अपने अपने रूप यहाँ–2
अपना स्वभाव हो–3 कोई नहिं छोड़े रे–SS॥1224॥

(107) उपादान से कर्म करे, कोई ऐसा अगर कहे–2
तो फल वो कैसे भागे–SS
कर्मोदय में विभाव से, जीव स्वयं ही कर्म करे–2
दोनों बातों से हो–3 ही समझ में आये रे–SS॥1225॥

(108) कर्मोदय से भाव बनें, उन्हें औदयिक यहाँ कहें–2
दबें तो उपशम उन्हें कहें–SS
क्षायोपशमिक क्षयोपशम से, ये सब पुद्गल रूप कहें–2
शास्त्रों में इनको हो–3 नहिं जीव बताएँ रे–SS॥1226॥

(109) तत्त्व अजीव नहीं जानें, शास्त्र विधि नहिं पहिचानें–2
यथार्थता को नहिं मानें–SS
व्रत–तप–जप वे खूब करें, जीव तत्त्व वे नहिं जानें–2
तत्त्व जाने बिन हो–3 कुछ नहिं मिल पाये रे–SS॥1227॥

आस्रव अधिकार

(110) रंजित अशुभ और शुभ से, मन वच काय के योगों से–2
ज्ञान दर्शमय वृत्ति से–SS
पुण्य पापमय आस्रव हों, दोनों में हम पापी हों–2
निश्चय से जानो हो–3 तब सत्य दिखाये रे–SS॥1228॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(111) मिथ्यादर्श असंयम हो, कषाय योग के भाव हों-2
चारों पापास्रव कहें-SS
इनसे ही सब आस्रव हों, जो हरदम दुखदायी हों-2
इनसे बचने को हो-3 संयम अपनाओ रे-SS॥1229॥

(112) चेतन और अचेतन में, भेद नहीं करता उनमें-2
दोनों को ही एक कहें-SS
इससे तो मिथ्यात्व बढ़े, फिर वह भवन में भटके-2
तत्त्व को जानो हो-3 जो भ्रमण मिटाये रे-SS॥1230॥

(113) चेतन और अचेतन हो, अपनेपन की बुद्धि हो-2
उसे कर्म का आस्रव हो-SS
कर्म आस्रव में डूबा जो, कर सकता उद्धार न वो-2
भ्रमते ही भ्रमते हो-3 सारे भव जायें रे-SS॥1231॥

(114) द्रव्य-भाव-नोकर्म यहाँ, मुझमें तीनों रहें यहाँ-2
हमने पैदा किये यहाँ-SS
मैंने इन्हें बनाया है, मेरे हैं ये माया है-2
ऐसी ही बुद्धि हो-3 मिथ्यात्व बढ़ाए रे-SS॥1232॥

(115) द्रव्य-भाव-नोकर्म रहें, इनका भी स्वामी हूँ मैं-2
पहले भी था स्वामी मैं-SS
भावी स्वामी होउँगा, ऐसा मिथ्यादृष्टि कहें-2
तीव्रकर्मों का हो-3 आस्रव आ जाये रे-SS॥1233॥

(116) मिथ्यादृष्टि अज्ञानी, करता है जब मनमानी-2
पर में निज बुद्धि ठानी-SS
मोह और मिथ्यात्व यहाँ, रोक न सकता कर्म यहाँ-2
आठों ही कर्म हो-3 उसको बंध जायें रे-SS॥1234॥

(117) निश्चय से ये आत्म यहाँ, कर्ता निज परिणाम यहाँ-2
शुभ हों या फिर अशुभ यहाँ-SS
पर द्रव्यों का कर्ता है, कहता ये व्यवहार यहाँ-2
अपने भावों का हो-3 कर्ता कहलाए रे-SS॥1235॥

(118) परिणामों का आश्रय ले, जीव दुखद परिणाम करे-2
कर्मास्रव और बंध करे-SS
उनका हो जब उदय यहाँ, करे दुखद परिणाम यहाँ-2
अपने परिणामों हो-3 का फल बतलाएँ रे-SS॥1236॥

(119) राग-द्वेष परिणाम यहाँ, ज्ञानावरण हों कर्म यहाँ-2
निमित्त-नैमित्त संबंध यहाँ-SS
पर कार्मण वर्गणाओं का, जीव से नहिं संबंध यहाँ-2
जीव त्रैकाली हो-3 चैतन्य स्वभावी रे-SS॥1237॥

(120) उपादान यदि कर्म करे, फल वह कैसे भोग करे-2
फल कैसे मिल सके उसे-SS
चेतन नहिं पर का कर्ता, कैसे हो पाये भोक्ता-2
निश्चय नय से ही हो-3 यह बात बताएँ रे-SS॥1238॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(121) गैर कोई भी कर्म करे, फल गैरों को नहीं मिले–2
कर्ता ही फल भोग करे–SS
गैर का फल गर हमें मिले, तो फिर कैसे मुक्ति मिले–2
भव से वो प्राणी हो–3 मुक्ति नहिं पाये रे–SS॥1239॥

(122) रवि का सुंदर तेज यहाँ, ढक लेते हैं मेघ यहाँ–2
वैसे ही ये समझ यहाँ–SS
निर्मल जीव स्वभाव रहे, कर्मों से वह ढका रहे–2
कर्मों की ऐसी हो–3 प्रकृति बताएँ रे–SS॥1240॥

(123) स्रोत रूप जल की नाली, भर देती सरवर खाली–2
शीतल जल भरता भारी–SS
त्यों कषाय स्रोतों द्वारा, आते कर्म हैं दुखकारा–2
ये ही आतम को हो–3 जड़बुद्धि बनाएँ रे–SS॥1241॥

(124) जीव कषाय रहित होता, उसे न कर्म बंध होता–2
शुद्ध स्वभावी वह होता–SS
कर्मबंध यदि उसको हो, तो फिर सिद्ध न कोई हो–2
वीतरागी को हो–3 मुक्ति मिल जाये रे–SS॥1242॥

(125) द्रव्य में जो परिणाम यहाँ, अन्य द्रव्य में नहीं यहाँ–2
सबमें निज निज भाव यहाँ–SS
जीव परिणमन भाव करे, पुद्गल रूप न भाव करे–2
वर्ना–स्व–पर का हो–3 नहिं भेद कहाये रे–SS॥1243॥

(126) पर से सुख–दुख मान रहे, उनसे सुख दुख चाह करे–2
जब तक ऐसा जीव करे–SS
तब तक आस्रव नहीं रुके, कर्मबंध हर समय रहे–2
वो इस आस्रव से हो–3 नहिं मुक्त हो पाये रे–SS॥1244॥

(127) मिथ्यादृष्टि जीव यहाँ, निज पर तन नहिं जान यहाँ–2
आत्मबुद्धि से मान यहाँ–SS
निज तन को निज आत्म कहे, पर तन को पर आत्म कहे–2
ऐसा समझकर हो–3 व्यवहार अपनाए रे–SS॥1245॥

(128) आत्म–अनात्म नहीं जाने, सुखमय–दुखयमय नहिं जाने–2
चेतन–अचेतन ना जाने–SS
तब तक पुत्र–स्त्री तन में, आत्मबुद्धि को ही माने–2
नाना कर्मों को हो–3 नित बंध बंधाये रे–SS॥1246॥

(129) तन में आत्मबुद्धि करता, पुत्र–स्त्री अपने कहता–2
उनमें आत्मबुद्धि धरता–SS
नाना कर्मन बंध करे, अज्ञानी बन यहाँ जिये–2
कर्मों से मुक्ति हो–3 कैसे वह पाये रे–SS॥1247॥

(130) ज्ञान–दर्श उपयोग करे, क्रोध कषायें नाश करे–2
तब ही शुद्ध उपयोग करे–SS
रूपी से न अरूपी हो, नहीं अरूपी, रूपी हो–2
ऐसा नहिं संभव हो–3 जग में हो पाये रे–SS॥1248॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(131) कषाय में परिणमन करे, वो परिणाम कषाय धरे-2
संसारी सब जीव अरे-SS
नहिं परिणमन कषायों में, उसमें नहीं कषाय अरे-2
सारे ही सिद्ध हो-3 कैसे बतलाएँ रे-SS॥1249॥

(132) जिसमें नहीं कषाय यहाँ, उसमें नहिं संसार यहाँ-2
और नहीं है मोक्ष यहाँ-SS
वीतरागमय हो जाता, कर्मबंध सब रुक जाता-2
कर्म अभाव हो-3 उनका हो पाये रे-SS॥1250॥

(133) जीव न कर्मों का कर्ता, कर्म न गुण पैदा करता-2
दोनों निजी भाव कर्ता-SS
निमित्त दे परिणाम यहाँ, देता कर्म निमित्त यहाँ-2
जीव बस अपने हो-3 ही भाव बनाए रे-SS॥1251॥

(134) निश्चय नय सच बात कहे, कर्ता गुण का जीव रहे-2
अपने ही निज रूप रहे-SS
जीव तो अपने भाव करे, पुद्गल कर्मरूप हो ले-2
पर्यय का कर्ता हो-3 व्यवहार बताएँ रे-SS॥1252॥

(135) कर्मों का हो उदय यहाँ, हों औदयिकी भाव यहाँ-2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ-SS
कर्म उदय में आता है, भाव वही हो जाता है-2
ऐसे भावों से हो-3 फिर विधि बँध जाये रे-SS॥1253॥

(136) मिथ्यामोहित चित्त यहाँ, तन को आतम कहे यहाँ-2
उसको पाने जिये यहाँ-SS
खुद को जो पर द्रव्य करे, कर्मास्रव वह रोज करे-2
नाना दुक्खों को हो-3 वो दुख उपजाये रे-SS॥1254॥

(137) मिथ्यादृष्टि मूढ़ यहाँ, राग-द्वेष नित करे यहाँ-2
ईर्ष्या लोभ मदादि यहाँ-SS
इन्द्रिय कर्म, रूप, रस मय, मैं ही हूँ ये कहे यहाँ-2
ऐसे ही लोग हो-3 मूढ़ी कहलाएँ रे-SS॥1255॥

(137) पर मेरे, मैं पर का हूँ, यही भावना करता हूँ-2
तादात्म्य उनसे रहता हूँ-SS
मूर्ख यही कल्पना करे, स्व-पर विवेक न कभी धरे-2
भेद ज्ञान को हो-3 वो कभी न पायें रे-SS॥1256॥

(139) पाँच पाप में प्रवृत्ति हो, वो मिथ्याचारित्र अहो-2
उसमें दुख ही दुक्ख अहो-SS
कर्म निरंतर बँधते हैं, संतति यहाँ वर्धते हैं-2
ये ही सब कर्म हो-3 भव भ्रमण करायें रे-SS॥1257॥

(140) पर द्रव्यों में राग करे, अथवा उनमें द्वेष करे-2
मिथ्याचारित यहाँ धरे-SS
शुद्ध भाव से चलित हुआ, शुद्ध चरित से विमुख रहे-2
भव में आकर के हो-3 भव भ्रमण बढ़ाए रे-SS॥1258॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(141) भाव शुभाशुभ रहें यहाँ, पाप पुण्य उत्पन्न वहाँ–2
छूटे निश्चय भाव यहाँ–SS
उपादान नहिं बुद्धि रहे, स्थिर नहिं चारित्र रहे–2
शुद्ध चारित से हो–3 वह भ्रष्ट हो जाये रे–SS॥1259॥

(142) उपादेय शुभ–अशुभ कहे, चारित से वो भ्रष्ट रहे–2
पुण्य–पाप में उलझ रहे–SS
चारों गति में भ्रमण करें, तन मन के वे दुक्ख सहें–2
ज्ञानी इन सबमें हो–3 ज्ञाता हो जाये रे–SS॥1260॥

(143) देवों में इन्द्रिय सुख है, विषयों की चाहत भी है–2
तृष्णा पैदा करती है–SS
चाह न हो गर पूर्ण वहाँ, तो दुख ही दुख रहे वहाँ–2
ऐसे दुख स्वर्गों हो–3 में भरे दिखाएँ रे–SS॥1261॥

(144) अनित्य पीड़ाकारक हैं, कर्मबंध का कारण हैं–2
तृष्णा वृद्धिकारक हैं–SS
पराधीन वे इन्द्रिय सुख, उन्हें कहें ज्ञानीजन दुख–2
सुख की महिमा को हो–3 ज्ञानी समझाएँ रे–SS॥1262॥

(145) भव में सुख या दुक्ख यहाँ, इनमें कोई भेद कहाँ–2
दोनों ही इक रूप यहाँ–SS
ऐसा तत्त्व नहीं समझे, चारितवान् वो नहीं यहाँ–2
वो तो मिथ्यात्वी हो–3 जग में कहलाए रे–SS॥1263॥

(146) पुण्य को अच्छा यहाँ कहे, पाप बुरा है यहाँ कहे–2
भेदज्ञान नहिं रहे उसे–SS
चारित से वो भ्रष्ट यहाँ, दर्शन उसमें नहीं यहाँ–2
संयम धरकर भी हो–3 भव भ्रमण बढ़ाए रे–SS॥1264॥

(147) पापारंभ सभी तजकर, पुण्य रूप संयम धरकर–2
उपादेय पुण्य को भजकर–SS
कषायरूप वर्तना करे, उससे नहिं मिथ्यात्व हटे–2
व्यवहार संयम–हो–3 से मुक्ति न पाये रे–SS॥1265॥

(147) पर पदार्थ सब बाह्य यहाँ, लोभ के कहे निमित्त यहाँ–2
कर्म का होवे बंध यहाँ–SS
बंध वस्तु से नहिं होता, बंध तो भावों से होता–2
भाव नहीं हों – हो–3 तो बंध न पाये रे–SS॥1266॥

(149) मिथ्यादर्शन योग यहाँ, कर्मास्रव भव बंध यहाँ–2
दुखदायी भव रूप यहाँ–SS
योगी इनका त्याग करें, शुद्धातम को प्राप्त करें–2
तब ही आस्रव से हो–3 योगी बच पाये रे–SS॥1267॥

बंध–अधिकार

(150) कार्माण वर्गणा रहें, कर्मरूप परिणमन करें–2
कषाय–योग जब जीव धरें–SS
उससे आस्रव होता है, ज्ञानी इसको बंध कहें–2
इससे पराश्रित हो–3 ये जीव हो जाये रे–SS॥1268॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(151) प्रकृति-प्रदेश-स्थिति यहाँ, बंध में हो अनुभाग यहाँ-2
कर्मबंध चउ भेद यहाँ-SS
ये सब दुख के कारण हैं, ऐसा निश्चय कहे यहाँ-2
ज्ञानीजन इससे हो-3 मुक्ति को पायें रे-SS॥1269॥

(152) कर्मों सा फल मिले यहाँ, प्रकृति बंध वो रहे यहाँ-2
समय है स्थिति बंध यहाँ-SS
है प्रदेश संश्लेषपना, फल शक्ति अनुभाग यहाँ-2
चारों ही कर्म हो-3 चउकार्य करायें रे-SS॥1270॥

(153) राग-द्वेष से कर्म बंधें, ऐसा श्री जिनदेव कहें-2
हम सब इससे यहाँ बचें-SS
राग-द्वेष नहिं करें यहाँ, करें योग से क्रिया यहाँ-2
कर्म का बंध हो-3 किंचित नहिं पाये रे-SS॥1271॥

(154) तन पे नहिं चिकनाई हो, धूल भले ही आई हो-2
लिप्त न वो हो पाये हो-SS
कितना भी वह काम करे, छेदन-भेदन खूब करे-2
चिकनाई के बिन हो-3 नहिं मैल चिपकता रे-SS॥1272॥

(155) राग-द्वेष नहिं भाव जहाँ, कर्म धूलि नहिं लगे वहाँ-2
घूमे चाहे जहाँ-तहाँ-SS
चाहे छेदन भेदन हो, उनके मध्य भी रहना हो-2
राग-द्वेषों से हो-3 सब कर्म बँधायें रे-SS॥1273॥

(156) करे नहीं व्यापार यहाँ, तेल आदि से युक्त यहाँ-2
उसको लगती धूल यहाँ-SS
भले नहीं व्यापार करे, तेल धूल जल्दी पकड़े-2
मैलापन आये हो-3 तो व्यक्ति नहाये रे-SS॥1274॥

(157) क्रोध आदि से युक्त यहाँ, योगों से है शांत यहाँ-2
फिर भी कर्मन बंध यहाँ-SS
भले नहीं आरंभ करे, कोई भी नहिं कार्य करे-2
उसको कर्मों का हो-3 नित बंध बताएँ रे-SS॥1275॥

(158) सुखमय आतम नित्य यहाँ, शुद्ध अमूर्तिक सिद्ध यहाँ-2
सहती जीवन मरण यहाँ-SS
सुख-दुख पीड़ा सहे यहाँ, कर्मों का ये खेल यहाँ-2
कर्म की शक्ति हो-3 ऐसा कर पाये रे-SS॥1276॥

(159) मिथ्यादृष्टि मूढ़ यहाँ, हिंसा निशदिन करे यहाँ-2
भाव अशुभ वो धरे यहाँ-2
सतत पाप अनुबंध करे, दुखदायी संबंध करे-2
हिंसा का फल भी हो-3 दुखमय ही पाये रे-SS॥1277॥

(160) जन्म-मरण, सुख-दुक्ख यहाँ, रक्षण-पीड़न कार्य यहाँ-2
कर्मों से उत्पन्न यहाँ-SS
अन्य लोग बस निमित्त हैं, फलदायी निजकर्म यहाँ-2
कर्म नहिं हों तो हो-3 फल नहिं मिल पाये रे-SS॥1278॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(161) मुझे मारते गैर यहाँ, मैं भी मारूँ गैर यहाँ-2
गैर हमें दें दुक्ख यहाँ-SS
मैं दूँ पर को दुक्ख यहाँ, मुझे जिलाते गैर यहाँ-2
ऐसी मान्यता हो-3 मिथ्यात्व कराये रे-SS॥1279॥

(162) कोई नहीं उपकार करे, कोई नहीं अपकार करे-2
मुझसे अच्छा बुरा अरे-SS
मैं चाहूँ तो अच्छा हो, मैं चाहूँ तो बुरा अहो-2
खोटा यह भाव हो-3 मिथ्यात्व बढ़ाये रे-SS॥1280॥

(163) निमित्त कर्ता दिखे यहाँ, कर्मों से उत्पन्न यहाँ-2
जीव अकर्ता दिखे यहाँ-SS
सब संकल्प विकल्प यहाँ, कर्मोदय से रहें यहाँ-2
कर्तापन जीव हो-3 में नजर न आये रे-SS॥1281॥

(164) वस्त्र में कीचड़ लग जाये, झट से मैला हो जाये-2
नहीं किसी को फिर भाये-SS
मिथ्या कषाय लग जायें, आतम मैली हो जाये-2
दर्श-बुध-चारित-हो-3 मैले हो जायें रे-SS॥1282॥

(165) जब तक मल सत्ता में हो, तब तक मन में मैल अहो-2
निर्मलता मन में नहिं हो-SS
जब क्षायिक सम्यक् होता, मन तब निर्मल ही होता-2
फिर मन में मलपन हो-3 त्रयकाल न आये रे-SS॥1283॥

(166) शंख पड़ा हो कीचड़ में, नहीं कालिमा हो उसमें-2
रहे सफेद निजी गुण में-SS
वीतराग का भाव लिये, भोग करे अभक्ष घर में-2
उसको मिथ्यात्व हो-3 का बंध न होवे रे-SS॥1284॥

(167) तंदुल मस्त्य न भोग करे, केवल अपने भाव करे-2
सप्त नरक में दुक्ख भरे-SS
भले लोग नहिं कर पायें, भाके भोग में सुख, चाहे-2
उसको भावों से हो-3 नित कर्म बंधायें रे-SS॥1285॥

(168) स्वर्ण पड़ा है कीचड़ में, नहिं अशुद्ध होता उसमें-2
ऐसा ज्ञानी हमें कहें-SS
त्यों ज्ञानी भी भोग करें, उनमें नहिं आसक्ति धरें-2
इससे मिथ्यात्व हो-3 का कर्म न आये रे-SS॥1286॥

(169) तीन कषायें नहीं यहाँ, वीतराग मय भाव यहाँ-2
ऐसे वे मुनिराज यहाँ-SS
कृत कारित नहिं अनुमोदन, बना रहा श्रावक भोजन-2
उसको लेकर भी हो-3 बंधन नहिं पाये रे-SS॥1287॥

(170) श्रावक आहार बनाता है, आरंभ दोष लगाता है-2
पाप पुण्य द्वय पाता है-SS
वीतरागमय महामुनि, उनको दोष न आता है-2
उनकी शुद्धि में हो-3 नहिं कमी दिखाए रे-SS॥1288॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(171) वीतराग मुनिराज यहाँ, जानें विषय कषाय यहाँ-2
रहते जो निर्बन्ध यहाँ-SS
ज्ञान से भी हो बंध यहाँ, तो भगवन को बंध यहाँ-2
ज्ञान से कर्म हो-3 सब ही मिट जायें रे-SS॥1289॥

(172) ज्ञानी जानें वस्तु सभी, वेदन करते नहीं कभी-2
राग न करते यहाँ कभी-SS
अज्ञानी नित राग करें, वेदन वस्तु समूह करें-2
अज्ञानी वस्तु हो-3 को जान न पाये रे-SS॥1290॥

(173) वस्तु है जिस रूप यहाँ, जाने उस ही रूप यहाँ-2
इसको कहते ज्ञान यहाँ-SS
राग-द्वेष, मद सहित यहाँ, उसको ज्ञान न कहें यहाँ-2
ज्ञान में राग हो-3 नित बंध कराये रे-SS॥1291॥

(174) लोहे में नहिं स्वर्ण दिखे, स्वर्ण में लोहा नहीं दिखे-2
द्रव्य हो वो पर्याय रहे-SS
ज्ञान में नहिं अज्ञान रहे, अज्ञ में हो नहिं ज्ञान अरे-2
जैसा हो द्रव्य हो-3 वैसी पर्यायें रे-SS॥1292॥

(175) ज्ञानी ज्ञान स्वरूपी है, साधक सम्यक् रूपी है-2
मिथ्यात्व बंध न उसको है-SS
अज्ञानी अज्ञान लिये, मिथ्यात्वादिक बंध किये-2
ज्ञानी नहिं बंधक हो-3 ये बात बताएँ रे-SS॥1293॥

(176) पूर्व कर्म का उदय रहे, सुख-दुख रूप विचित्र रहे-2
ज्ञानी इन्हें निमित्त कहे-SS
अज्ञानी नित भोग रहा, कर्म बंध नित बाँध रहा-2
ज्ञानी अबंधक हो-3 ऋषिजन बतलाएँ रे-SS॥1294॥

(177) कषाय रूप परिणाम करे, संसारी मोहादि करे-2
नये कर्म का बंध करे-SS
बद्धकर्म अनुभागोदय, सुगति व दुर्गति प्राप्त करे-2
कर्मोदय से ही हो-3 नहिं कर्म बँधायें रे-SS॥1295॥

(178) देव मनुष्य सुगति यहाँ, दुर्गति नरक तिर्यंच यहाँ-2
गतियोग्य तन ग्रहे यहाँ-SS
उसमें इन्द्रिय पैदा हों, वैसे पाता विषय यहाँ-2
कर्मों की गति को हो-3 ज्ञानी बतलाएँ रे-SS॥1296॥

(179) विषय चाह इन्द्रिय करतीं, राग-द्वेष पैदा करतीं-2
पुण्यपाप कर्म भरतीं-SS
उन्हीं कर्म के कारण ही, सुख-दुख भी पैदा करतीं-2
इन्द्रिय का राग हो-3 दुख ही दुख लाये रे-SS॥1297॥

(180) दुख से जो भयभीत रहे, मिथ्या, कषाय त्याग करे-2
ज्ञानी उसको सभी कहें-SS
मिथ्यात्वादि त्याग यहाँ, दुखद कर्म का नाश करे-2
कर्मों के क्षय से हो-3 मुक्ति मिल जाये रे-SS॥1298॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(118) चेतन और अचेतन में, जीव को यहाँ वस्तुओं में-2
राग-द्वेषमय भाव जो हों-SS
उससे हों परिणाम यहाँ, शुभ होते या अशुभ यहाँ-2
दोनों परिणाम हो-3 भव में भटकाएँ रे-SS॥1299॥

(182) प्रशस्त को सब पुण्य कहें, अप्रशस्त को पाप कहें-2
दोनों ही पौद्गलिक रहें-SS
मूर्तिक-सुख दुख दाता हैं, भव के ये निर्माता है-2
इनसे बच जायें हो-3 वो मुक्ति पाये रे-SS॥1300॥

(183) पुण्य पाप सुख दुक्ख यहाँ, उन्हें भोगता हुआ यहाँ-2
मूर्तिक होता जीव यहाँ-SS
मूर्तिक का फल मूर्तिक है, भोगे न जो अमूर्तिक है-2
तब ही संसारी हो-3 मूर्तिक फल पायें रे-SS॥1301॥

(184) पुण्य पाप के वश होता, अमूर्त भी मूर्तिक होता-2
कर्मबंध कारण होता-SS
पुण्यपाप से मुक्त जो हो-वही अमूर्तिक हो जाता-2
ध्यान से मूर्तिक हो-3 हो अमूर्त जाये रे-SS॥1302॥

(185) मेघों से आकाश यहाँ, हो विकार को प्राप्त यहाँ-2
मेघ हटें तो साफ यहाँ-SS
कर्म से आत्म विकारी हो, कर्म हटें अविकारी हो-2
शुद्ध स्वभाव हो-3 चेतन पा जाये रे-SS॥1303॥

(186) अरहंतों की भक्ति यहाँ, सबमें करुणाभाव यहाँ-2
चारित में हो प्रीति यहाँ-SS
ये सारे परिणाम यहाँ, पुण्य बंध के कार्य यहाँ-2
इनसे जीवन में हो-3 निर्मलता आये रे-SS॥1304॥

(187) पूज्य प्रभु की निंदा में, निर्दयता हो प्राणी में-2
मन हिंसा पापादिक में-SS
ये सारे परिणाम यहाँ, पाप कर्म का बंध यहाँ-2
ऐसे ही भाव हो-3 दुर्गति ले जायें रे-SS॥1305॥

(188) शाश्वत सुख का ज्ञान नहीं, गुण स्वभाव पहचान नहीं-2
उन्हें है निज का भान नहीं-SS
पाप कर्म से दुक्ख यहाँ, पुण्य लगे सुख श्रेष्ठ यहाँ-2
भेद जीवन में हो-3 जानें सुख पाये रे-SS॥1306॥

(189) पुण्य-पाप हों कर्म यहाँ, भव वन दुखद प्रवेश यहाँ-2
चारों गति में भ्रमण यहाँ-SS
शुद्ध बुद्धि वाले जो हैं, करें न इनमें भेद यहाँ-2
दोनों ही भव में हो-3 नित भ्रमण करायें रे-SS॥1307॥

(190) भोग त्याग निजरूप रमें, पुण्य-पाप का भाव तजें-2
तब ही भव का भ्रमण बचे-SS
इक दिन कर्म रहित होकर, शुद्ध आतम को प्राप्त करें-2
मुक्ति को पाकर हो-3 सिद्धि पा जायें रे-SS॥1308॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

संवर अधिकार

(191) हो मिथ्या भव्य पाप आगम, जिससे इसको रोकें हम–2
उसे कहें संवर भगवन्–SS
इसके हैं दो भेद यहाँ, द्रव्य–भावमय रूप यहाँ–2
संवर बिन निर्जर हो–3 नहिं काम में आये रे–SS।।1309।।

(192) मिथ्यात्व भाव सब रुक जायें, तभी भाव संवर आयें–2
ऐसा गुरुवर बतलाएँ–SS
द्रव्य कर्म रुक जायें जब, होवे द्रव्य यहाँ संवर–2
दोनों ही संवर हो–3 निर्जरा करायें रे–SS।।1310।।

(193) द्रव्य कर्म हों कषाय से, फिर हो उनका उदय अरे–2
भाव कर्म फिर हों उससे–SS
द्रव्य भाव द्वय कर्म यहाँ, मिटें तो मिटता राग यहाँ–2
वीतरागता हो–3 तब ही प्रकटाए रे–SS।।1311।।

(194) मोही होता दुखी यहाँ, दुख से चाहे मुक्ति यहाँ–2
करे वृत्ति पर द्रव्य यहाँ–SS
आत्मज्ञान फिर मिट जाये, मोह उभरकर आ जाये–2
अज्ञानी पर से हो–3 दुख ही उपजाए रे–SS।।1312।।

(195) आत्म ज्ञान हो नष्ट जहाँ, बढ़ता है मिथ्यात्व वहाँ–2
कर्मों का हो बंध वहाँ–SS
मोह बंध करवाता है, नाना दुक्ख दिखाता है–2
सुख को पाने को हो–3 भव मोह हटाओ रे–SS।।1313।।

(196) ग्रंथारंभ न रखें यहाँ, भेदज्ञान से युक्त यहाँ–2
पुण्यपाप नहिं चाह यहाँ–SS
जो कषाय नहिं रंच रखें, वीतरागता आत्म लखें–2
ऐसे ही साधु हो–3 निज स्वभाव पायें रे–SS।।1314।।

(197) उदासीन हैं विषयों में, जागृत हैं निज दर्शन में–2
शुद्ध आतम का ध्यान करें–SS
निर्मलता मन लाते हैं, वही कषाय मिटाते हैं–2
ज्ञान पा करके हो–3 सुखमय हो जायें रे–SS।।1315।।

(198) पुत्र कलत्र सचेतन हैं, वस्त्र मकान अचेतन हैं–2
ये सब मूर्तिक पुद्गल हैं–SS
कहता इन्हें मनोज्ञ यहाँ, कभी कहे अमनोज्ञ यहाँ–2
आत्मा अमूर्तिक हो–3 ये मूर्त बताएँ रे–SS।।1316।।

(199) है अमूर्त यह आत्म यहाँ, पुद्गल हैं सब मूर्त यहाँ–2
ये सुख–दुखमय नहीं यहाँ–SS
मूढ़ यहाँ संबंध करे, मूर्तिक का वह बंध करे–2
पुद्गल को मूढ़ी हो–3 अपना बतलाएँ रे–SS।।1317।।

(200) द्रव्य अनंतानंत यहाँ, अपने अपने रूप यहाँ–2
करें न अच्छा बुरा यहाँ–SS
जिन्हें हो तत्त्वज्ञान यहाँ, राग–द्वेष नहिं करें यहाँ–2
अपने में रमकर हो–3 शुद्धात्म सजायें रे–SS।।1318।।

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-ऽऽ

(201) जड़ तन दिखाई देता है, चेतन कभी न दिखता है-2
कौन उपकारी होता है-ऽऽ
कौन अपकारी कहें यहाँ, समता भाव हि रखें यहाँ-2
किस पर हम राग हो-3 और द्वेष दिखाएँ रे-ऽऽ॥1319॥

(202) चेतन से तन भिन्न यहाँ, कैसे अपना कहें यहाँ-2
स्वजन करें उपकार यहाँ-ऽऽ
मात-पिता पुत्र स्त्री भाई, शत्रु करें अपकार यहाँ-2
इनमें क्यों मोह हो-3 कर भ्रमण बढ़ाए रे-ऽऽ॥1320॥

(203) तन का जो उपकार करें, उनको सब ही स्वजन कहें-2
शत्रु तो अपकार करें-ऽऽ
चेतन तन से भिन्न यहाँ, इन सबसे वो भिन्न यहाँ-2
चेतन को तन से हो-3 मतलब नहिं लाये रे-ऽऽ॥1321॥

(204) शत्रु मित्र तन दिखें यहाँ, दिखे न उनकी आत्म यहाँ-2
किसको शत्रु कहें यहाँ-ऽऽ
किसको अच्छा कहूँ यहाँ, किसको बुरा मैं कहूँ यहाँ-2
समता का भाव हो-3 मन में ले आयें रे-ऽऽ॥1322॥

(205) तन मम अच्छा बुरा करे, तन में नहिं सामर्थ अरे-2
अन्य की क्या फिर बात कहें-ऽऽ
अन्य कोइ मम बुरा करे, अथवा अच्छा यहाँ करे-2
ऐसा जो माने हो-3 वह झूठ बताए रे-ऽऽ॥1323॥

(206) कोइ न मम गुण हरण करे, कोइ नहीं उत्पन्न करे-2
अच्छा बुरा न कोइ करे-ऽऽ
मैं पर को गुण नहीं करूँ, और न उनका नाश करूँ-2
ऐसा निश्चय से हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-ऽऽ॥1324॥

(207) किसी पे हम उपकार करें, किसी का हम अपकार करें-2
कल्पनाएँ ये मिथ्या हैं-ऽऽ
मिथ्यादृष्टि जीव यहाँ, कल्पनाएँ ये करें यहाँ-2
ज्ञानी समदृष्टि हो-3 ये भाव न लाए रे-ऽऽ॥1325॥

(208) दर्शन ज्ञान चरित्र यहाँ, इन्द्रिय गोचर नहीं यहाँ-2
गुरु से नहिं उत्पन्न यहाँ-ऽऽ
खुद से हो उत्पन्न यहाँ, खुद से ही हो नष्ट यहाँ-2
ऐसा ही गुरुवर हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-ऽऽ॥1326॥

(209) जैसा हो परिणाम यहाँ, वैसा हो परिणमन यहाँ-2
बनती है पर्याय यहाँ-ऽऽ
कोई न कर्ता हर्ता है, कोई न सम्यक् दाता है-2
खुद का ही भाव हो-3 निज काम में आये रे-ऽऽ॥1327॥

(210) इन्द्रिय धन-तन आदि यहाँ, मेरे अपने कहें यहाँ-2
समझो ये व्यवहार यहाँ-ऽऽ
तत्त्वदृष्टि निश्चय नय से, मेरा कुछ भी नहीं यहाँ-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 सम्यक् कहलाए रे-ऽऽ॥1328॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(211) तन इन्द्रिय धन आदि यहाँ-निश्चय से निज कहें यहाँ-2
तो तन आतम एक यहाँ-SS
जन्म मरण फिर कैसे हो, तन ही आतम कहें यहाँ-2
तत्त्व दृष्टि से हो-3 ये भिन्न बताएँ रे-SS॥1329॥

(212) निश्चय व व्यवहार यहाँ, समझो दोनों भेद यहाँ-2
इसके बिन नहिं ज्ञान यहाँ-SS
स्वद्रव्य को निज रूप कहें, पर द्रव्य पर रूप कहें-2
ऐसे ज्ञानी के हो-3 आस्रव रुक जायें रे-SS॥1330॥

(213) पर्यायार्थिक दृष्टि यहाँ, कहती है कुछ अलग यहाँ-2
करे शुभाशुभ कर्म यहाँ-SS
जीव दूसरा कर्म करे, फल को दूजा चखे यहाँ-2
दृष्टि को जानो हो-3 तब समझ में आये रे-SS॥1331॥

(214) द्रव्यार्थिक नय बात कहे, बात सही ये यहाँ लगे-2
सभी लोग ऐसा समझें-SS
जीव यहाँ जो कर्म करे, उसका फल भी वही करे-2
कोई किसी का हो-3 भी फल नहिं पाये रे-SS॥1332॥

(215) पुण्य यहाँ जो करता है, देव गति फल वरता है-2
पाप से नरक में पड़ता है-SS
अपना जैसा कर्म यहाँ, वैसा ही फल मिले यहाँ-2
निश्चय की भाषा हो-3 सच ही बतलाए रे-SS॥1333॥

(216) जीव सर्वथा नित्य नहीं, और सर्वथा अनित्य नहीं-2
यही मानना ठीक यहीं-SS
जीव सर्वथा नित्य कहें, तो भव में नहिं कोइ रहें-2
अनित्य जो कह दें हो-3 वह मोक्ष न पाये रे-SS॥1334॥

(217) कर्म उदय का योग यहाँ, भावों का संयोग यहाँ-2
जीव करे बहु कर्म यहाँ-SS
फिर उसके फल को भोगे, भाव शुभाशुभ नहिं रोके-2
भाव रुक जायें हो-3 तो फल रुक जाये रे-SS॥1335॥

(218) पाँचों इन्द्रिय विषय यहाँ, सभी अचेतन मयी यहाँ-2
इनसे अच्छा बुरा कहाँ-SS
भ्रमवश इनमें राग करे, सुख दुख रूपी भाव करे-2
इन्द्रिय विषयों में हो-3 क्यूँ राग बढ़ाए रे-SS॥1336॥

(219) द्रव्य और गुण पर्यायें, ये सुख दुख नहिं दिलवायें-2
भ्रांति नहीं गर हम लायें-SS
गर संकल्प नहीं होता, तो सुख-दुक्ख नहीं होता-2
द्रव्य गुण पर्यय हो-3 निष्क्रिय बतलाएँ रे-SS॥1337॥

(220) निंदा स्तुति वचन मिलें, इनसे सुख दुख व्यर्थ कहें-2
वचन न अच्छा-बुरा करें-SS
अज्ञानी इन वचनों में, व्यर्थ ही राग-द्वेष करें-2
ज्ञानी पुद्गल की हो-3 पर्याय बताएँ रे-SS॥1338॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-ऽऽ

(221) मोह के कारण जीव यहाँ, पर से सुख-दुख कहे यहाँ-2
बाह्य वस्तु में रमें यहाँ-ऽऽ
निर्मोही पर वस्तु तजे, पाये निज के स्वयं मजे-2
मोह सुख-दुख का हो-3 कारण बतलाएँ रे-ऽऽ॥1339॥

(222) वचनों से नहिं निंदा हो, वचनों से नहिं स्तुति हो-2
भाव हैं इसमें मुख्य अहो-2
अज्ञानी यह सोच रहा, मुझको अच्छा बुरा कहा-2
ऐसा वह माने हो-3 निज ज्ञान न लाए रे-ऽऽ॥1340॥

(223) पुद्गल आदिक द्रव्यों में, उनके ही गुण दोषों में-2
हर्ष विवाद न हों उनमें-ऽऽ
पर द्रव्यों के दोष व गुण, नहिं प्रवेश करते मुझमें-2
मेरा ही मोह हो-3 मदमत्त बनाए रे-ऽऽ॥1341॥

(224) मेरा हित ये करे यहाँ, करता मेरा अहित यहाँ-2
व्यर्थ ये चिंतन करे यहाँ-ऽऽ
कोई चिंतन यहाँ करे, मेरा कुछ भी नहीं बने-2
मेरा पर से कुछ हो-3 नहिं काम बनाये रे-ऽऽ॥1342॥

(225) जीव कोई अच्छा सोचे, उसका ही व्यापार बढ़े-2
बुरे सोच पर यहाँ घटे-ऽऽ
ऐसा यदि माना जाये, तो वह घटे न बढ़ पाये-2
ऐसे विचार हो-3 बेकार बताएँ रे-ऽऽ॥1343॥

(226) मोही पहले इष्ट करे, बाद में उसे अनिष्ट कहे-2
अनिष्ट को भी इष्ट कहे-ऽऽ
कुछ भी इष्ट-अनिष्ट नहीं, बात हुई ये सिद्ध यहीं-2
अज्ञानी बात हो-3 ये सिद्ध करायें रे-ऽऽ॥1344॥

(227) स्वभाव से ही श्वेत यहाँ, होता निर्मल शंख यहाँ-2
अन्य किसी से नहीं यहाँ-ऽऽ
रत्नत्रय आराधन में, त्यों हो जीव प्रवृत्त यहाँ-2
गैर कोई भी हो-3 न प्रवृति कराये रे-ऽऽ॥1345॥

(228) जैसे चूना श्वेत यहाँ, पर को करता श्वेत यहाँ-2
उसका यही स्वभाव यहाँ-ऽऽ
श्रद्धा कर जाने देखे, त्यों ही पर को आत्म यहाँ-2
ऐसा स्वभाव हो-3 जिनदेव बताएँ रे-ऽऽ॥1346॥

(229) लाल फूल संग हो जाये, स्फटिक लाल दिखती पाये-2
स्फटिक स्वभाव ये बतलाए-ऽऽ
मोह की संगति पा करके, जीव भी मोही हो जाये-2
जीव का ऐसा हो-3 निज भाव बताएँ रे-ऽऽ॥1347॥

(230) लाल पुष्प जब हट जाये, स्फटिक धवलमय दिख जाये-2
शुद्ध रूपमय हो जाये-ऽऽ
मोह नाश जब जीव करे, स्वयं शुद्धता प्राप्त करे-2
ऐसा स्वभाव हो-3 आतम का गायें रे-ऽऽ॥1348॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(231) बीज दुखों का मोह यहाँ, साधक छोड़े जान यहाँ-2
त्यागी समझो वही यहाँ-SS
वो ही संवर करता है, आस्रव वही रोकता है-2
ऐसा ही साधु हो-3 ज्ञानी कहलाए रे-SS॥1349॥

(232) लगते अच्छे-बुरे यहाँ, सुख-दुखदायी कहे यहाँ-2
मोही पर में रहे यहाँ-SS
चिरकालीन करे तप वह, सच्चा धर्म न मिले यहाँ-2
रागी-द्वेषी को हो-3 नहिं धर्म सुहाए रे-SS॥1350॥

(233) भाव शुभाशुभ करे यहाँ, पुण्य-पाप में रहे यहाँ-2
अज्ञानी ये करे यहाँ-SS
अष्ट कर्म नित बाँध रहा, दुख खुद ही वह पाल रहा-2
शुद्ध स्वभाव हो-3 वह जान न पाये रे-SS॥1351॥

(234) पुण्य-पापमय कर्म यहाँ, पुद्गल से उत्पन्न यहाँ-2
फल अच्छा या बुरा यहाँ-SS
कर्म रहित हो सिद्ध समां, पा जाता सिद्धत्व यहाँ-2
ज्ञानी ही मुनिवर हो-3 ऐसा कर पायें रे-SS॥1352॥

(235) ज्ञानवान शुद्धात्म यहाँ, पर को ग्रहण न तजे यहाँ-2
सम्यग्ज्ञानी वही यहाँ-SS
अज्ञानी मूढ़ी हैं जो, पर को गहें व तजते वो-2
ज्ञानी-अज्ञानी हो-3 में भेद बताएँ रे-SS॥1353॥

(236) भक्ति सहित वंदना करें, सामायिक प्रतिक्रमण करें-2
प्रत्याख्यान स्तवन करें-SS
कर्मास्रव को रोकें वो, संवर-निर्जर यहाँ करें-2
ऐसे ही साधु हो-3 गुणवान कहायें रे-SS॥1354॥

(237) शुद्धातम में लीन हैं जो, सर्व द्रव्य के त्यागी वो-2
वीतराग गुणधारी जो-SS
राग-द्वेष तज दिये यहाँ, सामायिक है यही यहाँ-2
समतामय भाव हो-3 तब ही आ पाये रे-SS॥1355॥

(238) निज शुद्धातम लीन यहाँ, रत्नत्रय मय गुणी यहाँ-2
निष्कलंक चैतन्य यहाँ-SS
शुद्ध तत्त्व स्तुति करते, कहते उसे स्तव संत यहाँ-2
स्तुति मर्मज्ञ हो-3 ये बात बताएँ रे-SS॥1356॥

(239) रत्नत्रय को प्राप्त किया, मन को यहाँ पवित्र किया-2
अरहंतों को नमन किया-SS
ज्ञानी इसी शुभ क्रिया को, कहते हैं वंदना है वो-2
इसको ही उत्तम हो-3 वंदना बताएँ रे-SS॥1357॥

(240) कर्मों का हो उदय यहाँ, हों प्रमादवश कर्म यहाँ-2
व्रत में लगते दोष यहाँ-SS
उन सबको मिथ्या कहने, करते हैं प्रतिक्रमण यहाँ-2
पापों का त्याग हो-3 प्रतिक्रमण कहाए रे-SS॥1358॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(241) पाप बंध नहिं आगे हो, शुद्धातम की प्राप्ति हो-2
पर में भाव न मेरा हो-SS
शुद्ध भाव जब करते हैं, तभी त्याग सब करते हैं-2
ये प्रत्याख्यान हो-3 गुरुवर बतलाएँ रे-SS॥1359॥

(242) ये तन यहाँ अचेतन है, कर्मोत्पन्न विनाशन है-2
हों प्रवृत्त पागलपन है-SS
ज्ञानी तन को नहिं चाहें, इससे मोह हटा जायें-2
इसको कायोत्सर्ग हो-3 ज्ञानी बतलाएँ रे-SS॥1360॥

(243) स्थित स्वात्म तत्त्व में जो, षड् आवश्यक रत हैं जो-2
निष्प्रमाद समता में जो-SS
पुण्य पाप से रहित है वो, संवर उन मुनि को ही हो-2
ऐसे ही योगी हो-3 पुंगव कहलाएँ रे-SS॥1361॥

(244) मिथ्याज्ञान हटाये जो, सम्यग्ज्ञान समाये जो-2
आत्मज्ञान में लीन हैं वो-SS
आत्मा से निज को जानें, उन ऋषि में संवर जानें-2
संवर बिन संयम हो-3 अति भार बताएँ रे-SS॥1362॥

(245) द्रव्य से ज्ञानी भोक्ता है, भाव से वही अभोक्ता है-2
मन में उदासीनता है-SS
मूर्ख भाव से भोक्ता है, द्रव्य से वही अभोक्ता है-2
भोक्ता भोक्ता में हो-3 ये फर्क बताएँ रे-SS॥1363॥

(246) द्रव्य से जो निवृत्त यहाँ, वे हैं सबसे पूज्य यहाँ-2
त्यागी-योगी वही यहाँ-SS
भावों से निवृत्त हैं जो, मुनियों से भी पूज्य हैं वो-2
उनकी महिमा को हो-3 ये दुनियाँ गाये रे-SS॥1364॥

(247) अंतस् से नहिं त्याग करें, ऊपर ऊपर त्याग करें-2
आस्रव ही वो नित्य करें-SS
अंतरंग से त्यागी जो, वो संवर कर ज्ञान वरें-2
ऐसे ही भव्य हो-3 शिव पथिक बताएँ रे-SS॥1365॥

(248) द्रव्य भाव दोनों लखकर, त्यागो यथार्थ चिंतन कर-2
हेय यहाँ दोनों भजकर-SS
सब कर्मों से दूर रहो, भावों से निवृत्त अहो-2
उसको ही भव से हो-3 मुक्ति मिल पाये रे-SS॥1366॥

(249) तन आतम से भिन्न यहाँ, लिंग है तन से युक्त यहाँ-2
मुक्ति हेतु नहिं लिंग यहाँ-SS
मुक्ति प्राप्त करना चाहें, वे तन से हों भिन्न यहाँ-2
तन-धन कर्मों के हो-3 ही फल बतलाएँ रे-SS॥1367॥

(250) मुक्ति हेतु तन को मानें, भाव नहीं वो पहचानें-2
नामकर्म वो नहिं जानें-SS
नामकर्म मिट जायेगा, तन कैसे रह पायेगा-2
कर्म मिट जायें हो-3 तब मुक्ति पायें रे-SS॥1368॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(251) मोक्ष यहाँ जो भी चाहे, वो संवर को अवगाहे-2
पर वस्तु को तज जाये-SS
चेतन ज्ञान स्वरूप यहाँ, ध्येय रूप उपादेय यहाँ-2
उसका ही ध्यान हो-3 संवर ले आये रे-SS॥1369॥

(252) जो योगी मुनिराज यहाँ, वीतराग निज तत्त्व यहाँ-2
रत्नत्रय शिवमार्ग यहाँ-SS
धारण कर जो करें गमन, वे दुक्खों का करें क्षरण-2
शीघ्र संवर कर हो-3 दुख सभी मिटायें रे-SS॥1370॥

निर्जरा अधिकार

(253) पूर्वोपार्जित कर्म यहाँ, थोड़ा सा हो नाश यहाँ-2
उसे निर्जरा कहें यहाँ-SS
एक यहाँ सविपाक कहें, एक यहाँ अविपाक कहें-2
दो भेद इसके हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-SS॥1371॥

(254) स्वयं जो हो निर्जरा यहाँ, वो होती सविपाक यहाँ-2
होती रहती निरत यहाँ-SS
तप-संयम से आती है, वो अविपाक कहाती है-2
कर्मों का नाश हो-3 अविपाक कराये रे-SS॥1372॥

(255) दावानल की आग लगे, जंगल के सब वृक्ष जले-2
सूखे तरु हों या गीले-SS
ध्यान अग्नि जब जल जाये, काल कर्म का आ जाये-2
सारे ही कर्म हो-3 खुद भस्म हो जायें रे-SS॥1373॥

(256) क्रोधादिक को नाश किया, उपक्रम विशुद्ध ध्यान किया-2
कर्मों का कुछ क्षरण किया-SS
भाव निर्जरा इसे कहें, द्रव्य निर्जरा नित्य रहे-2
ऐसा ही कार्य हो-3 भव मुक्ति दिलाए रे-SS॥1374॥

(257) आत्म तत्त्व में लीन रहें, ध्यान में निरत प्रवृत्त रहें-2
संवर सभी कषाय करें-SS
वही निर्जरा करते हैं, सभी गुणों को वरते हैं-2
ऐसे साधू की हो-3 महिमा सब गायें रे-SS॥1375॥

(258) जल को रोके बिना यहाँ, सरवर खाली न हो यहाँ-2
है प्रसिद्ध ये बात यहाँ-SS
मिथ्यात्वादिक संवर बिन, नहिं हो अघ निर्जरा यहाँ-2
निर्जर बिन सब ही हो-3 शुभ व्यर्थ बताएँ रे-SS॥1376॥

(259) जिसका चित्त एकाग्र यहाँ, वही ध्यान में अग्र यहाँ-2
कहते हैं सब ऋषी यहाँ-SS
रत्नत्रय निज आत्ममयी, कर्म करे सब नाश यहाँ-2
ध्यानकर्म का हो-3 फल हमें दिलाए रे-SS॥1377॥

(260) मिथ्यात्व और कषाय यहाँ, अंतस्-बाहर ग्रंथि यहाँ-2
त्याग करें मुनिराज यहाँ-SS
वे ही संत जितेन्द्रिय हैं, योगी सिद्ध स्वरूपी हैं-2
ऐसे ही योगी हो-3 शिवपुर पा जायें रे-SS॥1378॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(261) अशुभ और शुभ, शुद्ध यहाँ-2 तीन भावमय जीव यहाँ-2
शुद्ध भाव को धार यहाँ-SS
अशुभ और शुभ हेय कहे, इन कर्मन का बंध रहे-2
सारे ही साधक हो-3 शुद्धातम ध्याये रे-SS॥1379॥

(262) अनशन तप व्रत खूब करे, अंतरंग तप यहाँ धरे-2
शुद्धातम को नहीं वरें-SS
माह माह उपवास करें, नहीं निर्जरा कभी करें-2
शुद्धातम के बिन हो-3 निर्जरा न होवे रे-SS॥1380॥

(263) पावन संयम धरें यहाँ, शुद्ध तत्त्व में लीन यहाँ-2
वही निर्जरा करें यहाँ-SS
शुद्धातम निजभाव बिना, होती है निर्जरा कहाँ-2
शुद्ध भावों से हो-3 सिद्धि हो पाये रे-SS॥1381॥

(264) मिथ्याचरण से विमुख यहाँ, स्वतत्त्व में उत्साह यहाँ-2
संयम में परिपूर्ण यहाँ-SS
ऐसे योगी स्वयं सभी, कर्मों को कर नष्ट यहाँ-2
खुद ही वो सक्षम हो-3 योगी बतलाएँ रे-SS॥1382॥

(265) छोड़ अलौकिक वृत्ति यहाँ, लौकिक वृत्ति धरे यहाँ-2
लोगों को खुश करे यहाँ-SS
ऐसा हीन धरे संयम, हीन निर्जरा रहे यहाँ-2
उत्कृष्ट भाव हो-3 निर्जरा कराएँ रे-SS॥1383॥

(266) जैसा श्रुत प्रतिपादित हो, वैसा चारित पालन हो-2
कहीं न शिथिल आचरण हो-SS
यदि मुनि श्रद्धा नहीं करे, तो वह शुद्धि न प्राप्त करे-2
सच्ची श्रद्धा बिन हो-3 नहिं शुद्ध हो पाये रे-SS॥1384॥

(267) साधू सब कर्तव्य करे, तप व्रत संयम यहाँ धरे-2
जिनश्रुत का नहिं ज्ञान करे-SS
चक्षु हीन अंधानुकरण, व्यर्थ है उसका ये आचरण-2
साधू की आँख हो-3 आगम बतलाएँ रे-SS॥1385॥

(268) मुनि आगम चक्षु वाले, देव अवधि चक्षु वाले-2
सब इन्द्रिय चक्षु वाले-SS
हैं अरहंत-सिद्ध भगवन्, आत्मप्रदेश चक्षुवाले-2
आगम बिन साधू हो-3 अंधा कहलाए रे-SS॥1386॥

(269) जिन आगम में कहा है जो, वही आचरण करता जो-2
श्रमण यहाँ तत्त्वज्ञ है वो-SS
ऐसा शुद्धाचरण यहाँ, कर्म निर्जरा कारण हो-2
ज्ञानी के तप से हो-3 सब कर्म नशायें रे-SS॥1387॥

(270) इन्द्रिय विषयों के सेवन, करता कर्मों का बंधन-2
मूढी जो अज्ञानी जन-SS
ज्ञानी भले विषय सेवे, नहिं हो कर्मों का बंधन-2
ज्ञानी कर्मों से हो-3 हटता ही जाये रे-SS॥1388॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(271) करे विकल्प शुभाशुभ जो, पुण्य-पाप को बाँधे वो-2
राग-द्वेष के कारण हो-SS
विषयों को जो भोग रहा, निर्विकल्प में लीन रहा-2
उसके कर्मों की हो-3 निर्जरा बताएँ रे-SS॥1389॥

(272) मेरे धन पुत्रादि नहीं, मैं भी उनका कभी नहीं-2
मैं उनसे अतिभिन्न यहीं-SS
जो पर को नहिं अपनाते, वे ही कर्म मिटा पाते-2
इक दिन उनको ही हो-3 शिव पद मिल जाये रे-SS॥1390॥

(273) वीतरागता छोड़ यहाँ, पूजें रागीदेव यहाँ-2
चाहें शिव पद मुक्ति यहाँ-SS
ठंड नाश करने को वो, वर्फ का सेवन करते जो-2
अपना अनिष्ट हो-3 वो खुद कर जाये रे-SS॥1391॥

(274) देहमयी देवालय में, राज रहे प्रभु जिनवर हैं-2
ढूँढ रहे हम मंदिर में-SS
रुचिकर भोजन है घर में, भीख मांगते घर-घर में-2
मूढी लोगों को हो-3 कैसे समझाएँ रे-SS॥1392॥

(275) हो कषाय का उदय यहाँ, राग-द्वेष परिणाम यहाँ-2
बँधते सारे कर्म यहाँ-SS
राग-द्वेष सब मोह हटे, कर्मबंध सब यहाँ मिटे-2
मोह रागादिक हो-3 नित कर्म बँधाएँ रे-SS॥1393॥

(276) जो प्रमाद से घिरे यहाँ, कर्मबंध नित करें यहाँ-2
हरपल ही सर्वत्र यहाँ-SS
अप्रमाद में रहते जो, कर्मों से नहिं बँधते वो-2
दोषों की जड़ ही हो-3 प्रमाद बताएँ रे-SS॥1394॥

(277) आत्मतीर्थ को नहीं भजे, तीर्थ क्षेत्र को नित पूजें-2
अज्ञानी वे मूढ़ रहें-SS
निर्मल जल को छोड़ यहाँ, गंदे जल स्नान करें-2
आतम तीरथ ही हो-3 भव से तिरवाये रे-SS॥1395॥

(278) परीषहों को सहन करें, वे ही अनुभव यहाँ वरें-2
सहनशक्ति ईजाद करें-SS
परिषह सहन न करते हैं, ज्ञान प्रकाश वो करते हैं-2
आतम का ज्ञान हो-3 परिषहों से आये रे-SS॥1396॥

(279) सुख दुख में समभाव रखें, वे साधक निर्जरा करें-2
ज्ञान भाव में नित्य रखें-SS
आसक्ति कुध्यान करे, कर्मों का नित बंध करे-2
समता ही विधि के हो-3 बंधन रुकवाये रे-SS॥1397॥

(280) शुद्धातम प्रत्यक्ष करे, वीतरागता तभी वरे-2
अन्य किसी से नहीं अरे-SS
पूजा व्रत तप दान करे, इनसे शुद्धि नहीं मिले-2
ये तो व्यवहार हो-3 के कार्य बताएँ रे-SS॥1398॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(281) पर द्रव्यादि न छू पाये, शुद्ध न आतम कर पाये-2
पर-पर में ही भटकाए-SS
शुद्धातम को स्पर्श करे, तब ही आतम शुद्ध अरे-2
बाहर के द्रव्य हो-3 नहिं शुद्धि दिलाएँ रे-SS॥1399॥

(282) संयोगज द्रव त्याग करो, शुद्धातम को प्राप्त करो-2
खुद से ही अनुराग करो-SS
संयोगों को नहिं छोड़ें, रागभाव वे नहिं छोड़ें-2
शुद्धात्म आदर हो-3 वो नहिं कर पायें रे-SS॥1140॥

(283) आत्मद्रव्य की चाह करो, पर का अच्छा ज्ञान करो-2
निज पर स्वभाव को जानो-SS
पर स्वभाव नहिं जाने जो, कैसे निज पहचाने वो-2
पर का ही ज्ञान हो-3 निज ज्ञान कराये रे-SS॥1401॥

(284) होना निज में लीन जिसे, होता वो विरक्त भव से-2
ज्ञान करे निज का निज से-SS
कर्मबंध के काम तजे, शुद्धातम का भाव करे-2
जग का स्वभाव हो-3 वह खुद लख जाये रे-SS॥1402॥

(285) अंतस् पाँचों पाप करें, वो कर्मों का बंध करें-2
बात ये लोक प्रसिद्ध अरे-SS
बे-मन से जो पाप करे, कर्म का वो नहिं बंध करे-2
लगता आश्चर्य हो-3 पर सच कहलाए रे-SS॥1403॥

(286) ज्ञानी पूजे ज्ञान यहाँ, जिससे बढ़ता ज्ञान यहाँ-2
जो पूजो वो मिले यहाँ-SS
अज्ञानी जड़ को पूजे, मिले उसे अज्ञान यहाँ-2
जग में ये बात हो-3 विख्यात बतायें रे-SS॥1404॥

(287) ज्ञान अरु ज्ञानी एक यहाँ, इनमें कोइ न भेद यहाँ-2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ-SS
ज्ञान यहाँ पर जानें हम, ज्ञानी का हो ज्ञान यहाँ-2
ज्ञानी को जानें हो-3 तो सब जन जाये रे-SS॥1405॥

(287) सब जीवों में ज्ञान यहाँ, ज्ञान का अनुभव करे यहाँ-2
जीव का यही स्वभाव यहाँ-SS
जिसमें ज्ञान न अनुभव है, उसे अचेतन जान यहाँ-2
उसको किसी का हो-3 नहिं ज्ञान हो पाए रे-SS॥1406॥

(289) मति श्रुत ज्ञान परोक्ष करे, इन्द्रिय से प्रत्यक्ष करे-2
मन से भी साक्षात् करे-SS
मति श्रुत से फिर आतम का, ज्ञान यहाँ प्रत्यक्ष करे-2
दोनों ही ज्ञान हो-3 सबमें दिख जायें रे-SS॥1407॥

(290) जो प्रकाश को जान रहा, दीपक को भी जान रहा-2
सहज रूप से देख रहा-SS
ज्ञान जो बहुत यहाँ जाने, कहने वाला भी जाने-2
वस्तु को जाने हो-3 वह स्वभाव जाने रे-SS॥1408॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(291) बुद्धू वेद जानते हैं, वेदक नहीं जानते हैं-2
मूरख उन्हें मानते हैं-SS
किरण जानता सूरज की, सूरज नहीं जानते हैं-2
आश्चर्य की बात हो-3 हमको नजराए रे-SS॥1409॥

(292) ज्ञेय में यहाँ प्रवृत्त रहे, ज्ञायक को नहिं जान रहे-2
कहते हैं असमर्थ रहें-SS
ज्ञेय लक्ष्य को जान यहाँ, शुद्धातम पहचान यहाँ-2
कर्म निर्जरा हो-3 तब ही हो पाये रे-SS॥1410॥

(293) थाल में भोजन ग्रहण करें, भोजन कर हम थाल तजें-2
ऐसा हम सब रोज करें-SS
ज्ञेय लक्ष्य (द्रव्य) से आत्म लखें, ज्ञेय यहाँ हम त्याग करें-2
कार्य होने पर हो-3 कारण हट जायें रे-SS॥1411॥

(294) पा जायें संसारी जन, दोष रहित सुंदर भोजन-2
सुख महसूस करे तब मन-SS
आत्म तत्त्व मिल जाता है, झट से सुख वह पाता है-2
ज्ञानी आतम में हो-3 रतिरूप दिखाएँ रे-SS॥1412॥

(295) दुख से जो भयवीत यहाँ, त्यागे दुखमय द्रव्य यहाँ-2
पर को दुखमय जान यहाँ-SS
जो निज में हों मग्न यहाँ, छोड़ें सब पर द्रव्य यहाँ-2
जितना पर त्यागे हों-3 उतना सुख पाये रे-SS॥1413॥

(296) शोधित स्वर्ण हो शुद्ध यहाँ, शोधित लोहा शुद्ध यहाँ-2
अतिशयता को प्राप्त यहाँ-SS
ज्ञान-अज्ञान विशोधित हो, अतिशयता को प्राप्त अहो-2
शुद्ध हो ज्ञान हो-3 आश्चर्य कराये रे-SS॥1414॥

(297) दर्पण में जो रूप दिखे, उसमें पर संयोग दिखे-2
वो स्वभावमय नहीं अरे-SS
मोह पाप कर्मोदय से, मोह रूप यह आत्म दिखे-2
स्वाभाविक भाव हो-3 ये नहीं बताएँ रे-SS॥1415॥

(298) संस्कार हो पुण्य यहाँ, पुण्य रूप तब जीव यहाँ-2
पाप में वर्ते नहीं यहाँ-SS
संस्कार हो पापमयी, पाप में रहे प्रवृत्त यहाँ-2
हम सबको ज्ञानी हो-3 ये बात बताएँ रे-SS॥1416॥

(299) संस्कार हो ज्ञान यहाँ, ज्ञान की करे प्रवृत्ति यहाँ-2
रमे न वो अज्ञान यहाँ-SS
चाह निर्जरा की जिनको, ज्ञानाराधन करें यहाँ-2
जैसा जो चाहे हो-3 वैसा कर जाये रे-SS॥1417॥

(300) पूर्ण शुद्ध हुआ सोना, उसे अशुद्ध न अब होना-2
उसे न निर्मलता खोना-SS
त्यों ही निर्मल आतम हो- उसे मलिन अब नहिं होना-2
शुद्ध हो आतम हो-3 वो शुद्ध रहाये रे-SS॥1418॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(301) ध्यानाराधन करे यहाँ, देखे, पूछे, सुने यहाँ-2
करे प्रार्थना खूब यहाँ-SS
आत्मस्वभाव न वृद्धि हो, तो फिर ये सब व्यर्थ यहाँ-2
शुद्धात्म पाना हो-3 ही लक्ष्य बताएँ रे-SS॥1419॥

(302) सर्वसंग को तज करके, अन्तर्मुखी यहाँ बनके-2
विशुद्ध रत्नत्रय धरके-SS
कर्म निर्जरा करते जो, परमातम पद पाते वो-2
ज्योतिर्मय शाश्वत हो-3 अनुपम पद पायें रे-SS॥1420॥

मोक्ष अधिकार

(303) बंध हेतु मिट जाने पर, पूर्ण निर्जरा होने पर-2
कर्म पृथक हो जाने पर-SS
होता जग में मोक्ष यहाँ, अपुनर्भव भी कहें यहाँ-2
कर्म के क्षय बिन हो-3 नहिं मोक्ष बताएँ रे-SS॥1421॥

(304) रात्रि का तम मिटे यहाँ, सूर्य बिम्ब तब उगे यहाँ-2
नभ में ऐसा दिखे यहाँ-SS
घाति कर्म क्षय हो जाये, केवलज्ञान उदय आये-2
कर्म मिटने पर हो-3 रवि ज्ञान उग आये रे-SS॥1422॥

(305) धूल धूसरित दर्पण में, दिखे न वस्तु कोइ हमें-2
कितना भी दर्पण देखें-SS
त्यों कर्मों से दूषित जो, उसको केवलज्ञान न हो-2
कर्म की धूल हो-3 मम ज्ञान मिटाये रे-SS॥1423॥

(306) जब तक वज्र प्रहार न हो, तब तक पर्वत भेद न हो-2
बात है ये विख्यात अहो-SS
शुद्धातम के ध्यान बिना, कर्म कभी भी नाश न हो-2
ऐसा जिनदेव हो-3 सबको बतलाएँ रे-SS॥1424॥

(307) औषधि सेवन करे यहाँ, रोग हों उसके दूर यहाँ-2
सुखमय लगता उसे यहाँ-SS
जब तक रहता योग यहाँ, तब तक दुख ही दुक्ख यहाँ-2
रोगी को सुख का हो-3 नहिं अंश दिखाए रे-SS॥1425॥

(308) दुखदायी हैं कर्म यहाँ, ध्यान से होते नष्ट यहाँ-2
निज स्वभाव तब मिले यहाँ-SS
सहजानंद तभी मिलता, हृदय कमल गुल सा खिलता-2
ध्यान बिन कर्म हो-3 मिट कभी न पायें रे-SS॥1426॥

(309) केवलदर्शन ज्ञान यहाँ, जाने सब प्रत्यक्ष यहाँ-2
प्रातिहार्य से युक्त यहाँ-SS
लक्ष्मी अंतस् बाह्य रहे, अतिशय दायी प्रभु कहें-2
महिमा आगम में हो-3 सुखकर बतलाएँ रे-SS॥1427॥

(310) होता केवलज्ञान यहाँ, मिले देशना श्रेष्ठ यहाँ-2
भव्यों का हो भाग्य जहाँ-SS
दिव्यध्वनि तब खिरती है, देती है आनंद यहाँ-2
महिमा तीर्थंकर हो-3 की श्रेष्ठ बताएँ रे-SS॥1428॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(311) रवि स्वरूप है ऊष्णपना, चन्द्र का है शीतलपना-2
वायु का चंचलपना-SS
पुद्गल का रस गंधपना, आतम का है ज्ञानपना-2
वस्तु स्वरूप हो-3 ही धर्म बताएँ रे-SS॥1429॥

(312) आत्म स्वरूप है चेतनमय, चेतन स्वरूप है ज्ञानमय-2
मोहनीय प्रतिबंधन मय-SS
घातिकर्म के कारण ही, नहिं हो केवलज्ञान मय-2
कर्मों का ऐसा हो-3 ही रूप बताएँ रे-SS॥1430॥

(313) अग्नि जहाँ पर जल जाये, सूखा ईंधन आ जाये-2
अग्नि उसे जला जाये-SS
मोह रहित हो ज्ञान यहाँ, सामने आयें ज्ञेय यहाँ-2
ज्ञान को ज्ञेय हो-3 सब ही जन जायें रे-SS॥1431॥

(314) रवि प्रकाश है दूर यहाँ, वस्तु दिखाता सभी यहाँ-2
दूर हो या हो पास यहाँ-SS
भूत भविष्यत बात भी हो, जाने केवलज्ञान यहाँ-2
केवलज्ञान में हो-3 बाधा नहिं आये रे-SS॥1432॥

(315) ज्ञेय भाव हर वस्तु में है, जिससे ज्ञान जानता है-2
सामान्य विशेष जानता है-SS
केवलज्ञान बिना कोई, पूर्ण जान नहिं सकता है-2
सम्पूर्ण ज्ञान हो-3 सब ज्ञान कराये रे-SS॥1433॥

(316) आतम ज्ञान स्वभावी है, सर्वज्ञी सब दर्शी है-2
शक्तिमयी सुखरूपी है-SS
राग-द्वेष से रहित यहाँ, गुण अनंत से युक्त यहाँ-2
सबको ही जाने हो-3 सर्वज्ञ कहाए रे-SS॥1434॥

(317) घाति कर्म को नाश किया, अर्हत् पद को प्राप्त किया-2
फिर अघाति को नाश किया-SS
शुक्लध्यान अंतिम करके, सिद्धों का पद प्राप्त किया-2
काल अनंत हो-3 अब सिद्ध रहायें रे-SS॥1435॥

(318) शुक्ल ध्यान जब होता है, केवलज्ञान भी होता है-2
सभी कर्म नहिं मिटते हैं-SS
कर्म पूर्ण नहिं मिट पायें, मोक्ष नहीं फिर वे पायें-2
रागादि मिटते हो-3 ये बात बताएँ रे-SS॥1436॥

(319) जब अघातिया कर्म मिटें, तब वह सिद्ध भाव प्रकटे-2
वर्ना केवलज्ञान रहे-SS
घाति-अघाति मिटें सभी, सिद्ध बने यह जीव तभी-2
शुक्ल ध्यान ही हो-3 सिद्धत्व दिलाये रे-SS॥1437॥

(320) सुख छोड़े दुख को चाहे, अपनी इच्छा बतलाये-2
कोई न ऐसा दिख पाये-SS
अनंत सुखयुत् सिद्ध यहाँ, क्यों भव के दुख में आयें-2
सिद्ध दुनियाँ में हो-3 फिर कभी न आयें रे-SS॥1438॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(321) अशरीरी सुख युक्त यहाँ, कर्मों से जो रहित यहाँ-2
तन को पाते नहीं यहाँ-SS
कर्मों से तन मिलता है, सुख दुख फल तब फलता है-2
कारण मिट जाये हो-3 तो कार्य न होवे रे-SS॥1439॥

(322) विवेकमय विद्वान यहाँ, मानें ऐसा नहीं यहाँ-2
ज्ञान है जड़ का धर्म यहाँ-SS
होता ज्ञान अचेतन में, ऐसा दिखता नहीं यहाँ-2
जड़ में नहिं ज्ञान हो-3 का गुण बतलाएँ रे-SS॥1440॥

(323) अशुद्धता जब दूर करें, अशुद्ध सोना शुद्ध करें-2
सोना नष्ट नहीं होवे-SS
वैसे ही सब कर्म मिटें, शुद्ध आतमा यहाँ करें-2
लेकिन नहिं ज्ञान हो-3 गुण नाश हो पायें रे-SS॥1441॥

(324) जीव में दर्शन ज्ञान नहीं, तो फिर हो नहिं ज्ञान कहीं-2
अजीव में है ज्ञान नहीं-SS
ज्ञान अभाव दिखाएँगे, जीव को कैसा पायेंगे-2
लक्षण बिन द्रव्य हो-3 नहिं यहाँ रहाये रे-SS॥1442॥

(325) कारागृह में कैद हुआ, कहता है मैं बँधा हुआ-2
इससे मुक्त न कभी हुआ-SS
वैसे बँधा हुआ भव में, जाने मैं हूँ बंधन में-2
उपचार बिन वो हो-3 नहिं मुक्त हो पाये रे-SS॥1443॥

(326) जीव-कर्म को जान यहाँ, भिन्न-भिन्न पहचान यहाँ-2
करें न रुचि जो कर्म यहाँ-SS
ज्ञाता दृष्टा रहते जो, निज में रहते लीन हैं वो-2
वे ही इस भव से हो-3 मुक्ति को पाएँ रे-SS॥1444॥

(327) व्यवहारी जन रहें यहाँ, जीव कहें द्वय रूप यहाँ-2
शुद्ध और अशुद्ध यहाँ-SS
जैसे शुद्ध अशुद्ध यहाँ, स्वर्ण कहें दो रूप यहाँ-2
व्यवहार ऐसा हो-3 ही कहता जाये रे-SS॥1445॥

(327) अष्टकर्म से सहित हैं जो, समझो हैं संसारी वो-2
कर्म रहित जो सिद्ध हैं वो-SS
संसारी सब अशुद्ध हैं, मुक्त जीव ही शुद्ध हैं-2
शद्ध जो जीव, हो-3 अब जन्म न पायें रे-SS॥1446॥

(329) आठ कर्म संयोग यहाँ, कहें इसे संसार यहाँ-2
वियोग हो तो मुक्त यहाँ-SS
कर्ममुक्त हो जाते हैं, जन्म न भव में पाते हैं-2
उनको अपुनर्भव हो-3 सब ही बतलायें रे-SS॥1447॥

(330) पर संयोगी रहित यहाँ, निज स्वभाव में लीन यहाँ-2
पुण्य पाप से रहित यहाँ-SS
शांत समुद्र समान हैं जो, दर्शन है नित ज्ञान हैं जो-2
ऐसे सिद्धों को हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-SS॥1448॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(331) सर्व क्लेश से वर्जित हैं, जिनमें पूर्ण यहाँ गुण हैं-2
सभी कार्य से मुक्त जो हैं-SS
निराबाध-निष्कलंक जो, अशरीरी निर्विकार जो-2
सब ही सिद्धों का हो-3 हम ध्यान लगाएँ रे-SS॥1449॥

(332) शुद्ध ध्यान जो करते हैं, वही गुणों को वरते हैं-2
अनुभव खुद में करते हैं-SS
होते हैं निर्दोष यहाँ, यही ध्यान फल समझ यहाँ-2
निर्मलता आये हो-3 मन खुश हो जाये रे-SS॥1450॥

(333) वाद-विवाद को तज करके, ऊहापोह नहीं करके-2
प्रश्नोत्तर चर्चा तजके-SS
भव्य जीव जो रहें यहाँ, ध्यान निरंतर करें यहाँ-2
ऐसा प्रयास हो-3 अनुभव दिलवाये रे-SS॥1451॥

(334) घाति कर्म को नाश किया, ज्ञान यहाँ सम्पूर्ण किया-2
भव्यों को उपदेश दिया-SS
अंधकार को नाश करो, ज्योतिर्मय निज हृदय करो-2
ऐसा ही ध्यान हो-3 निज दीप जलाये रे-SS॥1452॥

(335) जो प्रमाद को करे यहाँ, वो विलंब से चले यहाँ-2
मंजिल पाता नहीं यहाँ-SS
वाद-विवाद जो करता है, तत्त्व अंत नहिं वरता है-2
भटके संसार हो-3 नहिं मुक्ति पाये रे-SS॥1453॥

(336) जो प्रमाद से रहित यहाँ, चलता सच्ची राह यहाँ-2
पाता है गंतव्य यहाँ-SS
त्यों जो शुक्लध्यान करे, मुक्ति पद वो प्राप्त करे-2
ध्यान बिन मुक्ति हो-3 मिल कभी न पाये रे-SS॥1454॥

(337) मंत्र में जो मर्मज्ञ यहाँ, करता मंत्र प्रयोग यहाँ-2
करे सर्प विष दूर यहाँ-SS
त्यों शुद्धात्म ध्यान करे, कर्म समूह विनष्ट करे-2
मंत्र की शक्ति हो-3 ही ध्यान बढ़ाए रे-SS॥1455॥

(338) सामने चिंतामणि गर हो, चिंतन कुछ भी यहाँ करो-2
चिंतामणि दे वस्तु वो-SS
शुद्धातम का ध्यान यहाँ, बिन चिन्त्ये दे सभी यहाँ-2
कल्पतरु हमको हो-3 कल्पित दिलवाये रे-SS॥1456॥

(339) जिसे आत्म का ध्यान यहाँ, नशे जन्म मृत रोग यहाँ-2
जिसे कहा दुर्जेय यहाँ-SS
काम विकार वही आतम, झट से जीते उन्हें यहाँ-2
ध्यान से काम हो-3 का भाव न आये रे-SS॥1457॥

(340) वाद-विवाद न चर्चा कर, उपदेशादि सब तजकर-2
निज स्वभाव निज में लखकर-SS
शुद्धातम का चिंतन कर, उसका ही तू ध्यान सुमर-2
पुण्य-पापों से हो-3 मन यहाँ हटाओ रे-SS॥1458॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(341) सम्यक् साधन आता है, साध्य यहाँ दिलवाता है-2
जीवन सफल बनाता है-SS
ज्ञानी सही उपाय करें, उसमें आदर खूब रखें-2
तब ही वह साध्य हो-3 हमको मिल पाये रे-SS॥1459॥

(342) हो चिंतन अध्यात्म यहाँ, समझो साधन यही यहाँ-2
दे परमातम साध्य यहाँ-SS
मोह सर्प से डसित यहाँ, उनको है शुद्धात्म कहाँ?-2
उनको यह ध्यान हो-3 दुर्लभ बतलायें रे-SS॥1460॥

(343) स्थिर विचार उत्साह भरो, लोगों का संग त्याग करो-2
ज्ञानी बनकर धैर्य रखो-SS
तत्त्वदर्श का भाव रखो, मन में नित संतोष धरो-2
तब ही शुद्धातम हो-3 का ध्यान हो पाये रे-SS॥1461॥

(344) आगम का नित पठन करे, सही ज्ञान अनुमान करे-2
ध्यान रूप अभ्यास करे-SS
बुद्धि विशुद्ध करे इनसे, मन को यहाँ पवित्र करे-2
आतम का ध्यान हो-3 तब ही हो पाये रे-SS॥1462॥

(345) शास्त्रों का नित ज्ञान किया, नहीं भेद विज्ञान किया-2
भव में भव के लिये जिया-SS
ज्ञान का फल रति आत्म यहाँ, आत्म मग्न नित रहे यहाँ-2
ज्ञानी ये बात हो-3 सबको समझाएँ रे-SS॥1462॥

(346) स्त्री पुत्रादिक में जो, तीव्र रखें आसक्ति जो-2
मूढ़ चित्र अज्ञानी वो-SS
शास्त्रज्ञान नित करें यहाँ, आत्मलीनता रहित यहाँ-2
दोनों ही जग में हो-3 जगलीन बताएँ रे-SS॥1464॥

(347) कर्मभूमि मानव बनकर, बीज ज्ञानमय को पाकर-2
ध्यान नहीं करता आकर-SS
प्रशस्तता नहिं लाता है, अज्ञानी कहलाता है-2
अल्पबुद्धि जो हो-3 ऐसा कर जायें रे-SS॥1465॥

(348) मछली खाती माँस यहाँ, फँस जाती है फाँस यहाँ-2
मिट जाती है साँस यहाँ-SS
ज्ञानी इन्द्रिय सौख्य वरे, रमकर उसमें यहाँ मरे-2
ऐसा वह मोह हो-3 अतिनिंद बताएँ रे-SS॥1466॥

(349) जाने नहिं निज तत्त्व यहाँ, ध्यान हिताहित नहीं यहाँ-2
हैं ज्ञानांध वे लोग यहाँ-SS
मिथ्याचरण में चतुर हैं जो, विषयों को सुख कहते वो-2
ऐसी श्रद्धा से हो-3 दुख ही दुख पायें रे-SS॥1467॥

(350) कई मानसिक पीड़ा हैं, व्याधि कष्टप्रद तन की हैं-2
रोग-शोकमय जीवन है-SS
उपद्रवों को लखकर भी, मोही नहीं विरक्त कभी-2
रागी इस भव में हो-3 ही मस्त रहायें रे-SS॥1468॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(351) दाद खुजाते अज्ञानी, अच्छा समझें जो प्राणी–2
मूर्ख उसे कहते ज्ञानी–SS
कुकर्म कहें सुकर्म कहाँ, दुख को ही सुख कहें यहाँ–2
विपरीत भाव हो–3 में सुख नजराये रे–SS।।1469।।

(352) खारा जल जब हट जाये, खेत में मीठा जल आये–2
बीज मधुर फल ले आये–SS
मिथ्याभाव हटाये जो, सम्यक् भाव समाये जो–2
सम्यक् हो ध्यान हो–3 तब सुख नजराए रे–SS।।1470।।

(353) जैसे खारा जल दुखमय, वैसे इन्द्रिय सुख–दुखमय–2
इन पर श्रद्धा देती भय–SS
जिन वचनों का पान करो, तत्त्वों पर श्रद्धान करो–2
श्रद्धा से बुधजन हो–3 सिद्धी पा जायें रे–SS।।1471।।

(354) कुतर्क शांति विनाशक है, ज्ञानवृद्धि में बाधक है–2
श्रद्धा में अवरोधक है–SS
अहंकार का स्रोत यही, करे मानसिक रोग यही–2
ध्यान का शत्रु हो–3 शुभ भाव मिटाये रे–SS।।1472।।

(355) कुतर्क से मन दूर करो, तत्त्व में मन अनुबंध करो–2
चित्त में दृढ़ता भाव धरो–SSSS
स्वात्म लब्धि को पाने तुम, आत्मसदन में कदम धरो–2
तब ही निजलब्धि हो–3 चेतन पा जाये रे–SS।।473।।

(356) अनंतगुण से युक्त हैं जो, कर्मकलंक विमुक्त हैं जो–2
जन्म जरामृत मुक्त हैं जो–SS
शुद्ध बुद्ध ज्ञायकमय हैं, अनुपम शक्ति ज्ञानमय हैं–2
उन सब सिद्धों को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–SS।।1474।।

चारित्र अधिकार

(357) जो मुक्ति की चाह रखे, वो तत्त्वों का ज्ञान करे–2
घर गृहस्थी का त्याग करे–SS
यथाजात जिनलिंग समां, मुनि दीक्षा को धरे यहाँ–2
मन के विकल्प हो–3 तब ही मिट पायें रे–SS।।1475।।

(357) दर्श–ज्ञान उपयोग सहित, हिंसा कर्मारंभ रहित–2
केंशलोंच, शृंगार रहित–SS
बाह्याभ्यंतर ग्रंथि रहित, वीतरागमय भाव सहित–2
ऐसा जिनलिंग हो–3 मुनि का बतलाएँ रे–SS।।1476।।

(359) परापेक्षा रहित यहाँ, निर्विकार है शिशु समां–2
वस्त्राभूषण रहित यहाँ–SS
परम दिगम्बर मुनि मुद्रा, जैन मुनि का रूप यहाँ–2
मुक्ति पाने में हो–3 ये हेतु बताएँ रे–SS।।1477।।

(360) पर ममत्व से रहित हैं जो, रंच परिग्रह रखें न जो–2
निष्कषाय निश्चल हैं जो–SS
शिष्य अनुग्रह कुशल जो हैं, ऐसे दीक्षा गुरुवर हो–2
शिष्यों पर हरदम हो–3 उपकार दिखाएँ रे–SS।।1478।।

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(361) दीक्षा गुरु को नमन करे, संयम अंगीकार करे-2
सभी परिग्रह त्याग करे-SS
मूलगुणों को अपनाकर, परम दिगम्बर रूप धरे-2
वो ही दीक्षार्थी हो-3 मुनि श्रमण कहाए रे-SS॥1479॥

(362) पंच महाव्रत धरे यहाँ, पंच समिति अनुकरण यहाँ-2
इन्द्रिय विषय का त्याग यहाँ-SS
षड्आवश्यक नित्य करे, सात अन्य गुण यहाँ धरे-2
ये गुण जो धारे हो-3 वो मुनि कहलाये रे-SS॥1480॥

(363) केशलोंच अस्नान धरें, भूमिशयन नित नग्न रहें-2
खड़े-खड़े निज हाथों में-SS
एक बार भोजन लेवें, दातुन भी जो नहीं करें-2
ऐसे मुनिराज हो-3 गुणवान बताएँ रे-SS॥1481॥

(364) योगी अपना हित चाहें, वो प्रमाद नहिं अपनायें-2
मूलगुणों में रम जायें-SS
जो प्रमाद अपनाते हैं, वो छेदोपस्थापक हैं-2
उनको प्रायश्चित हो-3 लेना पड़ जाये रे-SS॥1482॥

(365) दीक्षा शिक्षा देते जो, उनको ही तुम गुरु समझो-2
उन्हें कहें आचार्य प्रभो-SS
दोष निवारण करें यहाँ, निर्यापक वो कहे यहाँ-2
प्रायश्चित देवें हो-3 वे गुरु कहलायें रे-SS॥1483॥

(366) उत्तम चारित पाले जो, काय चेष्टा करता वो-2
दोष लगें उसमें भी जो-SS
आलोचना वो रोज करे, जिससे दोष न उसे लगे-2
ऐसा करने से हो-3 निर्दोष हो जाये रे-SS॥1484॥

(367) दोष अंतस् में हो जाये, वो मुनि सदोष कहलाए-2
तब गुरु चरणों में जाये-SS
आलोचना करे जाकर, शुद्ध हो प्रायश्चित पाकर-2
गुरुवर की भक्ति हो-3 निर्दोष बनाए रे-SS॥1485॥

(368) छेदोपस्थापक मुनि हो जो, पहले वो निर्दोषी हो-2
चारित में उत्साही हो-SS
संयम में उद्यमी रहे, सचेत रह निर्बन्ध रहे-2
पर द्रव्य राग हो-3 वो नित्य हटाये रे-SS॥1486॥

(369) सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित, रत्नत्रय से करता हित-2
वचन बोलता जो हितमित-SS
मूलगुणों में उत्साही, यत्नशील सोचें परिमित-2
ऐसे ही मुनिवर हो-3 गुणशील कहायें रे-SS॥1487॥

(370) पिच्छी कमंडल शास्त्रों में, अपनी देह परिग्रह में-2
आवासादि कुटीरों में-SS
नीरस सरस अहारों में, अपने परिचित भक्तों में-2
निर्मम मुनिराज हो-3 मुनिश्रेष्ठ कहाएँ रे-SS॥1488॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(371) खाने-पीने चलने में, उठे-बैठने सोने में-2
वस्तु उठाने-रखने में-SS
होता अगर प्रमाद यहाँ, सभी कार्य को करने में-2
मरता नहिं मरता हो-3 जीव हिंस्य बताएँ रे-SS॥1489॥

(372) ज्वर में घी दुखकारी है, ज्वरबिन घी सुखकारी है-2
यत्नक्रिया गुणकारी है-SS
प्रमाद में हिंसा होती, कर्म बंध करवाती है-2
यत्न जीवन में हो-3 सब पाप मिटाये रे-SS॥1490॥

(373) दीप में ऊष्ण प्रकाश रहे, काला काजल भी निकले-2
वैसे ही जो भव में रहे-SS
जिनश्रुत ज्ञान भी होने पर, चारित में नित दोष लगे-2
पर की पीड़ा में हो-3 वह दोष लगाये रे-SS॥1491॥

(374) मुनि बन भव में रुचि रखें, चारों संज्ञा लिप्त रहें-2
बाह्य आचरण यहाँ धरे-SS
लोगों को खुश करने में, लौकिक जन में प्रीति करें-2
द्रव्यलिंगी ये हो-3 साधु कहलाएँ रे-SS॥1492॥

(375) मूढ़ हैं लोभी क्रूर यहाँ, ईर्ष्यालू डरपोक यहाँ-2
विवेक से अतिहीन यहाँ-SS
व्यर्थ कार्य नित करते हैं, मस्त पाप में रहते हैं-2
दीर्घ संसारी हो-3 ये लोग बताएँ रे-SS॥1493॥

(376) बहिरातम जो साधु यहाँ, तत्त्वज्ञान से रहित यहाँ-2
विषयों में संलिप्त यहाँ-SS
व्रत उपवास दिखावा कर, करें लोग आकर्ष यहाँ-2
लोक पंक्ति के हो-3 ये साधु कहाये रे-SS॥1494॥

(377) ज्ञानी सम्यग्दृष्टि यहाँ, धर्म प्रभावना करें यहाँ-2
लोक अनुरंजन करें यहाँ-SS
अविवेकी जो साधु यहाँ, दुखकर उनकी क्रिया यहाँ-2
उनका अनुरंजन हो-3 अघ बंध कराये रे-SS॥1495॥

(378) मुक्ति मार्ग में तत्पर हैं, चित्त से जो एकाग्र रहें-2
कर्म मलों का नाश करें-SS
जो आसन्न भव्य होते, वे ही मुक्ति प्राप्त करें-2
पथ पे नहिं चलते हो-3 वो मुक्ति न पायें रे-SS॥1496॥

(379) इन्द्रिय भोग विषय त्यागें, परिग्रहों से दूर रहें-2
वे मुनिराज प्रशस्त रहें-SS
वे कर्मों का नाश करें, मुक्ति को वे प्राप्त करें-2
मुक्ति से भोगी हो-3 का द्वेष रहाये रे-SS॥1497॥

(380) मिथ्यादर्शन नष्ट यहाँ, भव का बीज विनष्ट यहाँ-2
भव में उनको कष्ट कहाँ?-SS
साधु बन भव नाश करें, ऐसे साधु धन्य कहें-2
कल्याण पाते हो-3 मुक्ती फल पायें रे-SS॥1498॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(381) मुक्ति उपाय जो यहाँ करें, रत्नत्रय निज आत्म वरें-2
मन पवित्र कर मुक्ति वरें-SS
मलिन चित्त मन मैलाकर धर्म यहाँ बदनाम करें-2
भ्रष्ट जो साधु हो-3 वे धर्म लजाएँ रे-SS॥1499॥

(382) मुक्त्याराधन करे यहाँ, उसे सताए न दुक्ख यहाँ-2
पाता है वो मुक्ति यहाँ-SS
मोक्षमार्ग को मलिन करें, महादुक्ख वो प्राप्त करें-2
मन में कषाय- हो-3 वे मुक्ति न पायें रे-SS॥1500॥

(383) पर्वत से नीचे गिरना, विष मिश्रित भोजन करना-2
तृप्ति का अनुभव करना-SS
सम्यग्ज्ञान मलिन करना, जन्म-मरण के दुख सहना-2
भव में दुख के ही हो-3 कारण बतलाएँ रे-SS॥1501॥

(384) यत्नाचार रहित हैं जो, हिंसा के दोषी हैं वो-2
जीव मरण हो भी हो-SS
यत्नाचार समिति पाले, उसे पाप का बंध न हो-2
चाहे उससे ही हो-3 हिंसा हो जाये रे-SS॥1502॥

(385) ममता मूर्च्छा नहीं यहाँ, उसे परिग्रह नहीं यहाँ-2
उसमें होता पाप कहाँ-SS
पाले ईर्यासमिति यहाँ, रक्खे यत्नाचार यहाँ-2
उसको कर्मों का हो-3 नहिं बंध बताएँ रे-SS॥1503॥

(386) यत्नाचार समिति में हो, पैर के नीचे जीव भी हो-2
मर जाये वह जीव अहो-SS
फिर भी हिंसा दोष नहीं, उसमें दिखा प्रमाद नहीं-2
होवे जीवघात हो-3 पर बंध न होवे रे-SS॥1504॥

(387) तेज काँचली सर्प यहाँ, विष नहिं छोड़े अगर यहाँ-2
काँचली तजना व्यर्थ यहाँ-SS
बाह्य परिग्रह त्याग किया, अंतरंग नहिं त्याग किया-2
त्याग उस मुनि का हो-3 सब व्यर्थ बताएँ रे-SS॥1505॥

(388) बगुला बाहर दिखे धवल, परिणामों में हिंसा मल-2
कभी नहीं होता उज्जवल-SS
अंतरंग की शुद्धि बिना, बाह्य भेष नहिं हो निर्मल-2
द्रव्यलिंगी जो हो-3 वह सिद्धि न पाये रे-SS॥1506॥

(389) जल में जैसे रहे कमल, कीचड़ जल नहिं छुए कमल-2
रहे उसी में रहे अमल-SS
निष्प्रमाद मुनि बंध रहित, जीव हिंसा से परम विरत-2
ऐसे ही मुनिवर हो-3 निर्बन्ध बताएँ रे-SS॥1507॥

(390) साधु करें विहार यहाँ, प्रमादयुत आचार यहाँ-2
कर्मबंध तब रहे यहाँ-SS
नहिं प्रमाद परिणाम रहे, कर्मबंध हो नहीं यहाँ-2
परिग्रह प्रमाद हो-3 नित बंध करायें रे-SS॥1508॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-ऽऽ

(391) अल्प परिग्रह रखें यहाँ, भाव विशुद्धि उन्हें कहाँ-2
कर्ममुक्ति हो नहीं यहाँ-ऽऽ
चित्त शुद्धि हो जाएगी, तभी मुक्ति हो पाएगी-2
कहते हैं जिनवर हो-3 श्रद्धान बनाओ रे-ऽऽ॥1509॥

(392) जो मुनिराज संयमी हैं, परिग्रह बाहर रखते हैं-2
वस्त्र लगोंट पहनते हैं-ऽऽ
निरालंब नहिं होते वो, निरारंभ कैसे हों वो-2
परिग्रह हिंसा की हो-3 जड़ प्रभू बताएँ रे-ऽऽ॥1510॥

(393) वस्त्र व तुंबी रखें यहाँ, चित्त करें विक्षेप यहाँ-2
हिंसा उनमें रहे यहाँ-ऽऽ
मन चंचलता रखता जो, पाप रहित वो कैसे हो-2
परिग्रह धर्मी वह हो-3 नित दोष लगाए रे-ऽऽ॥1511॥

(394) पात्र वस्त्र रखता है जो, धोना रक्षा करना हो-2
चिंता में जो रहता हो-2
उसमें मुनिपन कहाँ रहे, अस्थिरता में चित्त रहे-2
आतम स्वभाव हो-3 वो कभी न पाये रे-ऽऽ॥1512॥

(395) वस्त्र पात्र की रक्षा में, ममत्वता रखता उसमें-2
रहे असंयम भावों में-ऽऽ
आरंभ सारंभ करे यहाँ, स्वात्मसिद्धि हो उसे कहाँ?-2
पर में आसक्त हो-3 वे दुख उपजाएँ रे-ऽऽ॥1513॥

(396) द्रव्य क्षेत्र को जान यहाँ, काल, भाव को समझ यहाँ-2
बाह्य परिग्रह गहो यहाँ-ऽऽ
ग्रहण करो या त्याग करो, दोषों से तुम यहाँ बचो-2
दोष लग जायें हो-3 तो दोष आ जायें रे-ऽऽ॥1514॥

(397) निजहित में उद्यमी यहाँ, पर पदार्थ वो गहें कहाँ?-2
जिनसे संयम हानि यहाँ-ऽऽ
ममत्व को उत्पन्न करे, उनकी चाह न संत करे-2
संयम से हीन हो-3 रागी कहलाएँ रे-ऽऽ॥1515॥

(398) जिनको मुक्ति चाह यहाँ, वे तन में आसक्त कहाँ?-2
अपरिग्रह व्रत धरें यहाँ-ऽऽ
बाहर अल्प परिग्रह भी, ग्रहण करें नहिं मुनि यहाँ-2
मोक्षाभिलाषी हो-3 ग्रंथि नहिं चाहे रे-ऽऽ॥1516॥

(399) वीतराग हो धर्म जहाँ, उसमें परभव चाह कहाँ-2
नहीं अपेक्षित लोक यहाँ-ऽऽ
वस्त्र सहित उन स्त्रियों का, कैसे उनका लिंग कहा-2
एक निर्ग्रन्थ हो-3 ही मार्ग बताएँ रे-ऽऽ॥1517॥

(400) स्त्री पर्याय में जन्म यहाँ, दिलवाता है मुक्ति कहाँ?-2
वस्त्र युक्त वो रहें यहाँ-ऽऽ
संयम धारण करती हैं, लिंग पद छेदन वो करती हैं-2
उनके अनुरूप हो-3 प्रभु लिंग बताएँ रे-ऽऽ॥1518॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(401) स्त्री में सदा प्रमाद रहे, प्रमदा इससे उसे कहें-2
हिंसा उनसे निरत रहे-SS
शक्ति हीनता साथ रहे, इसीलिये नहिं मुक्ति मिले-2
संयम भी पूर्ण हो-3 नहिं उन्हें बताएँ रे-SS॥1519॥

(402) ममता ग्लानि रहे यहाँ, ईर्ष्या माया दिखे यहाँ-2
विषाद हरदम रहे यहाँ-SS
भय से हरदम व्याप्त रहे, तभी मुक्ति से दूर रहे-2
ये सब कारण से हो-3 मुक्ति नहिं पाये रे-SS॥1520॥

(403) कोइ न कोई दोष यहाँ, उनमें रहे हमेश यहाँ-2
इन दोषों से एक यहाँ-SS
स्वभाव से लज्जा उनमें, वस्त्र सहित वो तभी रहें-2
उनके अनुसार हो-3 उनका भेष बताएँ रे-SS॥1521॥

(404) स्त्री का मन हो शिथिल यहाँ, चित्त भी चंचल रहे यहाँ-2
रक्तस्राव ऋतुकाल यहाँ-SS
अंगोपांग में जीवों का, होता है उत्पाद यहाँ-2
उससे महाव्रत हो-3 वो पल न पायें रे-SS॥1522॥

(405) स्त्रियों के काँख अरु योनि में, स्तन आदि उपांगों में-2
सूक्ष्म जीव बहु हो इनमें-SS
महाव्रतों में हिंसा हो, तो वह महाव्रती नहिं हो-2
इससे महाव्रत हो-3 दोषी हो जायें रे-SS॥1523॥

(406) चन्द्रकांति सम निर्मल हैं, समदर्शन से युक्त जो हैं-2
आचरणों में प्रवीण हैं-SS
वे सवस्त्र होकरके भी, आत्मशुद्धि तप करती हैं-2
फिर भी कर्मों को हो-3 क्षय नहिं कर पायें रे-SS॥1524॥

(407) शांत, समर्थ हैं तप में जो, सर्वदोष से रहित हैं जो-2
रोग रहित सुंदर हैं जो-SS
वे जिनलिंग ग्रहण करते, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य हैं जो-2
दीक्षा के योग्य हो-3 ये ही बतलाएँ रे-SS॥1525॥

(408) दुष्कुल, कुवय, कुबुद्धि यहाँ, कुजाति और कुकृत्य यहाँ-2
दीक्षा में ये बाध्य यहाँ-SS
सुकुल सुजाति सुबुद्धि रहे, दीक्षा की हो सिद्धि यहाँ-2
योग्य नहिं होवे हो-3 तो भार कहाए रे-SS॥1526॥

(409) साधु रत्नत्रय पाये, मुक्ति हेतु जो कहलाए-2
इससे वह च्युत हो जाये-SS
जिससे रत्नत्रय च्युत हो, वही भंगमय कहलाये-2
भंग या व्यंग हो-3 द्वय एक कहाएँ रे-SS॥1527॥

(410) कोई ऐसा यहाँ कहे, अंत समय में मुनि बनें-2
अभी भोग में हम गुजरें-SS
ऐसे लोग व्यंग ही हैं, योग्य नहीं दीक्षा के हैं-2
विषयों में रागी हो-3 नहिं समाधि पायें रे-SS॥1528॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(411) यहाँ भोग नहिं जो चाहे, पर भव में भी नहिं चाहे-2
निरपेक्षित मन अवगाहे-SS
आगम के अनुकूल चले, योग्य आहार विहार करे-2
समता का भाव हो-3 निज में अपनाये रे-SS॥1529॥

(412) जो मुनिराज कषायों से, स्त्री आदि कषायों से-2
पाँच इन्द्रिय के विषयों से-SS
दूर रहें निज रमण करें, सुख दुख में सम भाव करें-2
वे ही अप्रमत्त हो-3 मुनिवर कहलाएँ रे-SS॥1530॥

(413) आत्मखोज में लगे हैं जो, शुद्धोपयोग में हैं जो-2
लें आहार अनिच्छित जो-SS
जो संयोग-वियोगों में, वीतराग परिणाम करें-2
ऐसे मुनिराज हो-3 संयत कहलाएँ रे-SS॥1531॥

(414) तन शृंगार रहित हैं जो, संयोगों में मस्त न जो-2
तप में शक्ति न ढकते जो-SS
अंतरंग बाहर तप को, तपने में तत्पर हैं जो-2
साधु का देह हो-3 बस ग्रंथ कहाये रे-SS॥1532॥

(415) देह परिग्रह रहे जहाँ, पर घर में आहार यहाँ-2
भिक्षा से हो प्राप्त यहाँ-SS
ऊनोदर इक बार करें, नीरस जो आहार करें-2
ऐसा आहार हो-3 मन श्रेष्ठ बनाये रे-SS॥1533॥

(416) कच्चा हो या पक्का हो, चाहे माँस पक रहा हो-2
उसमें जीव हमेशा हों-SS
जिसका होता माँस यहाँ, उसी जाति के जीव यहाँ-2
माँस निर्जीव हो-3 नहिं कभी बताएँ रे-SS॥1534॥

(417) कच्चा माँस या पक्का हो, खाता हो या छूता हो-2
इससे बहुत ही हिंसा हो-SS
कार्य को ऐसा कर जाये, दुर्गति उसकी हो जाये-2
दुर्मति के कारण हो-3 ऐसा कर जायें रे-SS॥1535॥

(418) शहद में जीव अनेक रहें, खाते-पापी उन्हें कहें-2
जन्म मरण के दुक्ख सहें-SS
हिंसा से भयवीत हैं जो, मन वचन तन से त्यागें वो-2
पापों का बंध हो-3 ये बहुत कराये रे-SS॥1536॥

(419) कंदमूल फल त्याग करें, मक्खन फूल न कभी गहें-2
अभक्ष्य भक्षण नहीं करें-SS
लोलुपता से रहित हैं जो, त्याग करें इन सबको वो-2
इन सबका मन में हो-3 वे भाव न लायें रे-SS॥537॥

(420) मुनि को भोजन दिया है जो, पर को देने योग्य न वो-2
अंतराय देने पर हो-SS
देकर अंतराय न करें, वे साधु दोषीक रहें-2
ज्ञानी मुनिराज हो-3 ये भाव न लाएँ रे-SS॥1538॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-ऽऽ

(421) जो मुनि छोटी उम्र के हों, वृद्ध, तपस्वी तनकृश हों-2
तीव्र व्याधि से पीड़ित हों-ऽऽ
वो ऐसे व्रत को पालें, मूलगुणों का नाश न हो-2
तब ही वे साधु हो-3 ज्ञानी कहलाएँ रे-ऽऽ॥1539॥

(422) देशकाल बल जान यहाँ, करते हैं श्रम रोज यहाँ-2
अल्पलेप वे साधु यहाँ-ऽऽ
कर्म निर्जरा करते वो, अल्पबंध हैं करते वो-2
ऐसे ही मुनिवर हो-3 ज्ञानी कहलाएँ रे-ऽऽ॥1540॥

(423) जिनसे संयम हानि यहाँ, जीवों को हो दुक्ख यहाँ-2
निज पर को हो क्लेश यहाँ-ऽऽ
ऐसे कार्य अशुभ ही हैं, मुनि उनको नहिं करे यहाँ-2
तप जो मुनि करते हो-3 नहिं हिंसा लायें रे-ऽऽ॥1541॥

(424) आगम का हो ज्ञान यहाँ, निर्णय तभी यथार्थ यहाँ-2
होता चित्त एकाग्र यहाँ-ऽऽ
आदर से श्रुत ज्ञान करो, सूक्ष्म तत्त्व का मान करो-2
तब ही आराधन हो-3 का फल मिल पाये रे-ऽऽ॥1542॥

(425) अनुभव आगम सत्य परम, इससे मिलता हमें धरम-2
जिनके बचन हैं सर्वोत्तम-ऽऽ
सही तत्त्व स्वीकार करें, उत्तम आदर यहाँ धरें-ऽऽ
जिनश्रुत आगम ही हो-3 सत्यार्थ बताएँ रे-ऽऽ॥1543॥

(426) अर्थकाम के लिये यहाँ, बिना लिए उपदेश यहाँ-2
निपुण, प्रवृत्ति करें यहाँ-ऽऽ
धर्म और पुरुषार्थ में, नहीं प्रवृत्ति करें यहाँ-2
शास्त्र का आदर हो-3 यह ज्ञान कराये रे-ऽऽ॥1544॥

(427) काम-अर्थ न प्रवृत्ति यहाँ, हो सकता है अभाव यहाँ-2
धर्म और पुरुषार्थ यहाँ-ऽऽ
इनमें नहीं प्रवृत्ति करे, अभाव ही हो नहीं यहाँ-2
बल्कि उल्टापन हो-3 आकर भ्रम लाये रे-ऽऽ॥1545॥

(428) यथार्थता से प्रेम जिसे, यत्न से श्रुतोपदेश गहे-2
यही दीप सम यहाँ कहे-ऽऽ
जगत् मोहमय व्याप्त यहाँ, शास्त्र ज्योतिमय दीप यहाँ-2
श्रुतज्ञान पाकर हो-3 भव धन्य बनाओ रे-ऽऽ॥1546॥

(429) कषाय की है सफल दवा, यथार्थ श्रुत की श्रेष्ठ हवा-2
तत्त्व द्रव्य की ज्ञान महां-ऽऽ
शास्त्र ज्ञान इक चक्षु है, जिसमें सब कुछ दिखे सफा-2
सारे लक्ष्यों को हो-3 श्रुत सिद्ध कराये रे-ऽऽ॥1547॥

(430) करे न आगम भक्ति यहाँ, धर्म क्रिया तब व्यर्थ यहाँ-2
अंध भक्ति सी लगे यहाँ-ऽऽ
क्रिया व्यर्थ कहलाती है, फल विपरीत दिखाती है-2
श्रुत की शुभ भक्ति हो-3 साधक अपनाये रे-ऽऽ॥1548॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(431) मलिन वस्त्र जल शुद्ध करे, श्रुत ज्ञान रतिद्वेष हरे–2
मन को निर्मल यहाँ करे–SS
करता मंद कषाय यहाँ, राग–द्वेष का शमन यहाँ–2
श्रुत का ही ज्ञान हो–3 सिद्धत्व दिलाये रे–SS।।1549।।

(432) शास्त्राध्ययन कर मनन करे, चिंतन मंथन नित्य करे–2
मुक्ति प्राप्ति का भाव करे–SS
दुख से जो भयवीत यहाँ, प्रयत्नयुत् श्रुत लगे यहाँ–2
शास्त्रों का ज्ञान हो–3 अमृत सम आये रे–SS।।1550।।

(433) अंधा वन में फँसा यहाँ, दिखे न रस्ता उसे यहाँ–2
भटक रहा वो यहाँ वहाँ–SS
इष्ट स्थान न पा सकता, वन का त्याग न कर सकता–2
वन में वह अंधा हो–3 बहु कष्ट उठाए रे–SS।।1551।।

(434) शास्त्र ज्ञान से रहित यहाँ, भटका भव में जीव यहाँ–2
कुमार्ग त्याग न सके यहाँ–SS
मुक्ति मार्ग पर चले नहीं, मंजिल उसको मिले नहीं–2
भव वन में भटका हो–3 दुख ही दुख पाये रे–SS।।1552।।

(435) खेती में बहु कार्य यहाँ, सबका अपना कार्य यहाँ–2
जल का श्रेष्ठ महत्व यहाँ–SS
जल बिन जोते बोये जो, उसका नहिं कुछ नाम यहाँ–2
जल बिन फसल में हो–3 कुछ भी नहिं आये रे–SS1553।।

(436) पुण्य–पाप के कर्म यहाँ, लगें एक से सभी यहाँ–2
सबके फल में भेद यहाँ–SS
अलग–अलग कर्मों के फल, भाव का फल है श्रेष्ठ यहाँ–2
बुद्धि के भेद हो–3 बहुतेक बताएँ रे–SS।।1554।।

(437) सम्यक् बुद्धि ज्ञान यहाँ, मोह रहित हो भाव यहाँ–2
तीनों से फल भेद यहाँ–SS
इनसे ही संसारी के, कार्य में होता भेद यहाँ–2
इनसे सबके फल हो–3 सब मिलें बताएँ रे–SS।।1555।।

(438) इन्द्रिय भाव है बुद्धि यहाँ, सत्य जानना ज्ञान यहाँ–2
श्रुत परिणाम है ज्ञान यहाँ–SS
आगम के अनुकूल चले, स्थिरता चारित्र यहाँ–2
मोह मिटने को हो–3 असंमोह बताएँ रे–SS।।556।।

(439) दर्शन ज्ञान चरित्र यहाँ, क्रम से हो स्वीकार यहाँ–2
क्रम से होता पूर्ण यहाँ–SS
बुद्धि आदि प्रसिद्धि को, जानो इनके भेद यहाँ–2
अच्छे का ज्ञान हो–3 ये बुद्धि कराये रे–SS।।1557।।

(440) इन्द्रिय के जो कार्य यहाँ, उनका फल है भोग यहाँ–2
मन में हो संक्लेश यहाँ–SS
देही के सब कार्य यहाँ, फलदायी परभाव यहाँ–2
बुद्धि के कार्य हो–3 फल हमें दिलाएँ रे–SS।।1558।।

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(441) बुद्धि से जो कार्य करे, आगम के अनुरूप करे-2
यही मोक्ष के हेतु बने-SS
श्रुत में जो अनुराग यहाँ, फलदायी है मोक्ष यहाँ-2
ज्ञानमय कार्य हो-3 फल मुक्ति दिलाए रे-SS॥1559॥

(442) मोह रहित जो कार्य यहाँ, शुद्ध भाव के हेतु यहाँ-2
स्वत: शुद्ध वे रहें यहाँ-SS
मोक्ष पथिक हैं जो मुनिवर, उन्हें मिले शिवसौख्य यहाँ-2
असंमोह पूर्वक हो-3 का फल बतलाएँ रे-SS॥1560॥

(443) कर्मोदय परिणामों में, फल में बाह्य पदार्थों में-2
उद्यम रहित जो साधक हैं-SS
भव भोगों से विरक्त हैं, निज स्वभाव अनुरक्त हैं-2
ऐसे ही साधु हो-3 शिवपथिक बताएँ रे-SS॥1561॥

(444) गुण से भेद मनुष्य में, जाति अपेक्षा एक से हैं-2
वैसे ही मुक्ति पथ में-SS
ज्ञान व तन से भेद यहाँ, भावों से सब एक यहाँ-2
सबका ही लक्ष्य हो-3 शिवपद पा जायें रे-SS॥1562॥

(445) ज्ञानी हुए अनेक यहाँ, शब्द भेद में कहा यहाँ-2
मोक्ष तत्त्व निर्वाण यहाँ-SS
भव से अलग विलक्षण है, वही मोक्ष का तत्त्व यहाँ-2
एक ही है वो हो-3 कई नाम बताएँ रे-SS॥1563॥

(446) विमुक्त निर्वृत सिद्ध कहें, परं ब्रह्म शिव अभाव कहें-2
अर्थ सभी का मोक्ष कहें-SS
शब्द भेद है, अर्थ वही, हैं एकार्थ वाच्य सब ही-2
सबका इक अर्थ हो-3 निर्वाण बताएँ रे-SS॥1564॥

(447) निराबाध है निर्मल जो, कार्यकारणातीत कहो-2
मोक्ष विशेषण सहित अहो-SS
ऐसा ज्ञानी कहें यहाँ, लक्षण को स्पष्ट यहाँ-2
सबमें निर्वाण हो-3 का भाव बताएँ रे-SS॥1565॥

(448) वीतरागता प्राप्त करे, वो ही भव में मोक्ष वरे-2
इसमें नहीं विवाद अरे-SS
सभी मुमुक्षु मानें ये, युक्ति से भी सिद्ध है ये-2
ये ही यथार्थ हो-3 सर्वज्ञ बताएँ रे-SS॥1566॥

(449) मोक्षमार्ग निर्दोष यहाँ, कहते हैं सर्वज्ञ यहाँ-2
ऐसा है स्पष्ट यहाँ-SS
मोक्षमार्ग और कथन कहें, दोनों में नहिं भेद यहाँ-2
ज्ञान और मोक्ष हो-3 ये एक बताएँ रे-SS॥1567॥

(450) जैसा होता रोग यहाँ, वैसी देते दवा यहाँ-2
वैद्य समझते प्रकृति यहाँ-SS
जैसे भव्य जीव होते, वैसा हो उपदेश यहाँ-2
प्रश्नों के उत्तर हो-3 उपदेश बताएँ रे-SS॥1568॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(451) पाँच महाव्रत आदि यहाँ, है व्यवहार चरित्र यहाँ-2
ये मुक्ति का हेतु यहाँ-SS
निज शुद्धातम ध्यान कहा, निश्चय से वह हेतु यहाँ-2
मुक्ति के कारण हो-3 दोनों बतलाएँ रे-SS॥1569॥

(452) है व्यवहार चरित्र यहाँ, उसके हैं द्वय भेद यहाँ-2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ-SS
एक मुक्ति अनुकूल कहा, दूजा भवानुकूल यहाँ-SS
दोनों व्यवहार हो-3 दिखने में आयें रे-SS॥1570॥

(453) पंच महाव्रत रूप यहाँ, मुक्ति मार्ग अनुकूल यहाँ-2
कहते हैं जिनदेव यहाँ-SS
अन्य लोग ने कहा है जो, वो चारित भवरूप यहाँ-2
जिनवर लोगों में हो-3 यह भेद बताएँ रे-SS॥1571॥

(454) कषाय इन्द्रिय जीते जो, जिनवर कहते चारित वो-2
जिससे कर्म निर्जरा हो-SS
निज आतम का अनुभव हो, आत्मध्यान कर मुक्ति हो-2
मोक्ष वो पायें हो-3 जो ये कर जायें रे-SS॥1572॥

(455) व्यावहारिक चारित्र बिना, ध्यान नहीं हो शुद्धात्मा-2
कहते हैं ये परमात्मा-SS
विधिमय बाह्य चरित्र यहाँ, रोके अशुभ विचार यहाँ-2
ऐसा चारित्र हो-3 शुद्धात्म दिखाये रे-SS॥1573॥

(456) राग द्वेष मद मान यहाँ, छल-भ्रम-क्रोध व काम यहाँ-2
ये भव भ्रम के हेतु यहाँ-SS
इनकी नहीं अपेक्षा हो, रमता नित अध्यात्म यहाँ-2
कर्म मिटाकर हो-3 शिव महल के पाये रे-SS॥1574॥

चूलिकाधिकार

(457) दर्शन-ज्ञान-स्वभावमयी, अव्याबाध सुसौख्यमयी-2
काल अनंत न नाशमयी-SS
अशरीरी चैतन्य सदा, जन्म मरण से रहित सदा-2
उन सब सिद्धों को हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-SS॥1575॥

(457) ज्ञान दर्श में लीन रहें, सिद्ध सभी चैतन्य रहें-2
कभी निरर्थक नहीं रहें-SS
जो भी कहें निरर्थक हैं, अज्ञानी वे स्वयं रहें-2
भव से हैं मुक्त हो-3 गुण रूप बताएँ रे-SS॥1576॥

(459) आतम चेतनमयी यहाँ, उसके बिन है ज्ञान कहाँ-2
ज्ञान बिना है आत्म कहाँ-SS
कर्म ज्ञान नहिं देता है, कर्म न चेतन होता है-2
चैतन्य भाव हो-3 सार्थक बतलाएँ रे-SS॥1577॥

(460) चेतन माना कर्म यहाँ, तो आतम भी मान यहाँ-2
ऐसा होता नहीं यहाँ-SS
ज्ञान आत्मा में होता, सार्थकपन है यही यहाँ-2
ज्ञान स्वभाव हो-3 आतम का गायें रे-SS॥1578॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(461) वस्तु में हो त्रयकाल यहाँ, उसको कहें स्वभाव यहाँ-2
वो ही सत् अस्तित्व यहाँ-SS
सिद्धों में अस्तित्व यहाँ, नाश न उसका कभी यहाँ-2
लक्षण से सिद्ध हो-3 भगवंत बताएँ रे-SS॥1579॥

(462) दिखे गगन में चन्द्र यहाँ, निर्मल उसकी कांति यहाँ-2
मेघ कांति को ढके यहाँ-SS
चन्द्रकांति ढक जाती है, नाश नहीं हो जाती है-2
ऐसी आँखों से हो-3 प्रत्यक्ष दिखाए रे-SS॥1580॥

(463) वैसे निर्मल आत्म यहाँ, ज्ञान है आत्म स्वभाव यहाँ-2
कर्मों से है ढका यहाँ-SS
ज्ञान कभी नहिं मिट पाये, सिर्फ कर्म से ढक जाये-2
कर्म हटते ही हो-3 ज्ञानी कहलाये रे-SS॥1581॥

(464) मेघ आवरण हट जाये, चन्द्रकांति निर्मल आये-2
व्यक्त स्वयं ही हो जाये-SS
त्यों वे कर्म निकलने पर, ज्ञान प्रकट तब हो जाये-2
सम्पूर्ण ज्ञान हो-3 आतम पा जाये रे-SS॥1582॥

(465) मेघ सूर्य पर छा जाये, पवन मेघ को ले जाये-2
सूर्य तेज फिर आ जाये-SS
आतम पर त्यों कर्म यहाँ, क्षण में संत मिटा जाये-2
आतम का ज्ञान हो-3 फिर सभी बताएँ रे-SS॥1583॥

(466) योग से होता ध्यान यहाँ, ध्यान से होता ज्ञान यहाँ-2
ज्ञान स्वभावी आत्म यहाँ-SS
योग से घाति कर्म नशें, केवलज्ञान को प्राप्त करें-2
योगों की महिमा हो-3 युग युग तक पाये रे-SS॥1584॥

(467) ध्यान का होता ज्ञान यहाँ, सुख का होता भान वहाँ-2
शुद्धातम पहचान वहाँ-SS
कामदेव आतंक रहित, शांति निराकुल स्वात्म सहित-2
जन्म मरण को हो-3 यह नाश कराये रे-SS॥1585॥

(468) पराधीनता ही दुख है, स्वाधीनता में सुख है-2
सुख-दुख लक्षण ये ही है-SS
साधन से सुख-दुक्ख लगें, इससे निर्णय नहिं होवे-2
निज में रमना ही हो-3 स्वाधीन कहाये रे-SS॥1586॥

(469) पुण्य से जो उत्पन्न यहाँ, वे परवश दुखरूप यहाँ-2
पराधीनता दुक्ख यहाँ-SS
ध्यान से हो जो ज्ञान यहाँ, है सुखमय स्वाधीन यहाँ-2
इससे निज आतम हो-3 का रूप दिखाए रे-SS॥1587॥

(470) निर्मल होता ज्ञान यहाँ, स्थिर होता तो ध्यान यहाँ-2
मल बिन सोना शुद्ध यहाँ-SS
शुद्ध विनिर्मल स्वर्ण यहाँ, उसे कहें कल्याण यहाँ-2
शुद्ध आतम भी हो-3 कल्याण कहाये रे-SS॥1588॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(471) मूढ़ बुद्धि जो मानव हैं, वस्तु स्वरूप न ज्ञान जिन्हें–2
वे भोगों को सत्य कहें–SS
मायावी इस दुनियाँ को, स्थिरता रूप यहाँ समझें–2
उनकी यह भूल हो–3 भव दुक्ख बढ़ाए रे–SS ।।1589।।

(472) मायावी संसार यहाँ, भ्रम को पैदा करे यहाँ–2
राग–द्वेष के द्वन्द्व यहाँ–SS
जन्म मरण से युक्त है जो, सबसे बड़ा रोग है जो–2
रोग से आतम हो–3 रोगी कहलाए रे–SS।।1590।।

(473) जन्म–मरण का रोग यहाँ, है अनादि संयोग यहाँ–2
करे कर्म का बंध यहाँ–SS
ऐसा अनुभव में आता, कहते अनुभव सिद्ध यहाँ–2
कर्मों का नाश हो–3 यह रोग मिटाये रे–SS।।1591।।

(474) भव विकार हों नाश यहाँ, जीव मुक्त हो सिद्ध यहाँ–2
लेता नहिं फिर जन्म यहाँ–SS
अज्ञानी फिर कभी न हो, संसारी भी कभी न हो–2
काल अनंत हो–3 वे सिद्ध कहायें रे–SS।।1592।।

(475) रोग नष्ट हो गया जहाँ, स्वस्थ उसे ही कहें यहाँ–2
रोगी नहिं हो कभी यहाँ–SS
कर्म नष्ट जब हो जायें, स्वस्थ सिद्ध पद वो पायें–2
फिर वो कभी भी हो–3 भव में नहिं आये रे–SS।।1593।।

(476) जिसका मन है शुद्ध यहाँ, शुद्धातम में लीन यहाँ–2
पर कार्यों से मुक्त यहाँ–SS
पंचेन्द्रिय के भोगों में, आसक्ति नहिं रखे यहाँ–2
ऐसे ज्ञानी में हो–3 भव हेतु न पायें रे–SS।।1594।।

(477) भव का माया जाल यहाँ, ज्ञानी समझे उसे यहाँ–2
होता नहिं उद्विग्न यहाँ–SS
नहीं आकुलित होते हैं, कभी न भव में रमते हैं–2
ऐसे समदृष्टि हो–3 शिवपथिक कहायें रे–SS।।1595।।

(478) जिनको भोग असत्य लगे, क्षणिक व मायारूप लगे–2
उनमें ही सद्ज्ञान जगे–SS
भोगों में आसक्ति नहीं, बंध के कोई हेतु नहीं–2
ज्ञानी ये साधु हो–3 शिवपद पा जायें रे–SS।।1596।।

(479) मृग मरीचिका देख यहाँ, भ्रमजल फँसते नहीं यहाँ–2
ज्ञानी होते वही यहाँ–SS
पंचेन्द्रिय के भोगों में, ज्ञानी रमते नहीं यहाँ–2
तत्त्व दृश्य बन हो–3 शिव पथ पर जायें रे–SS।।1597।।

(480) तत्त्वज्ञान से हीन यहाँ, जाने माया सत्य यहाँ–2
सदा दुखी वो रहे यहाँ–SS
भोग पंचेन्द्रिय दुख हेतु, मोही सोचे नहीं यहाँ–2
शंकाकुल होकर हो–3 दुख ही दुख पाये रे–SS।।1598।।

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(481) चंदन की भी अग्नि यहाँ, सभी जलाती वस्तु यहाँ-2
चंदन शीतल भले यहाँ-SS
त्यों ये पुण्य से भोग मिले, ये दुख आगे करें यहाँ-2
भोगों के फल में हो-3 दुख ही नजराये रे-SS॥599॥

(482) धन सम्पति की सखी रहें, विपत्तियाँ नहिं संग तजें-2
ज्ञानी बात सभी समझें-SS
त्यों ही सारे भोग यहाँ, करें पाप अनुबंध यहाँ-2
ज्ञानी भोगों में हो-3 सुख नहीं मनाये रे-SS॥1600॥

(483) होता सम्यग्ज्ञान यहाँ, भोग लगें नहिं रम्य यहाँ-2
राग-द्वेष सब व्यर्थ यहाँ-SS
सच अनुभव में आता है, सच वैराग्य समाता है-2
ज्ञान वैराग्य हो-3 युगपत् आ जायें रे-SS॥1601॥

(484) दुक्ख बीज मिथ्यात्व यहाँ, नष्ट हो तो सम्यक्त्व यहाँ-2
पाता है फिर मुक्ति यहाँ-SS
गुण समूह को जाने जो, भक्तिभाव से देखे जो-2
गुण को लख करके हो-3 भक्ति उमड़ाये रे-SS॥1602॥

(485) नहिं मिथ्यात्व का वरण करें, सम्यग्ज्ञान आचरण करें-2
बाह्य परिग्रह त्याग करें-SS
त्यागों में है त्याग महा, उसको ही मिथ्यात्व कहा-2
इसका त्यागी ही हो-3 सच्चा कहलाए रे-SS॥1603॥

(486) रवि को तम नहिं व्याप्त करे, ढक न सके नहिं नष्ट करे-2
रवि सबको ही प्रकट करे-SS
ज्ञानी को नहिं पाप ढके, पाप उसे नहिं बाँध सके-2
इन्द्रिय के भोग हो-3 नहिं लिप्त कराये रे-SS॥1604॥

(487) चारित का आधार है ये, मोह महातम नाश करे-2
सम्यग्ज्ञान विकास करे-SS
ज्ञान कार्य को सिद्ध करे, ले जाकर के मोक्ष वरे-2
ज्ञान ही ध्यान हो-3 में लीन कराये रे-SS॥1605॥

(488) वीतरागता श्रेष्ठ परम, ध्याने से हो परम धरम-2
कहते हैं जिनदेव शुभम्-SS
उसी तत्त्व का ध्यान करें, जिससे मिटतीं इच्छाएँ-2
ऐसा ही चिंतन हो-3 पुरुषार्थ कहाये रे-SS॥1606॥

(489) कर्मकलंक रहित है जो, नित्य शुद्ध स्वाभाविक जो-2
ज्ञानमयी है निर्भय जो-SS
निर्विकार है तत्त्वमयी, शुद्धातम निश्चय से वो-2
सारे उपद्रव हो-3 उससे भिन्न बताएँ रे-SS॥1607॥

(490) मोक्षपुरी जो भी चाहें, वे व्यवहार को अपनाएँ-2
आग्रह नहिं वो दिखलाएँ-SS
त्यागा है एकांत जहाँ, अनेकांत ही रहे वहाँ-2
माध्यस्थ होकर हो-3 सिद्धी पा जायें रे-SS॥1608॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(491) मैं कर्ता, कर्तव्य मेरा, ज्ञान से मिटता भव फेरा–2
भव है कर्मों का डेरा–SS
इन विकल्प से दूर रहे, आत्मध्यान में लीन रहे–2
ऐसा ही ध्यानी हो–3 साधक कहलाए रे–SS॥1609॥

(492) सभी द्रव्य मिल जाते हैं, नहिं अस्तित्व गँवाते हैं–2
सत् पर कायम रहते हैं–SS
जीव, अजीव न होता है, धर्म जीव नहिं होता है–2
कर्म पुद्गल मय हो–3 नहिं जीव हो पायें रे–SS॥1610॥

(493) नभ में मेघ आ जाते हैं, भेद प्रकाश हो जाते हैं–2
आकृति भिन्न बनाते हैं–SS
नाम कर्म से जीव यहाँ, नानाकार बनाते हैं–2
रवि–बादल के सम हो–3 विधि भिन्न बताएँ रे–SS॥1611॥

(494) स्फटिक हुआ रंगीन यहाँ, ये रंगों का रंग यहाँ–2
स्फटिक शुद्ध हैं धवल यहाँ–SS
क्रोध मान रागादि यहाँ, कर्मों के सब खेल यहाँ–2
जीव तो शुद्ध हो–3 चैतन्य स्वभावी रे–SS॥1612॥

(495) मिट्टी घट–पट की कर्ता, कुंभकार नहिं है कर्ता–2
वो तो बस कारणकर्ता–SS
कर्म, जीव कारण पाकर, खुद बन जाते हैं कर्ता–2
जीव बिन कर्म हो–3 निर्जीव बताएँ रे–SS॥1613॥

(496) मोहकर्म का उदय जहाँ, भाव कलुष वो करे वहाँ–2
जीव राग फिर करे यहाँ–SS
कर्म मोह बीज–अंकुर सम, एक से दोनों नाश यहाँ–2
दोनों का नाश हो–3 भव पार कराये रे–SS॥1614॥

(497) आतम का परिणाम यहाँ, कर्म हेतु से मलिन यहाँ–2
सलिल लहर के समां यहाँ–SS
उन्हें कषाय हम कहते हैं, जो कषते ही रहते हैं–2
इनके मिटने पर हो–3 निर्मलता पायें रे–SS॥1615॥

(498) मोह–राग और द्वेष यहाँ, करें कलुष निज आत्म यहाँ–2
हो अभाव जिस स्थान यहाँ–SS
वीतरागमय भाव वहाँ, आ जाता है शीघ्र वहाँ–2
आतम की परिणति हो–3 शुद्ध होती जाये रे–SS॥1616॥

(499) वायु तरंग न जल में हों, समुद्र तब निश्चल स्थिर हो–2
निर्विकार स्वाभाविक हो–SS
नहिं मिथ्यात्व कषायें हों, निर्विकार यह आतम हो–2
निश्चलता पाकर हो–3 वह सिद्ध हो जाये रे–SS॥1617॥

(500) इन्द्रिय से जो ज्ञान यहाँ, जाने सारे ज्ञेय यहाँ–2
विषय शब्द जड़ सभी यहाँ–SS
आत्मज्ञान अतिभिन्न यहाँ, यही यथार्थ स्वरूप यहाँ–2
अनुभव का ज्ञान हो–3 अनुभव से आये रे–SS॥1618॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे–2
आतम का सार हो–3 इसमें बतलाएँ रे–SS

(501) होने पर तम नहीं रहे, नहिं हो तो तम सदा रहे–2
जिस बिन ज्ञेय न जान सकें–SS
तम को जो तम बतलाये, परम ज्योति जो कहलाये–2
ऐसा वह ज्ञान हो–3 केवलज्ञान बताएँ रे–SS।।1619।।

(502) द्रव्य सभी भव में रहते, अपने स्वभाव में रहते–2
अन्य रूप नहिं हो रहते–SS
अन्य अन्य नहिं कर पायें, बात पते की बतलायें–2
अपना स्वभाव हो–3 में रहते जायें रे–SS।।1620।।

(503) निर्मल–अमूर्त–अविनश्वर, है आकाश द्रव्य सुंदर–2
पदार्थ से नहिं रूप हो पर–SS
अविनश्वर निर्मल आतम, स्वभाव से जो परमातम–2
कर्मों के द्वारा हो–3 पर रूप न होवे रे–SS।।1621।।

(504) ज्ञान से जाना यही यहाँ, शरीर–आतम भिन्न यहाँ–2
इन्द्रिय मन से मतिज्ञान यहाँ–SS
इन्द्रिय मन से सब जानें, आतम को नहिं पहचानें–2
स्वसंवेदन ज्ञान हो–3 आतम को जाने रे–SS।।1622।।

(505) ज्ञानावरण न ज्ञान हनें, कर्म न स्पर्शादि हने–2
दोनों यहाँ स्वतंत्र रहे–SS
ज्ञान स्वभावी जीव यहाँ, स्पर्श रूप है कर्म यहाँ–2
कर्म व जीव हो–3 नहिं किसी को घातें रे–SS।।1623।।

(506) जीव और जब कर्म यहाँ, परिणामों में कभी यहाँ–2
होते नहीं निमित्त यहाँ–SS
नहीं निमित्त यहाँ होते, दोनों हों तब अलग यहाँ–2
होना अलग ही हो–3 वह मोक्ष कहाए रे–SS।।1624।।

(507) जैसा रंग लगाते हैं, स्फटिक को वैसा पाते हैं–2
इसे निमित्त ही कहते हैं–SS
देह यहाँ पर जीव धरे, तन्मय उससे यहाँ रहे–2
क्षणभर तादात्म्य हो–3 संबंध बताएँ रे–SS।।1625।।

(508) परभावों को छोड़े जो, आत्मरूप को पाये वो–2
ज्ञानी को ये योग्य अहो–SS
ज्ञान निजात्म स्वरूप लखे, निर्मल अपने भाव करे–2
ज्ञानी अभ्यास हो–3 प्रतिदिन कर जाये रे–SS।।1626।।

(509) शुद्ध किया जो सोना है, वो अशुद्ध नहिं होना है–2
निर्मल ही अब रहना है–SS
कर्म रहित हो जाता है , निर्मल वो हो जाता है–2
जीव अशुद्ध हो–3 फिर नहिं हो पाये रे–SS।।1627।।

(510) कुंभकार भी यहाँ रहे, चक्र दण्ड भी साथ रहे–2
फिर भी घट पट नहीं बने–SS
मिट्टी की उस शक्ति बिना, बने नहीं घट कभी यहाँ–2
हेतु नैमित्तिक हो–3 ये कार्य बनाएँ रे–SS।।1628।।

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(511) मन वच काय की क्रिया रहे, भोगों की भी वस्तु रहे-2
कर्मों का भी उदय रहे-SS
मिथ्यात्व अविरति परिणति बिन, कर्मों का नहिं बंध रहे-2
मिथ्यात्व शक्ति हो-3 ही बंध कराये रे-SS॥1629॥

(512) घट बनने की शक्ति यहाँ, मिट्टी में ही रहे यहाँ-2
अन्य हैं सभी निमित्त यहाँ-SS
मिथ्यात्व अविरति शक्ति यहाँ, करे कर्म का बंध यहाँ-2
बाह्य निमित्त हो-3 नहिं बंध कराएँ रे-SS॥1630॥

(513) कुंभकार नित कुंभ करे, कुंभरूप वह नहीं रहे-2
वो निमित्त बस यहाँ बने-SS
मिट्टी खुद ही कुंभ बने, उसकी शक्ति यहाँ दिखे-2
शक्ति निमित्त हो-3 दोनों ही जानो रे-SS॥1631॥

(514) जीव यहाँ नित कर्म करे, क्रोधादिक क्लेशादि करे-2
स्वयं क्रोधमय नहीं रहे-SS
करता है परभाव यहाँ, होता नहिं पर रूप यहाँ-2
जीव अपने ही हो-3 भावों में राजित रे-SS॥1632॥

(515) कर्म को कर्मरूप जाने, अकर्म कर्म नहीं माने-2
वही ज्ञान को पहचाने-SS
कर्मों का कर्ता होकर, कर्ता उसे नहीं जाने-2
कर्म मिटाकर हो-3 निज को पा जाये रे-SS॥1633॥

(516) स्फटिक मणी हो कीचड़ में, लिप्त न होता वो मल में-2
नहिं स्वभाव छोड़े मल में-SS
ज्ञानी विषयों संग रहे, फिर भी वह निर्लिप्त रहे-2
तब ही वह ज्ञानी हो-3 निर्बन्ध बताएँ रे-SS॥1634॥

(517) जीव देह में भेद यहाँ, तत्त्वज्ञान से जान यहाँ-2
अनुभव किया प्रमाण यहाँ-SS
वो पंचेन्द्रिय विषयों में, कभी न हो आसक्त यहाँ-2
विषयों में हरदम हो-3 वैराग्य दिखाये रे-SS॥1635॥

(518) तीन भाव हो जीवों में, शुद्ध अशुभ शुभ यहाँ कहें-2
सदा इन्हीं में सभी रहें-SS
शुभ पुण्यास्रव करता है, अशुभ पाप को भरता है-2
शुद्ध जो भाव हो-3 शिव हेतु बताएँ रे-SS॥1636॥

(519) भाव शुभाशुभ छोड़ यहाँ, रोके सारे कर्म यहाँ-2
ज्ञानी वो मुनिराज यहाँ-SS
शुद्ध भाव में रमते हैं, वीतरागता भजते हैं-2
ऐसे ही भगवन् हो-3 मुक्ति पा जायें रे-SS॥1637॥

(520) जिसने भी मिथ्यात्व यहाँ, अवरिति और कषाय यहाँ-2
मिटा दिए हैं सभी यहाँ-SS
चित्त ज्ञेय से दूर किया, निज आतम में लीन किया-2
उस ही योगी को हो-3 शुद्धात्म दिखाये रे-SS॥1638॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-SS

(521) विषयेन्द्रिय को त्याग करे, नहिं प्रत्यक्ष उन्हें भोगे-2
पर हरदम स्मरण करे-SS
अज्ञानी नित दुखी रहे, दोनों भव बरबाद करे-2
विषयासक्ति ही हो-3 भव दुखी बनाये रे-SS॥1639॥

(522) भोग्य वस्तु नहिं प्राप्त यहाँ, उसे भोगने यत्न यहाँ-2
पाप उदय से करे यहाँ-SS
ज्ञानी पुण्योदयी यहाँ, भोगों में आसक्त कहाँ?-2
ज्ञानी इस भव का हो-3 छेदन कर जाये रे-SS॥1640॥

(523) पंचेन्द्रिय के भोग यहाँ, दुखदायी हैं यहाँ-वहाँ-2
ज्ञानी जानें सभी यहाँ-SS
ज्ञानी इन्हें न भोग करें, भोगे उन्हें न याद करे-2
इह भव पर भव में हो-3 नित सुखी रहाये रे-SS॥1641॥

(524) रागी भोग न भोग सके, फिर भी कर्म का बंध करे-2
मिथ्यात्व कारण यहाँ रहे-SS
ज्ञानी भोग यहाँ भोगे, कर्मबंध नहिं रंच करे-2
ज्ञानी बंधन से हो-3 मुक्त होता जाये रे-SS॥1642॥

(525) जाने इन्द्रिय विषय यहाँ, कर्मबंध नहिं करें यहाँ-2
वीतरागमय भाव यहाँ-SS
केवलज्ञानी सब जानें, कर्मबंध नहिं करें यहाँ-2
मोह मिट जाये हो-3 कर्म न बाँधे रे-SS॥1643॥

(526) मूढ़ी विषय न ग्रहण करे, फिर भी कर्म का बंध करे-2
ये तो है आश्चर्य अरे-SS
एकेन्द्रियादि जीव यहाँ, चार विषय नहिं गृहें यहाँ-2
फिर भी आठो ही हो-3 वे कर्म बंधायें रे-SS॥1644॥

(527) राग द्वेष से रहित हैं जो, उनको नहिं कर्तव्य अहो-2
वीतराग में रमे हैं वो-SS
राग-द्वेष वैभाविक जो, उनको नहिं कर्तव्य अहो-2
वैराग्यवर्धक हो-3 कर्तव्य बताएँ रे-SS॥1645॥

(528) किसी वस्तु नहिं राग करें, रंच मात्र नहिं द्वेष करें-2
उदासीनमय नित्य रहें-SS
दोष नहीं उनमें कोई, प्रत्याख्यान वो करें नहीं-2
दोषों से मुक्त हो-3 वे ऋषि कहाएँ रे-SS॥1646॥

(529) रागी मिथ्यादृष्टि यहाँ, भव के कारण सभी यहाँ-2
सदाकाल ही रहें यहाँ-SS
ज्ञानी में भव के कारण, रंचमात्र भी नहीं यहाँ-2
रागी-वैरागी हो-3 में भेद दिखाएँ रे-SS॥1647॥

(530) मोह कर्म का उदय अरे, भाव यहाँ औदयिक करे-2
नये कर्म फिर बंध करे-SS
होते भाव पारिणामिक, वो मुक्ति के हेतु बने-2
बंधन मुक्ति के हो-3 कारण बतलाएँ रे-SS॥1648॥

योगसार प्राभृत्त यहाँ, योगी गायें रे-2
आतम का सार हो-3 इसमें बतलाएँ रे-ऽऽ

(531) इन्द्रिय विषयों का अनुभव, दुक्खों का दिलवाता भव-2
ज्ञान मिटा देता है सब-ऽऽ
शुद्धातम का अनुभव हो, शाश्वत सुख दिलवाता जो-2
विषयों को छोड़ हो-3 निज अनुभव लाओ रे-ऽऽ॥1649॥

(532) इन्द्रिय विषयी ज्ञान यहाँ, होता सब पौद्गलिक यहाँ-2
इससे अपना भला कहाँ-ऽऽ
होवे आत्मिक ज्ञान यहाँ, जो होता स्वाधीन यहाँ-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 कल्याण कराये रे-ऽऽ॥1650॥

(533) काली पीली गाय यहाँ, रंग रूप में भेद यहाँ-2
दूध सभी का श्वेत यहाँ-ऽऽ
चौरासी लख भेद हैं तन, सबमें आतम एक यहाँ-2
ज्ञान और दर्शन हो-3 सबमें नजरायें रे-ऽऽ॥1651॥

(534) ज्योति से वस्तु देख यहाँ, करें ज्योति से भिन्न यहाँ-2
बुद्धिमान इंसान यहाँ-ऽऽ
ज्ञान से ज्ञेय जानकरके, करें ज्ञान से भिन्न यहाँ-2
ज्ञानी को झट से हो-3 ये समझ में आये रे-ऽऽ॥1652॥

(535) आत्म स्वभाव है सूक्ष्म यहाँ, अविनाशी बेनाम यहाँ-2
ज्ञान से रहे अभिन्न यहाँ-ऽऽ
स्वाभाविक ही ज्ञान यहाँ, नाशे पुद्गल ज्ञान यहाँ-2
अन्य नहिं कोई हो-3 उपाय बताएँ रे-ऽऽ॥1653॥

(536) शाखा तक काटी जायें, पत्ते फिर से आ जायें-2
जड़ काटें तो नहिं आयें-ऽऽ
एक देश जब कर्म मिटें, तो फिर पैदा हो जायें-2
कर्म हों नाश हो-3 तो फिर नहिं आयें रे-ऽऽ॥1654॥

(537) हो मिथ्यात्व विनाश यहाँ, ज्ञान हो वस्तु यथार्थ यहाँ-2
ध्यान तत्त्व शुद्धात्म यहाँ-ऽऽ
दूर गमन नहिं करते वो, इष्ट प्राप्त निज निकट यहाँ-2
इकदेश छेद हो-3 कई रूप दिखाएँ रे-ऽऽ॥1655॥

(538) बाह्य जगत् माया नश्वर, शुद्ध तत्त्व में खुद रमकर-2
क्रोधादिक सागर तिरकर-ऽऽ
अविनाशी सुख पाते हैं, कर्म नष्ट कर जाते हैं-2
जन्म उनका ही हो-3 प्रभु सफल बताएँ रे-ऽऽ॥1656॥

(539) इन्द्रजाल के तुल्य यहाँ, देख ये माया जगत यहाँ-2
ब्रह्म प्राप्त कर शुद्ध यहाँ-ऽऽ
सूक्ष्म अतीन्द्रिय ज्ञानमयी, चिदानंदमय आत्म यहाँ-2
पढ़ने-सुनने पर हो-3 सुख अनुभव आये रे-ऽऽ॥1657॥

(540) योगसार प्राभृत्त यहाँ, पढ़े सुने जो रोज यहाँ-2
निज स्वरूप कर बोध यहाँ-ऽऽ
राग-द्वेष हटाता है, ध्यान वही ऋषि पाता है-2
उसको ही इक दिन हो-3 मुक्ति मिल जाये रे-ऽऽ॥1658॥

उपसंहार

योगसार से योग से, पाते हैं उपयोग।
भोग–रोग को त्यागकर, अनुभव ज्ञान उपयोग।।

भोग त्यागकर योग में, पाया निज का योग।
वीतरागता को लखा, लीन हुये उपयोग।।

भोगों की ही चाह में, व्यर्थ न कर तू योग।
चेतन की परवाह कर, जिसमें शुद्ध उपयोग।।

ज्ञान बिना नहिं योग ये, होते हैं शुभ योग।
शुभ योगों में लीन हो, पा लो शुद्ध उपयोग।।

शुद्ध योग मन शुद्ध कर, दिलवाता है ध्यान।
ध्यान में शुद्ध उपयोग हो, पाता केवलज्ञान।।

ज्ञान की महिमा योग में, नजराती है साफ।
ज्ञान ध्यान बनता जभी, कर्म मिटें सब आप।।

शुभ उपयोगी बन यहाँ, लक्ष्य पे ध्यान लगाय।
वही शुद्ध उपयोग कर, मंजिल अपनी पाय।।

ज्ञान बिना सब योग से, होता कर्म का बंध।
ज्ञान ध्यान दोनों मिलें, जीव हो खुद निर्बन्ध।।

ज्ञानी भोगे भोग को, फिर भी होय न बंध।
अज्ञानी बिन भोग के, करे कर्म का बंध।।
भोग से बंध न हो यहाँ, राग से होता बंध।
वीतराग के भाव में, ज्ञानी है निर्बन्ध।।

ज्ञान ध्यान बिन कर्म का, हो नहिं पाये अंत।
ध्यान से मिटते कर्म हैं, कह गये हैं भगवंत।।

ज्ञान नहीं तो जिंदगी, लगती है बेकार।
ज्ञान ही मानव को यहाँ, इस जीवन का सार।।

जाना नहिं निज आतमा, पर में निज अपनाय।
वही यहाँ मिथ्यात्व को, अपने गले लगाय।।

*****

रयणसार

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

मंगलाचरण

(1) वर्धमान प्रभु को वंदन, शुद्धयोग से करूँ नमन-2
रयणसार का करूँ कथन-sss
चर्या कर्तव शुभाचरण, जिसमें श्रावक और श्रमण-2
रत्नों का सागर हो-3 यह ग्रंथ बतायें रे-ss।।1659।।

(2) जिनवर ने जो बोला है, गणधर ने वो खोला है-2
गुरुओं को अनमोला है-ss
परम्परा से मिला हमें, अंश ज्ञान का है जिसमें-2
गणधर उन गुरु को हो-3 हम शीश झुकाएँ रे-ss।।1660।।

(3) मति श्रुत ज्ञानी प्राणी हो, बोले कल्पित वाणी जो-2
समझो मिथ्यादृष्टि वो-ss
मनमानी जो यहाँ करे, जिन वच में वो नहीं रहे-2
कहकर कुंदकुंद हो-3 सबको समझाएँ रे-ss।।1661।।

(4) मोक्षमार्ग आधार यहाँ, निश्चय और व्यवहार यहाँ-2
सम्यग्दर्शन सार यहाँ-ss
द्वय भेदों से धारण कर, अपने पाप निवारण कर-2
तब ही मानवता हो-3 का रहस्य पाये रे-ss।।1662।।

(5) दोष रहित सम्यग्दर्शन, मल भय बिन नहिं रहें व्यसन-2
भवभोगों से विरक्त मन-ss
अष्टगुणों से युक्त यहाँ, पंचगुरु का भक्त यहाँ-2
निश्चय से उसमें हो-3 सम्यक्त्व समाये रे-ss।।1663।।

(6) बहिरातम से रहित यहाँ, शुद्धातम अनुरक्त यहाँ-2
आत्मज्ञान से युक्त यहाँ-ss
जिन-गुरु-धर्म यहाँ माने, समदृष्टि उसको जाने-2
भव के दुख उसको हो-3 छू भी नहिं पाएँ रे-ss।।1664।।

(7) मद-शंकादिक दोष व्यसन, तीन मूढ़ता अनायतन-2
भय अतिचार न छूते मन-sss
जिसमें ये नहिं दोष दिखें, उसको सम्यग्दृष्टि कहें-2
दुर्गुण धर्मी में हो-3 दिख कभी न पाएँ रे-ss।।1665।।

(8) भय मल पच्चिस सप्त व्यसन, मूलोत्तर अठ-द्वादश गुण-2
विघ्न रहित भक्तियुत मन-ss
वैरागी अतिचार रहित, सतहत्तर समदृष्टि गुण-2
सम्यग्दृष्टि के हो-3 ये गुण बतलाएँ रे-ss।।1666।।

(9) रत्नत्रय संयुक्त यहाँ, देवशास्त्र गुरु भक्त यहाँ-2
भव-तन-भोग विरक्त यहाँ-ss
लक्षण प्रकट जो करते हैं, प्राप्त मोक्षसुख करते हैं-2
सम्यग्दृष्टि का हो-3 ये हक बतलायें रे-ss।।1667।।

(10) पूजा हो व्रत दान यहाँ, शील अनेक विधान यहाँ-2
सम्यग्दर्शन साथ यहाँ-ss
सम्यक् हो तो मुक्ति यहाँ, इसके बिन भव भ्रमण यहाँ-2
सम्यक् बिन किरिया हो-3 भव भ्रमण कराए रे-ss।।1668।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे–SSS
साधु–श्रावक को हो–3 निजसार बताए रे–SSS

(11) साधू अध्ययन ध्यान करें, श्रावक पूजा दान करें–2
निज कर्तव्य का भान करे–SS
जिस बिन साधु न श्रावक हो, उसका अनुसंधान करे–2
अपने ही कर्तव हो–3 गुणवृद्धि करायें रे–SS।।1669।।

(12) दान–धर्म नहिं त्याग करें, न्यायपूर्ण नहिं भोग करें–2
लोभकषायी हुए मरे–SS
श्रावक उसको कौन कहे, कीड़ों सा जो यहाँ जिये–2
ऐसा बहिरातम हो–3 दुख ही दुख पाये रे–SS।।1670।।

(13) जिन पूजा जो नित्य करे, मुनियों को नित आहार दे–2
शक्ति के अनुरूप करे–SSS
सम्यग्दृष्टि श्रावक है, धर्मी है आराधक है–2
मुक्ति के पथ में हो–3 संलग्न कहाये रे–SS।।1671।।

(14) जिन पूजा करने वाला, श्रावक शुद्ध हृदय वाला–2
पीता गुण अमृत प्याला–SS
तीन लोक से पूज्य यहाँ, सारभूत सुख भुज्य यहाँ–2
दान–पूजा से हो–3 सारे सुख पाये रे–SS।।1672।।

(15) केवल भोजन दान करे, एक ही अच्छा काम करे–2
इससे ही वो धन्य अरे–SS
पात्र कमी नहिं देखे जो, दान देय खुश होवे जो–2
जिनवर की मुद्रा हो–3 मन खुश कर जाये रे–SS।।1673।।

(16) दे सुपात्र को दान यहाँ, पाता पुण्य महान यहाँ–2
भोग भूमि और स्वर्ग यहाँ–SS
क्रम से शिवसुख उसे मिले, ऐसा श्री जिनदेव कहें–2
दान से स्वर्ग हो–3 और शिव मिल जाये रे–SS।।1674।।

(17) श्रेष्ठ भूमि शुभ काल मिले, श्रेष्ठ बीज फल उत्तम दे–2
ऐसा सारा लोक कहे–SS
श्रेष्ठ पात्र जो दान करे, उसका फल अतिश्रेष्ठ कहें–2
पात्र को दान हो–3 बहु फल दिलवाये रे–SS।।1675।।

(18) सप्त क्षेत्र में करता दान, श्रेष्ठ भूमि में बीज महान–2
देता फल जो पचकल्याण–SS
दान हो कम फल मिले महान, यही बुद्धिमानों के काम–2
न्याय नीति का हो–3 धन पुण्य बढ़ाए रे–SS।।1676।।

(19) माता पिता सुपुत्र मिलें, मित्र स्त्री धन धान्य मिलें–2
भव में उत्तम सौख्य मिलें–SS
पात्र दान का फल जानो, इसको अपनाकर मानो–2
पात्र बिन उत्तम हो–3 नहिं फल मिल पाये रे–SS।।1677।।

(20) सप्तांग राज्य नवनिधि यहाँ, कोष व चौदह रत्न यहाँ–2
छः प्रकार की सैन्य यहाँ–SS
रानी छ्यानवे हजार हों, वैभव का नहिं पार यहाँ–2
पात्र दान का हो–3 ये फल बतलाएँ रे–SS।।1678।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(21) उत्तम कुल शुभ रूप यहाँ, उत्तम लक्षण बुद्धि यहाँ-2
उत्तम शिक्षा सुगुण यहाँ-ss
उत्तम स्वभाव सुख पायें, संयम वैभव मिल जायें-2
पात्र दान के हो- ये फल दिखलायें रे-ss॥1679॥

(22) मुनि को दे आहार यहाँ, बचा जान परसाद यहाँ-2
फिर खुद करे आहार यहाँ-ss
सारभूत सुख पाता है, उत्तम सुख से नाता है-2
ऐसा जिनवर का हो-3 उपदेश बताए रे-ss॥1680॥

(23) शीत उष्ण ऋतु को जानो, वात पित्त कफ पहचानो-2
तप, उपवास, व्याधि जानो-ss
रोग, क्लेश सब जान यहाँ, दो उपचारी दान यहाँ-2
ऐसा विवेक हो-3 फल बहुत बढ़ाए रे-ss॥1681॥

(24) मोक्षमार्ग में अनुरागी, उसे मिलें ऋषिजन त्यागी-2
अन्न पान दे बड़भागी-ss
हित मित औषधि दान करे, शयनासन शुभ थान वो दे-2
ये सब देकर के हो-3 सौभाग्य मनाए रे-ss॥1682॥

(25) ज्यों गर्भस्थ को पालें हम, मात-पिता सेवें हरदम-2
शिशु को रंच न होवे गम-ss
वैसे ही आलस तजकर, वैय्यावृत्ति करें जो हम-2
मुनियों की सेवा हो-3 भव सिंधु तिराये रे-ss॥1683॥

(26) सत्पुरुषों का दान यहाँ, कल्पवृक्ष सम जान यहाँ-2
महिमा कही महान यहाँ-ss
लोभी देता दान यहाँ, अर्थी शव सम जान यहाँ-2
खुश हो दे दान हो-3 फल श्रेष्ठ बताएँ रे-ss॥1684॥

(27) पुण्यलाभ कुछ फल पाये, यशकीर्ति बहु मिल जाये-2
किस्मत मेरी खुल जाये-ss
यत्र-तत्र नहिं पात्र अरे, लोभी उनको दान करे-2
सच्चे पात्रों को हो-3 वह जान न पाये रे-ss॥1685॥

(28) पक्षपात प्रिय वचन मिलें, तंत्र मंत्र मंत्रादि मिलें-2
सेवा व्रशंसां हमें मिलें-ss
इसी चाह से दान करे, उसे न मुक्तिमार्ग मिले-2
भव में भ्रमाये हो-3 वो व्यर्थ कहाये रे-ss॥1686॥

(29) दरिद्रता दानी में हो, ऐश्वर्य लोभी में हो-2
ऐसा लोगों में क्यों हो-ss
पूर्व कर्म के फल हैं ये, दान का फल नहिं समझोगे-2
दानी इस जग में हो-3 यशकीर्ति पाये रे-ss॥1687॥

(30) मिल जाये धन धान्य यहाँ, सुखी समझते सभी यहाँ-2
कहें प्रभू की कृपा यहाँ-ss
वैसे ही मुनि सेवा से, सारे सुख हैं मिले यहाँ-2
मुनि की सेवा बिन हो-3 सुख कहीं न पाये रे-ss॥1688॥

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(31) बिन सुपात्र नहिं दान सफल, पुत्र बिना धन मकां विफल-2
भाव बिना संयम निष्फल-ss
भाव शुद्धमय करने को, व्रत, गुण हैं चारित्र सफल-2
पात्र से दान हो-3 का फल बढ़ जाये रे-ss||1689||

(32) जीर्णोद्धार कराने का, प्राण प्रतिष्ठा पूजा का-2
तीर्थ यात्रा सेवा का-ss
धन को यहाँ भोगता है, वो खुद कब्र खोदता है-2
नरको में पड़कर हो-3 अति दुक्ख उठाये रे-ss||1690||

(33) जो निर्माल्य द्रव्य खाये, लूला लंगड़ा हो जाये-2
मूक वधिर के दुख पाये-ss
पुत्र विहीन दरिद्री हो, नीच जाति में भंगी हो-2
धर्म के धन को हो-3 नहिं हाथ लगाओ रे-ss||1691||

(34) मंदिर का जो धन रखता, इच्छित फल नहिं पा सकता-2
बीमारी का घर बनता-sss
इच्छित फल पा जाये तो, उसको भोग नहीं सकता-2
मंदिर में देने से हो-3 धन बढ़ जाये रे-ss||1692||

(35) धर्म द्रव्य जो हरे यहाँ, उसको सारे कष्ट जहां-2
अंधे लूले बनें यहाँ-ss
नाक कान छाती बिन हों, हीन अंगुली पग टूटे हों-2
दारुण दुक्खों का हो-3 वह घर बन जाये रे-ss||1693||

(36) धर्म कार्य में विघ्न करे, कुष्ठ, मूल क्षय रोग मिले-2
नेत्र रोग सिर रोग मिले-ss
रोग भगंदर सन्निपात, महा जलोधर व्याधि मिले-2
धर्म में विघ्न हो-3 के दुख बतलाएँ रे-ss||1694||

(37) देव-गुरु-श्रुत वंदन में, विघ्न डालते हैं उनमें-2
दुक्ख उठाते दुर्गति में-ss
दरिद्रता विकलांग बनें, हानि मिले व्यापारों में-2
नर्क तिर्यंच गति में हो-3 दुख पाये रे-ss||1695||

(38) सम्यग्दर्शन चारित की, ज्ञान मूलगुण और तप की-2
होगी यहाँ हीनता ही-sss
पंचम युग का प्रभाव है, मनु में हीन स्वभाव है-2
मन की विशुद्धि हो-3 कमजोर दिखाए रे-ss||1696||

(39) नहिं पूजा नहिं दान करे, शील न गुण चारित्र वरें-2
वे मानव भुवि भार कहें-ss
ऐसे लोग तिर्यंच बनें, नारकी बन अति दुक्ख सहें-2
ऐसे कुमानुष हो-3 दुख ही दुख पायें रे-ss||1697||

(40) पुण्य पाप और धर्माधर्म, तत्त्व अतत्त्व का जाने मर्म-2
जाने इन्हें मिले तब शर्म (सुख)-ss
क्या करना क्या नहिं करना, छोड़ अश्रेय, श्रेय लगना-2
इनको नहिं जाने हो-3 सम्यक्त्व न पाये रे-ss||1698||

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(41) हेय-श्रेय नहिं जान रहा, योग्य-अयोग्य न जान रहा-2
सम्यक् बिन नित दुखी रहा-ss
भव्य-अभव्य न जाने जो, सत्य-असत्य को जान रहा-2
अविवेक भव में हो-3 भटकाता जाये रे-ss॥1699॥

(42) योगी व्रत को भंग करे, लौकिक जन जब संग करे-2
दुर्भावों के रंग भरे-ss
कुटिल भाव वाचाली हो, इनकी संगति छोड़ अहो-2
धर्मी को लौकिक हो-3 संगति नहिं भाये रे-ss॥1700॥

(43) उग्र तीव्र दुर्भावी हो, दुश्रुत हो दुर्भाषी हो-2
मिथ्यामद अनुरागी हो-ss
धर्म विरुद्ध चले हरदम, वो सम्यक्त्व रहित ही हो-2
मिथ्यादृष्टि की हो-3 संगति न सुहाये रे-ss॥1701॥

(44) क्षुद्र रौद्र अति रुष्ट जो हो, अभिमानी ईर्ष्यालु हो-2
चुगलखोर परदोषक हो-ss
याचक, गायक, क्लेशक हो, पर का अनिष्टकारक हो-2
ऐसे लोगों में हो-3 सम्यक्त्व न आये रे-ss॥1702॥

(45) कुत्ता, बंदर, बाघ, गधा, कच्छप, मक्खी, जोंक गजा-2
सुअर भाव के लोग अहा-ss
धर्म विनाशक ये सब हैं, नर नारी दुखदायक हैं-2
ऐसे लोगों से हो-3 सुख कभी न पाये रे-ss॥1703॥

(46) पहले सम्यग्दर्शन हो, ज्ञान तभी सम्यक्मय हो-2
तब ही सम्यक् चारित हो-ss
रत्नत्रय में सम्यक गुण, श्रेष्ठ बताते हैं भगवन्-2
सम्यक् बिन प्राणी हो-3 भव भ्रमण बढ़ाएँ रे-ss॥1704॥

(47) मिथ्यातप मिथ्याज्ञानी, मिथ्याभेषी अभिमानी-2
सम्यक् की इनसे हानि-ss
मिथ्याव्रती कुशील यहाँ, मिथ्यादर्शन हेतु यहाँ-2
सम्यग्दर्शन को हो-3 ये सभी मिटाएँ रे-ss॥1705॥

(48) कोढ़ी कुल का अंत करे, अपना तन दुर्गन्ध भरे-2
कोई न उसे पसंद करे-ss
त्यों मिथ्यात्वी गुण नाशे, सद्गति यहाँ विनाश करे-2
मिथ्यात्व जग में हो-3 अतिकष्ट दिखाये रे-ss॥1706॥

(49) देव शास्त्र गुरु धर्म यहाँ, चारित तप गुण मोक्ष यहाँ-2
जिन वचनों का पुंज यहाँ-ss
सम्यग्दृष्टि बिना इनको, कौन जानता इन्हें कहाँ?-2
सम्यग्दृष्टि को हो-3 ये सब दिख पाये रे-ss॥1707॥

(50) मिथ्यादृष्टि जीव यहाँ, आत्मज्ञान नहिं करे यहाँ-2
करे न निजगुण ध्यान यहाँ-ss
निशदिन पाप विचार करें, गैरों की ही बात करे-2
ऐसे लोगों को हो-3 सन्मार्ग न भाये रे-ss॥1708॥

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(51) मोह मदों से मतवाला, पी मिथ्या मदिरा प्याला-2
भूला निज अमृत प्याला-sss
मनमानी नित करता है, साम्यभाव नहिं रखता है-
मिथ्यादृष्टि को हो-3 निज गुण नहिं भाएँ रे-ss॥1709॥

(52) उपशम भाव धरेगा जो, कर्म विनाश करेगा वो-2
नये कर्म रोकेगा वो-ss
संवर भाव समाता है, कर्म निर्जरा पाता है-2
इस भव-पर भव में हो-3 महिमा दिखलाये रे-ss॥1710॥

(53) सम्यक् ज्ञान सुदृष्टि करे, धर्म और वैराग्य धरे-2
ऐसे समय व्यतीत करे-ss
मिथ्यात्वी दुर्भाव धरे, इच्छा आलस कलह करे-2
दोनों ऐसे ही हो-3 निज समय बिताएँ रे-ss॥1711॥

(54) आर्त रौद्र का ध्यान करें, नष्ट-दुष्ट-दुख-पाप धरें-2
ऐसे बहुत मनुष्य दिखें-ss
कृष्ण नील कापोत लेश्या, भरत क्षेत्र में बहुत धरें-2
पापी इस जग में हो-3 बहुतेक दिखाएँ रे-ss॥1712॥

(55) अवसर्पिणी पंचम युग में, भरत क्षेत्र के मानव में-2
मिथ्यादृष्टि बहुत ही हैं-ss
सम्यग्दृष्टि दुर्लभ हैं, श्रावक मुनि बहुत कम हैं-2
काल का ऐसा हो-3 संयोग बताएँ रे-ss॥1713॥

(56) व्यर्थ समय क्यों खोता है, क्यों प्रमाद कर रोता है-2
बीज दुखों के बोता है-ss
अवसर्पिणी पंचम युग में, धर्मध्यान तो होता है-2
गुरुवर ये कहकर हो-3 सबको समझाएँ रे-ss॥1714॥

(57) अशुभ भाव जो करे यहाँ, नरकों में वो पड़े यहाँ-2
शुभ भावों से स्वर्ग यहाँ-ss
दुख सुख भावों को जानो, अच्छा लगे उसे मानो-2
अच्छा लग जाये हो-3 उसको अपनाओ रे-ss॥1715॥

(58) हिंसा क्रोध कषाय करे, पक्षपात मात्सर्य धरे-2
दुर्भावों को हृदय धरे-ss
मिथ्याभाव विचारों में, अशुभ लेश्या काम करे-2
अशुभ भावों के हो-3 कारण बतलाएँ रे-ss॥1716॥

(59) आर्त-रौद्र के ध्यानों से, असंयमी के भावों से-2
ईर्ष्या शल्य कुभावों से-ss
अहंकार मन में लाये, विकथायें मन को भाये-2
अशुभ भावों के हो-3 कारण बतलाएँ रे-ss॥1717॥

(60) सात तत्त्व पंचास्तिकाय, बंध, मोक्ष छः द्रव्य बताय-2
इन्हें जान श्रद्धा जो लाय-sss
ज्ञान भाव शुभ लाता है, जीवन को महकाता है-2
धर्म भावों में हो-3 निर्मलता लाए रे-ss॥1718॥

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे–SSS
साधु–श्रावक को हो–3 निजसार बताए रे–SSS

(61) अनुप्रेक्षाओं का चिंतन, रत्नत्रय में लगी लगन–2
तभी धर्म का हो पालन–SS
आर्यकर्म कर्तव्य करे, दया धर्म को हृदय धरे–2
ऐसे लक्षण ही हो–3 शुभ भाव बनाएँ रे–SS।।1719।।

(62) गुण सम्यक्त्व समाएगा, सुगति जहां में पाएगा–2
मिथ्यात्व दुर्गति लाएगा–SS
अधिक कहें क्या तुमसे हम, अच्छा लगे करो वो तुम–2
जो भी तुम चाहो हो–3 उसको अपनाओ रे–SS।।1720।।

(63) नहीं छोड़ता मोह यहाँ, कठिन व्रतों को करे यहाँ–2
अचरज की है बात यहाँ–SS
साहिल पाता नहीं कभी, दुक्ख उठाता यहाँ सभी–2
मोह छोड़े बिन हो–3 भव पार न जाये रे–SS।।1721।।

(64) इन्द्रिय विषयों को तजकर, द्रव्यभेष मुनि धारण कर–2
सम्यग्दर्श नहीं धरकर–SSS
क्रियाकाण्ड व्रत धरता है, जन्म मरण नित करता है–2
बहिरातम के व्रत हो–3 निष्फल बतलाएँ रे–SS।।1722।।

(65) हो करके मिथ्यात्व मुखी, होने को परलोक सुखी–2
काय क्लेश सह रहा दुखी–SS
चाह मोक्ष की करता है, मिथ्याभाव न तजता है–2
मिथ्यात्व के कारण हो–3 शिवसुख नहिं पाये रे–SS।।1723।।

(66) क्रोध, क्रोध पर नहीं करे, दण्डित अपनी देह करे–2
कर्म को कैसे नष्ट करे–SS
सर्प की वामी नष्ट करे, इससे क्या वह सर्प मरे–2
मिटतीं कषायें हो–3 सब कर्म नशाएँ रे–SS।।1724।।

(67) ज्ञानी उपशम तप लाए, भाव संयमी कहलाए–2
कषाय से संयम जाये–SS
कषाय ज्ञानी में नहिं हैं, संयम कषाय में नहिं है–2
उपशम भावों में हो–3 संयम नजराए रे–SS।।1725।।

(68) ज्ञानी पर है ज्ञान का बल, उससे कर्म करे निर्बल–2
ऐसा माने बुध दुर्बल–SS
वैद्य दवा बतला दे तो, ठीक नहीं हो जाता वो–2
जब तक औषधि को हो–3 अच्छे से न खाये रे–SS।।1726।।

(69) मिथ्यामल का शोधन कर, सम्यक् औषधि सेवन कर–2
अनुभव का संवेदन कर–SS
कर्मव्याधि दुख को हरने, चारित्रौषधि सेवन कर–2
ऐसे ही क्रम से हो–3 सब कर्म नशाये रे–SS।।1727।।

(70) त्याग करे विषयों का जो, अज्ञानी वैरागी वो–2
लखे नहीं अंतस में जो–SS
विषयासक्त कषाय विरत, ज्ञानी है और त्यागी है–2
ज्ञानी – अज्ञानी हो–3 में भेद बताएँ रे–SS।।1728।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(71) भक्ति बिना हो विनय यहाँ, स्नेह बिना तिय रुदन यहाँ-2
बिन वैराग्य हो त्याग यहाँ-ss
जिस बिन जो नहिं हो सकता, उस बिन वो क्यों हो सकता-2
साधन होने पर हो-3 सिद्धी हो पाये रे-ss॥1729॥

(72) शौर्य के बिना यौद्धा हो, भाग्य के बिना महिला हो-2
वैराग्य के बिना संयम हो-ss
संयम, ज्ञान, विराग बिना, मुनि को कुछ नहिं मिले यहाँ-2
संयम बिन मुनि भी हो-3 कुछ भी नहिं पाये रे-ss॥1730॥

(73) धन वैभव बहु आया है, भोग न उसको पाया है-2
मूर्ख यहाँ भरमाया है-ss
विषयलीन अज्ञानी जो, पीछे से फल भोगे वो-2
लोभी अज्ञानी हो-3 सुख रंच न पायें रे-ss॥1731॥

(74) वैभव पाकर दान करे, ज्ञानी फल को प्राप्त करे-2
पात्र दान हो फलित अरे-ss
वैसे ज्ञानी हो त्यागी, वो भी वह फल प्राप्त करे-2
दोनों के फल में हो-3 नहिं भेद बताएँ रे-ss॥1732॥

(75) विषधर जैसा लोभ यहाँ, भूमि स्त्री स्वर्ण यहाँ-2
इनमें दें सब जान यहाँ-ss
सम्यग्दर्शन ज्ञान यहाँ, वैराग्य औषधि मंत्र यहाँ-2
इनसे विषधर को हो-3 वश में कर पायें रे-ss॥1733॥

(76) पंचेन्द्रिय तन, मन, वच कर, पैरों को तू वश में कर-2
फिर तू केशलुंच को कर-ss
नैया खेता होता है, शिवपुर नेता होता है-2
योगों का निग्रह हो-3 निश्चित बतलाएँ रे-ss॥1734॥

(77) पति भक्ति से रहित सती, जिनभक्ति बिन जैनमती-2
इनकी भव में हो दुर्गति-ss
गुरु की भक्ति सती मुक्ती , कहते हैं मुनिवर युक्ति-2
जिन-गुरु भक्ति बिन हो-3 दुर्गति ही पायें रे-ss॥1735॥

(78) गुरु भक्ति बिन शिष्य यहाँ, त्याग परिग्रह करे यहाँ-2
होता उसका भला कहाँ-ss
उत्तम बीज सजोता है, बंजर भूमि में बोता है-2
बीज सम जप व्रत हो-3 तप व्यर्थ क्रियायें रे-ss॥1736॥

(79) राजा बिन हो राज्य यहाँ, स्वामी बिन हो देश यहाँ-2
गुरुभक्ति बिन धर्म यहाँ-ss
निष्फल ही बतलाते हैं, शिवसुख नहीं दिलाते हैं-2
ऐसा चारित भी हो-3 भव भ्रमण कराये रे-ss॥1737॥

(80) रुचि होवे सम्यक्त्व बिना, दान करे गुरुभक्ति बिना-2
धर्म रहे ज्यों दया बिना-ss
वैसे गुरुभक्ति बिन तप, निष्फल हैं गुण चारित जप-2
गुरु भक्ति आवे हो-3 तो सब फल पायें रे-ss॥1738॥

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(81) ग्राह्य निंद्य न विचार यहाँ, इन्द्रिय सुख ही सार यहाँ-2
अज्ञानी वे मूर्ख यहाँ-ss
उपादेय क्या हेय यहाँ, तत्त्व है क्या ? क्या मोक्ष यहाँ ?-2
ज्ञान बिन इन्द्रिय हो-3 सुखमयी विचारें रे-ss।।1739।।

(82) काय क्लेश उपवास करें, तपश्चरण अति कठिन धरें-2
तत्त्व ज्ञान का भाव करें-ss
शुद्धातम में रुचि धरके, सभी कर्म का नाश करें-2
चैतन्य रुचि से हो-3 भव दुख मिट जाये रे-ss।।1740।।

(83) परम ब्रह्म का ज्ञान नहीं, निज आतम श्रद्धान नहीं-2
कर्मों का हो नाश नहीं-ss
यहाँ नहीं सुख वहाँ नहीं, भटकेगा वो यहीं कहीं-2
ज्ञान बिन मुनि पद हो-3 क्या तुझे दिलाए रे-ss।।1741।।

(84) देखे नहिं श्रद्धान करे, नहीं भावना मनन करे-2
आत्मज्ञान नहिं साधु करे-ss
बाह्य भेष क्या कर लेगा, मुक्ति तुझे दिलवा देगा-2
त्यागी बनकर तू हो-3 क्यूँ कष्ट उठाये रे-ss।।1742।।

(85) खुद को खुद नहिं जानेगा, कौन तेरा दुख टालेगा-2
भीतर सुख क्यों मानेगा ?-ss
बाह्य भेष दुख का कारण, ज्ञान कहा सुख का कारण-2
ज्ञान बिन भेष हो-3 सुख नहीं दिलाये रे-ss।।1743।।

(86) दृष्टि में निज तत्त्व नहीं, तो होगा सम्यक्त्व नहीं-2
बिन सम्यक्त्व शिवत्व नहीं-ss
आत्मस्वरूप यहाँ पाओ, सम्यग्दृष्टि हो जाओ-2
सम्यक् संयम का हो-3 आधार बताए रे-ss।।1744।।

(87) दुर्ग बिना नहिं राज्य रहे, दान बिना नहीं गृही रहे-2
जीव बिना नहिं देह रहे-ss
ज्ञान बिना तप नहीं रहे, तप में शोभित ज्ञान कहें-2
ज्ञान, संयम में हो-3 खुशबू महकाए रे-ss।।1745।।

(88) परिग्रही जो होता है, मुनि मुनिपना खोता है-2
काय क्लेश दुख ढोता है-ss
कफ में मक्खी लिप्त यहाँ, मरती है विक्षिप्त यहाँ-2
वैसे ही साधू की हो-3 मृत्यु बताएँ रे-ss।।1746।।

(89) ज्ञानाभ्यास तरंग नहीं, होती तत्त्व उमंग नहीं-2
स्व-पर ज्ञान के संग नहीं-ss
ज्ञान बिना नहिं ध्यान यहाँ, ध्यान करे भव नाश यहाँ-2
ज्ञान, परिग्रह हो-3 को दूर कराये रे-ss।।1747।।

(90) स्वाध्याय जब करते हैं, इन्द्रिय कषाय रुकते हैं-2
ध्यान तभी सब करते हैं-ss
स्वाध्याय ही ध्यान यहाँ, कहते हैं भगवान् यहाँ-2
पंचमकाल में हो-3 स्वाध्याय कराओ रे-ss।।1748।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे–sss
साधु–श्रावक को हो–3 निजसार बताए रे–sss

(91) पापारंभ निवृत्ति हो, पुण्यकर्म में वृत्ति हो–2
ज्ञान की जब शुभ परिणति हो–ss
ज्ञान ही धर्मध्यान कहा, ज्ञान से ही कल्याण महा–2
धर्मध्यानी ही हो–3 निज ज्ञान बढ़ाए रे–ss।।1749।।

(92) जिन आगम अभ्यास नहीं, सम्यक् तप भी पास नहीं–2
भवसुख में अनुरक्त यहीं–ss
ज्ञान बिना तप कैसे हो, सुख का अनुभव कैसे हो?–2
ज्ञान बिन तप भी हो–3 भव भ्रमण कराये रे–ss।।1750।।

(93) धर्म उपदेश दिया करते, तत्त्व विचार किया करते–2
मुक्ती पथिक हुआ करते–ss
निज स्वभाव में लीन रहें, हर दम वे हमेश स्वाधीन रहें–2
तत्त्वों की चर्चा हो–3 मन दृढ़ता लाये रे–ss।।1751।।

(94) मुनि विकथा से दूर रहें, अधः कर्म को नहीं छुएँ–2
उनमें सम्यग्ज्ञान कहें–ss
उपदेशक जो कुशल यहाँ, अनुप्रेक्षा में निरत यहाँ–2
धर्ममय वृति हो–3 उनकी कहलाए रे–ss।।1752।।

(95) परिषह, दुख, उपसर्ग सहें, निंदा से नित दूर रहें–2
निंद्य वंचना नहीं करें–ss
ध्यान–अध्ययन में निरत रहें, बाह्य परिग्रह रहित जो हैं–2
मुनि का स्वरूप हो–3 ऐसा बतलाएँ रे–ss।।1753।।

(96) निर्विकल्प निर्द्वन्द यहाँ, निष्कलंक निर्मोह यहाँ–2
नियत विनिर्मल रूप यहाँ–ss
निज स्वरूप उपयोगी हो, ऐसा मुनि ही योगी हो–2
मुनियों का दर्शन हो–3 आनंद दिलाये रे–ss।।1754।।

(97) काय क्लेश बहु करते हैं, गलत भाव वे रखते हैं–2
निजसुख प्राप्त न करते हैं–ss
जिनवर का उपदेश मिले, तप करके मन नहीं खिले–2
मिथ्या तप उनको हो–3 नहिं मुक्ति दिलाए रे–ss।।1755।।

(98) रागादिक मल हृदय रहे, आत्म स्वरूप न उसे दिखे–2
वस्तु, मलिन जल नहीं दिखे–ss
जैसे मैले दर्पण में, चेहरा दिखे न साफ हमें–2
रागी आतम का हो–3 दर्शन नहिं पाये रे–ss।।1756।।

(99) तीन योग वश नहीं करे, तीन शल्य को हृदय धरे–2
ईर्ष्यालु अभिमान धरे–ss
करता रहता कलह यहाँ, करे प्रार्थना यही यहाँ–2
ऐसे सब साधु हो–3 संसार बढ़ाएँ रे–ss।।1757।।

(100) देहादि आसक्त दिखे, विषयों में अनुरक्त दिखे–2
भाव कषाय संयुक्त दिखे–ss
निज स्वभाव से सुप्त यहाँ, उसको हो सम्यक्त्व कहाँ–2
विषयों की आशा हो–3 मिथ्यात्व दिखाए रे–ss।।1758।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे–SSS
साधु–श्रावक को हो–3 निजसार बताए रे–SSS

(101) आरंभ उपकरणों में, कलह क्लेश जो साधु धरें–2
आकांक्षा ईर्ष्यालु कहें–SS
व्रत–गुण शील रहित हैं जो, धर्म विराधक लोग हैं वो–2
धर्म के नाशक हो–3 का सब नश जाये रे–SS।।1759।।

(102) जो स्वच्छंद रहा करते, संघ विरोध किया करते–2
गुरु समीप वो नहिं रहते–SS
साधू, सेवा राज्य करे, अज्ञानी वह पाप करे–2
ऐसे साधु ही हो–3 हैं धर्म विराधक रे–SS।।1760।।

(103) ज्योतिष वैद्यक मंत्र यहाँ, झाड़ फूँक के काम यहाँ–2
इनसे जीवन चले यहाँ–SS
धन धान्यादि ग्रहण करें, मुनि इनसे दोषी रहें–2
ये सब साधु के हो–3 नहिं योग्य बताएँ रे–SS।।1761।।

(104) पापारंभी बने रहें, परिग्रह में आसक्त रहें–2
कषाय से जो भरे रहें–SS
लोकाचार निमग्न हैं जो, सम्यग्दर्शन बिन हैं वो–2
ऐसे साधू ही हो–3 संतत्व लजायें रे–SS।।1762।।

(105) गैरों का गौरव न सहें, अपनी महिमा स्वयं कहें–2
भोजन में आसक्ति धरें–SS
भोज कथा में मस्त रहे, इनमें नहिं सम्यक्त्व रहे–2
सम्यक्त्व नहिं हो हो–3 वे स्वादु बताएँ रे–SS।।1763।।

(106) माँस, चर्म, हड्डी लोभी, मुनि देख श्वा भाँके भी–2
कलह क्लेश वह करता ही–SSS
वैसे पापी धर्मी को, देख कलह वो करता ही–2
पापी को धर्मी हो–3 नहिं देख सुहाएँ रे–SS।।1764।।

(107) ध्यानाध्ययन की सिद्धि करे, ज्ञान व संयम वृद्धि करे–2
समता की समृद्धि करे–SS
जैसा भोजन प्राप्त हुआ, उसमें ही संतुष्ट हुआ–2
ऐसा ही साधु हो–3 शिवपथ लवलीन रहे–SS।।1765।।

(108) मुनी करे उदराग्नि शमन, भौंरे जैसा गौ भोजन–2
करते बिना स्वाद भोजन–SS
औंगन सा आहार यहाँ, मुनिवर ऐसा करें यहाँ–2
सबको सुखदायी हो–3 वे संत कहाएँ रे–SS।।1766।।

(109) माँस खून रस भरा यहाँ, अस्थि, शुक्र मल मूत्र यहाँ–2
पीव कीट तन भरा यहाँ–SS
दुर्गन्धित अपवित्र ये तन, है अनित्य जड़रूप सघन–2
इससे जितना हो हो–3 तुम धर्म सजाओ रे–SS।।1767।।

(110) कर्मास्रव का कारण तन, दुक्खों का भाजन ये तन–2
चेतन का ये करे पतन–SS
निज आतम से भिन्न यहाँ, धर्मकार्य में है साधन–2
साधु ये मान हो–3 पोषण कर जाये रे–SS।।1768।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(111) संयम तप करते मुनि ध्यान, अध्ययन वीतराग विज्ञान-2
करें इसलिए मुक्ति विधान-ss
छोड़ इन्हें तन पुष्ट करे, इष्ट गरिष्ठ आहार करे-2
ऐसे साधु से हो-3 दुख ही बढ़ जाये रे-ss॥1769॥

(112) साधु क्रोध से कलह करे, रौद्र क्लेश परिणाम करे-2
रुष्ट होकर आहार करे-ss
साधु-पशु में क्या अंतर, साधु भेष में है व्यंतर-2
भोजन जो माँगे हो-3 भिखारी कहलाये रे-ss॥1770॥

(113) हाथ में भोजन शुद्ध यहाँ, तपे लोह के पिण्ड समां-2
ले लो दिव्य जहाज समां-ss
जब तू ध्यान लगाएगा, ये साधन बन जायेगा-2
शुद्ध आहार हो-3 मन शुद्ध बनाये रे-ss॥1771॥

(114) है अविरत सम्यग्दृष्टी, देशव्रती मुनि महाव्रती-2
आगम रुचिधर जैनमती-ss
तत्त्व विचारक कई यहाँ, भेद सहस्रों कहे यहाँ-2
पात्रों के भव में हो-3 कई भेद बताएँ रे-ss॥1772॥

(115) उपशम-निस्पृह ध्यान यहाँ, अध्ययन में लवलीन यहाँ-2
गुणधारी मुनिजन यहाँ-ss
जैसी गुण की वृद्धि हो, श्रेष्ठ पात्रता सिद्धि हो-2
उत्तम ध्यानी जो हो-3 उत्तम पात्र कहाये रे-ss॥1773॥

(116) अरहंत सिद्ध परमातम को, बहिर व अंतर आतम को-2
नहीं जानता साधू जो-ss
तीव्र यहाँ तप करता है, कर्म नहीं क्षय करता है-2
उसका संसार हो-3 बहु दीर्घ बताएँ रे-ss॥1774॥

(117) दोष रहित सम्यग्दर्शन, ध्यानी शल्य रहित मुनिजन-2
पात्र विशेष परिग्रह बिन-sss
जो इन गुण से रहित यहाँ, समझो उसे अपात्र यहाँ-2
पात्र शिवपुर की हो-3 बस में चढ़ जाये रे-ss॥1775॥

(118) जिसमें सम्यक्त्वादि गुण, रत्नत्रय में रहे निपुण-2
पात्र विशेषी वही श्रमण-ss
पात्र जानकर दान जो दे, मोक्षमार्ग में निरत हैं वे-2
इक दिन ये श्रावक हो-3 रत्नत्रय पाएँ रे-ss॥1776॥

(119) निश्चय और व्यवहार स्वरूप, भूला वह रत्नत्रय रूप-2
नहीं जानता आत्म स्वरूप-ss
वो जप तप सब करता है, होता है सब मिथ्यारूप-2
ऐसा श्री जिनवर हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-ss॥1777॥

(120) तत्त्व जान क्या लाभ यहाँ, तप करके क्या लाभ यहाँ-2
संयम से क्या लाभ यहाँ-ss
जब सम्यक्त्व विशुद्धि नहीं, निज परिणति में शुद्धि नहीं-2
ऐसा तप-ज्ञान हो-3 भव बीज कहाये रे-ss॥1778॥

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे–sss
साधु–श्रावक को हो–3 निजसार बताए रे–sss

(121) व्रत गुण शील परीषह जय, चारित तप आवश्यक छह–2
ध्यान अध्ययन नित करें विनय–ss
गर ये हैं सम्यक्त्व बिना, तो ये सब भव बीज यहाँ–2
सम्यक् बिन चारित हो–3 संसार भ्रमाये रे–ss।।1779।।

(122) ख्याति पूजा और सत्कार, चाह रहा क्यूँ प्रभु के द्वार–2
इससे तो बढ़ता संसार–ss
गर परलोक सुखी होना, तो कर निज आतम उद्धार–2
ख्याति की चाहत हो–3 परलोक बिगाड़े रे–ss।।1780।।

(123) कर्मजनित वैभाविक भाव, आत्म जनित स्वाभाविक भाव–2
जो मुनि मनन करे निज भाव–ss
रुचि करता शुद्धात्म यहाँ, वो पाता निर्वाण यहाँ–2
निज आत्म रुचि ही हो–3 मुक्ति दिलवाये रे–ss।।1781।।

(124) मूल प्रकृति उत्तर प्रकृति, उत्तर की उत्तर प्रकृति–2
मिटें प्रकृति तो हो मुक्ति–ss
तत्त्व जानता वही यहाँ, द्रव्य–भाव नहिं कर्म जहाँ–2
ज्यादा कहने से हो–3 क्या लाभ दिखाए रे–ss।।1782।।

(125) विषय विरक्त कोई योगी, विषयासक्त कोई योगी–2
अंतर–बहिरातम योगी–ss
विषय विरक्त छूटता है, विषयासक्त तो बँधता है–2
अंतर आतम बन हो–3 सब बंध मिटाओ रे–ss।।1783।।

(126) जो मनुष्य निज आतम ज्ञान, ध्यान अध्ययन सुख अमृत पान–2
छोड़ इन्हें करता विषपान–ss
इन्द्रिय सुख में लीन है जो, उसको बहिरातम समझो–2
इनको आतम सुख हो–3 नहिं रंच दिखाये रे–ss।।1784।।

(127) पका हुआ किंपाक फल, विष मोदक इन्द्रायण फल–2
सुंदर प्रिय सुख दे उज्ज्वल–ss
इनके हैं परिणाम दुखद, जैसे गुटखा के हैं फल–2
भोगें तब भायें हो–3 फिर दुख दिखलाएँ रे–ss।।1785।।

(128) पुत्र–मित्र स्त्री तन को, राग–द्वेष मय चेतन को–2
आत्म स्वरूप समझता जो–ss
बहिरातम तू जान उसे, भूला है निज आतम को–2
पर को निज माने हो–3 बहिरात्म कहाए रे–ss।।1786।।

(129) इन्द्रिय सुख में रमता है, तत्त्व प्राप्त नहिं करता है–2
अंतस् में नहिं लखता है–ss
इन्द्रिय विषय हैं दुखदायी, ये विचार नहिं करता है–2
बाहर सुख जाने हो–3 बहिरात्म कहाये रे–ss।।1787।।

(130) इन्द्रिय सुख होते जितने, दुख देते वे सब उतने–2
ध्यान दिया नहिं है हमने–ss
दुक्ख तीव्र आतम को हों, नहीं विचार किया सबने–2
इन्द्रिय विषयों में हो–3 बहिरात्म भ्रमाएँ रे–ss।।1788।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(131) जो भी जन्मे विष्टा में, प्रीति करे वो विष्टा में-2
जीवन समझे वो उसमें-ss
वैसे इन्द्रिय विषयों को, जीवन समझ रहा उनको-2
ऐसे लोगों को हो-3 बहिरात्म बताएँ रे-ss॥1789॥

(132) भक्ष्य-अभक्ष्य, क्षार-अमृत, खाद्य-अखाद्य में ज्ञान रहित-2
इनमें म्लेच्छ विवेक रहित-ss
वैसे ही बहिरातम है, भेद न आत्म-अनातम है-2
बहिरातम में वो हो-3 न विवेक दिखाए रे-ss॥1790॥

(133) सबसे भिन्न निजातम है, विषय भोग तो मातम है-2
माने, अंतर आतम है-ss
निज स्वरूप अनुभव करता, शिव सुख में तन्मय रहता-2
ऐसा वह मध्यम हो-3 आतम कहलाये रे-ss॥1791॥

(134) ये तन अति दुर्वासित है, मल मूत्रों से वासित है-2
दुर्वासना प्रशासित है-ss
सम्यग्दर्शन ज्ञान मिले, फिर भी इच्छा नहीं टले-2
चिरकाल शासित हो-3 इच्छाएँ न जायें रे-ss॥1792॥

(135) ज्ञानी सम्यग्दृष्टि यहाँ, भोग अनिच्छित करे यहाँ-2
इन्द्रिय सुख, दुख लगें यहाँ-ss
रोग से मुक्ति जो चाहे, कड़वी औषधि वो खाये-2
औषधि जो खाये हो-3 वो रोग मिटाए रे-ss॥1793॥

(136) बहिरातम का भाव तजो, अंतर आतम भाव भजो-2
परमातम का लक्ष्य करो-ss
होगा जब सद्ज्ञान यहाँ, तभी बनें ये भाव यहाँ-2
ज्यादा कहने से हो-3 क्या लाभ बताएँ रे-ss॥1794॥

(137) वस्तु स्वरूप भाव यहाँ, अज्ञानी सम करे यहाँ-2
समझो वो बहिरात्म यहाँ-ss
चारों गति में भ्रमण करे, दुख के कारण सभी धरे-2
वस्तु स्वभाव हो-3 वह जान न पाये रे-ss॥1795॥

(137) अंतरात्म परमात्म अरे, वस्तु स्वभावी भाव करे-2
पाते वे शिवधाम अरे-ss
भाव पुण्य के कारण हैं, पुण्य मोक्ष का कारण है-2
अंतर आतम जो हो-3 ज्ञानी कहलाए रे-ss॥1796॥

(139) स्व-पर समय को भेदों से, द्रव्य गुणों पर्यायों से-2
यहाँ जानता भावों से-ss
वह जाने नित की आतम, समझों वो अंतर आतम-2
शुद्ध भावों से हो-3 वह मंजिल पाये रे-ss॥1797॥

(140) बहिरातम पर समय कहा, अंतरात्म पर समय कहा-2
परमातम स्वसमय अहा-ss
तीन भेद आतम के हैं, गुणस्थानों में ये ही हैं-2
केवल परमातम हो-3 स्व समय कहलाएँ रे-ss॥1798॥

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(141) एक से तीन हैं बहिरातम, चौथा जघन्य अन्तरातम-2
पाँच से ग्यारह मध्यातम-ss
बारह उत्तम अंतरातम, तेरह-चौदह परमातम-2
सारे सिद्धों को हो-3 परमात्म बताएँ रे-ss॥1799॥

(142) तीन मूढ़ता दोष पतित, तीन शल्य त्रय दण्ड रहित-2
तीनों गारव करें अहित-ss
इनसे जो भी मुक्त रहे, वो शिवपथ पर युक्त रहे-2
दोषों को छोड़े हो-3 वो मुक्ती पाये रे-ss॥1800॥

(143) रत्नत्रय से युक्त यहाँ, तीन गुप्ति संयुक्त यहाँ-2
तीन करण त्रय योग यहाँ-ss
आत्म विशुद्धि रहे हरदम, शिवनायक है वही श्रमण-2
मुक्ती के पथ का हो-3 नेता कहलाए रे-ss॥1801॥

(144) जिनमुद्रा का धारक जो, सम्यक् विराग साधक वो-2
वीतराग आराधक वो-ss
ज्ञानी, शुक्लध्यानी है, वो निज पर कल्याणी है-2
ऐसे ही योगी हो-3 शिव पथिक कहायें रे-ss॥1802॥

(145) अंतर बाहर ग्रंथ रहित, ज्ञानी शुद्ध उपयोग सहित-2
मूल व उत्तर गुणों सहित-ss
मुक्ती पथ उन्नायक हैं, नेता श्रेष्ठ विधायक हैं-2
शुक्ल ध्यानी को हो-3 मुक्ती मिल जाये रे-ss॥1803॥

(146) जन्म जरा मृत नाश करे, दुख रूपी विष नष्ट करे-2
वो ही है सम्यक्त्व अरे-ss
शिवसुख लाभ कराता है, साधु उसे ही चाहता है-2
साधु है साधक हो-3 शुभ भाव बनाए रे-ss॥1804॥

(147) इन्द्र नरेन्द्र से पूज्य यहाँ, शत इन्द्रों से पूज्य यहाँ-2
गणधर से अभिवंद्य यहाँ-sss
सम्यक् गुण प्रधान जिसमें, इससे वह परमात्म यहाँ-2
सम्यक्त्व गुण ही हो-3 परमात्म बनाये रे-ss॥1805॥

(147) अवसर्पिणी काल का दोष, ऊपर से मिथ्यात्व प्रदोष-2
कैसे बढ़े पुण्य का कोश-ss
उपशम सम्यक् जीवों का, मिट जाता है ये भी दोष-2
दुष्ट कषायें हो-3 फिर-फिर आ जायें रे-ss॥1806॥

(149) गुण व्रत तप और प्रतिमा दान, जल छानन की क्रिया महान-2
दिवा भोज समता उर आन-sss
सम्यग्दर्शन चारित ज्ञान, महिमा इनकी जगत महान-2
श्रावक की त्रेपन हो-3 ये क्रिया बताएँ रे-ss॥1807॥

(150) ज्ञान, ध्यान की सिद्धि करे, ध्यान निर्जरा कर्म करे-2
जिसका फल है मोक्ष अरे-ss
ज्ञानाभ्यास करो हरदम, यही मुक्ति का है कारण-2
ज्ञानी इस भव से हो-3 मुक्ती पा जाये रे-ss॥1808॥

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे–SSS
साधु–श्रावक को हो–3 निजसार बताए रे–SSS

(151) कुशल व्यक्ति ही तप करता, निपुण व्यक्ति संयम धरता–2
समता भावों में रमता–SS
समभावी वैरागी हो, श्रुतभावी में तीनों हों–2
श्रुत को ही भाओ हो–3 तीनों पा जाओ रे–SS।।1809।।

(152) मिथ्यादर्शन के कारण, करे पंच संसार भ्रमण–2
काल अनंतों करे मरण–SSS
मिला नहीं सम्यक्त्व यहाँ, भ्रमता फिरता यहाँ वहाँ–SSS
मिथ्यात्व भव में हो–3 परिभ्रमण कराये रे–SS।।1810।।

(153) शुद्ध प्राप्त सम्यक्त्व करे, तब ही सुख को प्राप्त करे–2
सम्यक् बिन यह दुखी रहे–SS
सम्यग्दर्शन प्राप्त करो, खुश रह हरदम सुखी रहो–2
लक्ष्य बनाकर हो–3 अनुकरण दिखाओ रे–SS।।1811।।

(154) समकित बिन सब दुख ही है, सम्यक् हो सब सुख ही है–2
ऐसा तो निश्चय ही है–SS
जैसा जो भी कर जाओ, सम्यक् जीवन में लाओ–2
तब ही इस भव में हो–3 सुख झलक दिखाए रे–SS।।1812।।

(155) नय, निक्षेप प्रमाण यहाँ, नाट्यशास्त्र और छंद यहाँ–2
अलंकार शब्दादि यहाँ–SSS
पाया इनका ज्ञान यहाँ, क्रियायें की सम्यक्त्व बिना–2
सम्यक्त्व के बिन हो–3 भव कार्य बताएँ रे–SS।।1813।।

(156) प्रतिमोपकरण वसति यहाँ, शास्त्र संघ कुल जाति यहाँ–2
शिष्य और गणगच्छ यहाँ–SS
प्रतिशिष्य और पुत्र कहे, पुस्तक वस्त्र प्रपौत्र कहे–2
इनमें ममकार हो–3 मम दुक्ख बढ़ाए रे–SS।।1814।।

(157) पिच्छी कमंडल संस्तर में, पुस्तक में और वस्तु में–2
हो ममकार अगर इनमें–SS
आर्त–रौद्रमय ध्यान करे, तब तक सुख नहिं लेश मिले–2
पर में ममत्व हो–3 मम सौख्य मिटाए रे–SS।।1815।।

(158) रत्नत्रय गण गच्छ यहाँ, गुण समूह है संघ यहाँ–2
निश्चय निर्मल आत्म यहाँ–SS
मोक्षमार्गी साधू जो, गुणमय निर्मल आत्म यहाँ–2
ऐसा ही साधु हो–3 सन्मार्ग दिखाए रे–SS।।1816।।

(159) सूरज तिमिर मिटाता है, वायु मेघ को लाता है–2
वन को आग मिटाता है–SS
बज्र मिटाता पर्वत को, सम्यक् नाशे कर्मों को–2
सम्यक्त्व सुख की हो–3 लहरें ले आये रे–SS।।1817।।

(160) मिथ्यातम से रहित रहे, सम्यक् रूपी दीप जले–2
हृदय कमल सा तभी खिले–SS
तीन लोक के तत्त्व दिखें, जिसमें सारे द्रव्य दिखें–2
सम्यक् दीपक सम् हो–3 सबको बतलाएँ रे–SS।।1818।।

रयणसार रत्नत्रय का आधार बताएँ रे-sss
साधु-श्रावक को हो-3 निजसार बताए रे-sss

(161) शुद्धातम अभ्यास करे, परमातम का ध्यान करे-2
कर्मनाश ये हेतु अरे-ss
कर्मों का क्षय हो जाये, मोक्ष उसे ही मिल जाये-2
मुक्ती मिलने पर हो-3 भव दुख मिट जाये रे-ss॥1819॥

(162) योग शुद्धि दिखलाता है, भाव विशुद्ध बनाता है-2
धर्माभ्यास भी करता है-ss
शुद्धध्यान में स्थिर हो, परमातम को ध्याता है-2
वो ही कर्मों से हो-3 मुक्ति पा जाये रे-ss॥1820॥

(163) शोधन कार्य किया जाये, स्वर्ण शुद्ध खुद हो जाये-2
वैसे ही यह बतलायें-ss
काल लब्धि जब प्रकट यहाँ, आतम हो परमात्म यहाँ-2
पुरुषारथ द्वारा हो-3 लब्धि आ जाये रे-ss॥1821॥

(164) कल्पवृक्ष चिंतामणि रत्न, कामधेनु पारस मणिरत्न-2
इच्छित फल दे यहाँ शुभम्-ss
वैसे ही सम्यक्त्व यहाँ, इच्छित फल दे सभी यहाँ-2
सम्यक् रत्नों में हो-3 शुभ रत्न बताएँ रे-ss॥1822॥

(165) रयणसार यह ग्रंथ यहाँ, देता पद निर्ग्रन्थ यहाँ-2
रत्नत्रय के रत्न यहाँ-ss
तप वैराग्य चरित्र यहाँ, निरीहता गुणशील यहाँ-2
पैदा कर जाये हो-3 शिवराह चलाये रे-ss॥1823॥

(166) माने, सुने न पढ़ता है, सुने न चिंतन करता है-2
नहीं भावना करता है-ss
जिनवर द्वारा कथित यहाँ, रयणसार नहिं गुनता है-2
उसको अतिघोर हो-3 मिथ्यात्व बताएँ रे-ss॥1824॥

(167) रयणसार है ग्रंथ महान, सज्जन द्वारा पूज्य सुजान-2
जिसमें साधू-श्रावक ज्ञान-ss
आलस छोड़ के पढ़ता जो, सुने भावना करता जो-2
शाश्वत शिवपुर को हो-3 वह ही पा जाये रे-ss॥1825॥

दोहा

पद्य अनुवाद किया यहाँ, रयणसार शुभ ग्रंथ।
गुरु के आशीर्वाद से, बनूँ सदा निर्ग्रंथ ॥
गुरु कृपा से मिल सका लिखने का आशीष।
लिख-लिखकर लिखता रहूँ, चरण झुकाऊँ शीश॥

काव्यमयी गुरुदेव ने दिया मुझे वरदान।
त्रय भक्ति से सदा, करूँ विनम्र प्रणाम॥

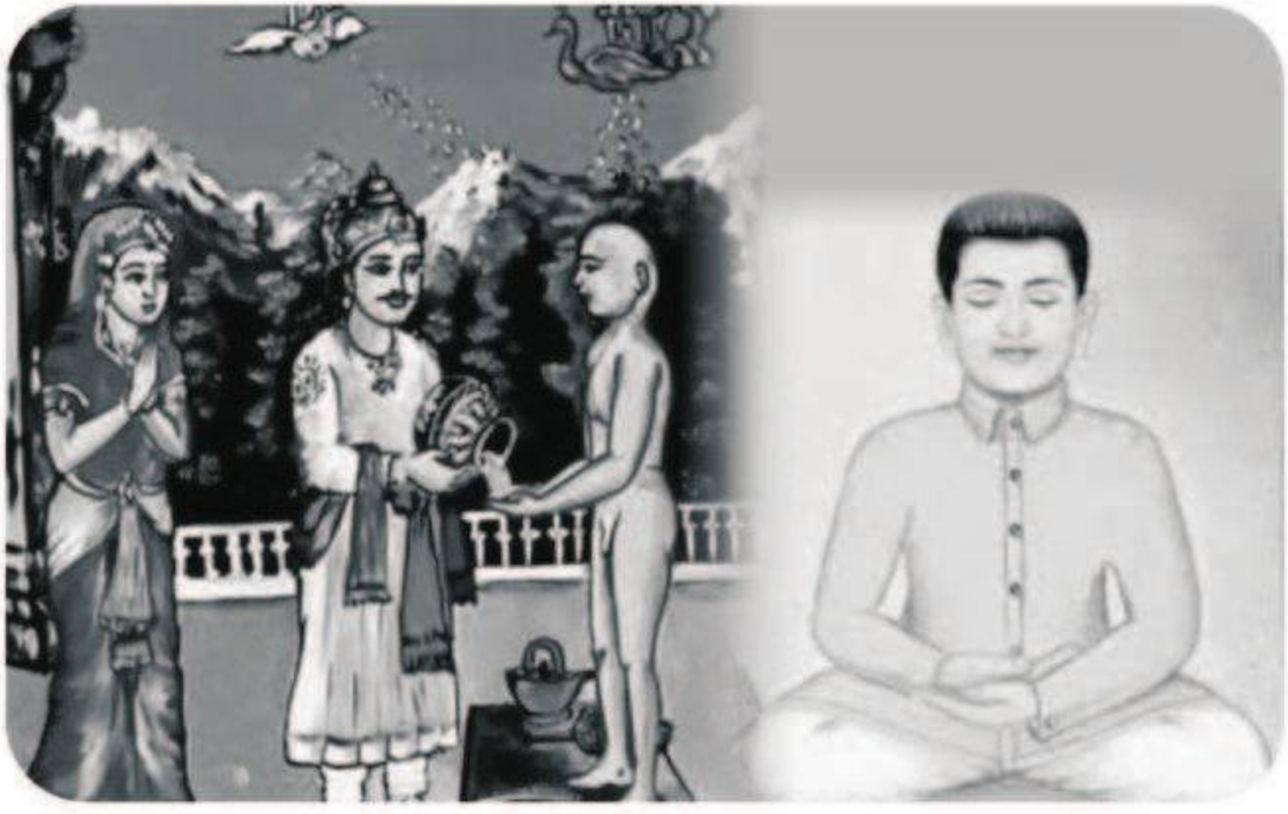

रत्नकरण्ड श्रावकाचार

मूल ग्रंथकर्ता : स्वामी समन्तभद्राचार्य
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे–ऽऽ
रत्नों की महिमा हो–3 ये ग्रंथ बताये रे–ऽऽ

मंगलाचरण

(1) कर्म मैल को मिटा दिया, वीतराग को प्रकट किया–2
वर्धमान को नमन किया–ऽऽ
लोकालोक सिमट आयें, ज्ञान में दर्पणवत् आयें–2
ऐसे प्रभु वीर हो–3 को हम शीश झुकाएँ रे–ऽऽ।।1826।।

(2) भव दुक्खों से बचवाये, उत्तम सुख में रखवाये–2
धर्म सही वह कहलाये–ऽऽ
कर्मों का जो नाश करें, सुख का नित्य विकास करे–2
ऐसा ही धर्म हो–3 हम यहाँ बतायें रे–ऽऽ।।1827।।

(3) सम्यग्दर्शन ज्ञान यहाँ, चारित्र भी हो साथ यहाँ–2
इसको कहते धर्म यहाँ–ऽऽ
जिनवर ने बतलाया है, सच्चा मार्ग दिखाया है–2
इससे विपरीत हो–3 भव भ्रमण कराये रे–ऽऽ।।1828।।

(4) तीन मूढ़ता रहित यहाँ, अष्ट अंग से सहित यहाँ–2
आठ मदों से रहित यहाँ–ऽऽ
सच्चे देव शास्त्र गुरु पर, श्रद्धा है सम्यक्त्व यहाँ–2
सच्ची श्रद्धा ही हो–3 सद्राह दिखाये रे–ऽऽ।।1829।।

(5) दोष अठारह रहित विभो, वीतराग सर्वज्ञ प्रभो–2
हितोपदेशी देव प्रभो!–ऽऽ
सच्चा देव जो कहलाए, जिसमें ये लक्षण आयें–2
ऐसा नहिं होवे हो–3 नहिं देव बताएँ रे–ऽऽ।।1830।।

(6) क्षुधा तृषा नहिं जन्म जरा, रोग मरण नहिं मोह अहा–2
राग–द्वेष बिन गर्व यहाँ–ऽऽऽ
चिंता, निद्रा, अरति नहीं, शोक खेद अरु स्वेद नहीं–2
दोष रहित हैं हो–3 प्रभु आप्त बताएँ रे–ऽऽ।।1831।।

(7) घाति कर्म रागादि रहित, उत्तम पद में हैं स्थित–2
आदि मध्य और अनंत रहित–ऽऽ
केवलज्ञान सहित भगवन, सर्वज्ञ, कृतकृत्य परम–2
हित का उपदेश हो–3 सबको बतलाएँ रे–ऽऽ।।1832।।

(8) बिना चाह उपदेश करें, राग–द्वेष नहिं रंच धरें–2
भव्यों का हित नित्य करें–ऽऽ
बजता हुआ मृदंग यहाँ, कुछ भी चाहे नहीं यहाँ–2
जो भी बजाये हो–3 वह बजता जाये रे–ऽऽ।।1833।।

(9) तत्त्वों का उपदेश सहित, पूर्वा पर विरोध रहित–2
सब जीवों का करे जो हित–ऽऽऽ
ऐसा सच्चा शास्त्र यहाँ, अनुलंघन से रहित यहाँ–2
जिनवर ने बोला हो–3 वह शास्त्र कहाये रे–ऽऽ।।1834।।

(10) विषय चाह वशीभूत नहीं, आरंभ परिग्रह रंच नहीं–2
ज्ञान ध्यान में रमें यहीं–ऽऽऽ
तप में जो लवलीन रहें, उनको सच्चे गुरू कहें–2
उनकी प्रशंसा हो–3 सारा जग गाये रे–ऽऽ।।1835।।

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

(11) तत्त्व यही ऐसा ही है, अन्य रूप वो कभी न है-2
और न अन्य प्रकार भी है-ऽऽऽ
देव-शास्त्र और गुरुओं को, निशंकित हो माने जो-2
खड्ग की धार हो-3 सम अटल बताएँ रे-ऽऽ॥1836॥

(12) धर्म कार्य नित करे यहाँ, इन्द्रिय भोग न चाह यहाँ-2
वो नि:कांक्षित अंग यहाँ-ऽऽऽ
कर्माधीन विनश्वर हैं, दुखमय हैं अघकारक है-2
ऐसे दु:खों से हो-3 सम्यक्त्व बचाये रे-ऽऽ॥1837॥

(13) स्वभाव से अपवित्र यहाँ, तन में ग्लानि रहित यहाँ-2
करे गुणों से प्रेम यहाँ-ऽऽऽ
रत्नत्रय से पवित्र तन, उसमें निर्विचिकित्सा अंग-2
ये गुण गुणों में हो-3 नित वृद्धि कराये रे-ऽऽ॥1838॥

(14) मिथ्या, मिथ्याधारक में, सहमत नहिं होना उनमें-2
कभी प्रशंसा नहीं करें-ऽऽ
दुख में स्तुति नहिं करें, अमूढ़ दृष्टि अंग कहें-2
इसके आने से हो-3 मन दृढ़ हो जाये रे-ऽऽ॥1839॥

(15) अज्ञानी असमर्थ यहाँ, धर्म की निंदा करे यहाँ-2
छिपायें धर्मी उसे यहाँ-ऽऽऽ
स्वभाव से जो पावन है, मोक्षमार्ग मन भावन है-2
निंदा छिपाये हो-3 उपगूहन आये रे-ऽऽ॥1840॥

(16) सम्यग्दर्शन चारित से, गिरते को मजबूत करे-2
वही धर्म से प्रेम रखे-ऽऽऽ
फिर से धर्म में लग जाये, स्थितिकरण ये कहलाये-2
इससे संयम में हो-3 स्थिरता बढ़ आये रे-ऽऽ॥1841॥

(17) धर्मी से शुभ भाव सहित, मायाचारी भाव रहित-2
यथायोग्य सम्मान सहित-ऽऽऽ
गौ-बछड़े सम प्रेम करें, इसको वत्सल अंग कहें-2
ऐसा ही भाव हो-3 नित प्रेम बढ़ाए रे-ऽऽ॥1842॥

(18) तम अज्ञान हटा करके, जैन धर्म बतला करके-2
महिमा को दिखला करके-ऽऽ
चारों ओर धर्म फैले, जैसे हो वैसे करके-2
अंग प्रभावना हो-3 गुरु यही बतायें रे-ऽऽ॥1843॥

(19) अंजन चोर निशंकित में, अनंतमति नि:कांक्षित में-2
उद्दायन नृप तीजे में-ऽऽऽ
रेवती अमूढ़ दृष्टि में, हुए प्रसिद्ध ये सृष्टि में-2
इनकी महिमा को हो-3 जिनधर्म बताए रे-ऽऽ॥1844॥

(20) जिनेन्द्र सेठ उपगूहन में, वारिषेण स्थितिकरण में-2
विष्णुकुमार है वत्सल में-ऽऽऽ
प्रभावना का अंग प्रमुख, वज्रकुमार प्रसिद्ध उसमें-2
सब ही समदृष्टि हो-3 हैं श्रुत बतलाए रे-ऽऽ॥1845॥

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

(21) अक्षर कम से मंत्र यहाँ, करे न पीड़ा दूर यहाँ-2
विष कर सके न नष्ट यहाँ-2
अंग हीन सम्यग्दर्शन, करे नष्ट नहिं जगत भ्रमण-2
हीन सम्यक्त्व हो-3 में शक्ति न आये रे-ऽऽ॥1846॥

(22) नदी समुद्र स्नान करें, बालू पत्थर ढेर धरें-2
पर्वत से गिर यहाँ मरें-ऽऽऽ
अग्नि कूदकर जान को दें, इन सबको जो धर्म करें-2
लोक में मूढ़ी हो-3 भव मूढ़ कहायें रे-ऽऽ॥1847॥

(23) लौकिक फल की इच्छा कर, राग-द्वेष को मन में धर-2
देवताओं की पूजा कर-ऽऽऽ
देवमूढता कहें उसे, मांग रहा वरदान अरे-2
देव मूढ़ी हैं हो-3 कुछ भी कर जाएँ रे-ऽऽ॥1848॥

(24) आरंभ परिग्रह साथ रखें, हिंसायुत् आचरण करें-2
भटक रहे भवकानन में-ऽऽऽ
वे पाखंडी संत यहाँ, पूजा उनकी करें यहाँ-2
गुरु में वह मूढ़ हो-3 भवताप बढ़ाए रे-ऽऽ॥1849॥

(25) पूजा ज्ञान व कुल जाति, बल ऋद्धि तन तप ख्याति-2
होती आठ मदों से क्षति-ऽऽऽ
करे घमण्ड इन्हें पाकर, मद भरता उसमें जाकर-2
सम्यग्दर्शन को हो-3 ये नष्ट करायें रे-ऽऽ॥1850॥

(26) मद में कोई घमण्ड करे, श्रमणों का अपमान करे-2
वो अपना अपमान करे-ऽऽऽ
धर्म, न धर्मी बिना रहे, धर्म का भी अपमान करे-2
ऐसे अभिमानी हो-3 दुर्गति में जायें रे-ऽऽ॥1851॥

(27) पाप सभी रुक गये यहाँ, तो धन का क्या काम यहाँ-2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ-ऽऽऽ
पाप नहीं सब रुके यहाँ, तो धन का क्या काम यहाँ-2
पाप मिट जायें हो-3 तो धन मिल जाये रे-ऽऽ॥1852॥

(28) सम्यग्दर्शन युक्त यहाँ, भंगी भी है पूज्य यहाँ-2
तन को तू मत देख यहाँ-ऽऽऽ
अग्नि के ऊपर राख ढकी, फिर भी ज्योतिर्मयी कही-2
गुण से हों पूज्य हो-3 तन से न बताएँ रे-ऽऽ॥1853॥

(29) धर्म से देखो कुत्ता भी, हो जाता है देव कभी-2
पाप से देव हो श्वान् कभी-ऽऽ
धर्म अमूल्य दिलाये पद, सुख देना उसका मकसद-2
दोनों फल जान हो-3 सद्धर्म को पाओ रे-ऽऽ॥1854॥

(30) भय स्नेह व आश करे, लोभ के वश मिथ्यात्व धरे-2
कुलिंगियों की विनय करे-ऽऽऽ
सम्यग्दृष्टि स्वप्न में भी, भूल से भी न विनय करें-2
कुगुरु कुदेव हो-3 को सिर न झुकाएँ रे-ऽऽ॥1855॥

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे–ऽऽ
रत्नों की महिमा हो–3 ये ग्रंथ बताये रे–ऽऽ

(31) ज्ञान व चारित्र उत्तम है, समदर्शन सर्वोत्तम है–2
ऐसा कहते गुरुजन हैं–ऽऽऽ
सागर में खेवटिया सम, मोक्षमार्ग में समदर्शन–2
ऐसा हम जानें हो–3 वो हृदय समायें रे–ऽऽ।।1856।।

(32) बीज बिना हो वृक्ष कहाँ, पिता बिना हो पुत्र कहाँ–2
त्यों सम्यक् बिन ज्ञान कहाँ–ऽऽऽ
ज्ञान बिना चारित्र यहाँ, उत्तम फल की प्राप्ति कहाँ–2
सम्यग्दर्शन बिन हो–3 बुध व्रत नहिं आयें रे–ऽऽ।।1857।।

(33) सम्यग्दर्शन बिना मुनी, मोक्षमार्गी कभी नहीं–2
कहते हैं ये बात यमी–ऽऽऽ
समदर्शनयुत् गृहस्थ जो हो, मुक्तिपथ का पथिक अहो–2
मोही उस मुनि से, हो–3 गृही श्रेष्ठ बताएँ रे–ऽऽ।।1858।।

(34) उपकारक सम्यक्त्व समां, तीन लोक में कोइ कहाँ–2
श्रेयसकारी यही यहाँ–ऽऽऽ
अपकारी मिथ्यात्व समां, तीन काल में नहीं यहाँ–2
छोड़ो मिथ्यात्व हो–3 सम्यक्त्व को पाओ रे–ऽऽ।।1859।।

(35) समदर्शन से शुद्ध यहाँ, है व्रत बिन नहिं मिले यहाँ–2
गति तिर्यंच व नरक यहाँ–ऽऽ
नहीं नीच कुल अल्पायु, दरिद्र नहिं विकलांग यहाँ–2
स्त्री नपुंसक हो–3 कुल नीच न पाये रे–ऽऽ।।1860।।

(36) शुद्ध हो सम्यग्दृष्टि यहाँ, पाता विद्या कांति महां–2
ओज विजय उन्नति यहाँ–ऽऽ
उच्च कुलीन धनाढ्य बने, राजा बन मुनिराज बने–2
सम्यक् की महिमा हो–3 सब वेद सुनाएँ रे–ऽऽ।।1861।।

(37) सम्यग्दृष्टि देव बने, अष्ट ऋद्धियाँ प्राप्त करे–2
विशेष सुंदर रूप धरे–ऽऽऽ
अप्सराओं की सभा में जो, बहुत काल तक रमण करे–2
दिव्य शरीर हो–3 जिन भक्ति से पायें रे–ऽऽ।।1862।।

(38) सम्यग्दृष्टि जीव यहाँ, पृथ्वी का अधिपति यहाँ–2
चक्रवर्ती भी बने यहाँ–ऽऽऽ
नवनिधि चौदह रत्नों के, स्वामी बनकर रहें यहाँ–2
सारे ही राजा हो–3 सिर उसे झुकाएँ रे–ऽऽ।।1863।।

(39) तत्त्वज्ञी समदृष्टि यहाँ, तीर्थंकर पद धरे यहाँ–2
नर इन्द्रों से पूज्य यहाँ–ऽऽऽ
शरणभूत सब जीवों को, गणधर द्वारा वंद्य यहाँ–2
जिनके चरणों में हो–3 सब शीश झुकाएँ रे–ऽऽ।।1864।।

(40) समदर्शन की शरण में जो, उसे बुढ़ापा रोग न हो–2
बाधा, शोक न शंका हो–ऽऽऽ
अनंतसुख विद्या उसको, अविनाशी गुण पाता वो–2
कर्ममल नाशे हो–3 शिवपद वो पाये रे–ऽऽ।।1865।।

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे–ऽऽ
रत्नों की महिमा हो–3 ये ग्रंथ बताये रे–ऽऽ

(41) समदृष्टि जिनभक्ति यहाँ, पाता इन्द्र ऐश्वर्य यहाँ–2
चक्री पद है श्रेष्ठ यहाँ–ऽऽ
लोक पूज्य तीर्थंकर पद, पाता है प्रभु भक्त यहाँ–2
धर्म चक्र को हो–3 पा शिवपद पाये रे–ऽऽ।।1866।।

द्वितीय अधिकार

(42) अधिक न्यूनता रहित है जो, जैसा का तैसा है जो–2
नहीं यहाँ विपरीत है जो–ऽऽ
जिसमें नहिं संदेह यहाँ, वो है सम्यग्ज्ञान यहाँ–2
आगम के ज्ञाता हो–3 ऐसा बतलाएँ रे–ऽऽ।।1867।।

(43) संयम की उत्पत्ति करे, मुनि श्रावक व्रत वृद्धि करे–2
रक्षा व्रत की नित्य करे–ऽऽऽ
ऐसा सम्यग्ज्ञान उसे, चरणानुयोग का शास्त्र कहे–2
ऐसे श्रुत पढ़ता हो–3 वह संयम पाये रे–ऽऽ।।1868।।

(44) महापुरुष का कथन करे, चरित्र उनका यहाँ कहे–2
धर्म अर्थ पुरुषार्थ कहे–2
पुण्य बोधि की खान है जो, प्रथमानुयोग का शास्त्र है वो–2
सम्यग्ज्ञानी गुरु हो–3 ये बात बताएँ रे–ऽऽ।।1869।।

(45) लोकालोक विभाग करे, युग परिवर्तन कथन करे–2
चारों गति की बात कहे–ऽऽऽ
ऐसा जो श्रुतज्ञान यहाँ, करणानुयोग का शास्त्र कहें–2
दर्पणवत् सबको हो–3 सिद्धांत बताए रे–ऽऽ।।1870।।

(46) जीव अजीव सुतत्त्व कहे, पुण्य पाप का कथन करे–2
द्रव्यों का सत् रूप कहे–ऽऽ
भावों का विस्तार करे, द्रव्यानुयोग का शास्त्र कहे–2
ज्ञानीजन दीपक हो–3 इसको बतलाएँ रे–ऽऽ।।1871।।

(47) दर्शन मोह विनाश हुआ, सम्यक् जिसको प्राप्त हुआ–2
सम्यग्ज्ञान भी साथ हुआ–ऽऽ
राग–द्वेष निवृत्ति को, सम्यक् चारित धारे वो–2
गुरुवर हम सबको हो–3 ये बात बताएँ रे–ऽऽ।।1872।।

(48) राग–द्वेष निवृत्ति हो, हिंसादिक पच पाप न हों–2
तभी त्याग व्रत चारित हो–ऽऽऽ
धन की जिसको चाह नहीं, सेवा नृप की करे नहीं–2
मोह मिट जाये हो–3 जब चारित आये रे–ऽऽ।।1873।।

(49) हिंसा, झूठ, कुशील यहाँ, चोरी परिग्रह पाप यहाँ–2
पापास्रव के कार्य यहाँ–ऽऽऽ
सम्यग्ज्ञानी पापों से, भव में सदा विरक्त रहें–2
यह ही ज्ञानीजन हो–3 चारित्र बताएँ रे–ऽऽ।।1874।।

(50) सकल विकल चारित्र कहे, श्रमण सकल हो ग्रहण करे–2
श्रावक विकल चरित्र धरे–ऽऽ
श्रमण परिग्रह रहित यहाँ, श्रावक परिग्रह सहित यहाँ–2
दोनों भेदों को हो–3 ज्ञानी जन पायें रे–ऽऽ।।1875।।

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

(51) पाँच अणुव्रत, त्रय गुणव्रत, चार कहे हैं शिक्षाव्रत-2
तीनों धारें यहाँ गृहस्थ-ऽऽऽ
इनसे संयम वृद्धि हो, धीरे धीरे दृढ़ता हो-2
विकल चारित्र हो-3 के भेद बताएँ रे-ऽऽ॥1876॥

(52) स्थूल हिंसा झूठ तजे, चोरी मैथुन त्याग करे-2
परिग्रह से जो विरक्त रहे-ऽऽ
पाँच अणुव्रत ये ही हैं, श्रावक इनको ग्रहण करें-2
व्रत के भावों से हो-3 नित पुण्य बढ़ाए रे-ऽऽ॥1877॥

(53) मन वच तन त्रय योगों से, कृत कारित अनुमोदन से-2
त्रस हिंसा का त्याग करे-ऽऽऽ
स्थूल अहिंसाणुव्रत है, ऐसा गणधर देव कहे-2
अणुव्रत जीवन में हो-3 निज धर्म बढ़ाए रे-ऽऽ॥1878॥

(54) छेदन, बंधन दुख देना, अधिक लादकर ले जाना-2
भोजन को भी कम देना-ऽऽऽ
अहिंसाणुव्रत पुण्यमयी, पंच अधिकार हैं पापमयी-2
इनसे बच करके हो-3 व्रत को अपनाओ रे-ऽऽ॥1879॥

(55) स्थूल झूठ नहिं बोले जो, अन्य से नहिं बुलवाये जो-2
दुखमय सत्य न बोले वो-ऽऽ
ये व्रत के अतिचार कहे, सत्याणुव्रत यहाँ कहे-2
हित मित प्रिय बोले हो-3 जो प्रीति बढ़ाए रे-ऽऽ॥1880॥

(56) चुगली, झूठ उपदेश करें, गुप्त बात को प्रकट करें-2
झूठे दस्तावेज लिखें-ऽऽऽ
कोई धरोहर को हर लें, व्रत धारी ये त्याग करें-2
सत्याणुव्रत के हो-3 अतिचार बताएँ रे-ऽऽ॥1881॥

(57) रखी, गिरी, भूली हुई हो, वस्तु दिये बिन ले ली हो-2
नहीं गैर को देता जो-ऽऽऽ
अचौर्याणुव्रत धरे यहाँ, पाँच भावना करें यहाँ-2
होता व्रती वो हो-3 ये कार्य न भाये रे-ऽऽ॥1882॥

(58) चोरी के प्रेरक बनना, राजाज्ञा लंघन करना-2
चौर्य वस्तु को क्रय करना-ऽऽऽ
मिश्रण कर विक्रय करना, नाप तौल घट बढ़ करना-2
अचौर्याणुव्रत के हो-3 अतिचार बताएँ रे-ऽऽ॥1883॥

(59) पर स्त्री नहिं सेव्य करे, नहीं किसी को करवाये-2
पाप के भय से भय खाये-ऽऽऽ
पर स्त्री का त्यागी वो, स्वदार संतोष व्रत है जो-2
ब्रह्मचर्याणु व्रत हो-3 यही कहाए रे-ऽऽ॥1884॥

(60) विवाह गैरों का करना, भिन्न अंग क्रीड़ा करना-2
तीव्र काम इच्छा रखना-ऽऽ
कामी वचन यहाँ बोले, वेश्या से संबंध रखे-2
ब्रह्मचर्य व्रत के हो-3 अतिचार बताएँ रे-ऽऽ॥1885॥

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

(61) रखे प्रमाण परिग्रह में, हिरण्य धान्य धन सोने में-2
रखे न इच्छा ज्यादा में-ऽऽ
परिग्रह में परिमाण करें, परिमाण अणुव्रत उसे कहें-2
व्रत में ये भाव हो-3 ही मुख्य बताएँ रे-ऽऽ॥1886॥

(62) जितना यहाँ प्रमाण करे, वाहन संग्रह अधिक करे-2
अधिक लोभ, आश्चर्य करे-ऽऽऽ
अधिक भार को लादे जो, परिग्रह परिमित दोष हैं जो-2
इस व्रत के पाँच हो-3 अतिचार बताएँ रे-ऽऽ॥887॥

(63) निरतिचार व्रत पाले जो, स्वर्गलोक को पाये वो-2
अवधिज्ञान पा जाये वो-ऽऽ
आठ ऋद्धियाँ, दिव्य हो तन, व्रत से निधियाँ मिलें शुभम्-2
सुंदर तन पाकर हो-3 मन खुश हो जाये रे-ऽऽ॥1888॥

(64) चाण्डाल धनदेव यहाँ, वारिषेण मुनिराज यहाँ-2
नीली हुई प्रसिद्ध यहाँ-ऽऽ
जयकुमार ने व्रत पाला, पाँचों व्रत में शुद्ध यहाँ-2
इन सबकी महिमा हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-ऽऽ॥1889॥

(65) धनश्री हिंसा करने में, सत्यघोष दूजे अघ में-2
तापस पापी चोरी में-ऽऽ
कोतवाल है अब्रह्म में, श्मश्रु हुआ परिग्रह में-2
पाचों पापों में हो-3 पापी कहलाए रे-ऽऽ॥1890॥

(66) मद्य माँस मधु त्याग करे, पाँच अणुव्रत यहाँ धरे-2
आठ मूल गुण यही कहे-ऽऽ
गृहस्थ इन्हें धारण करता, धर्म कार्य में रत रहता-2
इनसे जीवन में हो-3 कुछ धर्म समाए रे-ऽऽ॥1891॥

चतुर्थ अधिकार

(67) अष्टमूल जो बढ़ जायें, अनर्थ दण्ड व्रत आ जायें-2
दिग्व्रत स्वयं समा जायें-ऽऽ
भोगोपभोग परिमाण व्रत, गुणव्रत ये सब कहलाएँ-2
गणधर देवादि हो-3 ये बात बताएँ रे-ऽऽ॥1892॥

(68) सीमित करना दशों दिशा, तब सुधरेगी यहाँ दशा-2
सूक्ष्म पाप का मिटे नशा-ऽऽ
बाहर मैं नहिं जाऊँगा, ये संकल्प निभाउँगा-2
आगम के ज्ञाता हो-3 दिग्व्रत बतलाएँ रे-ऽऽ॥1893॥

(69) नदी समुद्र, पहाड़ी हैं, पर्वत शहर न नहरे हैं-2
इनसे सीमा करते हैं-ऽऽ
मर्यादा हो जाने से, सूक्ष्म पाप से बचते हैं-2
ये ही दिग्व्रत की हो-3 सीमा कहलाए रे-ऽऽ॥1894॥

(70) मर्यादा की सीमा से, सूक्ष्म पाप के तजने से-2
दिग्व्रत धारण करने से-ऽऽ
अणुव्रत, महाव्रतों के सम, होते हैं कहते भगवन्-2
अणुव्रत, महाव्रत का हो-3 अभ्यास करायें रे-ऽऽ॥1895॥

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

(71) प्रत्याख्यानावरण कषाय, मंद उदय उसका जब आय-2
तब संयम का भाव समाय-ऽऽऽ
बहुत कठिन महाव्रत पाना, परिणति मुनि पद की भाना-2
भाये और चाहे, हो-3 वो ही अवगाहे रे-ऽऽ॥1896॥

(72) हिंसादिक पच पापों को, त्रय योगों से त्यागे जो-2
कृत कारित मोदन से जो-ऽऽ
ऐसा त्याग यहाँ करना, समझो महाव्रती बनना-2
गुरुवर ऐसा ही हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-ऽऽ॥1897॥

(73) हो अज्ञान, प्रमाद यहाँ, ऊर्ध्व अध:उल्लंघ यहाँ-2
ज्यादा सीमा करे यहाँ-ऽऽ
विस्मृत मर्यादा होना, दिग्व्रत के अतिचार यहाँ-2
इनसे बचना ही हो-3 दिग्व्रत कहलाए रे-ऽऽ॥1898॥

(74) मर्यादा के भीतर हम, पाप बंध को करते कम-2
बिना प्रयोजन त्यागें हम-ऽऽ
ऐसा भाव बनाते हैं, अनर्थ दण्ड व्रत कहते हैं-2
ये व्रत पापों को हो-3 कम करता जाये रे-ऽऽ॥1899॥

(75) पाप उपदेश, अपध्यान, दु:श्रुति और हिंसादान-2
प्रमाद चर्या अज्ञान-ऽऽऽ
पाँचों अनर्थ दण्ड यहाँ, अशुभ प्रवृत्ति करें यहाँ-2
व्रत में इन सबसे हो-3 कइ दोष आ जायें रे-ऽऽ॥1900॥

(76) पीड़ा मय व्यापार करे, छल, हिंसा, आरंभ करे-2
इन सम्बंधी कथा करे-ऽऽऽ
पाप उपदेश अनर्थदण्ड है, जिसका फल निश्चित दण्ड है-2
इनसे बच जाये हो-3 तो व्रत फैलाए रे-ऽऽ॥1901॥

(77) फरसा और तलवार यहाँ, अस्त्र शस्त्र तोपादि यहाँ-2
विष सांकल बंदूक यहाँ-ऽऽऽ
देना ये हिंसा दान है, बचे उसे खुद का ज्ञान है-2
ज्ञानी जन ऐसा हो-3 नहिं कभी बताएँ रे-ऽऽ॥1902॥

(78) द्वेष भाव को करे यहाँ, बांधे काटे मरे यहाँ-2
स्त्री का चिंतन करे यहाँ-ऽऽ
पर स्त्री में राग करें, अपध्यान रत यहाँ कहें-2
अपध्यान अनर्थ हो-3 ये दण्ड कहाये रे-ऽऽ॥1903॥

(79) आरंभ परिग्रह मिथ्या से, साहस राग व द्वेषों से-2
विषय भोगमय पापों से-ऽऽ
चित्त मलिन हो जाता है, दु:श्रुति ये कहलाता है-2
दु:श्रुति अनर्थ हो-3 व्रत दण्ड कहाए रे-ऽऽ॥1904॥

(80) बिना प्रयोजन खोदे जो, जल को व्यर्थ बहाये जो-2
व्यर्थ में हवा चलाये जो-ऽऽ
अग्नि जलाए घूमे जो, वनस्पति को घेरे जो-2
प्रमाद चर्या हो-3 अनर्थ दण्डादि बताएँ रे-ऽऽ॥1905॥

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे–ऽऽ
रत्नों की महिमा हो–3 ये ग्रंथ बताये रे–ऽऽ

(81) अशिष्ट वचन को बोले जो, तन कुचेष्टा लाये जो–2
बकबक को अपनाए जो–ऽऽ
आवश्यक से अधिक रखे, बिन विचारे कार्य करे–2
अनर्थ दण्ड के हो–3 अतिचार बताएँ रे–ऽऽ।।1906।।

(82) विषय राग की चाह यहाँ, मर्यादा में करे यहाँ–2
धीरे धीरे तजे यहाँ–ऽऽ
विषयों को परिमाण करें, सीमित भोग–उपभोग करें–2
भोगोपभोग हो–3 सीमा व्रत गायें रे–ऽऽ।।1907।।

(83) भोग करें इक बार यहाँ, कहते उसको भोग यहाँ–2
इन्द्रिय विषय तू जान यहाँ–ऽऽ
बार–बार जिसको भोगें, उसको ही उपभोग कहें–2
सबमें ये जानो हो–3 जो ज्ञान बढ़ाए रे–ऽऽ।।1908।।

(84) मद्य, माँस, मधु त्याग करे, त्रस हिंसा से दूर रहे–2
प्रभु चरणों की शरण गहे–ऽऽऽ
जो इनका नहिं त्याग करे, वो श्रावक भी नहीं रहे–2
दु:खों की खान हो–3 ये कार्य बताएँ रे–ऽऽ।।1909।।

(85) अदरक मूली खाता है, आलू मक्खन भाता है–2
निंब फूल अपनाता है–ऽऽ
फल थोड़ा हिंसा ज्यादा, इनसे दुख ही आता है–2
सुख की हो चाहत हो–3 ये दूर हटाओ रे–ऽऽ।।1910।।

(86) अनिष्टकारी को छोड़े, अयोग्य सेवन को छोड़े–2
इन्द्रिय विषयों को छोड़े–ऽऽऽ
त्याग प्रतिज्ञापूर्वक हो, वही त्यागव्रत कहा अहो–2
इसको ही श्रुत में हो–3 व्रत ही बतलाएँ रे–ऽऽ।।1911।।

(87) भोजन वाहन बिस्तर में, सुगंध पुष्प के धारण में–2
स्नान, पान और अंगों में–ऽऽऽ
विषय भोग संगीतों में, राग–द्वेष के भावों में–2
थोड़ा से त्याग हो–3 को नियम बताएँ रे–ऽऽ।।1912।।

(88) समय, एक दिन रात्रि तक, एक पक्ष या महीने तक–2
दो अथवा छ: माहों तक–ऽऽ
साल और दो सालों तक, त्याग करें इन समयों तक–2
ये सब ही त्याग हो–3 इक नियम बताएँ रे–ऽऽ।।1913।।

(89) विषयों का आदर करना, याद उन्हें हरदम करना–2
भोग में लालायित रहना–ऽऽऽ
तीव्र रखें तृष्णा मन में, अतिआसक्त हैं विषयों में–2
भोगोपभोग हो–3 व्रतातिचार बताएँ रे–ऽऽ।।1914।।

(90) नियतकाल मर्यादा में, त्याग किया वो नियम कहें–2
भोग उपभोग के विषयों में–ऽऽ
यावज्जीवन त्याग करें, गुरु उसको यम कहते हैं–2
त्याग के भेद हो–3 दो ही बतलाएँ रे–ऽऽ।।1915।।

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

पंचम अधिकार

(91) देशावकाशिक, सामायिक, वैय्यावृत्ति है शैक्षिक-2
प्रोषधोपवास है भाविक-ऽऽ
शिक्षाप्रद जो होते हैं, शिक्षाव्रत उन्हें कहते हैं-2
गुरुवर ने हमको हो-3 ये चार बताए रे-ऽऽ॥1916॥

(92) दिग्व्रत की मर्यादा है, उसमें भी कम करता है-2
रोज नियम में बँधता है-ऽऽ
देशावकाशिक व्रत ये है, अणुव्रती वह श्रावक है-2
लंबी से लघु सी हो-3 सीमा कर जाये रे-ऽऽ॥1917॥

(93) गली गाँव और घर तक की, नदी खेत जंगल तक की-2
योजन या पर्वत तक की-ऽऽऽ
मर्यादा जो करते हैं, देशावकाशिक कहते हैं-2
ऐसा शिक्षाव्रत हो-3 बहुयोग्य बनाए रे-ऽऽ॥1918॥

(94) एकपक्ष इक मास यहाँ, दो या चातुर्मास यहाँ-2
छः महीने इक साल यहाँ-ऽऽ
काल की मर्यादा करना, सीमा के भीतर रहना-2
देशव्रत की गुरु हो-3 सीमा बतलाएँ रे-ऽऽ॥1919॥

(95) व्रत में की मर्यादा से, बाह्य सूक्ष्म स्थूलों से-2
पंच पाप त्याग होने से-ऽऽऽ
देशव्रती भी इस भव में, महाव्रती से होते हैं-2
कहते हैं गुरुवर हो-3 उपचार बताएँ रे-ऽऽ॥1920॥

(96) सीमा से बाहर जाना, शब्द, वस्तु से मंगवाना-2
तन दिखलाकर करवाना-ऽऽ
कंकड़ फेंक के बतलाना, ये अतिचार समझ लेना-2
शिक्षाव्रत के हैं हो-3 ये दोष बताएँ रे-ऽऽ॥1921॥

(97) सामायिक जब यहाँ करें, सभी पाप का त्याग करें-2
सामायिक शिक्षाव्रत में-ऽऽ
मन वच काय से त्याग करें, कृत कारित मोदन न करें-2
तब ही सामायिक हो-3 में मन लग पाये रे-ऽऽ॥1922॥

(98) केश कुट्ठि को बाँध रखें, पद्मासन खड्गासन में-2
और कोइ भी आसन में-ऽऽऽ
आगम के जो ज्ञानी हैं, सामायिक मय ध्यानी हैं-2
उस ही समय की हो-3 सामायिक गायें रे-ऽऽ॥1923॥

(99) विघ्न रहित एकांत में, चैत्यालय या वास्तु में-2
या पर्वत में जंगल में-ऽऽऽ
चित्त प्रसन्न यहाँ रखकर, स्थिरता तन में धरकर-2
सामायिक काल हो-3 वह रोज बढ़ाए रे-ऽऽ॥1924॥

(100) श्रावक जब उपवास करे, या भोजन इक बार करे-2
तन मन को निवृत्य करे-ऽऽ
मन के सभी विकल्प यहाँ, निर्वृत्ति से शांत करे-2
सामायिक अपनी हो-3 नित वृद्धि कराये रे-ऽऽ॥1925॥

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे–ऽऽ
रत्नों की महिमा हो–3 ये ग्रंथ बताये रे–ऽऽ

(101) श्रावक का आलस के बिन, सामायिक करना प्रतिदिन–2
कर एकाग्र यहाँ पर मन–ऽऽ
पाँचों अणुव्रत पूर्ण करे, शिक्षाव्रत तब यहाँ बढ़े–2
सामायिक काल हो–3 नित बढ़ता जाये रे–ऽऽ।।1926।।

(102) आरंभ परिग्रह त्याग करे, मन स्थिर रागादि तजे–2
सामायिक तब यहाँ करे–ऽऽ
वस्त्र ढके मुनि सम होता, ऐसा अनुभव में होता–2
ऐसी सामायिक हो–3 गुण वृद्धि कराये रे–ऽऽ।।1927।।

(103) शीत उष्ण की बाधा को, परीषहों उपसर्गों को–2
सहन करे इन दुक्खों को–ऽऽ
योग न चंचल यहाँ करे, सामायिक में मौन रहे–2
तब ही सामायिक हो–3 निश्चल हो पाये रे–ऽऽ।।1928।।

(104) अशरण, अशुभ, अनित्य हूँ मैं, भव में दुक्खरूप हूँ मैं–2
इस भव में पर रूप हूँ मैं–ऽऽ
है विपरीत मोक्ष इनसे, मैं ही मोक्ष स्वरूपी हूँ–2
सामायिक में ये हो–3 ये चिंतवन विचारो रे–ऽऽ।।1929।।

(105) मन वच काय चलित करना, उसका नहिं आदर करना–2
काल पाठ विस्मृत होना–ऽऽऽ
निश्चय से सामायिक के, पाँच यही अतिचार कहे–2
इनको तज करके हो–3 सामायिक लाओ रे–ऽऽ।।1930।।

(106) चतुर्दशी–अष्टम् के दिन, इच्छा कर त्यागें भोजन–2
करते ऐसा श्रावक जन–ऽऽऽ
चार प्रकार आहारों का, त्यागें, इच्छा करें दमन–2
प्रोषध उपवास हो–3 व्रत यही कहाए रे–ऽऽ।।1931।।

(107) पाँच पाप का त्याग करें, नहिं तन का शृंगार करें–2
गंधारंभ न ग्रहण करें–ऽऽ
जिस दिन हो उपवास यहाँ, सब कार्यों से विरत रहें–2
तब ही उपवास हो–3 का फल मिल पाये रे–ऽऽ।।1932।।

(108) धर्मामृत का पान करे, आलस का वह त्याग करे–2
उत्साहित हो ध्यान करे–ऽऽ
ज्ञान में हो लवलीन यहाँ, श्रावक जो उपवास करे–2
ऐसा उपवास हो–3 सुख शांति दिलाए रे–ऽऽ।।1933।।

(109) चतुराहार त्याग करना, एक बार भोजन करना–2
या उपवास यहाँ करना–ऽऽऽ
अगले दिन इक भुक्ति करें, इसको प्रोषध यहाँ कहें–2
प्रतिमाधारी को हो–3 निश्चित बतलाएँ रे–ऽऽ।।1934।।

(110) पूजा के उपकरण यहाँ, बिन शोधे ही ग्रहें यहाँ–2
व्रत को भूले व्रती यहाँ–ऽऽ
आवश्यक आदर न करे, बिन देखे बिस्तर को रखे–2
प्रोषध व्रत के ये हो–3 अतिचार बताएँ रे–ऽऽ।।1935।।

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

(111) गृह त्यागी मुनिराज यहाँ, गुण के परम निधान यहाँ-2
करें तपस्या ध्यान यहाँ-ऽऽ
विधि से उनको दान करें, आदर कर उपकार करें-2
वैयावृत्ति ही हो-3 वह दान कहाये रे-ऽऽ॥1936॥

(112) गुण में हैं अनुरागी जो, सेवा करते मुनि की वो-2
पैर दवा सिर को दबा के जो-2
दुख उनका, ये दूर करें, सेवा कर उपकार करें-2
वैयावृत्ति ही हो-3 सेवा कहलाए रे-ऽऽ॥1937॥

(113) सात गुणों को धरे यहाँ, नवधा भक्ति करे यहाँ-2
पच सूना को तजे यहाँ-ऽऽ
शुद्धि सहित आहार वो दे, साधू का उपकार करे-2
इसको आगम में हो-3 गुरु दान बताएँ रे-ऽऽ॥1938॥

(114) रक्तदाग जल धोता है, त्यों दानी अघ धोता है-2
मुनि सेवा से होता है-ऽऽ
देता योग्य अहार यहाँ, निश्चय उत्तम कार्य यहाँ-2
संचित जो पाप हो-3 वे झट मिट जाएँ रे-ऽऽ॥1939॥

(115) नमन से उच्च गोत्र मिलता, दान से भोग खूब मिलता-2
सेवा से आदर मिलता-ऽऽ
भक्ति से सुंदरता हो, गुण गाने से कीर्ति हो-2
मुनियों की सेवा हो-3 ये सब दिलवाये रे-ऽऽ॥1940॥

(116) बोया छोटा बीज यहाँ, देताफल सब चीज यहाँ-2
पुण्ययोग ये समझ यहाँ-ऽऽ
मुनि को थोड़ा दान दे जो, भारी फल को पाये वो-2
मुनियों की सेवा हो-3 सब ही दिलवाए रे-ऽऽ॥1941॥

(117) आहार औषधि दान करें, उपकरणों का दान करें-2
भवन बना सम्मान करें-ऽऽ
गणधर प्रभु ने बतलाया, प्रतिदिन चारों दान करें-2
वैयावृत्ति ये हो-3 श्रुत में बतलाएँ रे-ऽऽ॥1942॥

(118) उपसर्गों के आने पर, अकाल के पड़ जाने पर-2
रोग-बुढ़ापा होने पर-ऽऽऽ
ठीक न जो हो सके यहाँ, तब सल्लेखन धरे यहाँ-2
धर्म के हेतु हो-3 शुभ मरण सजाए रे-ऽऽ॥1943॥

(119) व्रत संयम को धरे यहाँ, शक्ति समां तप करे यहाँ-2
समाधि तप फल कहें यहाँ-ऽऽ
शक्ति समां व्रत यहाँ धरो, सल्लेखन का यत्न करो-2
व्रत-तप फल तुमको हो-3 तब ही मिल पाए रे-ऽऽ॥1944॥

(120) मोह परिग्रह तजता है, राग-बैर से हटता है-2
शद्ध मन-वचन करता है-ऽऽ
कुटुम्बियों और परिजन से, माँगे क्षमा व क्षमा करे-2
तब ही संथारा हो-3 की विधि बन पाये रे-ऽऽ॥1945॥

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे–ऽऽ
रत्नों की महिमा हो–3 ये ग्रंथ बताये रे–ऽऽ

(121) कृत कारित अनुमोदन से, छल व कपट रहित गुरु से–2
आलोचना करे दिल से–ऽऽऽ
महाव्रतों को धरे यहाँ, चाहे गर कल्याण यहाँ–2
इसके बिन ये मन हो–3 नहिं शुद्ध हो पाये रे–ऽऽ।।1946।।

(122) राग–द्वेष स्नेह यहाँ, अरति शोक भय छोड़ यहाँ–2
प्रकट करे उत्साह यहाँ–ऽऽऽ
अमृत के सम शास्त्रों से, मन को यहाँ प्रसन्न करे–2
स्वाध्याय करने का हो–3 उद्देश्य बताएँ रे–ऽऽ।।1947।।

(123) अन्न का भोजन त्याग करे, दूध–छाँछ को पान करे–2
संथारा जो यहाँ धरे–ऽऽ
दूध–छाँछ को छोड़ यहाँ, कांजी जल का पान करे–2
धीरे–धीरे वह हो–3 निज शक्ति बढ़ाए रे–ऽऽ।।1948।।

(124) कांजी जल को त्याग करे, शक्ति समां उपवास करे–2
हर पल प्रभु का ध्यान करे–ऽऽऽ
सर्व प्रयत्न यहाँ करके, णमोकार का जाप करे–2
जपते–जपते ही हो–3 तन को तज जाये रे–ऽऽ।।1949।।

(125) जीने मरण की चाह करें, डरें, मित्र को याद करें–2
इच्छा में नित भोग धरें–ऽऽऽ
पाँच अतिचार बताये हैं, संथारा के गाये हैं–2
इनको तज करके हो–3 मन शुद्ध बनाओ रे–ऽऽ।।1950।।

(126) धर्मामृत जो पान करे, सभी दुखों को नाश करे–2
दुर्लभ सुख को प्राप्त करे–ऽऽऽ
सुख सागर मय रूप है जो, अभ्युदयी शिव रूप है जो–2
करता समाधि हो–3 वह शिवसुख पाये रे–ऽऽ।।1951।।

(127) जन्म बुढ़ापा मृत्यु रहित, रोग–शोक सब दुक्ख रहित–2
सप्त भयों से पूर्ण रहित–ऽऽ
शाश्वत सुख कल्याण मयी, अनंत सुखमय ज्ञान सहित–2
ऐसा वह मोक्ष हो–3 का रूप बताएँ रे–ऽऽ।।1952।।

(128) नंत ज्ञान दृग वीर्य सहित, सुख अनंत निर्मलता युत्–2
गुण में न्यूनाधिक्य रहित–ऽऽ
काल की मर्यादा बिन जो, अनंतकाल सुख में हैं वो–2
सब ही सिद्धों को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–ऽऽ।।1953।।

(129) तीनों लोक भयावह हो, जिसमें खूब उपद्रव हो–2
लाखों कल्पकाल भय हो–ऽऽ
सिद्धों में नहिं विकार हो, एक सा सुख हर समय में हो–2
ज्यों के त्यों रहते हो–3 वे सिद्ध कहायें रे–ऽऽ।।1954।।

(130) कर्म कालिमा रहित रहें, स्वर्ण समां दैदीप्य रहें–2
निर्मल आत्मस्वरूप रहें–ऽऽऽ
लोक शिखर पर राजित जो, मणिमय शोभित होते जो–2
शोभा अति सुंदर हो–3 उनकी कहलाएँ रे–ऽऽ।।1955।।

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे-ऽऽ
रत्नों की महिमा हो-3 ये ग्रंथ बताये रे-ऽऽ

(131) सत्य धर्म उर धरते हैं, बल ऐश्वर्य वो करते हैं-2
धन ऐश्वर्य सँवरते हैं-ऽऽ
लोक में अतिशयदायी जो, अभ्युदय पद पाते वो-2
उत्कृष्ट भोग हो हो-3 वह धर्मी पाये रे-ऽऽ।।1956।।

सप्तमोऽधिकार

(132) श्रावक हो जब व्रती यहाँ, प्रतिमा धारण करे यहाँ-2
जिसके ग्यारह भेद यहाँ-ऽऽ
जैसे-जैसे बढ़ते गुण, वैसे प्रतिमा बढ़े यहाँ-2
ऐसा जिनवर ने हो-3 श्रुत में बतलाया रे-ऽऽ।।1957।।

(133) शुद्ध यहाँ समदर्शन हो, भव तन भोग विरक्ति हो-2
पंच गुरु में भक्ति हो-ऽऽ
आत्म तत्त्व को प्राप्त करे, परमेष्ठी की शरण रहे-2
दर्शन प्रतिमा का हो-3 धारी कहलाए रे-ऽऽ।।1958।।

(134) तीन शल्य अतिचार रहित, पाँच अणुव्रत शील सहित-2
सात शीलव्रत रहे सहित-ऽऽ
बारह व्रत जो धरे यहाँ, व्रत प्रतिमा में रहे यहाँ-2
वह दो प्रतिमा व्रत हो-3 वाला कहलाए रे-ऽऽ।।1959।।

(135) चउ दिश तीन आवर्त करे, चारों ओर प्रणाम करे-2
सर्व ग्रंथ (परिग्रह) आरंभ तजे-ऽऽ
तीन समय सामायिक करे, तीन योग को शुद्ध करे-2
सामायिक प्रतिमा हो-3 धारी कहलाएँ रे-ऽऽ।।1960।।

(136) चार पर्व हों महिने में, रहे निरत श्रुत में जप में-2
शक्त्यनुसार उपवास करें-ऽऽ
धर्मध्यान में तत्पर हो, खेद खिन्न नहिं इकपल हो-2
प्रोषध प्रतिमा में हो-3 वह भव्य कहाये रे-ऽऽ।।1961।।

(137) कच्चे जल फल त्यागे जो, भाजी कोंपल छोड़े जो-2
वही दयालू श्रावक हो-ऽऽऽ
अंकुर कंदमूल छोड़े, गेहूँ चना साबुत छोड़े-2
सचित्त त्यागी हो-3 प्रतिमा कहलाए रे-ऽऽ।।1962।।

(137) दया प्राणी पर नित्य धरे, अन्न पान नहिं रात्रि करे-2
लेय पेय सब त्याग करे-ऽऽ
रात्रि भोज त्याग प्रतिमा, उसमें ही गुरुदेव कहें-2
श्रावक को इससे हो-3 बहु पुण्य उपाये रे-ऽऽ।।1963।।

(139) मल से पैदा होता है, मल को पैदा करता है-2
मल ही यहाँ बहाता है-ऽऽ
ग्लानिजनक दुर्गंध सहित, देख काम से हुआ विरत-2
ब्रह्मचर्य प्रतिमा हो-3 धारी कहलाए रे-ऽऽ।।1964।।

(140) खेती और व्यापारों में, नौकरी घर के कामों में-2
हुआ विरक्त यहाँ उनमें-ऽऽ
जीव हिंसा के कारण जो, सर्वारंभ को त्यागे जो-2
आरंभ त्याग हो-3 प्रतिमा कहलाये रे-ऽऽ।।1965।।

रत्नकरण्ड पिटारा ये, रत्न दिलाये रे–ऽऽ
रत्नों की महिमा हो–3 ये ग्रंथ बताये रे–ऽऽ

(141) परिग्रह से ममता छोड़े, निर्मोही मन को मोड़े–2
मायाचार रहित होवे–ऽऽऽ
नहीं परिग्रह चाहे जो, सभी परिग्रह त्यागे जो52
परिग्रह का त्याग हो–3 प्रतिमा कहलाए रे–ऽऽ।।1966।।

(142) आरंभ और परिग्रह में, भव के सारे कार्यों में–2
अनुमति त्यागे इन सबमें–ऽऽ
निश्चय से समताभावी, कहें उसे अनुमति त्यागी–2
दशवीं यह प्रतिमा हो–3 उत्तमता लाये रे–ऽऽ।।1967।।

(143) घर त्यागी मुनि संघों में, रहे सदा गुरु चरणों में–2
व्रत ले, लीन रहे तप में–ऽऽ
भिक्षा से आहार करे, खण्ड वस्त्र कौपीन धरे–2
उद्दिष्ट त्याग हो–3 प्रतिमा कहलाये रे–ऽऽ।।1968।।

(144) पाप जीव का शत्रु कहा, धर्म जीव का मित्र कहा–2
ऐसा निश्चय जान अहा–ऽऽऽ
ऐसा जान पढ़े श्रुत को, ज्ञाता उसको यहाँ कहा–2
धर्म का ज्ञाता हो–3 धर्मी कहलाए रे–ऽऽ।।1969।।

(145) सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित, निर्मल विद्यारत्न सहित–2
रत्नों का भण्डार सहित–ऽऽ
खुद में रत्न भराये हैं, श्रेष्ठ पुरुष कहलाए है–2
धर्मार्थ काम हो–3 शिव को पा जाये रे–ऽऽ।।1970।।

(146) सप्त शील युत् समदर्शन, अष्ट अंग युत् ज्ञान सघन–2
शुद्ध शीलयुत् चारित धन–ऽऽ
तीनों रत्न पवित्र करें, मुझको सुखयुत् ज्ञान वरें–2
तब ही ये जीवन हो–3 शिवलक्ष्मी पाये रे–ऽऽ।।1971।।

श्रावक

ब्रह्मचारी

क्षुल्लक

मुनि

अरिहंत

सिद्ध

पुरुषार्थसिद्धि उपाय

मूल ग्रंथकर्ता : अमृतचन्द्राचार्य

पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–SS
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–SS

(1) सभी पदार्थ झलकते हैं, दर्पण समान दिखते हैं–2
उनको भगवन् कहते हैं–SS
त्रिकालवर्ती पर्यायें, बिम्बित जिनकी विद्या में–2
होवे जयवंत हो–3 शुद्धात्म ज्योति शुभ रे–SS।।1972।।

(2) सूँढ को समझें हाथी जो, जन्म से अंधे समझो वो–2
उनको ज्ञान कहाँ से हो–SS
अनेकांत स्याद्वाद यहाँ, दे परमागम ज्ञान यहाँ–2
ऐसे आगम को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–SS।।1973।।

(3) तीनों लोक दिखाता है, सभी पदार्थ बताता है–2
जैनागम कहलाता है–SS
विद्वानों को समझाने, सिद्धांतों को दिखलाने–2
पुरुषार्थ सिद्धि हो–3 ये ग्रंथ बताएँ रे–SS।।1974।।

(4) निश्चय नय से मुख्य कथन, उपचारित व्यवहार कथन–2
दोनों ही सम्यक्त्व नयन–SS
दोनों को जो मानेगा, सही–गलत वो जानेगा–2
दोनों नय सबको हो–3 शिवमार्ग बताएँ रे–SS।।1975।।

(5) निश्चय नय भूतार्थ कहा, अभूतार्थ व्यवहार कहा–2
दोनों नय आधार अहा–SS
निश्चय से विपरीत रहे, वे संसार स्वरूप कहे–2
निश्चय बिन व्यवहार हो–3 हो कभी न पाए रे–SS।।1976।।

(6) अज्ञानी बहु जीव यहाँ, उन्हें प्रथम व्यवहार यहाँ–2
ऐसा गुरु उपदेश यहाँ–SSS
पर व्यवहार समझ निश्चय, जाना नहिं जो था निश्चय–2
उनको उपदेश हो–3 नहिं यहाँ बताएँ रे–SS।।1977।।

(7) शेर बिना जो बिल्ली को, कहे शेर ही है समझो–2
कहे शेर फिर बिल्ली को–SS
निश्चय बिन व्यवहार कहा, मूढ़ी ने निश्चय समझा–2
उनको उपदेश हो–3 गुरु व्यर्थ बताएँ रे–SS।।1978।।

(8) निश्चय नय यथार्थ जाने, नय व्यवहार को पहचाने–2
पक्षपात नहिं मन ठाने–SS
वो उपदेश समझता है, ज्ञान प्राप्त वो करता है–2
फल वो ही पाता हो–3 जो हठ नहिं लाये रे–SS।।1979।।

(9) स्पर्श गंध रस वर्ण रहित, व्यय जनि ध्रौव्य स्वभाव सहित–2
जिसमें चेतन रूप निहित–SS
गुण पर्याय युक्त है जो, दर्शन–ज्ञान स्वरूपी वो–2
ऐसी शुद्धातम हो–3 जो पुरुष कहाए रे–SS।।1980।।

(10) ज्ञान विकारी होता है, अपने गुण को खोता है–2
राग भाव फिर बोता है–SS
राग–द्वेष कर्ता होता, फिर उनका भोक्ता होता–2
आतम अनादि हो–3 से भ्रमती आये रे–SS।।1981।।

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(11) जब पुरुषार्थ दिखाता है, सभी विभाव हटाता है–2
निष्कंपित हो जाता है–ऽऽ
आत्म प्रयोजन सिद्धि कर, वह कृतकृत्य हो जाता है–2
तब ये पुरुषारथ हो–3 का फल पा जाए रे–ऽऽ।।1982।।

(12) रागादिक परिणामों से, कर्मोदय के भावों से–ऽऽ
पुद्गल के परिणमने से–ऽऽ
आठ कर्म मय बंध हुए, कर्म यहाँ स्कंध हुए–2
कर्मों के कारण हो–3 पर्याय धराए रे–ऽऽ।।1983।।

(13) द्रव्यकर्म जब उदय धरे, रागादिक परिणाम करे–2
कर्मरूप परिणमन करे–ऽऽ
फिर कर्मों का बंध करे, ऐसा हरदम चक्र चले–2
उसको नहिं मुक्ति हो–3 भव में मिल पाए रे–ऽऽ।।1984।।

(14) रागादिक नहिं भाव करे, पर अज्ञान महान धरे–2
ज्ञानी उसको कौन कहे–ऽऽ
अज्ञ भाव भव बीज अरे, कर्म बंध फिर यहाँ करे–2
उसका भव बीज हो–3 कैसे मिट पाये रे–ऽऽ।।1985।।

(15) श्रद्धा तू विपरीत मिटा, निजस्वरूप को रूह दिखा–2
उससे मन नहिं कभी हटा–ऽऽ
ये पुरुषारथ सिद्धि है, यही उपाय प्रसिद्धि है–2
अन्य उपाय हो–3 कुछ नहिं नजराये रे–ऽऽ।।1986।।

(16) रत्नत्रय अनुकरण करें, पाप क्रिया से सदा बचें–2
पर से हरदम विमुख रहें–2
वृत्ति अलौकिक करते हैं, उन्हें मुनि हम कहते हैं–2
आतम का अनुभव हो–3 चैतन्य सजाएँ रे–ऽऽ।।1987।।

(17) जिनवाणी जब पेश करे, मुनिव्रत का उपदेश करे–2
ऐसा सदा विवेक धरे–2
ग्रहण न मुनिव्रत करे उसे, श्रावक का उपदेश करे–2
ऐसे ही क्रम से हो–3 उपदेश सुनाए रे–ऽऽ।।1988।।

(18) मुनीधर्म नहिं बतलाए, श्रावक धर्म बता जाए–2
सही न वो समझा जाए–2
उपदेशक वो दण्डित हो, प्रायश्चित से मंडित हो–2
पहले मुनिधर्म हो–3 की राह दिखाए रे–ऽऽ।।1989।।

(19) मुनि उपदेश न मिल पाया, श्रावक पन में भरमाया–2
ठगा हुआ खुद को पाया–2
श्रावक मुनि बन सकता था, लेकिन अब वह श्रावक था–2
मुनि का उपदेश हो–3 मुनिपद दिलवाए रे–ऽऽ।।1990।।

(20) श्रावक निज कर्तव्य करे, मुनि बनने का भाव धरे–2
रत्नत्रय का लक्ष्य करे–2
यथाशक्ति पुरुषार्थ करे, मुक्तिपथ की राह धरे–2
ऐसा ही श्रावक हो–3 धर्मी कहलाए रे–ऽऽ।।1991।।

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(21) सभी यहाँ पुरुषार्थ करें, सम्यग्दर्शन प्राप्त करें–2
ऐसा ही चरितार्थ करें–
ज्यों ही दर्शन होता है, तब बुध चारित होता है–2
सम्यग्दर्शन को हो–3 पहले पा जाओ रे–ऽऽ।।1992।।

(22) हठ विपरीत हटाओगे, तत्त्व समझ जब पाओगे–2
तब दृढ़ श्रद्धा पाओगे–ऽऽ
निज पर हो विश्वास यहाँ, तब होता प्रभु खास यहाँ–2
तत्त्वों पर श्रद्धा हो–3 निज रूप दिखाए रे–ऽऽ।।1993।।

(23) अनेकांतमय धर्म यहाँ, स्याद्वाद का मर्म यहाँ–2
शंका करता दूर यहाँ–ऽऽ
सत्य असत्य समझाता वो, निज वच को सच कहता जो–2
उसको तत्त्वों में हो–3 शंका मिट जाए रे–ऽऽ।।1994।।

(24) पुण्य कार्य दिन रात करें, फल इच्छा नहिं भाव धरें–2
मिले भोग भी यहाँ तजें–ऽऽऽ
वे नि:कांक्षित अंगधरें, इकदिन भव से मोक्ष वरें–2
उनमें मंजिल की हो–3 चाहत नजराए रे–ऽऽ।।1995।।

(25) भूख प्यास से दुखित हो मन, रोग युक्त हो गया ये तन–2
विष्टा मूल लसित हो तन–ऽऽऽ
इन्हें देख नहिं ग्लान हो मन, निर्विचिकित्सा का ये गुण–2
वस्तु स्वभाव हो–3 तब मन में लाए रे–ऽऽ।।1996।।

(26) मिथ्यादृष्टि कार्य करें, उनके मत जो नहीं चलें–2
कभी मूढ़ता नहीं धरे–ऽऽ
धर्म, शास्त्र और दुनियाँ में, तत्त्व लखे, नहिं मूर्ख बनें–2
उसको अमूढ़ हो–3 दृष्टि बतलाएँ रे–ऽऽ।।1997।।

(27) धर्मी के जो दोष ढके, धर्म भाव की वृद्धि करे–2
अंतस् शुद्ध स्वरूप लखे–ऽऽ
उपगूहन हो अंग उसे, जिससे नित श्रद्धान बढ़े–2
उसमें धर्मी का हो–3 लक्षण नजराए रे–ऽऽ।।1998।।

(28) काम, क्रोध, मद आ जाएँ, विचलित वृष से कर जाएँ–2
पापों में जो लग जाएँ–ऽऽ
उन्हें धर्म जो समझाते, सही मार्ग पर ले आते–2
स्थितिकरण का हो–3 यह अंग बताएँ रे–ऽऽ।।1999।।

(29) धर्म, अहिंसा, धर्मी से, वत्सल प्रेम रखें उनमें–2
स्वारथ बिन इस दुनियाँ में–ऽऽ
उसमें वत्सल अंग कहा, जिसमें हो सत्संग अहा–2
वात्सल्य अंग हो–3 मन शांत बनाए रे–ऽऽ।।2000।।

(30) ज्ञान, दान, तप, पूजा से, अतिशय दिखलाना इनसे–2
व्रत संयम रत्नत्रय से–ऽऽ
धर्म की महिमा प्रकट करें, ये प्रभावना अंग कहें–2
इससे भावों में हो–3 निर्मलता आये रे–ऽऽ।।2001।।

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे-ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो-3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ

(31) नय सिद्धांत जान करके, न्याय प्रमाण समझ करके-2
सम्यग्ज्ञान प्राप्त करके-ऽऽऽ
सेवा श्रुत की सदा करो, जिसके बिन सम्यक्त्व न हो-2
ऐसे जिनागम हो-3 पर ध्यान लगाओ रे-ऽऽ॥2002॥

(32) सम्यग् दृग-बुध युगपत हो, जुदा ज्ञान आधारित हो-2
तब श्रद्धा मजबूत अहो-ऽऽ
दृग लक्षण श्रद्धान है, जाने, सम्यग्ज्ञान है-2
लेकिन वह ज्ञान हो-3 मजबूत बनाए रे-ऽऽ॥2003॥

(33) सम्यग्ज्ञान को कार्य कहा, कारण सम्यग्दर्श कहा-2
कारण से हो कार्य अहा-ऽऽऽ
पहले हो सम्यक्त्व यहाँ, फिर हो सम्यग्ज्ञान यहाँ-2
ऐसा जिन गुरुवर हो-3 हमको बतलाएँ रे-ऽऽ॥2004॥

(34) सम्यग्दर्शन ज्ञान यहाँ, एक साथ उत्पन्न यहाँ-2
फिर भी दोनों भिन्न यहाँ-ऽऽ
ज्योति और प्रकाश समां, कारण कार्य विधान यहाँ-2
दर्शन है कारण हो-3 बुध कार्य बताएँ रे-ऽऽ॥2005॥

(35) संशय विभ्रम मोह रहित, निज स्वभाव के ज्ञान सहित-2
तत्त्वों में पुरुषार्थ निहित-ऽऽऽ
उद्यम को कर्तव्य कहा, हो प्रशस्त उद्यमी अहा-2
तब ही जीवन में, हो-3 सम्यक्त्व समाए रे-ऽऽ॥2006॥

(36) शब्द अर्थ उभयाचार, काल और विनयाचार-2
उपधान अनिह्नवाचार-ऽऽऽ
बहुमान ये बसु अंग लहे, सम्यग्ज्ञान तभी उपजे-2
विद्यागुरु-श्रुत की हो-3 आराधन लाओ रे-ऽऽ॥2007॥

(37) दर्शन मोह मिटाया है, ज्ञान यहाँ उपजाया है-2
मन अकम्प दृढ़ पाया है-ऽऽऽ
राग-द्वेष वह दूर करे, अवलम्बन चारित्र करे-2
शिवपथ की राह हो-3 तब ही नजराए रे-ऽऽ॥2008॥

(38) बिन सम्यक्त्व न ज्ञान यहाँ, ज्ञान बिना चारित्र कहाँ?-2
चारित बिन सुख रहे कहाँ-ऽऽऽ
पहले हो ज्ञान आराधन, बाद में हो चारित्र सधन-2
ज्ञान बिन संयम, हो-2 अच्छाई न पाये रे-ऽऽ॥2009॥

(39) पापयुक्त नहिं योग जहाँ, मन में नहीं कषाय जहाँ-2
निर्मल हो चारित्र वहाँ-ऽऽऽ
पर से यहाँ विरागी हो, राग-द्वेष का त्यागी हो-2
उसमें ही चारित हो-3 भव में हो पाये रे-ऽऽ॥2010॥

(40) हिंसा चोरी झूठ यहाँ, कुशील परिग्रह पाप यहाँ-2
त्यागें हो चारित्र वहाँ-ऽऽ
सकल देश इकदेश कहा- दो प्रकार चारित्र कहा-2
जिनवर ने सबको हो-3 ये भेद बताए रे-ऽऽ॥2011॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–SS
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–SS

(41) सकल देश जो त्याग करे, वो मुनिपद में वास करे–2
शुद्धोपयोग मय ध्यान करे–SS
एकदेश जो त्याग करे, उसको श्रावक सभी कहें–2
दोनों शिवपथ में हो–3 कदम बढ़ाएँ रे–SS॥2012॥

(42) शुद्धोपयोग में लीन जहाँ, रहे अहिंसा धर्म वहाँ–2
ऐसा है जिनवचन यहाँ–SS
सारे पाप तभी होते, भाव जभी हिंसा होते–2
पाँचों पापों में हो–3 हिंसा गर्भाए रे–SS॥2013॥

(43) कषाय, मन–वच–तन में हो, घात भाव प्राणों का हो–2
द्रव्य प्राण पश्चात अहो–SS
निश्चय हिंसा भावों की, कारण हिंसा द्रव्यों की–2
ये ही हिंसा के हो–3 लक्षण बतलाए रे–SS॥2014॥

(44) राग भाव गर नहिं आये, निश्चय हिंसा मिट जाये–2
भाव अहिंसा प्रकटाए–SSS
राग भाव जब आ जाए, हिंसा खुद ही हो जाए–2
राग ही हिंसा हो–3 जिनदेव बताएँ रे–SS॥2015॥

(45) हिंसा है नहिं भावों में, नहिं प्रमाद था अंतस् में–2
हो गई हिंसा कार्यों में–SSS
उसको हिंसा नहीं कहा, उसे अहिंसा ही समझा–2
ऐसा गुरुवर जी हो–3 श्रुत में बतलाएँ रे–SS॥2016॥

(46) हो प्रमाद आचारों में, रागादिक हो भावों में–2
हिंसा होती प्राणों में–SS
जीव मरे या नहीं मरे, फिर भी हिंसा पाप लगे–2
निश्चय भावों में हो–3 हिंसा बतलाए रे–SS॥2017॥

(47) कषाय खुद को घात रही, हिंसा अंदर व्याप रही–2
निज प्राणों को दुखा रही–SS
हिंसा हो अथवा नहिं हो, पर भावों में हिंसा हो–2
अपना ही घात हो–3 हिंसा कहलाए रे–SS॥2018॥

(48) रुके न त्याग बिना हिंसा, हिंसा में ही है हिंसा–2
यही पुण्य की धारा है–SSS
प्रमादवश नहिं त्याग करें, प्राणों का नित घात करें–2
त्याग के द्वारा हो–3 इससे बच पाएँ रे–SS॥2019॥

(49) धर्म अहिंसा प्यारा है, धर्म निजात्म हमारा है–2
यही पुण्य की धारा है–SS
हिंसा निमित्त संग अहा, इसे त्यागना उचित कहा–2
परिग्रह त्यागे बिन हो–3 हिंसा नहिं जाये रे–SS॥2020॥

(50) निश्चय को नहिं जान रहा, हिंसा बाह्य न मान रहा–2
भाव हिंसा ही मान रहा–SS
जो हिंसा के काम करे, और अहिंसक ही समझे–2
मूढ़ी प्रमादी हो–3 आचार न लाए रे–SS॥2021॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे-ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो-3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ

(51) हिंसा करे, न फल पाये, करे न हिंसा, फल पाये-2
निश्चय से यह बतलाये-ऽऽ
यहाँ मुख्यता भावों की, नहीं क्रिया आचारों की-2
भावों की हिंसा हो-3 गुरु मुख्य बताएँ रे-ऽऽ॥2022॥

(52) हिंसा थोड़ी फल ज्यादा, फल कम हो हिंसा ज्यादा-2
भावों का फल ले आदा (आत्मा)-ऽऽऽ
भावों में हिंसा ज्यादा, फल उसका मिलता ज्यादा-2
भावों में कम हो हो-3 तो फल कम पाये रे-ऽऽ॥2023॥

(53) सब मिलकर हिंसा करते, अलग-अलग फल सब भरते-2
भाव भिन्न-भिन्न करते-ऽऽ
मंद मिले कुछ लोगों को, तीव्र मिले कुछ लोगों को-2
भावों की हिंसा हो-3 फल को दिलवाए रे-ऽऽ॥2024॥

(54) करने पर है फल देती, करते-करते फल देती-2
पहले ही फल को देती-ऽऽ
हिंसा भावों से फल हो, नहीं करे फिर भी फल हो-2
विकृत भावों से हो-3 फल सब ही पाये रे-ऽऽ॥2025॥

(55) हिंसा केवल एक करे, बहुत लोग फल भोग करें-2
प्रजा भोगती नृपति करे-ऽऽ
बहुत करें फल इक भोगे, सेना करे नृपति भोगे-2
हिंसा का फल भी हो-3 ऐसे मिल जाए रे-ऽऽ॥2026॥

(56) हिंसा का फल हिंसा हो, अथवा यहाँ अहिंसा हो-2
कार्य एक फल दोनों हों-ऽऽ
महिमा है सब भावों की, अपने ही परिणामों की-2
जैसे हों भाव हो-3 वैसा फल पाए रे-ऽऽ॥2027॥

(57) मिले अहिंसा से हिंसा, मिले अहिंसा दे हिंसा-2
दोनों फल देती हिंसा-ऽऽऽ
भावों पर सब निर्भर है, उनका फल ही सब पर है-2
हिंसा के भाव हो-3 हिंसा फल लाएँ रे-ऽऽ॥2028॥

(58) नय प्रमाण जाना जाता, मुश्किल से माना जाता-2
फिर भी समझ नहीं आता-ऽऽऽ
मूढ़ दृष्टि इन पुरुषों को, समझाने नय भंगों को-2
गुरुवर की शरणा हो-3 सद्ज्ञान कराये रे-ऽऽ॥2029॥

(59) नय प्रमाण को जाना है, उसने सब पहचाना है-2
सही, गलत को माना है-ऽऽ
नहिं जाना नय चक्र यहाँ, उनके खण्डित तर्क यहाँ-2
नय के भेदों से हो-3 हल सब हो जाएँ रे-ऽऽ॥2030॥

(60) पाँच उदम्बर फल त्यागे, मद्य माँस मधु को त्यागे-2
तब वह हिंसा को त्यागे-ऽऽ
यत्नपूर्व ये त्याग करे, वही अहिंसा भाव धरे-2
श्रावक में ये सब हो-3 गुण पुण्य बढ़ाएँ रे-ऽऽ॥2031॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(61) संवर में जो रहें निरत, उनमें हो संयममय व्रत–2
निज में जो रहते उद्यत–ऽऽऽ
हिंसा, हिंसक हिंस्य यहाँ, हिंसाके फल जान यहाँ–2
शक्ति अनुसार हो–3 हिंसा त्यज जाए रे–ऽऽ॥2032॥

(62) मन को मोहित मद्य करे, मोहित कर वृष नाश करे–2
हिंसा अघ में वास करे–ऽऽऽ
मोह भुलाता धर्म यहाँ, नित्य बँधाता कर्म यहाँ–2
मोही भव–भव में हो–3 दुख ही दुख पाये रे–ऽऽ॥2033॥

(63) मदिरा जीवों का रस है, जीव उत्पत्ति का घर है–2
जिसमें पाप निरंतर है–ऽऽ
इसका सेवन करे यहाँ, नंतबार वो मरे यहाँ–2
श्रावक मदिरा को हो–3 नहिं हाथ लगाए रे–ऽऽ॥2034॥

(64) मदिरा को जो पान करें, काम क्रोध उर शोक धरें–2
अहंकार दुख साथ रहें–ऽऽ
हिंसा के सब भेद यहाँ, करते हैं दुख खेद यहाँ–2
मदिरा श्रावक को, हो–3 दुर्गति करवाये रे–ऽऽ॥2035॥

(65) प्राणों का जब घात करे, तभी माँस उत्पन्न अरे–2
जीव यहाँ बे–मौत मरे–ऽऽ
करें माँस का जो भक्षण, मानव नहिं वे राक्षश गण–2
ऐसे नर दुष्ट हो–3 दुर्गति उपजाएँ रे–ऽऽ॥2036॥

(66) मरे हुऐ हों जीव यहाँ, उनका भी हो माँस यहाँ–2
उसमें नंतों जीव यहाँ–ऽऽ
उसका भक्षण करते हैं, घोर हिंसा वो करते हैं–2
उनके मन कलुषित हो–3 होते हो जाएँ रे–ऽऽ॥2037॥

(67) बिना पका हो माँस यहाँ, पका हुआ हो माँस यहाँ–2
अथवा पकता हुआ यहाँ–ऽऽ
जीव सभी में सम्मूर्छन, जन्में–मरते हैं हरक्षण–2
जीवों का पुंज हो–3 वह माँस बताएँ रे–ऽऽ॥2038॥

(68) कच्चा हो या पक्का हो, या फिर वो अधपक्का हो–2
छूता हो या खाता हो–ऽऽ
बहुत जीव वो हनन करे, हिंसा मन में बहुत धरे–2
पापी पापों से हो–3 बहु दुख उपजाये रे–ऽऽ॥2039॥

(69) मक्खी के मुँह की उगलन, फिर उसमें मलमूत्र सघन–2
कहें शहद उसको जगजन–ऽऽ
बहु हिंसा का कारण है, हिंसा का उत्पादन है–2
धर्मी इस मधु से हो–3 नहिं हाथ लगाए रे–ऽऽ॥2040॥

(70) शहद कपट से लाता है, मक्खी प्रथम भगाता है–2
हिंसा बहु उपजाता है–ऽऽ
धर्मी इससे दूर रहे, तब ही उसका धर्म पले–2
श्रावक छूने से हो–3 इसको घबराए रे–ऽऽ॥2041॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–SS
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–SS

(81) मदिरा मक्खन माँस शहद, महाविकारों की है हद–2
मन में पैदा करते मद–SS
धर्मी भक्षण नहीं करे, त्याग करे नित दूर रहे–2
इनको त्यागे बिन हो–3 नहिं धर्म सुहाए रे–SS॥2042॥

(82) पीपल फल, बड़ है ऊमर, और कठूमर हैं पाकर–2
रहें जीव इनमें आकर–SS
हिंसक इनको खाता है, घोर दुखों को पाता है–2
धर्मी इन सबको हो–3 त्यागे, नहिं खाये रे–SS॥2043॥

(83) सूख जायें तब खाते हैं, जीव यहाँ मर जाते हैं–2
हिंसा नहीं बताते हैं–SS
मरे जीव का तन उसमें, राग भरा है अंदर में–2
दोनों ही हिंसा हो–3 खाये कर जाये रे–SS॥2044॥

(84) पाँच उदम्बर तीन मकार, इनसे मन में कई विकार–2
अच्छे मन में नहीं विचार–SS
जिनका होता निर्मल मन, इनका त्याग करे हरदम–2
मूलगुण अष्ट हो–3 ये ही कहलाएँ रे–SS॥2045॥

(85) धर्म अहिंसा सुन करके, त्याग भाव मन धर करके–2
स्थावर हिंस न छोड़ सके–SS
त्रस हिंसा निश्चित छोड़े, अपने को वृष से जोड़े–2
तब ही जीवन में, कुछ धर्म दिखाए रे–SS॥2046॥

(86) मन से वचन और तन से, कृत कारित, अनुमोदन से–2
समरंभ समारंभारंभ से–SS
नव विधि त्याग करेगा जो, है सामान्य त्याग ही वो–2
आजीवन त्याग हो–3 ये नहिं कहलाए रे–SS॥2047॥

(87) न्यायपूर्ण जीता जीवन, विषयों का करता सेवन–2
दया भाव मय रखता मन–SS
स्थावर हिंसा में भी, यत्नाचार रखे हरदम–2
उस ही श्रावक में हो–3 करुणा नजराए रे–SS॥2048॥

(88) धर्म अहिंसा पाया हो, अपने में अपनाया हो–2
मूढ़ी देख न व्याकुल हो–SS
अज्ञानी जो लोग रहें, हिंसा को जो धर्म कहें–2
उनको देखे पर हो–3 दुख मन नहिं लाये रे–SS॥2049॥

(89) धर्म हेतु हिंसा लाये, उसे धर्म वो बतलाये–2
दोष नहीं इसमें गाये–SS
सूक्ष्म कहा जिनधर्म यहाँ, वो समझा है मर्म कहाँ?–2
प्राणों का घात हो–3 नहिं धर्म बताएँ रे–SS॥2050॥

(80) धर्म देवताओं से हो, उनको सब कुछ ही दे दो–2
खून और बलि भी दे दो–SS
मूढ़ बुद्धि ये काम करें, हिंसा को मजहब समझें–2
इनको कोई भी हो–3 नहिं धर्म बताओ रे–SS॥2051॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(81) पूज्य पुरुष के लिए यहाँ, बलि दें उसमें दोष कहाँ?–2
जो भी ऐसा कहें कहाँ–ऽऽ
इसको धर्म बताएँ जो, बड़ी भूल में रहते वो–2
हिंसा करने में हो–3 नहिं धर्म बताएँ रे–ऽऽ॥2052॥

(82) ज्यादा छोटे जीव मरे, बड़ा जीव बस एक मरे–2
भोजन का उद्देश्य अरे–ऽऽ
छोटे जीव में पाप है कम, अधिक जीव गर हो जंघम–2
जंघम जीवों की हो–3 हिंसा न कराए रे–ऽऽ॥2053॥

(83) बड़े जीव का घात करें, छोटे ज्यादा जीव बचें–2
हिंसा में यूँ कमी करें–ऽऽऽ
ऐसा सोचें सभी यहाँ, हिंसा कभी न करें यहाँ–2
हिंसा करने पर, हो–3 नहिं धर्म दिखाए रे–ऽऽ॥2054॥

(84) हिंसक जीव जियेंगे तो, बहुत जीव मारेंगे वो–2
उनको यहाँ खतम कर दो–ऽऽ
बहुत जीव पर दया करो–एक जीव को ही मारो–2
ऐसा मन करके हो–3 हिंसा नहिं लाए रे–ऽऽ॥2055॥

(85) बहुत दुखी जो जीव यहाँ, मर जाएँ तो ठीक यहाँ–2
दुख हो जाए खतम यहाँ–ऽऽ
मारें सोच ये दुनियां को, उसको हिंसा ही समझो–2
अपने दुख इससे हो–3 ज्यादा बढ़ जायें रे–ऽऽ॥2056॥

(86) कष्ट बिना सुख नहीं यहाँ, कहते ये सब लोग यहाँ–2
दुखी मरें तो सुखी वहाँ–ऽऽ
यूँ कुतर्क देते हैं जो, हिंसा को करते हैं वो–2
ऐसी श्रद्धा को हो–3 नहिं मन में लाए रे–ऽऽ॥2057॥

(87) ज्ञानी गुरु अभ्यास करे, सुगति समाधि प्रयास करे–2
सत्य धर्म की आश करे–ऽऽ
उनको मार दिया जाये, तो वे उत्तम पद पायें–2
ऐसा जो सोचे हो–3 पापी कहलाए रे–ऽऽ॥2058॥

(88) थोड़ा धन पाने को जो, ढोंगी गेरु वस्त्र में हो–2
मोक्ष कहे मरने को जो–ऽऽ
उनकी बातों में आकर, कभी नहीं तू हिंसा कर–2
हिंसा को धर्म हो–3 नहिं कोई बताए रे–ऽऽ॥2059॥

(89) भूखा आये भोजन को, अपने हों या पर जन हो–2
दुखी याचना करता हो–ऽऽ
अपने तन का माँस न दो, और न अपना घात करो–2
आतम का घाती हो–3 पापी कहलाए रे–ऽऽ॥2060॥

(90) नय भंगों को जाना है, जिनमत को पहचाना है–2
गुरु को दिल से माना है–ऽऽ
आश्रय लिया अहिंसा का, फिर भी मूढ़ रहा होगा–2
कैसे कुतर्कों हो–3 पर श्रद्धा लाए रे–ऽऽ॥2061॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–SS
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–SS

(91) जो निज पर हो दुखदायी, योग कषाय जो उपजाई–2
कुछ भी यहाँ किया जाई–SS
निश्चय कर वो झूठ समझ, इस पर तू संदेह न कर–2
इसके चउ भेद हो–3 गुरु ने बतलाए रे–SS॥2062॥

(92) विद्यमान हो वस्तु जहाँ, निषेध फिर भी करे वहाँ–2
स्यात् नास्ति हम कहें यहाँ–SS
झूठ का पहला भेद कहा– वस्तु है पर मना किया–2
इसको जाने बिन हो–3 नय समझ न आये रे–SS॥2063॥

(93) विद्यमान नहिं वस्तु हो, फिर भी प्रकट है कहता जो–2
स्यात् अस्ति ये कहे अहो–SSS
भेद असत्य दूसरा ये, ज्ञानी ही जानेगा ये–2
धर्म को जाने हो–3 तब समझ में आये रे–SS॥2064॥

(94) विद्यमान जिस रूप में हो, कहते अन्य रूपमय वो–2
बैल को घोड़ा कहता जो–SS
तीजा है ये झूठ वचन, कुछ का कुछ कहते हैं जन–2
न्याय जाने बिन हो–3 ये समझ न आये रे–SS॥2065॥

(95) अहं भरा हो कोई वचन, अप्रिय, पाप सहित निंदन–2
तीन भेद सावद्य वचन–SS
इन्हें जानना आवश्यक, तभी ज्ञान का मिलता हक–2
आओ अब जानें हो–3 ये तीन बताए रे–SS॥2066॥

(96) चुगली, हास्य, कठोर वचन, मिथ्या श्रद्धा दु:ख सघन–2
बकवादी हैं पाप गहन–SS
शास्त्र विरुद्ध वे रहते हैं, निंद्य वचन ये कहते हैं–2
इनको त्यागे तो हो–3 निंदा बच जाये रे–SS॥2067॥

(97) छेदन–भेदन मारण के, चोरी कुशील शोषण के–2
पापयुक्त सब वचन हैं ये–SS
प्राणी हिंसा इनसे हो, पाप कार्य में रमते वो–2
छोड़े जो इनको हो–3 वह ज्ञान बढ़ाए रे–SS॥2068॥

(98) गैरों को अप्रीति करे, भय पैदाकर खेद करे–2
शोक कलह आताप भरे–SS
वैर बढ़ाने वाला हो, कई दुखों का प्याला हो–2
ज्ञानी इन सबको हो–3 मन से तज जाए रे–SS॥2069॥

(99) पापमयी सब वचनों में, कार्य सहित आचरणों में–2
है प्रमाद सब करणों में–SS
हिंसा और कषाय भरी, इन सबमें ये बात खरी–2
हिंसा प्रमाद हो–3 दुर्गति ले जाएँ रे–SS॥2070॥

(100) झूठ वचन का त्याग किया, सत्य–असत्य उपदेश दिया–2
सुनकर दुखमय हुआ हिया–SS
फिर भी मुनि को दोष नहीं, कहते हैं गुरुदेव यही–2
अच्छे वचनों में हो–3 आगम नजराए रे–SS॥2071॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(101) मुनि जन सब सावद्य तजे, झूठ वचन नहिं कभी भजे–2
पर जो ऐसा न कर सके–2
वे सावद्य वचन को छोड़, अन्य झूठ सब त्याग करे–2
व्यर्थ असत्य हो–3 बहु पाप बढ़ाए रे–ऽऽ॥2072॥

(102) बिना दिये कुछ ग्रहण करें, कषाय वश प्रमाद धरें–2
उसको चोरी यहाँ कहें–ऽऽ
प्राणों की हिंसा चोरी, द्रव्य लिया यह भी चोरी–2
इसमें हिंसा की हो–3 चोरी बतलाएँ रे–ऽऽ॥2073॥

(103) धन वस्तु का हरण करे, वह प्राणों का हरण करे–2
पुरुषों के धन प्राण कहे–ऽऽ
प्राणों का जो हरण करे, उसको हिंसा सभी कहें–2
तब ही तो चोरी हो–3 हिंसा कहलाए रे–ऽऽ॥2074॥

(104) चोरी में है प्रमाद जब, होती चोरी हिंसा तब–2
चोरी में दो पाप हैं अब–ऽऽ
चोरी में हिंसा भी है, प्राणघात और दुख भी है–2
इनसे बचने को हो–3 हम धर्म सजाएँ रे–ऽऽ॥2075॥

(105) दर्शन केवल ज्ञान लहें, नो कर्मों को ग्रहण करें–2
उन्हें चौर्य का दोष लगे–ऽऽ
वीतराग सर्वज्ञ हैं जो, उन्हें प्रमाद कषाय न हो–2
इससे नोकर्म हो–3 चोरी न बताएँ रे–ऽऽ॥2076॥

(106) सर्व वस्तु का त्याग करे, ऐसा यहाँ विचार करे–2
हो अशक्य, इकदेश करे–ऽऽ
बिना दिया कुछ भी नहिं ले, तब चोरी का त्याग कहें–2
चोरी त्यागे बिन हो–3 हिंसा नहिं जाये रे–ऽऽ॥2077॥

(107) स्त्री, पुरुष करे मैथुन, इसे ही कहते हैं अब्रह्म–2
इसमें होते जीव हनन–ऽऽ
भाव प्राण का घात प्रथम, द्रव्य प्राण हो जाएँ खतम–2
वेदोदय राग – हो–3 सहवास कराए रे–ऽऽ॥2078॥

(108) तिल से भरी नली जिसमें, गर्म लोहा डाला उसमें–2
नष्ट हो गये तिल जिसमें–ऽऽ
इसी तरह उस योनि में, बहु संख्या में जीव मरें–2
इससे अब्रह्म हो–3 बहुपाप बढ़ाए रे–ऽऽ॥2079॥

(109) काम वेग में राग चरम, होता अंग–अनंग रमण–2
हिंसा होती वहाँ सघन–ऽऽ
बंधन होवें पाप करम, मिलता है फिर दुःख सघन–2
इनसे बचना तो हो–3 अब्रह्म हटाओ रे–ऽऽ॥2080॥

(110) मुनि बनने में शक्य नहीं, श्रावक बनता वही यहीं–2
निज पत्नी में रमे यहीं–ऽऽ
अन्य स्त्री का त्याग करे, सबसे सदा विरक्त रहे–2
तब ही जीवन में हो–3 कुछ धर्म दिखाए रे–ऽऽ॥2081॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(111) हो ममत्व परिणाम जहाँ, मोह उदय तब जान वहाँ–2
यही परिग्रह मान यहाँ–ऽऽ
निश्चय से मूर्च्छा समझो, राग–द्वेष इच्छा समझो–2
परिग्रह सब पापों की हो–3 जड़ बतलाएँ रे–ऽऽ।।2082।।

(112) जहाँ–जहाँ मूर्च्छा होती, वहाँ–वहाँ इच्छा होती–2
चाह परिग्रह की होती–ऽऽ
वस्तु हो अथवा न हो, मूर्च्छा ही दुखदायी हो–2
मूर्च्छा का त्यागी हो–3 त्यागी कहलाए रे–ऽऽ।।2083।।

(113) निश्चय परिग्रह मूर्च्छा है, बाह्य परिग्रह वस्तु है–2
परिग्रह दो प्रकार का है–ऽऽ
बाह्य वस्तु को जान अरे, अंतर की पहचान अरे–2
बाहर की वस्तु हो–3 मूर्च्छा दर्शाये रे–ऽऽ।।2084।।

(114) जहाँ–जहाँ मूर्च्छा नहिं है, वहाँ परिग्रह भी नहिं है–2
जैसे वीतराग मुनि हैं–ऽऽ
जहाँ परिग्रह दिखता है, वहाँ पे मूर्च्छा निश्चय है–2
अंतर से बाहर हो–3 का दृश्य दिखाए रे–ऽऽ।।2085।।

(115) परिग्रह के दो भेद कहें, भव्यों को जिनदेव दिये–2
प्रथम के चौदह भेद किये–2
दूजे के द्वय भेद यहाँ, अंतर–बाहर समझ यहाँ–2
दोनों को जानो हो–3 फिर उन्हें हटाओ रे–ऽऽ।।2086।।

(116) नो कषाय मिथ्यात्व यहाँ, चउ कषाय का उदय यहाँ–2
कहे हैं चौदह भेद यहाँ–ऽऽ
अंतरंग परिग्रह के, दुखदायी ये भेद कहे–2
इनको त्यागे तब हो–3 हिंसा मिट पाए रे–ऽऽ।।2087।।

(117) दो प्रकार उनको जानो, बाह्य परिग्रह पहचानो–2
सचित्त और अचित्त जानो–ऽऽ
ये परिग्रह क्लेशों के घर, इनसे भव में भ्रमण सफर–2
इनको जो त्यागे हो–3 भव से तिर जाए रे–ऽऽ।।2088।।

(118) जिन पर यहाँ परिग्रह है, वे ही हिंसा के घर हैं–2
त्याग अहिंसा के पर हैं–ऽऽ
ये आचार्य बताते हैं, जैनागम समझाते हैं–2
परिग्रह हिंसा की हो–3 जड़ गुरु बताएँ रे–ऽऽ।।2089।।

(119) हिंसा हो पर्यायों में, परिग्रह अंतर भावों में–2
हिंसा सिद्ध विचारों में–ऽऽ
हो ममत्व परिणाम यहाँ, बाहर हिंसा जान यहाँ–2
हिंसा के भाव हो–2 निश्चय कहलाएँ रे–ऽऽ।।2090।।

(120) अंतस् परिग्रह भावमयी, बाह्य ममत्व विचारमयी–2
दोनों राग–द्वेष मयी–ऽऽ
पुरुष पशुमें अंतर है, समझे नहिं वो व्यंतर है–2
दोनों ही परिग्रह हो–3 संसार बढ़ाएँ रे–ऽऽ।।2091।।

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे-ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो-3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ

(121) हिरण घास को खाता है, हिंसा कम बतलाता है-2
मूर्च्छा कम दिखलाता है-ऽऽ
बिल्ली चूहे को मारे, मूर्च्छा तीव्र समझ प्यारे-2
ऐसा निश्चय से हो-3 सब समझ में आये रे-ऽऽ॥2092॥

(122) शक्कर, दूध मधुर दोनों, अलग स्वादमय हैं दोनों-2
दूध से शक्कर रुचिकर हो-ऽऽ
कारण, कार्य अलग होते, ऐसा सब ऋषिजन कहते-2
कारण हो जैसा हो-3 वैसा कार्य बताएँ रे-ऽऽ॥2093॥

(123) जितनी मूर्च्छा तीव्र यहाँ, ममत्व उतना तीव्र यहाँ-2
मंद में मंद ममत्व यहाँ-ऽऽ
कारण में जो आसक्ति, कार्य में वैसी हो शक्ति-2
बाहर का दर्पण हो-3 अंतस् कहलाए रे-ऽऽ॥2094॥

(124) तत्त्वों पर श्रद्धान नहीं, तो फिर है मिथ्यात्व यहीं-2
ज्ञान मिलेगा कभी नहीं-ऽऽऽ
चार कषायें आयेंगी, सत्य चुरा ले जायेंगी-2
अनंतानुबंधी हो-3 भव भ्रमण बढ़ाए रे-ऽऽ॥2095॥

(125) अप्रत्ख्यानावरणी, देश चरित्र घात करणी-2
क्रोधादिक है वैतरिणी-ऽऽ
सभी व्रतों को नाश करे, अव्रत में ले स्वयं गिरे-ऽऽ
इनसे बचने का हो-3 उद्यम अपनाओ रे-ऽऽ॥2096॥

(126) अपनी शक्ति दिखाओ तुम, मार्दव शौच धर्म संयम-2
अपनाओ अंतस् में तुम-ऽऽ
अंतस् परिग्रह त्याग करो, अंतस् आत्म विकास करो-2
तब ही जीवन में हो-3 मंगल आ जाए रे-ऽऽ॥2097॥

(127) कोइ परिग्रह सचित्र हो, कोइ परिग्रह अचित्र हो-2
दोनों बाह्य परिग्रह हों-ऽऽऽ
दोनों का हम त्याग करें, ये ही असंयम भाव करें-2
निंद्य अयोग्य हो-3 ये भाव बनाएँ रे-ऽऽ॥2098॥

(128) पूर्ण परिग्रह त्याग करें, निंद्य अयोग्य न भाव करें-2
जीवन का उत्थान करें-ऽऽऽ
शक्य न हो ये करने में, तो इनको अति न्यून रखें-2
तब ही शुद्धातम हो-3 का भाव दिखाए रे-ऽऽ॥2099॥

(129) निशा भोज जो करते हैं, बहु हिंसा मन धरते हैं-2
अनिवारित दुख भरते हैं-ऽऽ
क्यों दुख पैदा करते हो, त्याग को क्यों नहीं करते हो-2
त्यागो ये त्यागो हो-3 ये पाप कहाए रे-ऽऽ॥2100॥

(130) राग बहुत जो धरते हैं, त्याग नहीं वो करते हैं-2
निश्चय हिंसा करते हैं-ऽऽ
त्याग नहीं और करें नहीं, फिर भी पाप वो करते हैं-2
निश्चय कर हिंसा हो-3 रागादि कराए रे-ऽऽ॥2101॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–SS
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–SS

(131) सदा भोज में पाप कहें, तो दिन में हम त्याग करें–2
सिर्फ रात्रि में भोज करें–SS
ऐसा हम कर लेते हैं, इसका उत्तर देते हैं–2
रात्रि का भोजन हो–3 बहु पाप बढ़ाए रे–SS।।2102।।

(132) अन्न से माँस में राग बहुत, दिन से रात में पाप बहुत–2
निश्चय से रागादि बहुत–SS
राग–काम उद्रेक अधिक, रात्रि भोज करवाये अधिक–2
इनका त्यागी ही हो–3 सात्विक बन पाये रे–SS।।2103।।

(133) रात्रि भोजन करे यहाँ, पापों में नित मरे यहाँ–2
हिंसा निशदिन करे यहाँ–SS
बादर जीव व सूक्ष्म मरें, कौन अहिंसा उसे कहें–2
रात्रि में खाये हो–3 हिंसक कहलाए रे–SS।।2104।।

(134) रात्रि भोज जो त्याग करे, हृदय अहिंसा धर्म धरे–2
उसे सभी जन जैन कहें–SS
जो भी रात्रि भोज करे, नरकों में अति दु:ख भरे–2
हिंसा का त्यागी हो–3 नहिं रात में खाए रे–SS।।2105।।

(135) अपना हित जो भी चाहे, रत्नत्रय में अवगाहे–2
राग–द्वेष वो तज जाये–SS
करता जो पुरुषार्थ यहाँ, मोक्ष प्राप्त वो करे यहाँ–2
जीवन में अंतिम हो–3 वो फल पा जाए रे–SS।।2106।।

(136) कोट व परिधि हुआ करते, रक्षा नगरों की करते–2
वैसे ही जो व्रत करते–SS
अणुव्रत गुणव्रत शिक्षाव्रत, व्रत की सब रक्षा करते–2
व्रत के पालन में हो–3 ये बाड़ लगाएँ रे–SS।।2107।।

(137) पर्वत, नदी, गाँव धरिके, उनकी मर्यादा करके–2
करें प्रतिज्ञा मन करके–SS
सीमा उल्लंघन न हो, पाप प्रवृत्ति खुद कम हो–2
इसको ज्ञानी जन हो–3 दिग्व्रत बतलाएँ रे–SS।।2108।।

(137) मर्यादा में रहता है, वही पाप से बचता है–2
त्याग असंयम करता है–SS
मन के विकल्प रुकते हैं, नये कर्म कम बंधते हैं–2
दिग्व्रत ही इसको हो–3 ज्ञानी बतलाएँ रे–SS।।2109।।

(139) दिग्व्रत में भी व्रती यहाँ, ग्राम मौहल्ला, गली यहाँ–2
मर्यादा कम करे यहाँ–SS
इससे बाहर त्याग करे, मर्यादा वह क्षेत्र करे–2
देशव्रत इसको हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS।।2110।।

(140) बहुत क्षेत्र का त्याग करे, अल्पक्षेत्र कर यहाँ रहे–2
कई पाप से वही बचे–SSS
हिंसा का वह त्याग करे, धर्म अहिंसा स्वयं धरे–2
अणुव्रत का धारी हो–3 वह श्रेष्ठ कहाए रे–SS।।2111।।

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(141) चोरी झूठ और पराजय, युद्ध अब्रह्म शिकार व जय–2
काम, क्रोध, ग्लानि और भय–ऽऽ
इनका चिंतन नहीं करे, ये पापों के धाम अरे–ऽऽ
ये सब कुध्यान हो–3 अघ में ले जाएँ रे–ऽऽ॥2112॥

(142) विद्या लेखनकला यहाँ, खेती और व्यापार यहाँ–2
सेवा कारीगरी यहाँ–ऽऽ
इनका नहिं उपदेश करे, पापों से दिन–रात बचे–2
इनका उपदेश हो–3 नित पाप बढ़ाए रे–ऽऽ॥2113॥

(143) पृथिवी खोदे, तरु तोड़े, पानी सींचें गुल तोड़े–2
घास रौंदकर फल तोड़े–ऽऽ
बिना प्रयोजन कार्य करें, उसको अनर्थदण्ड कहें–2
इसमें प्रमाद हो–3 नित पाप बढ़ाए रे–ऽऽ॥2114॥

(144) छुरी और विष अग्नि हल, लाठी धनुष ये है अघ मल–2
ये सब हैं पापों के फल–ऽऽ
इन्हें न कभी प्रदान करे, ना इनका सम्मान करे–2
हिंसा उपकरण हो–3 अघबंध कराएँ रे–ऽऽ॥2115॥

(145) राग–द्वेष मोहादि बढे, दुष्ट कथा अज्ञान भरे–2
कहे न इनको श्रमण करे–ऽऽ
इनसे दूर रहे प्राणी, वही जानता जिनवाणी–2
दण्ड अनर्थ हो–3 इसको बतलाएँ रे–ऽऽ॥2116॥

(146) सप्त व्यसन का है मुखिया, करता है सबको दुखिया–2
धन संतोष विनाश किया–ऽऽ
मायाचारी का घर है, असत्य चोरी की जड़ है–2
ऐसे जुआ को, हो–3 नहिं हाथ लगाओ रे–ऽऽ॥2117॥

(147) जीवन में कुछ अर्थ नहीं, समझो दण्ड अनर्थ वही–2
ऋषियों ने यह बात कही–ऽऽ
इन्हें जानकर त्याग करें, कई पाप से यहाँ बचें–2
उसमें अहिंसा हो–3 का भाव दिखाए रे–ऽऽ॥2118॥

(147) राग–द्वेष का त्याग किया, इष्ट अनिष्ट समाप्त किया–2
समता को स्वीकार किया–ऽऽ
आत्म प्राप्ति का हेतु यही, सामायिक का सेतु यही–2
ऐसी सामायिक हो–3 कई बार कराओ रे–ऽऽ॥2119॥

(149) सुबह करे और शाम करे, सामायिक में भाव धरे–2
अन्य समय भी करे, करे–ऽऽ
सामायिक गुणकारी है, पुण्यकार्य की क्यारी है–2
अनुभव में हरदम हो–3 आनंद बढ़ाओ रे–ऽऽ॥2120॥

(150) सामायिक में श्रावक हो, त्याग पाप योगों का हो–2
तब वह महाव्रती सा हो–ऽऽ
चारित मोह उदय से वो, भले महाव्रत सा न हो–2
मुनि पद ही भव में हो–3 भव पार कराए रे–ऽऽ॥2121॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे-ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो-3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ

(151) सामायिक नित करने को, स्थिर भावों में रमने को-2
प्रतिदिन ऐसा करने को-ऽऽ
अष्टम, चतुर्दशी के दिन, धारण कर उपवास परम-2
धरके सामायिक हो-3 समता मन लाए रे-ऽऽ॥2122॥

(152) आठम को उपवास करो, सप्तम को संकल्प करो-2
बारह बजे ये काम करो-ऽऽ
सब आरंभ त्याग करके, मोह बुद्धि का त्याग करो-2
ऐसा उपवास हो-3 बहुफल दे जाए रे-ऽऽ॥2123॥

(153) जिस दिन हो उपवास यहाँ, त्यागे सब सावद्य यहाँ-2
विषयों से हो विरक्त यहाँ-ऽऽ
मन वच तन से स्थिर हो, आत्म ध्यान में लगे यहाँ-2
निर्जन स्थान हो-3 पर समय गुजारे रे-ऽऽ॥2124॥

(154) सामायिक त्रयकाल करे, दिन में धर्मध्यान करे-2
स्वाध्याय नित जाप करे-ऽऽ
निद्रा को जीते आकर, ऐसे रात्रि पूर्ण करे-2
ऐसा उपवास हो-3 नित ज्ञान बढ़ाए रे-ऽऽ॥2125॥

(155) प्रातः उठके शुद्धि करे, जिनपूजा कर्तव्य करे-2
फिर जिन श्रुत को यहाँ पढ़े-ऽऽ
मन का संयम रखे यहाँ, व्रत जीवन में करे यहाँ-2
ऐसे ही मन में हो-3 शुभ भाव बनाओ रे-ऽऽ॥2126॥

(156) करता जो उपवास यहाँ, मन में रख वैराग्य यहाँ-2
यत्नाचारी बने यहाँ-ऽऽ
अगले दिन पूजन करके, सभी क्रियाओं को करके-2
धर्मध्यायी बन हो-3 समता मन लाओ रे-ऽऽ॥2127॥

(157) इस प्रकार उपवास करे, सोलह प्रहर व्यतीत करे-2
धर्मध्यान कर पुण्य करे-ऽऽ
उसे अहिंसा व्रत होता, निश्चय से अघ को खोता-2
संयम की राहें हो-3 उसको नजराएँ रे-ऽऽ॥2128॥

(158) देशव्रती जो श्रावक हों, उनसे स्थावर हिंसा हो-2
भोग उपभोग निमित्त अहो-ऽऽ
लेकिन जब व्रत करता है, हिंसा तब कम करता है-2
व्रत बिन हिंसा भी हो-3 नहिं कम हो पाए रे-ऽऽ॥2129॥

(159) करता व्रत उपवास यहाँ, हिंसा झूठ न करे यहाँ-2
चोरी मैथुन तजे यहाँ-ऽऽ
मौनव्रती बन जीता है, धर्मामृत नित पीता है-2
परिग्रह भी उसमें हो-3 नहिं रंच दिखाए रे-ऽऽ॥2130॥

(160) सब हिंसाओं का त्यागी, प्रोषध व्रत में बड़भागी-2
महाव्रती सा हो त्यागी-ऽऽ
चारित मोह उदय में है, इसीलिए संयम नहिं है-2
उसमें महाव्रत हो-3 उपचार बताएँ रे-ऽऽ॥2131॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(161) श्रावक है जो देशव्रती, भोग उपभोग में आसक्ति–2
इस निमित्त हिंसा होती–ऽऽ
सब हिंसा का त्यागी है, इन भोगों में दागी है–2
शक्ति अनुसार हो–3 इनको तज जाये रे–ऽऽ।।2132।।

(162) कंदमूल जो खाता है, हिंसा बहुत कराता है–2
नंत जीव मरवाता है–ऽऽ
त्याग अभक्ष यहाँ करना, दयाभाव सब पर धरना–2
जीवों को मारे हो–3 वो मर–मर जाए रे–ऽऽ।।2133।।

(163) बहुत जीव उत्पन्न जहाँ, उसको खाए कौन यहाँ–2
जैसे हो नवनीत यहाँ–ऽऽ
जो नहिं खाने योग्य कहे, उनको कैसे भोग करे–2
खाने के योग्य हो–3 उनको ही खाओ रे–ऽऽ।।2134।।

(164) जिनका भोग उचित नहिं है, खाने योग्य वही नहिं है–2
जो मर्यादा में नहिं है–ऽऽ
मर्यादायुत् भोग करे, तभी अहिंसा भाव बढ़े–2
मोक्षाभिलाषी हो–3 मर्यादित खाए रे–ऽऽ।।2135।।

(165) पहिले थी जो मर्यादा, उसमें भी कर ले आधा–2
जिससे कोई न हो बाधा–ऽऽ
ऐसा प्रतिदिन करे यहाँ, पाप कर्म से बचे यहाँ–2
सीमा में सीमा हो–3 कर ले बतलाएँ रे–ऽऽ।।2136।।

(166) मर्यादा जो यहाँ करे, कम से कम नित भोग करे–2
फिर भी वो संतुष्ट रहे–ऽऽ
हिंसा त्याग भाव आता, श्रेष्ठ अहिंसा व्रत भाता–2
उसमें श्रावक के हो–3 लक्षण नजराएँ रे–ऽऽ।।2137।।

(167) योग्य वस्तु का दान करे, उसको दाता सभी कहें–2
स्व–पर अनुग्रह हेतु करें–ऽऽ
अतिथि को भोजन देता है, वो अतिपुण्य सजेता है–2
प्रतिदिन श्रावक ही हो–3 ये भाव बनाए रे–ऽऽ।।2138।।

(168) पड़गाहन और उच्चासन, प्रक्षालन गुरु की पूजन–2
भक्तिभाव से करें नमन–ऽऽऽ
मन वच तन भोजन शुद्धि, इसे कहें नवधा भक्ति–2
भक्ति करके ही हो–3 आहार कराएँ रे–ऽऽ।।2139।।

(169) बिन फल इच्छा क्षमा धरे, सहनशील नहिं कपट करें–2
हर्षित, ईर्षाभाव तजें–ऽऽ
अहंकार नहिं मन में हो, सात ये गुण दाता में हो–2
जैसे गुण होंगे हो–3 वैसा फल पाये रे–ऽऽ।।2140।।

(170) जिससे राग–द्वेष नहिं हों, दुख, भय नहीं असंयम हों–2
तप अध्ययन वृद्धिंगत हों–ऽऽ
उसी द्रव्य को देना है, भाव शुद्ध कर लेना है–2
ऐसा ही दाता हो–3 उत्तम फल पाए रे–ऽऽ।।2141।।

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(171) सम्यक् दृग–बुध–व्रत्त यहाँ, कहें मोक्ष के हेतु यहाँ–2
उसके त्रय हैं भेद यहाँ–ऽऽ
सम्यग्दृष्टि, देशव्रती, बड़भागी मुनि महाव्रती–2
तीनों ही पात्र हो–3 शिवपथिक बताएँ रे–ऽऽ॥2142॥

(172) श्रावक जो भी दान करें, वही लोभ का त्याग करे–2
लोभ पाप का बाप अरे–ऽऽ
परिग्रह हिंसा का कारण, त्याग अहिंसा का कारण–2
अतिथि को दान हो–3 हिंसा मिटवाये रे–ऽऽ॥2143॥

(173) संयमधारी घर आये, भ्रमर वृत्ति सम बतलाए–2
भोजन उन्हें न करवाए–ऽऽ
दयाशील उन साधु को, लोभ स्वयं का दिखलाए–2
ऐसे लोभी जन हो–3 हिंसक कहलाएँ रे–ऽऽ॥2144॥

(174) अपने लिए बना भोजन, जिसमें हैं सारे व्यंजन–2
उसमें से देता भोजन–ऽऽ
भावपूर्वक मुनियों को, लोभ त्याग कर व्रतियों को–2
दान अहिंसा हो–3 का भाव बनाए रे–ऽऽ॥2145॥

(175) धर्म यहाँ कर जाएगा, भारी पुण्य कमाएगा–
पर भव कैसे जायेगा–ऽऽ
मरण समाधि अपनाकर, सल्लेखन को धारण कर–2
ऐसी भक्ति ही हो–3 परभव ले जाये रे–ऽऽ॥2146॥

(176) होवे मेरा जभी क्षरन, सल्लेखन कर करूँ मरण–2
श्रुत में है जो उल्लेखन–ऽऽ
यही भावना रोज करे, अंत समय अनुकरण करे–2
तब ही जीने का हो–3 फल हम ले पाएँ रे–ऽऽ॥2147॥

(177) मरण समाधि करते हैं नहिं अकाल में मरते हैं–2
राग–द्वेष वो तजते हैं–ऽऽ
हो कषाय परिणामों में, तब अपमृत्यु कही श्रुत में–2
समता भावों में हो–3 शुभ मरण बताएँ रे–ऽऽ॥2148॥

(178) कोधादि संक्लेश सहित, है वो मरण समाधि रहित–2
वह है मौत अकाल सहित–ऽऽ
जल, अग्नि, विष शस्त्रों से, प्राणों का वह घात करे–2
वह तो अकाल हो–3 मृत्यु कहलाए रे–ऽऽ॥2149॥

(179) होता जब सन्यास मरण, हो कषाय का यहाँ क्षरण–2
अभ्यासी हो सल्लेखन–ऽऽ
हिंसा इसे नहीं कहते, सुधी अहिंसा ही कहते–2
इसकी सिद्धि को हो–3 समता उर लाए रे–ऽऽ॥2150॥

(180) अणुव्रत पाँच करे पालन, शीलव्रतों का आराधन–2
पापों का नित प्रक्षालन–ऽऽ
मुक्ति उसको ही है वरती, उत्कंठित हो मन हरती–2
शिवपुर की महिमा हो–3 वो खुद पा जाए रे–ऽऽ॥2151॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–SS
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–SS

(118) सम्यग्दर्शन और व्रत में, कषाय उपशमन शीलों में–2
पाँच–पाँच अतिचार कहें–SS
ये सब सत्तर हो जाते, शुद्धि रोकने को आते–2
इनका हो त्याग हो–3 तब व्रत फल पाएँ रे–SS॥2152॥

(182) शंका, कांक्षा, ग्लानि करे, मिथ्यात्वी की स्तुती करे–2
उनको प्रशंसनीय कहे–SS
पंच रहे अतिचार यहाँ, सम्यग्दृष्टि बचे यहाँ–2
सम्यग्दर्शन में हो–3 ये दोष लगाएँ रे–SS॥2153॥

(183) छेदन और ताड़न करना, बंधन बोझ बहुत धरना–2
भूखे प्यासे भी रखना–SSS
अहिंसाणुव्रत जहाँ रहे, उसके पाँच अतिचार कहें–2
इनको जानेगा हो–3 तब ही बच पाये रे–SS॥2154॥

(184) झूठ देशना और लिखना, गुप्त बात सबसे कहना–2
धरी धरोहर हर लेना–SS
काय का चेहरा जान यहाँ, भाव प्रकट उसका करना–2
सत्याणुव्रत के हो–3 अतिचार बताएँ रे–SS॥2155॥

(185) अच्छी में खोटी रखना, चोरों के सहायी बनना–2
चोरी की चीजें लेना–SS
राज्य नियम उल्टे चलना, हीनाधिक लेना–देना–2
अचौर्याणुव्रत के हो–3 अतिचार बताएँ रे–SS॥2156॥

(186) कामाति लालसा रखना, अन्यंगों क्रीड़ा करना–2
पर का विवाह करवाना–SS
पर स्त्री सेवन करना, बिन ब्याही से रति करना–2
ब्रह्मचर्य व्रत के हो–3 अतिचार बताएँ रे–SS॥2157॥

(187) सोना–चाँदी–भूमि–धन, दासी–दास वास्तु बर्तन–2
वस्त्र और है धान्य सघन–SS
इनमें जो परिमाण किया, रागी बन वो लांघ दिया–2
अपरिग्रह व्रत के हो–3 अतिचार बताएँ रे–SS॥2158॥

(188) नीचे ऊपर प्रमाण कर, समतल भू की सीमा कर–2
सीमा का उल्लंघन कर–SS
क्षेत्रवृद्धि खुद का लेना, ध्यान न मर्यादा रखना–2
दिग्व्रत अतिचार, हो–3 ये पाँच बताएँ रे–SS॥2159॥

(189) क्षेत्र प्रमाण बनाया है, उससे बाह्य भिजाया है–2
वस्तु कोइ मंगवाया है–SS
फेंका कंकड़ शब्द यहाँ, रूप से लाया गया यहाँ–2
देशव्रत के ये हो–3 अतिचार बताएँ रे–SS॥2160॥

(190) बोले अशिष्ट शब्द यहाँ, काय कुचेष्टा भद्द यहाँ–2
भोगोपभोग की चाह यहाँ–SS
व्यर्थ यहाँ बकवास करे, बिना प्रयोजन खूब करे–2
अतिचार असमीक्षित हो–3 अधिकरण बताएँ रे–SS॥2161॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–SS
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–SS

(191) मन वच तन दुष्प्रणि धानी, और अनादर की ठानी–2
भूल गये कर मनमानी–SSS
सामायिक अतिचार कहे, ज्ञानी इससे दूर रहे–2
तब ही सामायिक हो–3 अनुभव करवाये रे–SS।।2162।।

(192) बिन देखे जो ग्रहण करे, संस्तर बिछाए कार्य करे–2
मल मूत्र का जो त्याग करे–SS
भूले आदर नहीं करे, प्रोषध के अतिचार कहे–2
प्रोषध करने में हो–3 ये दोष न लाए रे–SS।।2163।।

(193) हो सचित्र आहार यहाँ, सचित्र मिश्राहार यहाँ–2
सचित्र संबंध करे यहाँ–SS
दुष्पक्वाहार यहाँ, या अभिषव आहार यहाँ–2
भोगोपभोग हो–3 अतिचार बताएँ रे–SS।।2164।।

(194) पर से दान दिलाता है, सचित्त पर रखवाता है–2
और सचित्त ढ़कवाता है–SS
अन्य समय में दे भोजन, मत्सर भाव रखे निशदिन–2
अतिथि आदर के हो–3 अतिचार बताएँ रे–SS।।2165।।

(195) जीने, मरने की इच्छा, सुखानुबंध मन मे आशा–2
राग भाव की अभिलाषा–SS
निदान मन में रखता है, अतिचारों में मरता है–2
मरण समाधि हो–3 के दोष बताएँ रे–SS।।2166।।

(196) व्रत के सब अतिचारों को, अतिक्रम व्यतिक्रम दूषण को–2
त्याग करे जो इन सबको–SS
सम्यक् व्रत पालन करता, अल्प समय में सुख वरता–2
उसको पुरुषारथ हो–3 सिद्धि मिल जाए रे–SS।।2167।।

(197) चारित धारण कर जाते, वही पराक्रम दिखलाते–2
तप कर कर्म खपा जाते–SS
यही मोक्ष का अंग कहा, तप बिन कर्म न नष्ट हुआ–2
संयम अंतर्गत हो–3 सब ही आ जाए रे–SS।।2168।।

(198) अनशन, ऊनोदर करना, विविक्त शैयासन वरना–2
रस परित्याग, क्लेश सहना–SS
वृत्ति की संख्या रखना, छः तप बाह्य समझ कहना–2
इनको चारित में हो–3 गर्भित कर जाओ रे–SS।।2169।।

(199) विनय व वैयावृत्ति करें, प्रायश्चित उत्सर्ग धरें–2
स्वाध्याय नित ध्यान करें–SS
अंतरंग तप कहे यहाँ, यही कर्म क्षय करें यहाँ–2
चारित में ये तप हो–3 गर्भित हो जाएँ रे–SS।।2170।।

(200) मुनि रत्नत्रय धारी हैं, तप दृग ज्ञानाचारी हैं–2
सकलव्रतीं गुणधारी हैं–SS
श्रावक शक्ति विचार करे, रत्नत्रय अनुकरण करे–2
मुनियों की सेवा हो–3 गुणवृद्धि कराये रे–SS।।2171।।

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(201) समता स्तुति प्रतिक्रमण, देव वंदना अनुसरण–2
षट् आवश्यक कर्म शरण–ऽऽ
इन्हें निरंतर रोज करो, पाप कर्म से यहाँ बचो–2
ये ही कर्तव्य हो–3 भव पार कराएँ रे–ऽऽ॥2172॥

(202) पहले तन वश में करना, वचनों में मौनी रहना–2
योग गुप्तिमय ही करना–ऽऽऽ
मन वच तन हो शांत यहाँ, कर्म वहीं हो अंत यहाँ–2
कर्मों का दुख ही हो–3 भव दु:ख बढ़ाएँ रे–ऽऽ॥2173॥

(203) सावधान हो गमन करें, और यहाँ आगमन करें–2
हित मित वचनोच्चार करें–ऽऽ
योग्य ग्रहण आहार करें, यत्नपूर्व मल त्याग करें–2
ये पाँचों समिति हो–3 संयम पलवाये रे–ऽऽ॥2174॥

(204) आर्जव मार्दव क्षमा धरम, सरल शौच व सत्य धरम–2
संयत तप और त्याग धरम–ऽऽ
ब्रह्मचर्य ये दसधर्म, जीवन को देते हैं मर्म–2
इनको सेवन कर हो–3 अतिपुण्य कमाओ रे–ऽऽ॥2175॥

(205) अध्रुव अशरण एकत्व, आस्रव, अशुचि अन्यत्व–2
जगत, लोक व धर्मत्व–ऽऽ
बोधि दुर्लभ और संवर, बारह भावन में निर्जर–2
इनको जो भाये हो–3 वैराग्य बढ़ाए रे–ऽऽ॥2176॥

(206) क्षुधा तृषा शीत उष्ण यहाँ, नग्न प्रार्थना अरति यहाँ–2
कुवचन और अलाभ यहाँ–2
मच्छर काटें सहन करें, कठिन परीषह मुनि सहें–2
कर्मों का क्षय भी हो–3 इनसे हो जाये रे–ऽऽ॥2177॥

(207) रोगों का दुख हो जाये, तन मल से ही घिर जाये–2
काँटे तन में चुभ जायें–ऽऽ
बहुत समय तक ज्ञान न हो, निज दर्शन का लाभ न हो–2
इन सब को सहना हो–3 दुष्कर बतलाएँ रे–ऽऽ॥2178॥

(208) ज्ञान न हो सत्कार यहाँ, पुरस्कार नहिं मिले यहाँ–2
शयन, गमन, वध सहें यहाँ–ऽऽ
स्त्री और निषधा हैं– ये बाईस परीषह है–2
इनको सहने से हो–3 दुख मिटते जाएँ रे–ऽऽ॥2179॥

(209) जो शिवपद को चाहेगा, वो रत्नत्रय भायेगा–2
जीवन में अपनाएगा –ऽऽ
एकदेश व्रत पालेगा, पाप प्रवृत्ति टालेगा–2
मुनिव्रत पाने का हो–3 नित भाव बनाए रे–ऽऽ॥2180॥

(210) एक देश व्रत पालन कर, यहाँ निरंतर उद्यमकर–2
करे रोज वैराग्य प्रखर–ऽऽ
इकदिन मुनिपद धारण कर, मरण समाधि करे प्रवर–2
तब ही ये जीवन हो–3 मंगल बन जाये रे–ऽऽ॥2181॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे-ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो-3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ

(211) रत्नत्रय को भाया है, पुण्य बंध नित पाया है-2
मोक्ष मार्ग की छाया है-ऽऽऽ
ये भव का नहिं कारण है, ये संसार निवारण है-2
बंधन का कारण हो-3 भवराग बताएँ रे-ऽऽ॥2182॥

(212) जिन अंशों में राग रहे, उन अंशों में बंध रहे-2
आगम में यह बात अरे-ऽऽ
जिन अंशों में सम्यक् हो, उसमें बंध कभी नहिं हो-2
सम्यक् कर्मों का हो-3 नहिं बंध कराये रे-ऽऽ॥2183॥

(213) जितने अंश में राग रहे-उतने में हो बंध अरे-2
राग कर्म का बंध करे-ऽऽ
जिन अशों में ज्ञान रहे, उतने में नहिं बंध रहे-2
ज्ञान कर्मों का हो-3 नित बंध मिटाए रे-ऽऽ॥2184॥

(214) जहाँ-जहाँ पर राग रहे, वहाँ-वहाँ पर बंध बँधे-2
राग हमेशा बंध करे-ऽऽऽ
जिन अंशों में चारित हो, उतने में निर्बन्ध रहे-2
चारित से कर्मों हो-3 का बंध न आये रे-ऽऽ॥2185॥

(215) प्रकृति, प्रदेश ये बंध यहाँ, योगों से संबंध यहाँ-2
कहते अमृतचंद यहाँ-ऽऽ
कषाय जब आ जाती है, स्थिति अनुभाग कराती हैं-2
रत्नत्रय आतम का हो-3 धर्म बताएँ रे-ऽऽ॥2186॥

(216) आत्मदर्श सम्यग्दर्शन, आत्मज्ञान सम्यग्ज्ञानम-2
आत्मा में स्थिर चारित्रम्-ऽऽ
आतम, आतम में आये, कर्मबंध फिर क्यों आये-2
निज में रमता वो हो-3 सब कर्म मिटाए रे-ऽऽ॥2187॥

(217) सम्यक् से तीर्थंकर का, चारित से आहारक का-2
बंध, कथन ये आगम का-ऽऽ
कर्म प्रकृति जब जानोगे, तभी बात ये मानोगे-2
सच को सच माने हो-3 सम्यक् हो जाए रे-ऽऽ॥2188॥

(218) तीर्थंकर आहारक का, योग कषाय से बंध इनका
सम्यक् चारित संग इनका-ऽऽ
सम्यक् से नहिं चारित से, बंध हो इनकी संगति से-2
समझे बिन कुछ भी हो-3 नहिं समझ में आये रे-ऽऽ॥2189॥

(219) सम्यक् से हो बंध नहीं, रत्नत्रय से बंध नहीं-2
फिर मुनि को भी बंध नहीं-2
देवगति में जाते हैं, सम्यक् से बतलाते हैं-2
रत्नत्रय से भी हो-3 जायें बतलाएँ रे-ऽऽ॥2190॥

(220) रत्नत्रय से मुक्ति है, ऐसी आगम युक्ति है-2
निज स्वरूप की भक्ति है-ऽऽ
इसमें होता पुण्य यहाँ, देवगति दे वही यहाँ-2
शुभ का आस्रव ही हो-3 गति देव दिलाए रे-ऽऽ॥2191॥

पुरुषार्थ सिद्धि उपाय हमें, सद्ज्ञान बताए रे–ऽऽ
हम सब पढ़ करके हो–3 नित ज्ञान बढ़ाएँ रे–ऽऽ

(221) पुण्य बंध द्वय रूप यहाँ, एक कहा भव रूप यहाँ–2
एक कहा शिवरूप यहाँ–ऽऽ
रत्नत्रय से पुण्य हो जो, वो सब मुक्तिपथ का हो–2
ऐसा हम जानें हो–3 नित पुण्य बढ़ाएँ रे–ऽऽ।।2192।।

(222) सम्यग्दर्शन ज्ञान यहाँ, और चारित्र विधान यहाँ–2
निश्चय मय व्यवहार यहाँ–ऽऽ
मोक्षमार्ग का दाता है, शिवपद यही प्रदाता है–2
इसको अपनाकर हो–3 भवि शिवपुर पाये रे–ऽऽ।।2193।।

(223) कर्म लेप नहिं रंच रहे, दर्शन ज्ञान अनंत रहे–2
लोक शिखर पर राज रहे–ऽऽ
घात रहित अति निर्मल हैं, नित्य अरूपी अविचल हैं–2
उन सब सिद्धों को हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–ऽऽ।।2194।।

(224) हैं कृतकृत्य सर्वज्ञाता, ज्ञानानंद मुक्तिदाता–2
ज्योतिर्मय सबको साता–ऽऽऽ
कर्म रहित सब सिद्धों को, मुक्तात्मा भगवंतो को–2
उनके गुण पाने हो–3 हम ध्यान लगाएँ रे–ऽऽ।।2195।।

(225) निश्चय और व्यवहारमयी, स्याद्वाद की नीति सही–2
अनेकांत सम धर्म मयी–ऽऽऽ
दर्शन–ज्ञान–चरित्र यहाँ– सिद्ध कराये सिद्धि यहाँ–2
ऐसा जिनधर्म हो–3 सब सिद्धि कराए रे–ऽऽ।।2196।।

(226) अक्षर वाक्य पदों द्वारा, कई अलंकारों द्वारा–2
ये आर्या छंदों द्वारा–ऽऽ
शास्त्र बनाया गया यहाँ, हमने कुछ नहिं किया यहाँ–2
गुरु की कृपा से हो–3 ये शास्त्र बनाएँ रे–ऽऽ।।2197।।

(227) हमने पद्य अनुवाद किया, गुरुवर से आशीष लिया–2
सफल कार्य तब यहाँ किया–ऽऽ
गुरु आशीष चलाता है, कलम, कला दिखलाता है–2
गुरु की महिमा हम हो–3 बतला नहिं पाये रे–ऽऽ।।2198।।

अमृतचंद्राचार्य के, अमृतमयी वचन।
उनको गूँथा पद्य में, करूँ विनम्र नमन।।

पद्यानुवाद गुरु की महिमा कराती,
शब्दों को दे कलम से हमको लिखाती
गुरुदेव के चरण को छू–छू के वंदूँ–
मेरे गुरु गुणमयी हैं विराग सिंधू।

कार्तिकेयानुप्रेक्षा

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य कार्तिकेय स्वामी
पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

मंगलाचरण

(1) तीन लोग के तिलक परम, पूज्यनीय सब इन्द्र शुभम-2
दें सबको आनंद परम-ऽऽ
उन जिनेन्द्र को नमन करूँ, अनुप्रेक्षाएँ सभी कहूँ-2
भव्यों को ये सब हो-3 आनंद करायें रे-ऽऽ॥2199॥

(2) अध्रुव, अशरण संसार, एक अन्यत्व गुणाधार-2
अशुचित आस्रव व्यापार-ऽऽ
संवर निर्जर लोक यहाँ, अनुप्रेक्षा दें बोध यहाँ-2
इनको भाये जो हो-3 भव से तिर जाये रे-ऽऽ॥2200॥

(3) परम बोधि दुर्लभ जग में, धर्म भावना रख मन में-2
पार लगायें ये भव में-ऽऽऽ
मन-वच-तन को शुद्ध करे, अनुप्रेक्षाएँ हृदय धरे-2
बारह भावनाएँ हो-3 वैराग्य बढ़ाएँ रे-ऽऽ॥2201॥

अनित्यानुपेक्षा-

(4) जो उत्पन्न यहाँ होगा, उसका विलय जरूर होगा-2
नित्य नहीं कुछ भी होगा-ऽऽ
पर्यायें हैं नित्य नहीं, सिर्फ द्रव्य है नित्य यहीं-2
नित्य नहिं जाने हो-3 वो भ्रमण बढ़ाए रे-ऽऽ॥2202॥

(5) जन्म के साथ मरण होगा, यौवन लिए जरा होगा-2
धन भी नाश लिए होगा-ऽऽ
सभी यहाँ क्षण भंगुर है, इसमें क्यूँ भिखमंगू है-2
इसमें जीवन तू हो-3 क्यों व्यर्थ गँवाए रे-ऽऽ॥2203॥

(6) पुत्र मित्र तन सुंदरता, गाय बैल घर, मात-पिता-2
सबमें दिखती नश्वरता-ऽऽ
मेघपटल सम अस्थिर हैं, इनकी स्थिरता क्षण भर हैं-2
इनमें जो भूले हो-3 वे मूर्ख कहाएँ रे-ऽऽ॥2204॥

(7) रथ घोड़े हाथी ठेला, धन हैं इक क्षण का मेला-2
आज है कल नहिं इक धेला-ऽऽ
इन्द्र धनुष सम चंचल हैं, ठाठ-बाट तो इक पल हैं-2
इनमें स्थिरता को हो-3 क्यो व्यर्थ गँवाए रे-ऽऽ॥2205॥

(8) पथ में पथिक यहाँ चलते, कई लोग राही मिलते-2
क्षण भर बाद बिछड़ जाते-ऽऽ
वैसे ही परिवारी जन, साथ रहेंगे राही सम-2
क्षण का संयोग हो-3 क्षण में मिट जाये रे-ऽऽ॥2206॥

(9) तेल फुलेल लगाओ तुम, व्यंजन खूब खिलाओ तुम-2
गुल पर इसे सुलाओ तुम-ऽऽ
ये तन कच्चा घड़ा यहाँ, क्षण में फूटे पड़ा यहाँ-2
इसको पाकर तू हो-3 क्यूँ पाप बढ़ाए रे-ऽऽ॥2207॥

(10) चक्रवर्ती और नारायण, बलदाउ प्रति नारायण-2
इनका होता पुण्य सघन-ऽऽ
ये भी स्थायी नहीं रहें, अल्पसमय तक यहाँ चलें-2
जब तक हो पुण्य हो-3 तब तक धन पाये रे-ऽऽ॥2208॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(11) धैर्यशील या कुलीन हो, पंडित हो या सज्जन हो-2
सुंदर पूज्य पराक्रम हो-ऽऽऽ
इन पर है आसक्त नहीं, लक्ष्मी हरदम रुके नहीं-2
मूरख लक्ष्मी की हो-3 गति समझ न पाये रे-ऽऽ॥2209॥

(12) लहरों जैसी चंचल है, लक्ष्मी जैसे बादल है-2
जिसका आज नहीं कल है-ऽऽ
दो दिन की मेहमान अरे, सज्जन भोगे दान करे-2
इस पर ये जीवन हो-3 क्यों फिदा कराए रे-ऽऽ॥2210॥

(13) धन का संचय करता है, भोग न दान कराता है-2
वह खुद को ठग जाता है-ऽऽ
पात्रों को नहिं दान करे, व्यर्थ तो मानुष जन्म अरे-2
जीना, नहिं जाना हो-3 द्वय एक बताएँ रे-ऽऽ॥2211॥

(14) लक्ष्मी का संचय करके, गाढ़ा उसे खोद करके-2
तलघर यहाँ बना करके-ऽऽ
उसको लक्ष्मी मिट्टी सम, कहते हैं ज्ञानी हरदम-2
मिट्टी में डाला हो-3 मिट्टी कहलाए रे-ऽऽ॥2212॥

(15) लक्ष्मी को एकत्र करे, न दे और नहिं भोग करे-2
वह मुनीम का काम करे-ऽऽ
लक्ष्मी उसे पराया धन, रख रखाव में लगा ये मन-2
वह तो रखवाला हो-3 धन का कहलाए रे-ऽऽ॥2213॥

(16) लक्ष्मी में बहु राग धरे, रख रखाव में कष्ट सहे-2
उसको कभी न खर्च करे-ऽऽ
ऐसा राजा मूर्ख है वो, काम करे गैरों का जो-2
उसके कुटुम्बी हो-3 नित मौज उड़ाएँ रे-ऽऽ॥2214॥

(17) चतुराई से काम करे, धन की नितप्रति वृद्धि करे-2
फिर भी कभी न तृप्त रहे-ऽऽऽ
निशदिन चिंता करता है, आरंभ सारंभ करता है-2
सारा ही जीवन हो-3 यूँ व्यर्थ ही जाए रे-ऽऽ॥2215॥

(18) असि मसि कृषि व्यापार यहाँ, जिसमें कहीं न सार यहाँ-2
चिंतारत दिन रात रहाँ-ऽऽ
भोजन भी नहिं ठीक करे, चिंता में ही दिन गुजरे-2
चिंता सोते में हो-3 भी खूब सताए रे-ऽऽ॥2216॥

(19) धन को यहाँ कमाता है, नित ही धर्म लगाता है-2
वही प्रशंसा पाता है-ऽऽ
उसकी लक्ष्मी यहाँ सफल, कहते हैं सब साधु विमल-2
बढ़ती हुई लक्ष्मी हो-3 बहु वृद्धि पाये रे-ऽऽ॥2217॥

(20) धन को अनित्य जान यहाँ, धर्मी को दे दान यहाँ-2
बदले कुछ नहिं चाह यहाँ-ऽऽ
उसका जीवन सफल कहो, उसको धर्मी समझ अहो-2
धर्म के बदले हो-3 कुछ चाह न लाये रे-ऽऽ॥2218॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(21) बालपना यौवन और धन, जल बुलबुले समां जीवन-2
इनको नित्य में माने मन-ऽऽऽ
मोह बड़ा बलवान अरे, नित्य नहीं वो नित्य करे-2
आँखें होते भी हो-3 अंधा कर जाये रे-ऽऽ॥2219॥

(22) सभी विषय हैं क्षणभंगुर, कभी नहीं ये हैं सुखकर-2
रहो यहाँ इनको तजकर-ऽऽ
मन को विषय रहित करना, उत्तम सुख को खुद वरना-2
जीवन की महिमा हो-3 तब समझ में आये रे-ऽऽ॥2220॥

अशरणानुप्रेक्षा-

(23) ब्रह्मा विष्णु महेश्वर हों, इन्द्र नरेन्द्र सुरेश्वर हों-2
सभी जहां में नश्वर हों-ऽऽ
काल से कोई न बच सके, हमें न कोई बचा सके-2
देव भी भव में हो-3 अशरण बतलाएँ रे-ऽऽ॥2221॥

(24) फँसा शेर के पंजे में, आया हिरण शिकंजे में-2
बचा सके नहिं कोइ उन्हें-ऽऽ
मौत के मुँह में पड़े हुए, उसे न कोई बचा सके-2
मरना तो उसका हो-3 निश्चित बतलाएँ रे-ऽऽ॥2222॥

(25) मंत्र तंत्र नहिं काम करें, क्षेत्रपाल कुछ न कर सकें-2
देव इक तरफ खड़े रहें-ऽऽ
जब मानव मरने को हो, कोई न उसे सहायी हो-2
ये सब बचा लें हो-3 तो क्यूँ मर जाये रे-ऽऽ॥2223॥

(26) बहुत हो कोई बलशाली, लगवा ली रक्षा जाली-2
करें सभी जन रखवाली-ऽऽ
तीर धनुष तलवार यहाँ, रखे सभी हथियार यहाँ-2
तब भी मरने से हो-3 नहिं कोइ बचाए रे-ऽऽ॥2224॥

(27) मूढ़ जीव में भाव यही, है मिथ्यात्व प्रभाव यही-2
कहे यक्ष को शरण यही-ऽऽ
ये खुद मरने वाले हैं, फिर किसके रखवाले हैं-2
भूत, ग्रह सारे हो-3 नहिं तुम्हें बचाएँ रे-ऽऽ॥2225॥

(28) होता है जब आयु क्षरण, तब निश्चित हो यहाँ मरण-2
देव-इन्द्र भी नहीं शरण-ऽऽ
बढ़ा सके नहिं उम्र कोई, बचा सके नहिं इन्द्र कोई-2
मरते लोगों में हो-3 नहिं शरण दिखाए रे-ऽऽ॥2226॥

(29) इन्द्र मरण से बच सकता, तो फिर वो खुद क्यों मरता?-2
भोग स्वर्ग वो क्यों तजता-ऽऽऽ
अपनी रक्षा न कर सके, गैरों को क्या बचा सके-2
अशरण जो खुद हो हो-3 क्या शरण दिलाये रे-ऽऽ॥2227॥

(30) सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण, ये ही सच्चे दिखे शरण-2
अन्य सभी जग में अशरण-ऽऽ
श्रद्धा से कर ले धारण, मिटे सभी संसार भ्रमण-2
तीनों ही रत्न हो-3 बहु रत्न दिलाएँ रे-ऽऽ॥2228॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(31) दश धर्मों का करो वरण, वीतरागता सही शरण-2
हो कषाय सब यहाँ क्षरण-ऽऽऽ
मृत्यु का हो तभी मरण, परमेष्ठी हैं परं शरण-2
उनके चरणों की, हो-3 हम शरण को पायें रे-ऽऽ॥2229॥

संसारानुप्रेक्षा-

(32) एक शरीर छोड़ता है, नया ग्रहण फिर करता है-2
बहुत बार यूँ करता है-ऽऽ
ऐसा करता रहता है, भव में यहाँ भ्रमणता है-2
दुक्खों के दरिया हो-3 में दुक्ख उठाये रे-ऽऽ॥2230॥

(33) मिथ्यात्व और कषाय यहाँ, बंध कराये यहाँ-वहाँ-2
करवाये भव भ्रमण यहाँ-ऽऽ
तन में हो संसरण यहाँ, यही समझ संसार यहाँ-2
भटकन-भटकन में हो-3 भव भ्रमता जाये रे-ऽऽ॥2231॥

(34) पाप उदय जब होता है, नरक दुखों को ढोता है-2
पूर्ण जिंदगी रोता है-ऽऽ
नरकों जैसा दुक्ख यहीं, कहीं नहीं है कहीं नहीं-2
आलू निश खाये हो-3 वो नरक में जाये रे-ऽऽ॥2232॥

(35) पहला असुरकुमारों का, दूजा तन तीजा मन का-2
चौथा दुक्ख है क्षेत्र का-ऽऽ
पंचम दुख है आपस का, मारकाट भय वेदन का-2
पाँचों दुख पायें हो-3 जो नरक में जाये रे-ऽऽ॥2233॥

(36) तिल-तिल खण्ड करें तन के, क्षण भर सुख नहिं है मन के-2
अग्नि में दुख दे तल के-ऽऽ
पीव कुण्ड में डाल जहाँ, भेद-भेदकर दुखित यहाँ-2
गिनती नहिं जाये हो-3 इतने दुख पायें रे-ऽऽ॥2234॥

(37) तन का कर देते छेदन, तिल-तिल कर करते भेदन-2
सहना पड़ते दुक्ख सघन-ऽऽ
लाखों मुँह से कह न सकें, इतने दुख नरकों में सहें-2
दुक्खों का सागर हो-3 नरकों में दिखाए रे-ऽऽ॥2235॥

(38) अशुभ भाव जो यहाँ धरें, वे ही प्राणी नरक पड़ें-2
अशुभ वस्तुएँ उन्हें मिलें-ऽऽ
आपस में अतिक्रोध करें, मारामारी नित्य करें-2
सबसे ज्यादा दुख हो-3 बस वहीं दिखाएँ रे-ऽऽ॥2236॥

(39) पहले सगा यहाँ था जो, हो जाता है दुश्मन वो-2
नरक गति में जाये जो-ऽऽऽ
क्रुद्ध हो करके घात करे, ऐसे दुख बहुकाल सहे-2
नरकों की पीड़ा हो-3 कह कोइ न पाये रे-ऽऽ॥2237॥

(40) नरक गति से निकला जो, आया तिर्यग्गति में वो-2
दुख सहता है गर्भ में वो-ऽऽ,
छेदन भेद न मारण दुख, रंचमात्र नहिं आतम सुख-2
तिर्यंच गति में हो-3 अति दुःख दिखाएँ रे-ऽऽ॥2238॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–ऽऽ
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–ऽऽ

(41) एक दूसरे को मारें, मार–मारकर खा जायें–2
मानव भी उनको खायें–ऽऽ
असमय में मरने के दुख, सभी जगह अति भय के दुख–2
ऐसे दुखों को हो–3 सह–सह दुख पाये रे–ऽऽ॥2239॥

(42) माँ बच्चे को खा जाये, बिल्ली चूहा भय खाये–2
दारुण दु:ख नजर आये–ऽऽ
कौन करे उनकी रक्षा, लगे न इक पल भी अच्छा–2
फिरता है मारा हो–3 मरता ही जाये रे–ऽऽ॥2240॥

(43) भूखा दुखी फिरे मारा, प्यासा तड़पे दुखियारा–2
भोजन मिले न पय प्यारा–ऽऽ
उदर अग्नि से जलता है, भूखा प्यासा मरता है–2
कष्टों के दरिया हो–3 में जान गँवाए रे–ऽऽ॥2241॥

(44) तिर्यग्गति में दु:ख सहे, निकल के यहाँ मनुष्य हुए–2
लब्धि अपर्याप्तक हुए–ऽऽ
सम्मूर्छन में जन्म लिया, अल्पकाल में मरण किया–2
अन्तर्मुहूर्त में हो–3 ही मर–मर जाये रे–ऽऽ॥2242॥

(45) गर्भित रहे सिकुड़ करके, जाते ही अति दु:ख सहे–2
कभी गर्भ में यहाँ मरे–ऽऽ
जन्म समय अति दुक्ख यहाँ, कैसे उनको कहें यहाँ–2
नौ–दस महिने तक, हो–3 ये दुक्ख उठाये रे–ऽऽ॥2243॥

(46) पैदा हुए अनाथ हुए, कोइ न तेरे साथ हुए–2
जूठन खाते फिरे हुए–ऽऽ
भीख माँगकर यहाँ जिये, जीवन भर ये दु:ख लिये–2
इक पल भी सुख की हो–3 नहिं लहर दिखाए रे–ऽऽ॥2244॥

(47) पाप उदय से जन्म लिया, आकर के फिर पाप किया–2
पुन: पुन: फिर जन्म लिया–ऽऽ
घर परिवार बनाने में, खाने और कमाने में–2
धर्म जीवन में हो–3 ये नहिं अपनाये रे–ऽऽ॥2245॥

(48) विरले ही कुछ लोग यहाँ, दान पुण्य नित करें यहाँ–2
व्रत तप भी कुछ धरें यहाँ–ऽऽ
समदर्शन व्रत पाते हैं, कषाय को नश जाते हैं–2
उनके जीवन में हो–3 कुछ श्रेष्ठ दिखाए रे–ऽऽ॥2246॥

(49) पुण्य–पाप संग चलता है, जीवन उसमें ढ़लता है–2
फल दोनों का मिलता है–ऽऽ
कभी पुण्य से भोग मिलें, कभी दुक्ख संयोग मिलें–2
पुण्य बढ़ाओ हो–3 ये समझ में आये रे–ऽऽ॥2247॥

(50) जीवन में सुख ही सुख हो, इक पल कभी नहीं दुख हो–2
ऐसा होता नहीं अहो–ऽऽ
सब ही सुख ही सुख चाहें, रंच नहीं दुख को चाहें–2
चाहें, मिल जाये हो–3 ये पुण्य बताए रे–ऽऽ॥2248॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(51) शादी नहीं हुई आकर, हुई बन गये खुद चाकर–2
पुत्र हुआ नहिं सालों भर–SSS
हुआ तो रोगी पुत्र हुआ, जीवन भर फिर दुक्ख हुआ–2
सुख की चाहत में हो–3 दुख ही बढ़ जाये रे–SS।।2249।।

(52) रोग रहित तन मिला यहाँ, मिली गरीबी खूब यहाँ–2
धन मिलने पर रोग यहाँ–SS
छोटी वय में मरे यहाँ, कोई सुख नहिं मिला यहाँ–2
दुख की ज्वाला में हो–3 जीवन जल जाये रे–SS।।2250।।

(53) किसी की स्त्री कलह करे, पुत्र किसी का व्यसन करे–2
बैर किसी का पुत्र धरे–SS
किसी का पुत्र जुआ खेले, पुत्री दुराचरण मेले–2
जीवन में ऐसे हो–3 दुख बहुत समाएँ रे–SS।।2251।।

(54) पुत्र किसी का मर जाता, कुटुंब आग में जल जाता–2
पिता भाई भी मर जाता–SS
प्रिय स्त्री भी मर जाये, दुख ही दुख तब नजराए–2
दुक्खों की सीमा हो–3 नहिं कोई बताए रे–SS।।2252।।

(55) कई दुखों को सहता है, फिर भी धर्म न करता है–2
मन से पाप न तजता है–SS
छोड़े नहिं आरंभ यहाँ, पापों में नित संग यहाँ–2
मानव बनकर भी हो–3 सुख समझ न पाए रे–SS।।253।।

(56) हो धनवान यहाँ निर्धन, धनिक यहाँ होता निर्धन–2
अक्सर ये हो आये दिन–SS
राजा होता रंक यहाँ, रंक को मिले राज्य यहाँ–2
नौकर भी इक दिन हो–3 मालिक बन जाये रे–SS।।2254।।

(57) मित्र–शत्रु हो जाते हैं, शत्रु–मित्र हो जाते हैं–2
पाप–पुण्य जब आते हैं–SS
कर्मोदय के खेल यहाँ, सुख–दुख रूपी जेल यहाँ–2
भव का स्वभाव हो–3 ऐसा बतलायें रे–SS।।2255।।

(58) व्रत कर अच्छे कर्म किये, इसके फल से देव बने–2
भोग विषय में वहाँ लगे–SS
इन्द्रों की देखी ऋद्धि, क्लेश युक्त हो गइ बुद्धि–2
मन ही मन इससे हो–3 निज दु:ख बढ़ाए रे–SS।।2256।।

(59) तृष्णा तब बढ़ जाती है, जब देव गति मिल जाती है–2
मृत्यु उसे सताती है–SS
छूटेंगे सब भोग यहाँ, क्या कर लेंगे लोग यहाँ–2
भोगी को भोग हो–3 अमृत नजराए रे–SS।।2257।।

(60) तन से मन के दुक्ख बड़े, मन में हो सब क्लेश अरे–2
मन दुखिया सब दुक्ख करे–SS
देवगति में ऋद्धि दिखें, जिन्हें देख मन ताप करे–2
ऊपर देवों में हो–3 भी दुक्ख दिखाये रे–SS।।2258।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(61) देवों का मन हर ले जो, ऐसे विषय भोगमय वो-2
सुख विषयों में लगता हो-ऽऽ
जो सुख, पैदा कर दे दुख, कैसे उसको कह दें सुख-2
सुख के विषयों से हो-3 दुख बाहर आये रे-ऽऽ॥2259॥

(62) कर परमार्थ विचार यहाँ, ये संसार असार यहाँ-2
रंच मात्र नहिं सार यहाँ-ऽऽ
निश्चय नय से सोच यहाँ, कौन सुखी दिख रहा यहाँ-2
दुख के सागर में हो-3 सुख नजर न आये रे-ऽऽ॥2260॥

(63) पाप कर्म का उदय रहे, राजा मल में कीट बने-2
उस विष्ठा में रति करे-ऽऽ
वहाँ नहीं मरना चाहे, मोह वहाँ भी दिखलाये-2
मोही दुनियाँ में हो-3 सुख कहीं न पाये रे-ऽऽ॥2261॥

(64) पुत्र भाई हो जाता है, भाई पुत्र हो जाता है-2
पिता, पति हो जाता है-ऽऽ
देव भाई हो जाता, भाई पति भी हो जाता-2
सारे ही नाते हो-3 भव में हो जाएँ रे-ऽऽ॥2262॥

(65) इतने नाते होते हैं, कई दुखों को ढ़ोते हैं-2
इक भव में ही होते हैं-ऽऽ
धर्म बिना जो जियें यहाँ, उनकी हम क्या कहें यहाँ?-2
धर्म ही भव का हो-3 भ्रम दूर कराए रे-ऽऽ॥2263॥

(66) द्रव्य-क्षेत्र संसार यहाँ, काल-भाव में सार कहाँ-2
भव ये पंच संसार यहाँ-ऽऽ
होता जब मिथ्यात्व यहाँ, मिले पंच संसार यहाँ-2
मिथ्यात्व जाये हो-3 तो भटकन जाये रे-ऽऽ॥2264॥

(67) जीव में हो मिथ्यात्व जहाँ, और कषाय हो संग यहाँ-2
कर्मों का हो बंध यहाँ-ऽऽ
नो कर्मों को ग्रहण करे, और उन्हें भी त्याग करे-2
ऐसा करते ही हो-3 कई काल गुजारे रे-ऽऽ॥2265॥

(68) सभी प्रदेशों में भ्रमकर, जन्म धरे हैं मर-मर कर-2
छोड़ा न इक प्रदेश भर-ऽऽ
लोकाकाश प्रदेश सभी, करे भ्रमण से पूर्ण तभी-2
क्षेत्र परिवर्तन हो-3 पूरा हो जाये रे-ऽऽ॥2266॥

(69) उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी, प्रथम समय से जन्म कड़ी-2
अंत समय तक क्रमिक बड़ी-ऽऽ
सब समयों में जन्म लिया, और यहाँ पर मरण किया-2
काल परिवर्तन हो-3 इसको बतलाएँ रे-ऽऽ॥2267॥

(70) चारों गति में जन्म धरे, क्रम से अधिक वो उम्र धरे-2
क्रम से सारे जन्म धरे-ऽऽ
कोई उम्र नहीं छूटे, क्रम की लिंक नहीं टूटे-2
भव का परिवर्तन हो-3 तब ही हो पाये रे-ऽऽ॥2268॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(71) थोड़ी, ज्यादा उम्र मिली, ज्ञान ज्योति नहिं वहाँ खिली-2
योगों की नहिं शक्ति मिली-ऽऽ
मन में तीव्र कषाय रहीं, भव का भ्रमण न रोक सकीं-2
ऐसे भावों से हो-3 भव बढ़ता जाये रे-ऽऽ॥2269॥

(72) दुक्खों का व्यापार यहाँ, पंच भेद संसार यहाँ-2
भटकाये ये कहाँ कहाँ?-ऽऽ
मिथ्याभाव अनादि से, हों कषाय आजादी से-2
ज्ञान से भव में हो-3 सद्राह दिखाये रे-ऽऽ॥2270॥

(73) भव स्वरूप को जान यहाँ, सम्यक् व्रत को धार यहाँ-2
त्याग मोह, कर ध्यान यहाँ-ऽऽ
शुद्धातम का ध्यान करो, जगत भ्रमण का नाश करो-2
तब ही इस भव से हो-3 तू निजात पाये रे-ऽऽ॥2271॥

एकत्वानुप्रेक्षा-

(74) जीव अकेला आता है, यहाँ अकेला जाता है-2
वृद्ध युवापन पाता है-ऽऽ
तन को ग्रहण करे आकर, मरे बुढ़ापे को पाकर-2
कोई भी दुख में हो-3 नहिं साथ निभाए रे-ऽऽ॥2272॥

(75) दुख-संताप यहाँ पाता, रोग शोक एकल पाता-2
नरकों में एकल जाता-ऽऽ
मन में दुख एकल पाता, सुख भी एकल ही पाता-2
ज्ञानी को ये सब हो-3 अनुभव में आये रे-ऽऽ॥2273॥

(76) पुण्य अकेला करे यहाँ, कर्म अकेला नशे यहाँ-2
देवों के सुख भरे यहाँ-ऽऽ
मोक्ष अकेला जाता है, ज्ञान अकेला पाता है-2
साथी सब होकर हो-3 नहिं साथ दिखाएँ रे-ऽऽ॥2274॥

(77) अज्ञानी नित मोह करे, पर में निरत ममत्व धरे-2
परिवारी अपना समझे-ऽऽ
दुख में कोई साथ न दे, लेशमात्र दुख नहीं हरे-2
मोही बनकर के हो-3 नित पाप कमाये रे-ऽऽ॥2275॥

(78) सच्चा साथी धर्म यहाँ, ले जाता है स्वर्ग यहाँ-2
दूर करे दुख दर्द यहाँ-ऽऽ
धर्म हैं दश मम् मित्र परम, दिलवाते हैं श्रेष्ठ करम-2
इनसे हरदम ही हो-3 तुम प्रेम बढ़ाओ रे-ऽऽ॥2276॥

(79) हरदम करो प्रयत्न यहाँ, जानो निज के रत्न यहाँ-2
करो ज्ञान में यत्न यहाँ-ऽऽऽ
ज्ञान रत्न मिल जायेगा, तन धन व्यर्थ हो जायेगा-2
निर्मोही बनकर हो-3 निजरूप निहारो रे-ऽऽ॥2277॥

अन्यत्वानुप्रेक्षा-

(80) कर्म उदय में आता है, इस तन को दिलवाता है-2
मात-पिता मिलवाता है-2
ये सब तन से भिन्न रहें, गुरुवर हम से नित्य कहें-2
तन धन और परिजन हो-3 सब भिन्न दिखाएँ रे-ऽऽ॥2278॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(81) धन वैभव ऐश्वर्य यहाँ, हाथी धन रथ खूब यहाँ-2
स्त्री सुत भाई बहन यहाँ-ऽऽ
ये आतम से भिन्न दिखें, मूरख फिर भी राग करें-2
ज्ञान मूरखता हो-3 को दूर हटाए रे-ऽऽ॥2279॥

(82) जीव व पुद्गल अलग यहाँ, चिंतन अनुभव करे यहाँ-2
भेदज्ञान हो उसे यहाँ-ऽऽ
यही ज्ञान गुणकारी है, सबको अति सुखकारी है-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 व्रतरत्न दिलाये रे-ऽऽ॥2280॥

अशुचित्वानुप्रेक्षा-

(83) तन जैसा अपवित्र यहाँ, हमें न कुछ भी दिखा यहाँ-2
बहुजीवों का पिण्ड यहाँ-ऽऽ
विकलत्रय बहु जीव भरे, दुर्गन्धित मल मूत्र अरे-2
छूकर हर वस्तु हो-3 अपवित्र हो जाये रे-ऽऽ॥2281॥

(84) अच्छे प्रिय स्वादिष्ट यहाँ, रसयुत सुंदर इष्ट यहाँ-2
मन में रहे प्रविष्ट यहाँ-ऽऽ
वे तन छू अपवित्रित हों, घिनकारी दुर्गन्धित हो-2
ऐसे इस तन से हो-3 क्यों प्रीति लगाये रे-ऽऽ॥2282॥

(85) विधि ने दृश्य दिखाया है, तन अपवित्र बनाया है-2
राग यहाँ मिटवाया है-ऽऽ
लेकिन मानव मूर्ख हुआ, तन में ही भरमाया है-2
तन की सेवा में हो-3 निज आत्म लगाये रे-ऽऽ॥2283॥

(86) तन पाकर यूँ राग करें, जैसे पहली बार मिले-2
आदर और सत्कार करे-ऽऽ
निशदिन इसका ध्यान धरे, समय इसी में ही गुजरे-2
तन को तज खुद से हो-3 अब प्रीति लगाओ रे-ऽऽ॥2284॥

(87) निज तन से अनुराग नहीं, पर से उसको राग नहीं-2
होगा उसे विराग यहीं-ऽऽ
रत्नत्रय को भायेगा, आत्मध्यान वो पायेगा-2
इकदिन आतम को हो-3 वह शुद्ध बनाये रे-ऽऽ॥2285॥

आस्रवानुप्रेक्षा-

(88) मन वच काय त्रियोग चलें, मोहकर्म भी साथ चले-2
उसको आस्रव सभी कहें-ऽऽ
आत्मप्रदेश का हलन-चलन, अथवा कम्पन स्पन्दन-2
इसको ही गुरुवर हो-3 आस्रव बतलाएँ रे-ऽऽ॥2286॥

(89) मोह कर्म का उदय यहाँ, गलत करे परिणाम यहाँ-2
पैदा करे कषाय यहाँ-ऽऽ
पाप कर्म नित करवाएँ, ये ही आस्रव कहलायें-2
आस्रव दुनियाँ में हो-3 सबको भटकाये रे-ऽऽ॥2287॥

(90) होती मंद कषाय सभी, पुण्यास्रव हो बंध तभी-2
ऐसा होता कभी-कभी-ऽऽ
तीव्र कषाय से पापास्रव, मंदकषाय से पुण्यास्रव-2
दोनों ही आस्रव हो-3 सुख-दुख दिलवाएँ रे-ऽऽ॥2288॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(91) सबसे प्रिय वचन बोले, दुर्जन को भी शुभ बोले-2
ज्ञान नेत्र खुद ही खोले-ऽऽ
गुण को करता ग्रहण यहाँ, मंद कषायी रहे यहाँ-2
निर्मल परिणामी हो-3 ये भाव बनाये रे-ऽऽ॥2289॥

(92) कहे पूज्य में दोष यहाँ, निजी प्रशंसा करे यहाँ-2
वैर धरे बहुकाल यहाँ-ऽऽ
तीव्र कषायी के लक्षण, कहते हैं सबसे गुरुजन-2
इनसे पापास्रव हो-3 मिथ्यात्व समाये रे-ऽऽ॥2290॥

(93) सभी आस्रवों को जाना, मिथ्या कषाय पहचाना-2
फिर भी एक नहीं माना-ऽऽ
इन्हें छोड़ता नहीं यहाँ, ज्ञान समझ तो व्यर्थ यहाँ-2
त्यागे बिन आस्रव हो-3 कैसे रुक पायें रे-ऽऽ॥291॥

(94) पंच तजे मिथ्यात्व यहाँ, बारह अविरति छोड़ यहाँ-2
कषाय योग न पाल यहाँ-ऽऽ
इनका त्याग करेंगे जब, आस्रव यहाँ रुकेगे तब-2
तब ही आस्रव का हो-3 शुभ सार दिखाये रे-ऽऽ॥2292॥

संवरानुप्रेक्षा-

(95) काम यहाँ वो कर जायें, जिससे आस्रव रुक जायें-2
वो ही संवर कहलायें-ऽऽ
कषाय जय सम्यक्त्व करो, योग अभाव व्रत महा धरो-2
इन सबसे संवर हो-3 जीवन में आये रे-ऽऽ॥2293॥

(96) गुप्ति, समिति, दश धर्म यहाँ, परिषह जय चारित्र यहाँ-2
अनुप्रेक्षायें धार यहाँ-ऽऽ
ये संवर के कारण हैं, ये ही कर्म निवारण है-2
संवर जीवन में हो-3 निर्जरा कराये रे-ऽऽ॥2294॥

(97) योग प्रवृत्ति रुक जाये, यही गुप्ति है कहलाये-2
हरे प्रमाद समिति आये-ऽऽ
भाव अहिंसा धर्म यहाँ, संयम है चारित्र यहाँ-2
तत्त्वों का चिंतन हो-3 भावना बताएँ रे-ऽऽ॥2295॥

(98) भूख प्यास को सहन करें, गर्मी सर्दी सहन करें-2
उन्हें परीषह जयी कहें-ऽऽ
ज्ञानी समता भाव धरें, शांत भाव से सहन करें-2
उनमें ही संवर हो-3 का तत्त्व दिखाये रे-ऽऽ॥2296॥

(99) मोह राग को छोड़ यहाँ, धर्मध्यान से जोड़ यहाँ-2
शुक्लध्यान अनमोल यहाँ-ऽऽ
निज से निज में लीन रहे, वो उत्तम चारित्र अरे-2
इसके बिन प्राणी हो-3 भव दुक्ख उठाये रे-ऽऽ॥2297॥

(100) संवर कारण नहीं धरे, नहीं आचरण यहाँ करे-2
सोच करे नहिं भाव धरे-ऽऽ
वह चिरकाल दुखी होता, दुख के बीज नये बोता-2
ऐसे ही इंसां हो-3 दुख ही दुख पायें रे-ऽऽ॥2298॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(101) विषयों में आसक्त नहीं, उनमें यहाँ प्रवृत्त नहीं-2
भोगों से अतिदूर यहीं-2
निश्चय वो संवर करता, ऐसा मुनि अघ को हरता-2
संवर का भाव हो-3 निर्जरा कराये रे-ऽऽ॥2299॥

निर्जरानुप्रेक्षा-

(102) निंदा रहित निरभिमानी, बारह तप कर बहुमानी-2
राग रहित वे मुनि ज्ञानी-ऽऽ
कर्म निर्जरा करें यहाँ, हो विरक्त गुण वरें यहाँ-2
निर्जर अनुप्रेक्षा हो-3 शिवसुख दिलवाये रे-ऽऽ॥2300॥

(103) कर्म उदय में आते हैं, फल अपना दिखलाते हैं-2
फिर खुद ही गिर जाते हैं-ऽऽ
इसे निर्जरा कहते हैं, नियत समय तक रहते हैं-2
अपनी ही जाति हो-3 में फिर मिल जायें रे-ऽऽ॥2301॥

(104) निर्जर के दो भेद यहाँ, पहली है सविपाक यहाँ-2
दूजी है अविपाक यहाँ-ऽऽ
पहली सबमें होती है, दूजी तप से होती है-2
तप से जो होवे हो-3 वह मोक्ष दिलाए रे-ऽऽ॥2302॥

(105) उपशम क्षायिक भाव बने, तभी निर्जरा खूब करे-2
तपवृद्धि नित ध्यान धरे-ऽऽ
पहले धर्मध्यान करे, फिर वो शुक्लध्यान करे-2
ध्यान से कर्म हो-3 सब नष्ट हो जाये रे-ऽऽ॥2303॥

(106) मिथ्या से सम्यग्दृष्टि, सम्यक् से हैं अणुव्रती-2
अणुव्रती से महाव्रती-ऽऽ
हो निर्जरा असंख्याती, ज्यादा करता यहाँ व्रती-2
मन की निर्मलता हो-3 निर्जरा कराये रे-ऽऽ॥2304॥

(107) अनंतानुबंधी कषाय धरे, विसंयोजना यहाँ करे-2
दर्शनमोह का क्षपण करे-ऽऽ
उपशम श्रेणी चढ़े यहाँ, क्षपक श्रेणी जो वरे यहाँ-2
असंख्यात गुणमय हो-3 निर्जरा बताएँ रे-ऽऽ॥2305॥

(108) सयोग केवली करे यहाँ, अयोग केवली धरे यहाँ-2
असंख्याती निर्जरा यहाँ-ऽऽ
निर्जरा कर्म मिटाती है, मोक्ष राह दिलवाती है-2
ज्यादा हो जाये हो-3 तो ज्ञान बढ़ाए रे-ऽऽ॥2306॥

(109) जीते कषाय शत्रु को, गैरों के उपसर्गों को-2
पर से किये अनादर को-ऽऽ
दुर्वचनों को सहन करें, वही निर्जरा बहुत करे-2
ऐसे मुनियों को हो-3 शिवसुख मिल जाये रे-ऽऽ॥2307॥

(110) पूर्व जन्म में पाप किया, उसका फल ये प्राप्त किया-2
समता से वो सहन किया-ऽऽ
निर्मल अब परिणाम करें, पूर्व कर्म से मुक्ति वरें-2
ऐसे मुनिवर ही हो-3 सब कर्म नशायें रे-ऽऽ॥2308॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(111) तन से नहीं ममत्व करे, ये तन तो अपवित्र अरे-2
इससे अब शुभ कार्य करे-ऽऽ
रत्नत्रय धर धर्म धरे, अविनाशी पद प्राप्त करे-2
ऐसे मुनि को ही, हो-3 हो बहुत निर्जरा रे-ऽऽ॥2309॥

(112) इन्द्रिय मन वश करे यहाँ, अघनिंदा नित धरे यहाँ-2
गुणी, प्रशंसा करे यहाँ-ऽऽ
ज्ञानी का गुणगान करे, श्रावक का यश यहाँ कहे-2
ऐसे मुनि को ही हो-3 तो बहुत निर्जरा रे-ऽऽ॥2310॥

(113) रहें निर्जरा के कारण, उसमें तत्पर साधुजन-2
उनका समझो सफल जनम-ऽऽ
वो मुनि पाप झड़ाता है, अपना पुण्य बढ़ाता है-2
वो ही इस भव से हो-3 छुटकारा पाये रे-ऽऽ॥2311॥

(114) रमण करे निज आतम में, समता रूपी भावों में-2
वीतराग परिणामों में-ऽऽ
पाप कर्म को जीता है, फिर मुनिचर्या गीता है-2
ऐसे मुनिवर ही हो-3 शिवपद पा जायें रे-ऽऽ॥2312॥

लोकानुप्रेक्षा-

(115) ऊर्ध्व-मध्य-अधोलोक यहाँ, तीन लोक संसार यहाँ-2
जिसमें भटके जीव यहाँ-ऽऽऽ
नहीं किसी ने बनवाया, धारण कभी न करवाया-2
अनंत प्रदेशी हो-3 आकाश बताएँ रे-ऽऽ॥2313॥

(116) जिसमें हो छः द्रव्य यहाँ, कहते उसको लोक यहाँ-2
द्रव्य, लोक हैं नित्य यहाँ-ऽऽ
जीव अजीव हैं द्रव्य भरे, लोक अनादि अनंत कहें-2
स्वाभाविक है ये हो-3 भगवंत बताएँ रे-ऽऽ॥2314॥

(117) द्रव्य परिणमन करते हैं, ये स्वभाव द्रव्यों के हैं-2
नित्य अनित्य भी कहते हैं-ऽऽ
लोक परिणमन करे यहाँ, पर्यायों में ढ़ले यहाँ-2
हरक्षण पर्यायें हो-3 आयें और जायें रे-ऽऽ॥2315॥

(118) मध्य लोक इक राजू का, ब्रह्मलोक पच राजू का-2
अधोलोक सप्त राजू का-ऽऽ
सबसे ऊपर इक राजू, असंख्यात योजन राजू-2
ऐसा ये लोक हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-ऽऽ॥2316॥

(119) उत्तर दक्षिण पहचानो, सात राजू विस्तृत जानो-2
ऊँचाई चौदह जानो-ऽऽ
तीन सौ तेतालीस योजन, लोक का घनफल तुम मानो-2
ऐसा विस्तार हो-3 जिनवर बतलाएँ रे-ऽऽ॥2317॥

(120) सप्त राजू मेरु नीचे, नरक सात नीचे नीचे-2
सात राजू ऊपर नीचे-ऽऽ
मध्यलोक इक लख योजन, मेरु एक लाख योजन-2
गुरुवर सबको ही हो-3 खुश हो समझायें रे-ऽऽ॥2318॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(121) जीव-अजीव पदार्थ रहें, उसे यहाँ पर लोक कहें-2
प्राणी जिसमें भ्रमण करें-ऽऽ
इसमें है इक लोक शिखर, रहते सिद्ध सभी जिस पर-2
लोक शब्द को हो-3 लुक धातु बनाए रे-ऽऽ॥2319॥

(122) एक इन्द्रिय सर्वत्र भरे, त्रस नाली में त्रसित रहें-2
इसे सभी जन लोक कहें-ऽऽ
उसके बाहर जीव नहीं, कहते हैं भगवंत यहीं-2
जीव चराचर हो-3 इसमें नजराएँ रे-ऽऽ॥2320॥

(123) जीव हैं बादर सूक्ष्म यहाँ, पर्याप्त अपर्याप्त यहाँ-2
दोनों लोक में व्याप्त यहाँ-ऽऽऽ
बादर लें आधार यहाँ, सूक्ष्म न ले आधार यहाँ-2
लोकाकाश में हो-3 सब जीव समाये रे-ऽऽ॥2321॥

(124) पृथ्वी जल अग्निकायिक, वायु व वनस्पति कायिक-2
बादर और सूक्ष्मकायिक-ऽऽ
वनस्पति द्वय भेद कहे, साधारण प्रत्येक लहे-2
सारे ये जीव हो-3 ब्रह्माण्ड समाये रे-ऽऽ॥2322॥

(125) वनस्पति द्वय भेद कहें, अनादि साधारण कहे-2
सादि साधारणी कहे-ऽऽ
बादर सूक्ष्म इन्हें जानो, श्रद्धा से इनको मानो-2
जिनवर की बातें हो-3 अति गूढ़ बताएँ रे-ऽऽ॥2323॥

(126) एक साथ जो जियें मरें, श्वांस आहार ग्रहण करें-2
शरीर आयु इक साथ ग्रहें-ऽऽ
साधारण वे जीव यहाँ, जिनको कहें निगोद यहाँ-2
नंत कालों तक हो-3 ऐसे दुख पाएँ रे-ऽऽ॥2324॥

(127) पृथ्वी - जल से - अग्नि से, हो प्रतिघात न वायु से-2
समझो वे सब सूक्ष्म कहे-ऽऽ
जिनका इनसे घात यहाँ, वे समझो स्थूल यहाँ-2
ऐसे ये भेद हो-3 स्थावर में लगाओ रे-ऽऽ॥2325॥

(128) वनस्पति द्वय भेद यहाँ, साधारण-प्रत्येक यहाँ-2
त्रस के भी द्वय भेद यहाँ-ऽऽ
एक कहे हैं विकलेन्द्रिय, एक समझ तू सकलेन्द्रिय-2
जीवों के सारे हो-3 ये भेद बताएँ रे-ऽऽ॥2326॥

(129) जल-थल-नभचर भेद यहाँ, पंचेन्द्रिय के समझ यहाँ-2
इनके भी द्वय भेद यहाँ-ऽऽ
मन बिन एक असैनी हैं, मन से सहित वो सैनी हैं-2
पंचेन्द्रिय जीव हो-3 चउगति में पायें रे-ऽऽ॥2327॥

(130) द्वय भेदी तिर्यंच यहाँ, एक गर्भ से जन्म यहाँ-2
इक सम्मूर्च्छन जन्म यहाँ-ऽऽ
भोगभूमि में गर्भज हैं, वे थलचर और नभचर हैं-2
भोगभूमि में हो-3 सैनी ही पायें रे-ऽऽ॥2328॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(131) आठो गर्भज समझ यहाँ, पर्याप्त अपर्याप्त यहाँ-2
सोलह होते भेद यहाँ-ऽऽ
तेइस सम्मूर्च्छन के हैं, निवृत्त्य लब्ध्य के उनत्तर हैं-2
तिर्यक् के पिचासी हो-3 भेदों को बताएँ रे-ऽऽ॥2329॥

(132) आर्य म्लेच्छ के खण्डों में, भोग-कुभोग भूमियों में-2
चार भेद ये मानव में-ऽऽ
निर्वत्य पर्याप्त कहे, दूजे हैं पर्याप्त कहे-2
इनको जो जाने हो-3 वो ज्ञान बढ़ाए रे-ऽऽ॥2330॥

(133) सम्मूर्च्छन हों जीव यहाँ, आर्यखण्ड में सदैव यहाँ-2
लब्ध्यपर्याप्त जीव यहाँ-ऽऽ
देव नारकी पर्याप्तक, और निर्वृत्यपर्याप्तक-2
दो भेद द्वय गति में हो-3 जीवों के बताएँ रे-ऽऽ॥2331॥

(134) आहार शरीर और इन्द्रिय में, श्वासोच्छ्वास वचन मन में-2
हो प्रवृत्ति परिणमने में-ऽऽ
शक्ति को जो पूर्ण करे, उसे सभी पर्याप्त कहें-2
शक्ति अपूर्ण हो-3 अपर्याप्त कहाये रे-ऽऽ॥2332॥

(135) छः पर्याप्ति पूर्ण रहें, उसे यहाँ पर्याप्त कहें-2
पूर्ण न हो अपर्याप्त कहें-2
सबकी शक्ति अलग यहाँ, सबके कार्य भी अलग यहाँ-2
पर्याप्त होते हो-3 उपयोग आ जाये रे-ऽऽ॥2333॥

(136) पर्याप्ति जीव ग्रहण करे, तब तक मन नहिं पूर्ण करे-
निर्वृत्यपर्याप्त कहे-ऽऽ
मन होता जब पूर्ण यहाँ, होता तब पर्याप्त यहाँ-2
सैनी पंचेन्द्रिय हो-3 की बात बताएँ रे-ऽऽ॥2334॥

(137) एक श्वांस में अठ दश बार, जन्म मरण सहता दुख भार-2
लब्ध्यपर्याप्तक की धार-ऽऽ
पर्याप्ति नहिं पूर्ण करे, पूर्ण के पहले यहाँ मरे-2
लब्धि अपर्याप्तक हो-3 ये जीव कहाएँ रे-ऽऽ॥2335॥

(137) लब्ध्यपर्याप्तक जीव यहाँ, कभी न हो पर्याप्त यहाँ-2
एकेन्द्रिय विकलिंद यहाँ-ऽऽ
चार-पाँच पर्याप्ति उन्हें, पंचेन्द्रिय को छः जानें-2
ऐसा जिनवर हो-3 हमको बतलाएँ रे-ऽऽ॥2336॥

(139) योग, इन्द्रिय, श्वांसायु यहाँ, इनको पाकर जन्म यहाँ-2
हो वियोग तो मरण यहाँ-ऽऽ
इनको कहते प्राण सभी, होते है दश प्राण सभी-2
इनसे ही जीवन हो-3 और मरण बताएँ रे-ऽऽ॥2337॥

(140) एकेन्द्रिय के चार कहें, दो त्रय के छः सात कहें-2
चार इन्द्रिय के आठ कहें-ऽऽ
असंज्ञियों के नौ होते, संज्ञी के दश प्राण होते-2
प्राणों के कारण हो-3 प्राणी कहलाए रे-ऽऽ॥2338॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(141) एकेन्द्रिय में तीन रहें, दो, त्रय में चउ पंच रहें-2
चार इन्द्रिय में छः प्राण हैं-ऽऽ
पंचेन्द्रिय में सात कहे, अपर्याप्त हैं उन्हें कहे-2
प्राणों की कीमत हो-3 प्राणी ही जाने रे-ऽऽ॥2339॥

(142) दो-त्रय-चउ इन्द्रिय यहाँ, कर्मभूमि में रहें यहाँ-2
भोग भूमि नहिं रहें यहाँ-ऽऽ
अंत के आधे द्वीपों में, अंतिम में सारे सागर में-2
ये सब होते हैं हो-3 ऐसा बतलाएँ रे-ऽऽ॥2340॥

(143) अंतिम द्वीप के आधे में, ढ़ाई द्वीप के बाहर में-2
हैं तिर्यंच सब द्वीपों में-ऽऽ
समझो उन्हें हैमवत सम, उनके तिर्यंचों के सम-2
आयु तन भोजन हो-3 उनके सम होवे रे-ऽऽ॥2341॥

(144) लवणोदधि, कालोदधि में, स्वयंभूरमण समुद्र में-2
जलचर जीव रहें इनमें-ऽऽऽ
बीच में समुद्र हैं जितने, जलचर जीव नहीं उनमें-2
सबको ही गुरुवर हो-3 ये बात बताएँ रे-ऽऽ॥2342॥

(145) भवनवासी के भवन यहाँ, पंकभाग-खर रहें यहाँ-2
व्यंतर के भी रहें वहाँ-ऽऽ
तिर्यग्लोक में दोनों के, होते हैं आवास यहाँ-2
खर पंक के नीचे हो- नारकी बताएँ रे-ऽऽ॥2343॥

(146) तिर्यग् लोक इक राजू में, ज्योतिषियों के विमान में-2
कल्पवासी ऊर्ध्वलोक में-ऽऽ
नारकी अधोलोक में हैं, मानव मध्यलोक में है-2
ऐसा यह लोक हो-3 जिनदेव बताएँ रे-॥2344॥

(147) वायु अग्नि के जीव यहाँ, बादर और पर्याप्त यहाँ-2
कुछ कम लोक प्रमाण यहाँ-ऽऽ
घनावली का भाग कहा, असंख्यातवां समझ अहा-2
सिद्धांत ज्ञानी हो-3 ये हमें बताएँ रे-ऽऽ॥2345॥

(147) पृथ्वीकायिक जलकायिक, प्रत्येक वनस्पतिकायिक-2
सप्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित-ऽऽ
त्रस ये सारे जीव यहाँ, असंख्यात जगश्रेणी प्रमां-2
दुनियां में होते हो-3 ये जिन बतलाएँ रे-ऽऽ॥2346॥

(149) प्रत्येक वनस्पति कायिक, बादर लब्ध्यपर्याप्तक-2
असंख्यात लोक प्रमाणक हैं-ऽऽ
सूक्ष्म अपर्याप्तक जीव, असंख्यात लोक प्रमाणक हैं-2
सूक्ष्म पर्याप्तक हो-3 संख्यात गुणे हैं रे-ऽऽ॥2347॥

(150) सिद्ध जीव तो अनंत हैं, अनंतगुणे सिद्धों से हैं-2
उन्हें निगोदिया जीव कहें-ऽऽ
हैं अनंतवें भाग यहाँ, उनको कहा अभव्य यहाँ-2
जीवों की राशि हो-3 जिनवर बतलाएँ रे-ऽऽ॥2348॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(151) दो प्रकार मानव मानो, गर्भज–सम्मूर्च्छन जानो–2
संख्यात हैं गर्भज मानो–SSS
असंख्यात सम्मूर्च्छन हैं, कहते ऐसा जिनवर हैं–2
जिनवर की बातें हो–3 श्रद्धान् बढ़ाये रे–SS।।2349।।

(152) देव, नारकी जीव यहाँ, सम्मूर्च्छन मनुष्य यहाँ–2
सभी सांतर समझ यहाँ–SSS
बाकी सभी निरंतर हैं, कहते ये प्रभु शंकर हैं–2
धवला जी श्रुत में हो–3 विस्तृत बतलायें रे–SS।।2350।।

(153) मनुष्यों से नारकी यहाँ, नारकी से हैं देव यहाँ–2
असंख्यात मय गुणे यहाँ–SS
वनस्पति प्रत्येक यहाँ, देवों से असंख्यात यहाँ–2
जानो श्रुत पढ़कर हो–3 गुरुदेव बतायें रे–SS।।2351।।

(154) पंच इन्द्रिय से चउ इन्द्रिय, चउ इन्द्रिय से तेइन्द्रिय–2
तेइन्द्रिय से दो इन्द्रिय–SSS
दो इन्द्रिय से विशेष अधिक, जानो लब्ध्यपर्याप्तक–2
इन सबकी संख्या हो–3 असंख्यात बतायें रे–SS।।2352।।

(155) चार इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय से दो इन्द्रिय–2
दो इन्द्रिय से तेइन्द्रिय–SS
इनको पर्याप्तक मानो, क्रम से अधिक अधिक जानो–2
जाने बिन कोई हो–3 नहिं ज्ञान बढ़ाए रे–SS।।2353।।

(156) एकेन्द्रिय द्वय भेद यहाँ, समझो बादर सूक्ष्म यहाँ–2
बादर को तू जान यहाँ–SS
एक भाग पर्याप्तक हैं, बहुत भाग अपर्याप्तक हैं–2
बादर पर्याप्तक हो–3 कम बहुत बताएँ रे–SS।।2354।।

(157) सूक्ष्म जीव द्वय भेद कहे–पर्याप्त अपर्याप्त कहे–2
एक भाग अपर्याप्त रहे–SS
बहुत भाग पर्याप्त यहाँ, जानो ये सब भेद यहाँ–2
तब ही हिंसा के हो–3 हम भाव हटाऐं रे–SS।।2355।।

(158) पंच अनुत्तर से लेकर, सोलह स्वर्गों तक जाकर–2
संख्यात गुने देव सुखकर–SS
उससे नीचे पहले तक, गुने असंख्यात हरेक पटल–2
स्वर्गों में देव हो–3 संख्या बतलाएँ रे–SS।।2356।।

(159) प्रथम तल तक सप्तम से, संख्या नारकियों की है–2
असंख्य–असंख्य गुणी कहते–SS
प्रथम से सप्तम नरकों तक, बहुत बहुत हैं दुखदायक–2
पापों में रमता हो–3 वह नर्क में जाये रे–SS।।2357।।

(160) कल्पवासी देवों से यहाँ, भवनिक–व्यंतर देव यहाँ–2
असंख्यात गुने कहें यहाँ– SS
व्यंतर से ज्योतिषी यहाँ, कहते संख्यात गुने यहाँ–2
ऐसा शास्त्रों में हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–SS।।2358।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(161) साधारण प्रत्येक यहाँ, वनस्पति की उम्र यहाँ-2
उत्कृष्ट कहें गुरुदेव यहाँ-ऽऽ
अंतर्मुहूर्त साधारण की, दश हजार वर्ष प्रत्येक की-2
सूक्ष्म जीवों की हो-3 अन्तर्मुहूर्त बतायें रे-ऽऽ॥2359॥

(162) पृथ्वी बाइस हजार वर्ष, जल की सात सहस्र वर्ष-2
वायु की तीन हजार वर्ष-ऽऽ
तीन दिनों की अग्नि की, उत्कृष्ट आयु ये सबकी-2
इनको जो जाने हो-3 हिंसा तज जाये रे-ऽऽ॥2360॥

(163) बारह वर्ष दो इन्द्रिय की, उनचास दिन तीन इन्द्रिय की-2
छः महीने चार इन्द्रिय की-ऽऽ
तीन पल्य पंचेन्द्रिय की, उत्कृष्ट आयु कही इनकी-2
इनको जो जाने हो-3 वो ज्ञान बढ़ाए रे-ऽऽ॥2361॥

(164) लब्ध्यपर्याप्तक सबकी, छोटी बड़ी उम्र सबकी-2
जानो कितनी है किनकी-ऽऽ
मध्यमहीन मुहूर्त यहाँ, है उत्कृष्ट जघन्य यहाँ-2
अल्प आयु के हो-3 ये जीव बताएँ रे-ऽऽ॥2362॥

(165) देव नारकी आयु यहाँ, उत्कृष्ट और जघन्य यहाँ-2
बतलाएँ जिनदेव यहाँ-ऽऽ
उत्कृष्ट तेतीस सागर है, दश हजार वर्ष जघन्य है-2
जानें इनको हम हो-3 निज ज्ञान बढ़ाएँ रे-ऽऽ॥2363॥

(166) पृथ्वी अग्नि वायु यहाँ, जल अवगाहन कही यहाँ-2
अंगुल असंख्य भाग यहाँ-ऽऽ
वनस्पति की अवगाहन, उत्कृष्ट एक हजार योजन-2
श्रुत में गुरुवर ने हो-3 सबको बतलाए रे-ऽऽ॥2364॥

(167) द्वि इन्द्रिय शंख अवगाहन, उत्कृष्ट है बारह योजन-2
चउ इन्द्रिय की इक योजन-ऽऽ
तीन कोस त्रय इन्द्रिय की, पंचेन्द्रिय हजार योजन-2
महामत्स्य की हो-3 अवगाह बताएँ रे-ऽऽ॥2365॥

(168) सप्तम नरक की अवगाहन, पाँच सौ धनुष ऊँचा तन-2
कहते हैं ऐसा भगवन-ऽऽ
उससे ऊपर ऊपर तन, आधी आधी अवगाहन-2
छः से पहले तक हो-3 तू ज्ञान में लाये रे-ऽऽ॥2366॥

(169) भवनवासी में देव असुर, तन ऊँचा पच्चीस धनुष-2
नौ कुमार की दस धनुष-ऽऽ
व्यंतर की दस कही धनुष, ज्योतिषियों की सात धनुष-2
तन की अवगाहन हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-ऽऽ॥2367॥

(170) दो युगलों में सात हाथ है, चार युगलों में छः हाथ है-2
चार युगल में पाँच हाथ है-ऽऽ
दो युगलों में चार हाथ है, आगे आधा कम हाथ है-2
देवों के तन की हो-3 ऊँचाई बतायें रे-ऽऽ॥2368॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(171) अधो-मध्य ग्रैवेयक हैं, उपरिम ग्रैवेयक भी हैं-2
चौदह विमान में देव हैं-ऽऽ
उनकी ऊँचाई क्रम से, ढ़ाई हाथ, दो हाथ कहे-2
डेढ़ एक हाथ हो-3 ऊँचाई बताएँ रे-ऽऽ॥2369॥

(172) अवसर्पिणी में काल प्रथम, तीन कोस का मानव तन-2
भोगभूमि है काल प्रथम-ऽऽ
छठे काल के अंत समय, एक हाथ का रहता तन-2
छटवे काल में हो-3 नंगे मनु होवें रे-ऽऽ॥2370॥

(173) लब्ध्यपर्याप्त जीव यहाँ, सबसे लघु शरीर यहाँ-2
अंगुल असंख्य भाग यहाँ-ऽऽ
उसके भी हैं भेद कई, आगम से हो ज्ञान यहीं-2
चक्षु इन्द्रिय से हो-3 ये नजर न आयें रे-ऽऽ॥2371॥

(174) द्वे-ते चउ पंचिंद्रय का, छोटा तन पर्याप्त अहा-2
अंगुल असंख्य भाग कहा-ऽऽ
दो से त्रय-चउ इन्द्रिय का, संख्यात गुना कहा-2
जब भी जानोगे हो-3 आश्चर्य दिखाए रे-ऽऽ॥2372॥

(175) द्वि इन्द्रिय में अनुंधरी, तेइन्द्रिय में कुंथु कही-2
काणमक्षि चउइन्द्रि कही-ऽऽ
तंदुल मच्छर पंचेन्द्रिय में, छोटे तन सब इन्द्रिय में-2
जानेगा भव में हो-3 वह ज्ञान बढ़ाए रे-ऽऽ॥2373॥

(176) जीव की अवगाहन महान, निश्चय से है लोक प्रमाण-2
व्यवहार कहे शरीर प्रमाण-ऽऽ
संकोच-विस्तार शक्ति यहाँ, छोटा बड़ा करे यहाँ-2
शक्ति जानोगे हो-3 तब शक्ति पायें रे-ऽऽ॥2374॥

(177) जीव सर्वथा व्यापक है, सबमें इसका ही हक है-2
पर ऐसा नहिं दिखता है-ऽऽ
जीव बराबर है तन के, वचन हैं ऐसे जिनवर के-2
नय को जो जाने हो-3 तो समझ में आये रे-ऽऽ॥2375॥

(178) अग्नि ऊष्ण निज स्वभाव से, जीव ज्ञानमय स्वभाव से-2
ज्ञानी हुआ न वस्तु से-ऽऽ
ज्ञान आत्मा का गुण है, अलग न हो वो संबंध है-2
ज्ञानी को ऐसा हो-3 ही समझ में आये रे-ऽऽ॥2376॥

(179) ज्ञान जीव से भिन्न नहीं, गुण से गुणी है भिन्न नहीं-2
ये संबंध अभिन्न यहीं-ऽऽ
ज्ञान से होता भला यहाँ, पैदा करता कला यहाँ-2
ज्ञान आतम में हो-3 तादात्म्य बताएँ रे-ऽऽ॥2377॥

(180) ज्ञान, जीव में भेद यही, जीव गुणी गुण ज्ञान सही-2
इसीलिए हैं भेद सही-ऽऽ
ज्ञान जानता है सबको, ज्ञान जानता है खुद को-2
निज का हो ज्ञान हो-3 तो समझ में आये रे-ऽऽ॥2378॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(118) ज्ञान विकार है भूतों का, मान रहा है जो ऐसा-2
उसे भूत ने जकड़ लिया-ऽऽऽ
जीव बिना हो ज्ञान नहीं, ज्ञान जीव हो, रहे वहीं-2
जीव में ज्ञान हो-3 तादात्म्य बताएँ रे-ऽऽ॥2379॥

(182) संवेदन प्रत्यक्ष करे, फिर भी सिद्ध नहीं समझे-2
जीव न माने यहाँ अरे-ऽऽ
जिसको जीव नहीं जाने, उसे यहाँ कैसे माने-2
अनुभव संवेदन हो-3 बस जीव में आये रे-ऽऽ॥2380॥

(183) जीव नहीं यदि मानेंगे, सुख दुख कैसे जानेंगे-2
विषय नहीं पहचानेंगे-ऽऽ
जीव जानता सभी यहाँ, योग कषाय विशेष यहाँ-2
जीवन बिन कोई हो-3 कुछ जान न पाये रे-ऽऽ॥2381॥

(184) जीव अगर संकल्पमयी, तो यह है सुखदुक्ख मयी-2
सुख दुख है उपयोग मयी-ऽऽऽ
जीव है तन से मिला हुआ, जाने जो संकल्प हुआ-2
जैसा संकल्प हो-3 मन वैसा हो जाये रे-ऽऽ॥2382॥

(185) तन से है संश्लेष यहाँ, फिर भी करें न क्लेश यहाँ-2
जीव है मानव भेष यहाँ-ऽऽ
तन से मिल सब करता है, दोनों एक समझता है-2
ऐसा ही करते हो-3 बहुकाल बिताए रे-ऽऽ॥2383॥

(186) तन से मिला है, देख रहा, मिला है, फिर भी जान रहा-2
मिला है सुख दुख भोग रहा-ऽऽ
मिला हुआ पर चलता है, निज भावों का कर्ता है-2
तन में रहकर भी हो-3 निज भाव न छोड़े रे-ऽऽ॥2384॥

(187) मैं राजा मैं रंक यहाँ, दुर्बल मैं बलवान यहाँ-2
सेठ हूँ मैं हूँ दास यहाँ-ऽऽ
मान रहा जो निश्चय से, खुद को भूला है भय से-2
उसको गुरुदेव हो-3 मिथ्यात्व बताएँ रे-ऽऽ॥2385॥

(188) सब कर्मों का कर्ता है, जीव ही भव का कर्ता है-2
राग-द्वेष खुद हर्ता है-ऽऽ
काललब्धि के मिलने पर, स्वयं मोक्ष का कर्ता है-2
निश्चय से जीव हो-3 ज्ञायक कहलाये रे-ऽऽ॥2386॥

(189) कर्मफलों का भोक्ता है, सुख दुख रूप भोगता है-2
अलग-अलग फल होता है-ऽऽ
त्याग भाव जब लाता है, तब आतम का भोक्ता है-2
निश्चय से जीव हो-3 निज आत्म रमाये रे-ऽऽ॥2387॥

(190) तीव्र कषाय यहाँ करता, पाप कर्म तब ही भरता-2
दुक्खों को संचय करता-ऽऽ
उपशम भावों में आये, पुण्यकोश भरता जाये-2
भावों से जीव हो-3 सुख-दुख उपजाये रे-ऽऽ॥2388॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(191) खुद भव सागर तिरता है, सबको यहाँ तिराता है–2
तीर्थ वही कहलाता है–SS
रत्नत्रयधारी हैं तीर्थ, जो भवपार कराता है–2
दिव्य नौका में हो–3 बैठे तिर जाये रे–SS।।2389।।

(192) बहिरातम अंतरआतम, तीजा आतम परमातम–2
अर्हत् सिद्ध हैं परमातम–SS
बहिरातमपन छोड़ यहाँ, अंतर आतम जोड़ यहाँ–2
तब ही परमातम हो–3 का पथ दिख पाये रे–SS।।2390।।

(193) जीव–देह को एक कहे, तीव्र कषायें लिये हुए–2
मिथ्यात्व जिसके उदय रहे–SS
वो समझो बहिरातम है, अहंकार मय आतम है–2
इसको त्यागे बिन हो–3 नहिं धर्म सुहाये रे–SS।।2391।।

(194) आठ मदों से दूर यहाँ, जिन वचनों में शूर यहाँ–2
लखते हैं जो नूर यहाँ–SSS
देह–जीव में भेद करें, श्रद्धा जिन गुरु नित्य धरें–2
अंतर आतम ये हो–3 भव्यात्म कहायें रे–SS।।2392।।

(195) पंच महाव्रत युक्त यहाँ, धर्मशुक्ल का ध्यान यहाँ–2
जीते सभी प्रमाद यहाँ–SS
वीतरागता लखते हैं, नष्ट कषायें करते हैं–2
ये ही उत्कृष्ट हो–3 अंतरात्म कहायें रे–SS।।2393।।

(196) देशव्रती और महाव्रती, छठे गुणस्थानवर्ती–2
निरत रहें जिन की भक्ति–SS
मध्यम अंतर आत्म कहें, व्रत पालन में लीन रहे–2
ध्यानी बन करके हो–3 ये कर्म नशायें रे–SS।।2394।।

(197) अपनी निंदा करते हैं, प्रभु भक्ति रत रहते हैं–2
मोद गुणी से करते हैं–SS
अविरत सम्यग्दृष्टि यहाँ, जघन्य अंतर आत्म यहाँ–2
धीरे–धीरे यह हो–3 मुनि पद पा जायें रे–SS।।2395।।

(198) सब पदार्थ के ज्ञाता जो, हैं अरहंत विधाता वो–2
और एक हैं सिद्ध प्रभो–SS
दोनों ही शुद्धातम हैं, सकल–निकल परमातम हैं–2
इनको जो ध्याये हो–3 ज्ञाता बन जाये रे–SS।।2396।।

(199) हो कर्मों का नाश यहाँ, हो उत्पन्न स्वभाव यहाँ–2
उसको कहते यहाँ–SS
उपशम और क्षयोपशम का, नाश हुआ हो भाव यहाँ–2
उसको भी ज्ञानी हो–3 उत्कृष्ट बताएँ रे–SS।।2397।।

(200) जीव हमेशा शुद्ध रहे, तो फिर तप व्रत व्यर्थ कहे–2
जीव अनादि अशुद्ध रहे–SS
तप कर कर्म खपाता है, वही शुद्ध हो पाता है–2
ज्ञानी यह जाने हो–3 जब अनुभव लाए रे–SS।।2398।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(201) जीव सर्वथा शुद्ध होता, तो तन के दुख क्यों ढ़ोता-2
कर्मबीज फिर क्यों बोता-ऽऽ
कई रूप वह होता क्यों? राग-द्वेष मय बनता क्यों?-2
शुद्ध ही जीव हो-3 भगवान कहाये रे-ऽऽ॥2399॥

(202) अनादि काल से भ्रमे हुए, जीव कर्म से बंधे हुए-2
पाप पुण्य में लगे हुए-ऽऽ
कर्मबंध का छेद करें, वे ही आकर सिद्ध बनें-2
तब ही यह जीव हो-3 नितशुद्ध कहाये रे-ऽऽ॥2400॥

(203) भव में आत्म प्रदेशों का, और कर्मस्कन्धों का-2
मिल जाना ही बंध कहा-ऽऽ
इसी बंध में बंध सभी, कहते हैं गुरुदेव सभी-2
बंध हटाये हो-3 निर्बन्ध हो जाये रे-ऽऽ॥2401॥

(204) सभी द्रव्य में उत्तम है, गुण में जो सर्वोत्तम है-2
तत्त्वों में परमोत्तम है-ऽऽ
जीव को निश्चय से मानो, उत्तम से उत्तम जानो-2
जीव से उत्तम हो-3 कुछ नजर न आये रे-ऽऽ॥2402॥

(205) अंतस्तत्त्व है जीव यहाँ, बाकी हैं सब बाह्य यहाँ-2
सुख दुख जाने जीव यहाँ-ऽऽ
ज्ञान हिताहित जान रहा, बाह्य न पुद्गल जान रहा-2
जीव ही सबमें हो-3 उत्तम बतलाएँ रे-ऽऽ॥2403॥

(206) जिसमें हैं छः द्रव्य यहाँ, कहें जो लोकाकाश यहाँ-2
कई शक्ति से युक्त यहाँ-ऽऽ
सूक्ष्म और बादर पुद्गल, भरा हुआ आकाश विमल-2
द्रव्य जाने बिन हो-3 नहिं तत्त्व दिखाये रे-ऽऽ॥2404॥

(207) रूप गंध रस हो जिसमें, वर्ण भी होगा फिर उसमें-2
ये सब होते पुद्गल में-ऽऽ
इन्द्रिय उसको ग्रहण करें, इन्हें अनंतानंत कहें-2
पुद्गल की महिमा हो-3 यह जीव बताए रे-ऽऽ॥2405॥

(208) तन-मन-वचन बनाता है, श्वासोच्छ्वास दिखाता है-2
इन्द्रिय को रचवाता है-ऽऽ
ये पुद्गल उपकार यहाँ, जाने सब संसार यहाँ-2
पुद्गल साधन से हो-3 निज साध्य दिलाये रे-ऽऽ॥2406॥

(209) मोह परिणाम कराता है, राग-द्वेष दिखाता है-2
अज्ञ विचार बनाता है-ऽऽ
और कई उपकार कहें, पुद्गल के आधार कहें-2
पुद्गल नहिं होता हो-3 तो मुक्ति न पाये रे-ऽऽ॥2407॥

(210) जीव के हैं उपकार यहाँ, शिष्यों पर उपकार यहाँ-2
कर्मों पर उपकार यहाँ-2
जीव करे उपकार तभी, पुण्य पाप का उदय जभी-2
आपस में लोग हो-3 उपकार करायें रे-ऽऽ॥2408॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(211) पुद्गल में वो शक्ति दिखे, जिससे केवलज्ञान मिटे-2
जीव जगत में भ्रमण करे-2
पुद्गल कर्म कराता है, फिर जग में भटकाता है-2
ज्ञानी को ये सब हो-3 अनुभव में आये रे-ऽऽ॥2409॥

(212) जीव व पुद्गल गमन करें, अथवा किसी जगह ठहरें-2
धर्म अधर्म द्रव हेतु बनें-ऽऽ
लोकाकाश बराबर हैं, दोनों ही अदृश्य रहें-2
दिखते नहीं जो भी हो-3 वो ज्ञान दिखाये रे-ऽऽ॥2410॥

(213) देता जो अवकाश यहाँ, उसे कहें आकाश यहाँ-2
इसके हैं दो भेद यहाँ-ऽऽ
लोक अलोकाकाश कहे, लोकाकाश में जीव लहे-2
इसमें अनंत हो-3 प्रदेश बताएँ रे-ऽऽ॥2411॥

(214) सभी द्रव्य में शक्ति यहाँ, दिखती उसे है युक्ति जहाँ-2
युक्ति के बिन दिखे कहाँ-ऽऽ
भस्म व जल में अवगाहन, शक्तिभरी है कर वेदन-2
जीव असंख्य हो-3 प्रदेशी कहलाये रे-ऽऽ॥2412॥

(215) सब में शक्ति नहीं होती, सब आकाश में क्यों होते-2
स्वाभाविक शक्ति होती-ऽऽ
कहीं है समने की शक्ति, कहीं समाने की शक्ति-2
दोनों की शक्ति हो-3 से काम हो जाये रे-ऽऽ॥2413॥

(216) द्रव्य स्वयं परिणमन करे, किसी को कोइ न बाध्य करे-2
काल द्रव्य व्यवहार कहे-ऽऽ
घंटा घड़ी बनाता है, दिन-महीने दिखलाता है-2
व्यवहार काल हो-3 ये बात बताए रे-ऽऽ॥2414॥

(217) उपादान का भाव यहाँ, अपना है परिणाम यहाँ-2
तभी हो निर्मल भाव यहाँ-ऽऽ
उपादान गर अच्छा हो, तो हर निर्णय सच्चा हो-2
सारे निमित्त हो-3 ही कर्म बढ़ाएँ रे-ऽऽ॥2415॥

(218) इक दूजे से प्रेम करे, सब सबका उपकार करे-ऽऽ
सहकारी तो हेतु बनें-ऽऽ
गुरु निमित्त सहकारी है, उपादान गुणधारी है-2
दोनों ही जानें हो-3 तब गुण मिल पायें रे-ऽऽ॥2416॥

(219) शक्ति भरी पदार्थों में, लब्धि प्रकट हो जब उनमें-2
परिणमने से नहीं रुके-ऽऽ
भव्यों को ज्यों लब्धि मिले, उनमें तब सम्यक्त्व खिले-2
कोई फिर उनको हो-3 यहाँ रोक न पाये रे-ऽऽ॥2417॥

(220) जीव व पुद्गल रहे यहाँ, पर्यय सूक्ष्म स्थूल यहाँ-2
तीन काल की समझ यहाँ-ऽऽऽ
यही काल व्यवहार कहा, निश्चय वर्तन काल अहा-2
निश्चय व्यवहार हो-3 द्रय काल बतायें रे-ऽऽ॥2418॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(221) द्रव्यों की पर्यायें हैं, अतीत पर्यय अनंत हैं–2
भावी अनंतानंत हैं–SSS
वर्तमान की एक ही है, ये व्यवहार काल ही है–2
पर्यय के द्वारा हो–3 यहाँ काल बताएँ रे–SS।।2419।।

(222) पूर्व रहे परिणाम यहाँ, समझो कारण रूप यहाँ–2
द्रव्य में हो परिणमन यहाँ–SS
उत्तर हो परिणाम जभी–कार्यरूप हो द्रव्य तभी–2
द्रव्य में कारण हो–3 और कार्य बताएँ रे–SS।।2420।।

(223) इक पर्यय का नाश यहाँ, इक पर्यय उत्पाद यहाँ–2
द्रव्य रहे ध्रुवरूप यहाँ–SS
एक समय में तीनों हों, समय भेद नहिं इनमें हो–2
कार्य कारण भी हो–3 इक समय में होवे रे–SS।।2421।।

(224) होते हैं छः द्रव्य यहाँ, रहें अनंतानंत यहाँ–2
कहें सभी भगवंत यहाँ–SS
अनेकांत जब भी होगा, इनका तभी कथन होगा–2
ऐसा जिनवर ही हो–3 सबको बतलाएँ रे–SS।।2422।।

(225) वस्तु अनेक धर्ममय है, जग में वही कार्यकर है–2
एक धर्म मय वस्तु न है–SS
बहुत धर्ममय वस्तु यहाँ, अनेकांत हो धर्म वहाँ–2
तब ही वस्तु का हो–3 सत् रूप दिखाये रे–SS।।2423।।

(226) द्रव्य में हो एकांत यहाँ, पैदा करता भ्रांति यहाँ–2
कार्य न कुछ कर सके यहाँ–SS
द्रव्य हो गर एकांतमयी, कौन कहे वह द्रव्य यहाँ–2
एकांत हरदम हो–3 मन भ्रांत कराये रे–SS।।2424।।

(227) सत् बिन नित्य अनित्य नहीं, इस बिन कोई द्रव्य नहीं–2
कोई होगा कार्य नहीं–SSS
भाव बिना नहिं द्रव्य रहे, द्रव्य बिना सत् नहीं रहे–2
सत् बिन कोई भी हो–3 नहिं द्रव्य कहाये रे–SS।।2425।।

(228) क्षण क्षण में परिणमन करें, नई नई पर्याय धरे–2
द्रव्य में ये गुण यहाँ अरे–SS
अन्वय बिन नहिं कार्य करें, द्रव्य में सत् गुण सदा रहे–2
सत् बिन पर्यय में हो–3 परिणमन न आये रे–SS।।2426।।

(229) वस्तु तो तीनों काल रहे, प्रतिपल वो पर्याय धरे–2
हरपल पर्यय बदल रहे–SS
नये नये परिणाम यहाँ, पूर्वोत्तर का भेद यहाँ–2
हर पल वस्तु में हो–3 परिवर्तन आये रे–SS।।2427।।

(230) हो पहला परिणाम यहाँ, उसको कारण समझ यहाँ–2
कहते हैं भगवान यहाँ–SSS
बाद बने परिणाम यहाँ, उसे समझना कार्य यहाँ–2
कार्य कारण में हो–3 ये भेद बताएँ रे–SS।।2428।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-SS
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-SS

(231) जीव अनादि-अनिधन है, करता यहाँ परिणमन है-2
नये नये परिवर्तन हैं-SSS
पहले सामिग्री पाता, पीछे कार्य वो कर जाता-2
ऐसा हरदम ही हो-3 वह करता जाये रे-SS॥2429॥

(232) जब भी कोई कार्य करे, स्वक्षेत्र में रह करके करे-2
स्व-द्रव्य और स्वकाल करे-SS
अपने स्वभाव में रहकर, निज पर्यय का कार्य करे-2
पर से हो भिन्न हो-3 निज में रम जाये रे-SS॥2430॥

(233) लीन निजात्म स्वरूप यहाँ, हो जाये पर रूप यहाँ-2
मिलकर हों इक रूप यहाँ-SS
चेतन यहाँ अचेतन हो, और अचेतन चेतन हो-2
निज में जो स्थित हो-3 वह कार्य कराये रे-SS॥2431॥

(234) सभी वस्तु को ब्रह्म कहें, उन्हें मूढ़ व अज्ञ कहें-2
ऊँच नीच नहिं भेद रहें-SS
ब्राह्मण-धोबी भेद कहाँ, रह जाये सब एक यहाँ-2
ऐसा जो मानें हो-3 वे भ्रम दुख पायें रे-SS॥2432॥

(235) अणु परिणाम कहें आतम, वे मूरख हैं घोरपरम-2
कैसे सबमें रहे चलन-SS
छोटा बड़ा यहाँ हो तन, तन परिणाम रहे आतम-2
सत्य जाने बिन हो-3 नहिं तत्त्व समाये रे-SS॥2433॥

(236) द्रव्य दृष्टि से जीव यहाँ, सभी एक हैं समझ यहाँ-2
गुण से भेद अनेक यहाँ-SS
गुण पर्यायें प्राप्त करें, द्रव्य अनेकों रूप धरें-2
एक अनेक हो-3 दोनों बुध लाओ रे-SS॥2434॥

(237) वस्तु है जनि-व्यय ध्रौव्यमयी, प्रतिपल है निजभावमयी-2
गुण सारे पर्यायमयी-SS
द्रव्य है गुण पर्यय वाला, सत् अस्तित्वमयी माला-2
जग ये जानेगा हो-3 अस्तित्त्व दिखाये रे-SS॥2435॥

(238) प्रतिपल, जनि-व्यय होता है, पर्यायों को न्यौता है-2
परिणामों से होता है-SS
जन्म एक पर्यय का हो, व्यय भी इक पर्यय का हो-2
द्रव्य में ये सब हो-3 प्रतिक्षण नजराएँ रे-SS॥2436॥

(239) जीव न होता नष्ट यहाँ, कभी न पैदा हुआ यहाँ-2
शाश्वत है त्रयकाल यहाँ-SS
द्रव्य दृष्टि से नित्य है ये, ध्रुवत्व धारण किये यहाँ-2
शुद्ध हो तत्त्व हो-3 तो नित्य बताएँ रे-SS॥2437॥

(240) वस्तु में हरदम साथ रहे, अन्वयरूपी सदा रहे-2
उसे सभी जन द्रव्य कहे-SSS
वस्तु में पर्यय रूप रहे, उसको यहाँ विशेष कहें-2
द्रव्य पर्यय में हो-3 यह भेद बताएँ-SS॥2438॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(241) मूलरूप दो द्रव्य कहे, नित उसमें परिणाम रहे–2
उसको ही गुण यहाँ कहें–SS
नष्ट न हो, उत्पन्न न हो, शाश्वत मय परिणाम अहो–2
परिणाम द्रव में हो–3, परिणमन कराये रे–SS।।2439।।

(242) द्रव्यों के गुण प्रकट यहाँ, नष्ट कभी उत्पन्न यहाँ–2
हों सामान्य विशेष यहाँ–SS
द्रव्य में गुण पर्यायों का, हो एकत्व ही वस्तु यहाँ–2
गुण में उत्पाद हो–3 व्यय नित्य बतायें रे–SS।।2440।।

(243) द्रव्य में सब पर्यायें हैं, लेकिन ढ़की हुई सी हैं–2
ऐसा जो भी कहते हैं–2
पर्दा हटते वस्तु दिखे– पैदा वस्तु ये कौन कहे–2
पहले से वस्तु हो–3 नहिं थी बतलाएँ रे–SS।।2441।।

(244) द्रव्य अनादि निधन कहा, काल लब्धि जब मिले अहा–2
पर्यायें उत्पन्न यहाँ–SS
अविद्यमान पर्यय आतीं, पैदा नई ही हो जातीं–2
काल लब्धि से हो–3 पर्यय बन जायें रे–SS।।2442।।

(245) धर्म व धर्मी लक्ष्य करो, तब ही उसमें भेद करो–2
द्रव्य व पर्यय ध्यान धरो–SS
वस्तु रूप से भेद नहीं, कहते हैं ये बात यमी–2
लक्ष्य बदले तो हो–3 लक्षण बतलायें रे–SS।।2443।।

(246) द्रव्य अलग जो भी माने, और पर्याय अलग माने–2
दोनों भिन्न–भिन्न जाने–SS
द्रव्य की हो पर्याय यहाँ, बिन पर्यय हो द्रव्य कहाँ–2
मूरख हैं वे जो हो–3 ये भिन्न बताएँ रे–SS।।2444।।

(247) ज्ञानरूप हैं, वस्तु सभी, ज्ञान विचरता वस्तु सभी–2
वस्तु बिना नहिं ज्ञान कभी–SS
वस्तु ज्ञान कह जाओगे, ज्ञेय कहाँ से लाओगे–2
अद्वैतवादी हो–3 कुछ समझ न पायें रे–SS।।2445।।

(248) जितनी भी जड़ वस्तु यहाँ, कहते हैं सब ज्ञेय यहाँ–2
जड़ में होता ज्ञान कहाँ–SS
ज्ञेय–ज्ञान से भिन्न रहे, एकान्ती ये एक कहें–2
अनुभव में उतरें हो–3 तो समझ में आये रे–SS।।2446।।

(249) धन, मकान सब ज्ञान कहे, अंतस में नहिं ज्ञानलखे–2
वस्तु ज्ञान का हेतु कहे–2
ज्ञान का इनको ज्ञान नहीं, वस्तु में कहते ज्ञान यहीं–2
ज्ञेय को ज्ञान हो–3 मूरख बतलाएँ रे–SS।।2447।।

(250) जीव अजीव पदार्थ यहाँ, आँखों से दिख रहे यहाँ–2
कहे आँख का भ्रम है यहाँ–SS
कहे वस्तु कुछ भी नहिं है, बनकर मिटना क्षणिक ही है–2
ये शून्यवादी हो–3 भटके भटकाएँ रे–SS।।2448।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-SS
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-SS

(251) सत् में असत् रहे कैसे, शून्य तत्त्व जाने कैसे?-2
सौ सौ वरष रहे कैसे?-SS
शून्यवाद हैं बौद्धमती, मति की खुद कर रहे क्षति-2
तत्त्व जाने बिन हो-3 कुछ समझ न आये रे-SS॥2449॥

(252) शब्द से अर्थ निकलता है, अर्थ में शब्द विचरता है-2
शब्द पदार्थ बताता है-2
जितने जग में शब्द यहाँ, उतने समझ पदार्थ यहाँ-2
शब्दों से वस्तु हो-3 का ज्ञान हो जाये रे-SS॥2450॥

(253) कई धर्मयुत् अपने को, अपने योग्य पदार्थों को-2
कई धर्मयुत् से उनको-SS
यहाँ जानता ज्ञानी जो, निश्चय ज्ञान समझना वो-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 प्रमाण कहाये रे-SS॥2451॥

(254) सभी द्रव्य पर्यायों को, समस्त लोकालोक को-2
करे प्रकाशित लोगों को-SS
उसको केवलज्ञान कहा, जहाँ नहीं दुख लेश अहा-2
ऐसा वह ज्ञान हो-3 सर्वोच्च कहाये रे-SS॥2452॥

(255) जाने सबको ज्ञान यहाँ, इसे सर्वगत कहे यहाँ-2
ये नहिं जाता यहाँ वहाँ-SS
सदा जीव में रहता है, जीव से दूर न रहता है-2
सबमें है व्याप्त हो-3 पर कहीं न जाये रे-SS॥2453॥

(256) ज्ञेय पास नहिं जाता है, ज्ञेय पास नहिं आता है-2
ज्ञान ज्ञेय का ज्ञाता है-SS
अपने-अपने क्षेत्र रहे, फिर भी ज्ञेय ज्ञान में हैं-2
ज्ञेय-ज्ञायक का हो-3 व्यवहार बताएँ रे-SS॥2454॥

(257) मन पर्यय और अवधिज्ञान, एकदेश प्रत्यक्ष ये मान-2
श्रुत को परोक्ष ही तू मान-SS
मतिज्ञान प्रत्यक्ष परोक्ष, न्याय व आगम से तू जान-2
लोकानुप्रेक्षा हो-3 में ज्ञान बताएँ रे-SS॥2455॥

(258) इन्द्रिय से उत्पन्न यहाँ, मतिज्ञान वो कहें यहाँ-2
जाने पुद्गल योग्य यहाँ-SS
मन जाने श्रुत ज्ञान यहाँ, इन्द्रिय का भी ज्ञान यहाँ-2
इन्द्रिय और मन से हो-3 मतिश्रुत हो पाये रे-SS॥2456॥

(259) पाँचों इन्द्रिय ज्ञान रहें, एक समय में एक रहे-2
एक में ही उपयोग रहे-SS
मनोज्ञान उपयोग जहाँ, इन्द्रिय ज्ञान न रहे वहाँ-2
मन का उपयोग हो-3 अतिश्रेष्ठ बताएँ रे-SS॥2457॥

(260) एक समय में रहे यहाँ, एक ज्ञान उपयोग यहाँ-2
लब्धिरूप में चार यहाँ-SS
अर्थग्रहण शक्ति, लब्धि, अर्थग्रहण उपयोग यहाँ-2
जानेगा तब ही हो-3 लब्धि बढ़ पाये रे-SS॥2458॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(261) अनेकांतमय वस्तु यहाँ, बन जाती एकांत यहाँ-2
बात हो जब सापेक्ष यहाँ-ऽऽ
अनेकांत श्रुतज्ञान कहे, नय बोले एकांत कहे-2
बिना अपेक्षा हो-3 नहिं रूप दिखाये रे-ऽऽ॥2459॥

(262) रहता ज्ञान परोक्ष यहाँ, अनेकांत को कहे यहाँ-2
वो समझो श्रुत ज्ञान यहाँ-ऽऽ
जहाँ न संशय भाव रहे, नहीं अनध्यवसाय रहे-2
ऐसा ही ज्ञान हो-3 सम्यक्त्व दिलाये रे-ऽऽ॥2460॥

(263) एक धर्म को लेकर जो, बात यहाँ कह जाता वो-2
उसको नय कहते जिन जो-ऽऽ
नय श्रुतज्ञान का भेद कहा, नय बिन सम्यक् रहे कहाँ-2
नय ही हम सबको हो-3 प्रमाण दिखाये रे-ऽऽ॥2461॥

(264) कई धर्मयुत् वस्तु यहाँ, एक धर्म को कहे यहाँ-2
उसको नय ही समझ यहाँ-ऽऽ
उसकी यहाँ विवक्षा है, और धर्म की नहीं यहाँ-2
ऐसे समझो तो हो-3 नय समझ में आये रे-ऽऽ॥2462॥

(265) वस्तु का एक धर्म कहना, शब्द धर्मवाचक कहना-2
दोनों जाने ज्ञान होना-ऽऽ
तीनों नय के भेद यहाँ, अर्थ-शब्द-बुध रूप यहाँ-2
नय को जाने जो हो-3 वह ज्ञान बढ़ाए रे-ऽऽ॥2463॥

(266) नय में हो सापेक्ष यहाँ, वो ही होते सुनय यहाँ-2
सुनय करे सब सिद्धि यहाँ-ऽऽ
जो नय है निरपेक्ष यहाँ, वो दुर्नय हो सभी यहाँ-2
नय की सार्थकता हो-3 सापेक्ष बताये रे-ऽऽ॥2464॥

(267) इन्द्रिय का व्यापार यहाँ, कायचेष्टा सभी यहाँ-2
इनसे जो भी ज्ञान यहाँ-2
उसे कहें अनुमान यहाँ, इनको भी नय समझ यहाँ-2
नय के अनेक हो-3 यहाँ भेद बताएँ रे-ऽऽ॥2465॥

(268) संग्रह से नय एक ही है, भेद से उसके दो भेद हैं-2
द्रव्य व पर्यायार्थिक है-ऽऽ
इन दोनों के भेद यहाँ, नैगम आदि ज्ञान यहाँ-2
नय से ही ज्ञान हो-3 के भेद बताएँ रे-ऽऽ॥2466॥

(269) विशेष रूप जो कहता है, निश्चय साधे रहता है-2
द्रव्यार्थिक नय कहता है-ऽऽ
जो करता सामान्य ग्रहण, सिर्फ द्रव्य का करे कथन-2
द्रव्यार्थिक नय ही हो-3 ऐसा कर पाये रे-ऽऽ॥2467॥

(270) निश्चय और व्यवहार यहाँ, साधक को साधता यहाँ-2
पर्यायार्थिक जान यहाँ-ऽऽ
नहिं होते निरपेक्ष यहाँ, दुर्नय से निरपेक्ष यहाँ-2
पर्यायार्थिक नय तो हो-3 सापेक्ष बताएँ रे-ऽऽ॥2468॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-SS
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-SS

(271) भूत भविष्यत कहता है, वर्तमान भी कहता है-2
नैगम नय वह होता है-SS
जो त्रिकाल का कथन करे, द्रव्य जो तीनों काल रहे-2
नैगमनय से ही हो-3 हम बात बतायें रे-SS॥2469॥

(272) सबको शामिल करता है, एक ही सबको कहता है-2
कोई भेद न करता है-SS
द्रव्यों की पर्यायों में, एक भाव ही रखता है-2
उसको संग्रह नय हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-SS॥2470॥

(273) संग्रह नय सब एक कहे, फिर जो उसमें भेद करे-2
विधि से उनको अलग करे-SS
वो नय है व्यवहार यहाँ, उसमें सब ही एक कहाँ-2
भेद करवाये हो-3 व्यवहार कहाए रे-SS॥2471॥

(274) एक समय की पर्यायें, बहुत समय की पर्यायें-2
दोनों ही ऋजुसूत्र कहें-SS
एक समय की सूक्ष्म यहाँ, बहुत समय स्थूल यहाँ-2
दोनों ऋजुसूत्र के हो-3 भेद बताएँ रे-SS॥2472॥

(275) संख्या लिंग में भेद करे, सही अर्थ स्पष्ट करे-2
उसे शब्द नय यहाँ कहे-SS
भेद अगर हो जायेगा, अर्थ गलत हो जायेगा-2
तब ही शब्दों का हो-3 नय ठीक बताए रे-SS॥2473॥

(276) शब्द वस्तु का भेद कहे, परिणामों से भेद गहे-2
समभिरूढ़ नय उसे कहे-SS
एक शब्द के अर्थ कई, उनमें से मुख्य अर्थ कहे-2
उस नय को सब ही हो-3 समभिरूढ़ बताएँ रे-SS॥2474॥

(277) जिस स्वभाव में वस्तु रहे, वस्तु भाव उस रूप रहे-2
उसी भाव से वस्तु कहे-SS
यह नय एवं भूत यहाँ, है परमार्थ स्वरूप यहाँ-2
कहते हैं गुरुवर हो-3 मम ज्ञान बढ़ाएँ रे-SS॥2475॥

(278) जो नय से व्यवहार करे, जग में अपनी बात कहे-2
वही मोक्ष को साध रहे-SS
रत्नत्रय को धारण कर, मोक्षमार्ग का ध्यान धरे-2
नय को जो जानें हो-3 शिव पथिक कहायें रे-SS॥2476॥

(279) विरला सुनता तत्त्व यहाँ, विरला जाने तत्त्व यहाँ-2
विरला भावे तत्त्व यहाँ-SS
तत्त्व जानना खेल नहीं, इसे मानना खेल नहीं-2
विरला ये तत्त्व हो-3 धारण कर पाये रे-SS॥2477॥

(280) गुरू यहाँ जो तत्त्व कहें, निश्छल हो जो ग्रहण करें-2
सदा यहाँ उसको भायें-SS
वही तत्त्व को जानेगा, विश्व यहाँ पहचानेगा-2
उसको कोई दुख हो-3 छू भी नहिं पाये रे-SS॥2478॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–ऽऽ
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–ऽऽ

(281) हैं सब ही कामांध यहाँ, स्त्री तन में अंध यहाँ–2
इन्द्रिय वश में लोक यहाँ–ऽऽ
काम ने खण्डित कर डाला, कषाय है मन की ज्वाला–2
कामी दुनियाँ में हो–3 दुख ही दुख पाये रे–ऽऽ॥2479॥

(282) बाह्य परिग्रह त्याग करे, अंतस् राग विनाश करे–2
सभी परिग्रह दूर करे–ऽऽ
उससे हारा काम यहाँ, स्त्री जन का काम कहाँ–2
मोह इन्द्रिय भी हो–3 उसे लुभा न पायें रे–ऽऽ॥2480॥

(283) उपशममय परिणाम करे, लोक स्वरूपी ध्यान धरे–2
कर्मपुंज वह नाश करे–ऽऽ
वही सिद्ध पद पाता है, पूर्णज्ञान प्रकटाता है–2
लोक में इक दिन हो–3 सिद्धत्व वो पाये रे–ऽऽ॥2481॥

बोधिदुर्लभ भावना–

(284) अनादिकाल से जीव यहाँ, काल अनंतों रहा यहाँ–2
किया निगोद निवास यहाँ–2
होनहार से निकला जब, पृथ्वीकायिक जन्मा तब–2
जल अग्नि वायु हो–3 वनस्पति भरमाये रे–ऽऽ॥2482॥

(285) बहुतकाल एकेन्द्रिय में, भटका जीव रहा दुख में–2
सूक्ष्म काय में बादर में–ऽऽ
चिंतामणि सी त्रय पर्याय, मिली कठिनता से भव में–2
पुण्य की महिमा हो–3 गुरुदेव बताएँ रे–ऽऽ॥2483॥

(286) एकेन्द्रिय से विकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय से सकलेन्द्रिय–2
मन पाकर हो पंचेन्द्रिय–ऽऽ
ऐसा होना दुर्लभ है–लेकिन फिर भी संभव है–2
जीतीं सब इन्द्रिय हो–3 वे जिन बतलाएँ रे–ऽऽ॥2484॥

(287) विकलेन्द्रिय से निकल यहाँ, पंचेन्द्रिय भी हुआ यहाँ–2
मन बिन पैदा हुआ यहाँ–ऽऽ
कभी कदाचित मन पाया, क्रूर हुआ तिर्यंच यहाँ–2
मन को पाकर भी हो–3, कुछ नहिं कर पाये रे–ऽऽ॥2485॥

(287) क्रूर हुआ तिर्यंच यहाँ, अशुभ भाव में मरा यहाँ–2
पाया दुखमय नरक यहाँ–ऽऽ
वहाँ भयंकर दुखी रहे, भूख प्यास के दुक्ख सहे–2
तन के और मन के हो–3 दुख भोग में आये रे–ऽऽ॥2486॥

(289) नरक से आ तिर्यंच हुए, कैसे–कैसे दुक्ख सहे–2
पापों में नित भ्रमित रहे–ऽऽ
पापी बन फिर नरक गये, फिर आकर तिर्यंच हुए–2
छेदन भेद के हो–3 दुख दुखी कराये रे–ऽऽ॥2487॥

(290) रत्नगिरा चौराहे पर, कठिन मिले चौराहे पर–2
वैसे अनुभव दुर्लभ है–ऽऽ
मानव बनकर म्लेच्छ हुए, पापी धर्म विहीन हुए–2
तो ये मानव का हो–3 भव व्यर्थ बताएँ रे–ऽऽ॥2488॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(291) आर्यखण्ड में जन्म लिया, उत्तम कुल फिर नहीं मिला–2
मिला तो मैं धनहीन हुआ–SS
मानव पर्याय सरल नहीं, दुर्लभ दिखती हमें यहीं–2
अच्छे कर्मों से हो–3 मानव बन पाये रे–SS॥2489॥

(292) मानव बन धनवान हुआ–तन से यहाँ अपंग हुआ–2
रोगी तन भदरंग हुआ–SS
हाथ–पाँव लाचार हुआ, भव में हरदम दुखी हुआ–2
मानव तन पाकर हो–3 व्याधि घिर जाये रे–SS॥2490॥

(293) मानव तन नीरोग यहाँ, लम्बी आयु नहीं यहाँ–2
धर्म नहीं मिल सका यहाँ–SS
शील भाव नहिं मिला यहाँ, निज स्वभाव नहिं दिखा यहाँ–2
दुर्लभ से दुर्लभ हो–3 ये धर्म बताएँ रे–SS॥2491॥

(294) मिले शील गुण कभी यहाँ, साधु न मिलते कभी यहाँ–2
कभी न हो श्रद्धान यहाँ–SS
अति दुर्लभ सम्यक पाना, दुर्लभ श्रद्धा का लाना–2
सम्यक् का लाभ हो–3 मुश्किल से पाये रे–SS॥2492॥

(295) कभी मिला सम्यक्त्व यहाँ, तो मुश्किल चारित्र यहाँ–2
कभी व्रत पालन कठिन यहाँ–SS
शमन कषायों का करना, वीतरागता को पाना–2
दुर्लभ से दुर्लभ हो–3 ये कार्य बताएँ रे–SS॥2493॥

(296) रत्नत्रय को भी पाया, तीव्र कषाय उदय आया–2
मिथ्या में फिर भरमाया–SS
हुई देव दुर्गति यहाँ– व्यंतरवासी बने यहाँ–2
मुनि बनके भव में हो–3 फिर भटकन पाये रे–SS॥2494॥

(297) गिरा रत्न पाना मुश्किल, वैसे मनुष्य भव मुश्किल–2
ऐसा निश्चय कर ले दिल–SS
छोड़ो यहाँ कषायों को, पापमयी सब भावों को–2
तब ही मानव का हो–3 ये तन मिल पाये रे–SS॥2495॥

(298) मानव से गर देव हुआ, सम्यक् को भी प्राप्त हुआ–2
चारित्र कभी न प्राप्त हुआ–SS
असंयमी बन जिया यहाँ, कर्म खपाए नहीं यहाँ–2
देवगति पाकर हो–3 संयम नहिं पाये रे–SS॥2496॥

(299) मनुष्य गति में संयम है, इसमें ही तप संगम है–2
मनुष्य में ही ध्यान है–SS
तप है कर्म निर्जरा है, यही मोक्ष को पाया है–2
मानव गति पाकर हो–3 मुक्ती को पाओ रे–SS॥2497॥

(300) दुर्लभ मानव तन पाकर, रमते भोगों में आकर–2
वे मूरख हैं सब पामर–SSS
चंदन खेत जलाकर के, पाते हैं कोयला आकर–2
ऐसे मूरख ही हो–3 संसार चलायें रे–SS॥2498॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(301) सम्यग्दर्शन ज्ञान यहाँ, चारित्र का ले संग यहाँ-2
रत्नत्रय को धार यहाँ-2
आदर का क्षय कर्म करो, लोक भ्रमण से मुक्ति वरो-2
बोधि को पाकर हो-3 भव भ्रमण मिटाओ रे-ऽऽ॥2499॥

धर्मानुप्रेक्षा-

(302) त्रिकालवर्ती द्रव्यों को, उनके गुण पर्यायों को-2
सारे लोक अलोक को-ऽऽ
सब प्रत्यक्ष जानता है, परमानंद राजता है-2
वो ही दुनियाँ में हो-3 सर्वज्ञ कहाये रे-ऽऽ॥2500॥

(303) होता नहिं सर्वज्ञ यहाँ, अदृश्य जाने कौन यहाँ-2
सूक्ष्म बताता कौन यहाँ-ऽऽ
इन्द्रिय यहाँ नहीं जानें, सभी स्थूल सी पर्यायें-2
सर्वज्ञ के बिन हो-3 कोइ ज्ञान न पाये रे-ऽऽ॥2501॥

(304) धर्म के हैं दो भेद यहाँ, मुनि व श्रावक समझ यहाँ-2
निसंग, संगासक्त यहाँ-ऽऽ
मुनिधर्म दश भेद कहे, श्रावक द्वादश भेद कहे-2
सर्वज्ञ ज्ञानी हो-3 ये सब समझाये रे-ऽऽ॥2502॥

(305) अष्टमूल गुण धारी हो, बारह व्रत आचारी हो-2
अथवा प्रतिमाधारी हो-ऽऽ
ग्यारह प्रतिमा सहित यहाँ, बारह व्रत को धार यहाँ-2
व्रत बिन ये जीवन हो-3 बदहाल बताएँ रे-ऽऽ॥2503॥

(306) प्रतिमा धारण करता है, व्रत का पालन करता है-2
राग-द्वेष कम करता है-ऽऽ
आरंभ अनुमति त्याग करे, नहिं न उद्दिष्ट आहार करे-2
व्रत को पालनकर हो-3 नित बढ़ता जाये रे-ऽऽ॥2504॥

(307) भव्य जीव जो संज्ञी हो, विशुद्धता परिणामी हो-2
जागा हो पर्याप्तक हो-ऽऽ
ज्ञानी हो शुभ लेश्या हो, साकार उपयोगी हो-2
उसको ही भव में हो-3 सम्यक् मिल पाये रे-ऽऽ॥2505॥

(308) दर्शमोह की तीन यहाँ, अनंत अनुबंधी चार यहाँ-2
उपशम क्षय हो अगर यहाँ-ऽऽ
उपशम हो उपशम सम्यक्, क्षय से हो क्षायिक सम्यक्-2
कर्मभूमि का हो-3 मानव ही पाये रे-ऽऽ॥2506॥

(309) सम्यक् प्रकृति उदय में हो, छः प्रकृति अनुदय में हो-2
तभी क्षयोपशम सम्यक् हो-ऽऽ
इसको वेदक भी कहते, इसमें भव्य बहुत रहते-2
ऐसा सम्यक्त्व हो-3 भव पार लगाये रे-ऽऽ॥2507॥

(310) उपशम और क्षयोपशम को, अनंत कषाय विसंयोजन को-2
और देशव्रत धारण को-ऽऽ
कई बार ये ग्रहण करे, कई बार इनको छोड़े-2
असंख्यात बार हो-3 ऐसा कर जाये रे-ऽऽ॥2508॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(311) अनेकांत मय तत्त्व यहाँ, स्याद्वादमय भंग यहाँ-2
करे तत्त्व श्रद्धान यहाँ-ऽऽ
नव पदार्थ छः द्रव्यों को, नय आदर से माने जो-2
शुद्ध सम्यक्त्वी हो-3 उसको बतलाएँ रे-ऽऽ॥2509॥

(312) सम्यग्दृष्टि होता जो, आठ मदों में रहे न वो-2
तृण सम खुद को माने जो-ऽऽऽ
उपशम भाव यहाँ भाता, परमेष्ठी को नित ध्याता-2
उसमें ही सम्यक् हो-3 स्थिर रह पाये रे-ऽऽ॥2510॥

(313) विषयों में जो लगता है, आरंभ सारंभ करता है-2
ये सब हेय समझता है-ऽऽ
मोह विलास नजर आये, शुद्ध स्वभाव लक्ष्य भाये-2
पापों में लगकर हो-3 अति दुक्ख दिखाये रे-ऽऽ॥2511॥

(314) उत्तम गुण नित ग्रहण करे, संयमियों की विनय करे-2
धर्मी से अनुराग करे-ऽऽ
कर्तव्यों में तत्पर हो, पर में कभी न राग धरे-2
उसको आगम में हो-3 सम्यक्त्व बतायें रे-ऽऽ॥2512॥

(315) देह में रहता हुआ यहाँ, जाने जीव को भिन्न यहाँ-2
तन कपड़े सा कहे यहाँ-ऽऽ
तन से खुद को जुदा कहे, दया धर्म सम्मान करे-2
सम्यग्दृष्टि में हो-3 ये भाव दिखाए रे-ऽऽ॥2513॥

(316) वीतराग को देव कहे, दया धर्म उत्कृष्ट कहे-2
निर्ग्रन्थों को गुरु कहे-ऽऽ
अन्य पे नहिं श्रद्धान करे, गैरों को जो नहीं झुके-2
सम्यग्दृष्टि ही हो-3 वह यहाँ कहाए रे-ऽऽ॥2514॥

(317) दोष सहित को देव कहे, परिग्रह धारी गुरु कहे-2
हिंसा को ही धर्म कहे-ऽऽ
दया धर्म नहिं मान रहा, मनमानी कर तान रहा-2
मिथ्यादृष्टि ही हो-3 ये लोग कहाएँ रे-ऽऽ॥2515॥

(318) कोई नहीं कुछ देता है, किस्मत लिखा वो लेता है-2
सुख दुख कोइ न देता है-ऽऽ
किये शुभाशुभ कर्म यहाँ, उसका ही फल मिले यहाँ-2
किस्मत से ज्यादा हो-3 कोई नहिं पाये रे-ऽऽ॥2516॥

(319) देवी देवों की पूजा, लक्ष्मी देती ये सूझा-2
भगवन की फिर चाहत क्या-ऽऽ
धर्म की क्या आवश्यकता, प्रभु से ऊँचे हैं देवता-2
ऐसे लोगों को हो-3 बस भोग दिखाये रे-ऽऽ॥2517॥

(320) जन्म-मरण जब होना है, जिस विधान से होना है-2
जिस समय जहाँ पर होना है-ऽऽ
उस देशकाल विधि होता है, उस समय वहीं पर होता है-2
कोई भी ताकत हो-3 वह टाल न पाये रे-ऽऽ॥2518॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(321) जब-जब जैसा होना है, तब-तब वैसा होना है-2
जो देखा प्रभु, होना है-ऽऽ
कोई न उसको टाल सके, कल परसों पर डाल सके-2
वाणी में आया हो-3 वैसा हो जाये रे-ऽऽ॥2519॥

(322) ऐसा निश्चय करता है, द्रव्य यहाँ समझता है-2
पर्यायों को जानता है-ऽऽ
सम्यग्दृष्टि वहीं यहाँ, कोई शंका करे यहाँ-2
उसको इस भव में हो-3 मिथ्यात्व बताएँ रे-ऽऽ॥2520॥

(323) तत्त्व नहीं जो जान रहा, जिनवाणी को मान रहा-2
श्रद्धा उस पर धार रहा-ऽऽऽ
हरदम उसे पसंद करे, वह भी श्रद्धावान रहे-2
ऐसा गुरुदेव हो-3 सबको बतलाएँ रे-ऽऽ॥2521॥

(324) सब रत्नों में रत्न महां, सब योगों में योग महां-2
सब ऋद्धि में ऋद्धि महां-ऽऽ
सब सिद्धि में सिद्धि परम, सब धर्मों में धर्म परम-2
सब ही कर्मों में हो-3 यह श्रेष्ठ बतायें रे-ऽऽ॥2522॥

(325) जो सम्यक्त्व विभूषित है, श्रद्धा की अनुभूति है-2
यही ज्ञानमय ज्योति है-ऽऽऽ
वह इन्द्रों से पूज्य यहाँ, चक्रवर्ती से पूज्य है-2
व्रत बिन होते भी हो-3 वह स्वर्ग में जाये रे-ऽऽ॥2523॥

(326) सम्यग्दृष्टि कर्म करे, पुण्यकर्म का बंध करे-2
दुर्गति में नहिं गमन करे-ऽऽ
पहले के जो पाप कर्म, उनका भी वह नाश करे-2
सम्यग्दृष्टि में हो-3 ये बात बताएँ रे-ऽऽ॥2524॥

(327) यहाँ मद्य-माँस-मधु त्याग करे, सुबह-शाम प्रभु दर्श करे-2
अष्ट मूलगुण हृदय धरे-ऽऽ
अभक्ष भक्षण नहीं करे- उसे दार्शनिक भक्त कहे-2
उसमें दर्शन की हो-3 प्रतिमा बतलाएँ-ऽऽ॥2525॥

(327) मन पूरण वैराग्य यहाँ, चित्र किया दृढ़ खूब यहाँ-2
छोड़े सभी निदान यहाँ-ऽऽ
व्रत का पालन करता है, दर्शन श्रावक होता है-2
धीरे-धीरे वह हो-3 जढ़ता ही जाये रे-ऽऽ॥2526॥

(329) पाँच अणुव्रत धारी हो, गुण-शिक्षाव्रत धारी हो
समताभावी ज्ञानी हो-ऽऽ
चित्त करे दृढ़ रूप यहाँ, कहते श्रावक व्रती यहाँ-2
व्रत के पालन से हो-3 वे स्वर्ग में जाये रे-ऽऽ॥2527॥

(330) दया धरे व्यापार करे, निज समान सबको समझे-2
निंदा गर्हा नित्य करे-ऽऽऽ
आरंभ सारंभ दूर रहे, श्रावक उसको सभी कहे-2
श्रावक बन करके हो-3 वह पाप हटाए रे-ऽऽ॥2528॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(331) त्रस हिंसा का त्याग करे, कृत–कारित नहिं भाव धरे–2
अनुमोदन भी नहीं करे–SS
मन वच काय से पाप तजे, अहिंसाणुव्रत उसे कहें–2
उसमें हिंसा के हो–3 नहिं भाव भी आयें रे–SS।।2529।।

(332) हिंसामय नहिं वचन कहे, कभी न वचन कठोर कहे–2
गुप्त बात नहिं व्यक्त करे–SS
निष्ठुर वचन न कहता है, पाप विचार न करता है–2
मन में तब ही तो हो–3 बहु शांति समाये रे–SS।।2530।।

(333) हित मित वचन सदा बोले, शब्दों में अमृत घोले–2
धर्मवचन नित अनमोले–SS
वह सत्याणुव्रती यहाँ, धर्ममयी वह कृती यहाँ–2
उस पर हर प्राणी हो–3 विश्वास जताये रे–SS।।2531।।

(334) बहुत कीमती वस्तु को, अल्पमूल्य नहिं लेता जो–2
चोरी का सामान है वो–SS
भूली वस्तु नहीं लेता, मन को संतोषी करता–SS
उसमें अचौर्य हो–3 अणुव्रत कहलाये रे–SS।।2532।।

(335) नहीं छल कपट मन में हो, लोभ व माया मन नहिं हो–2
परधन हरण न करता हो–SS
शुद्धमती दृढ़ निश्चय कर, व्रत अचौर्य को धरता हो–2
अणुव्रत का धारी हो–3 वह गुणी कहाये रे–SS।।2533।।

(336) तन पापों की खान यहाँ, दुर्गन्धित ये जान यहाँ–2
अशुचि का ये स्थान यहाँ–SS
रूप और लावण्य दिखे– होता मोह महान यहाँ–2
देखे इनको पर हो–3 मन मोह न लाये रे–SS।।2534।।

(337) माँ कहे पर स्त्री को, बहिन कहे पर कन्या को–2
पुत्री छोटी कन्या को–SS
मन वच तन से भाव धरे, ब्रह्मचर्य व्रत वही वरे–2
उसमें शक्ति का हो–3 अंबार दिखाये रे–SS।।2535।।

(338) लोभ कषायें कम करके, पर वस्तु को तज करके–2
संतोषी मन धर करके–SS
राग भाव को दूर करे, उसमें ही संतोष दिखे–2
परिग्रह, परिमाण हो–3 व्रत उसमें आये रे–SS।।2536।।

(339) पर को नश्वर जान यहाँ, नहीं करे अभिमान यहाँ–2
पैदा करता ज्ञान यहाँ–SS
तृष्णा को नित दूर करे, परिग्रह में परिमाण करे–2
पंचम अणुव्रत को हो–3 धारे, व्रत पाये रे–SS।।2537।।

(340) लोभ का करना नाश यहाँ, करे वस्तु परिमाण यहाँ–2
कम होगा तब लोभ यहाँ–SSS
करे दिशाओं का बंधन, लोभ कषाय होगी कम–2
लोभ मिटते ही हो–3 अघ कम हो जायें रे–SS।।2538।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(341) आवश्यकता जितनी हो, उतना ही परिमाण करो-2
ये पहला गुणव्रत समझो-ऽऽ
इच्छायें दुखदायी हैं, क्रोध कषाय प्रदायी हैं-2
इच्छाएँ हरदम हो-3 दुख रोग बढ़ाये रे-ऽऽ॥2539॥

(342) बिना प्रयोजन करे यहाँ, पाप बंध नित भरे यहाँ-2
उसे अनर्थ ही कहें यहाँ-ऽऽ
पाँच भेद बतलाये हैं, व्यर्थ कार्य दिखलाये हैं-2
इनको तुम जानो हो-3 कभी नहिं अपनाओ रे-ऽऽ॥2540॥

(343) पर दोषों को ग्रहण करे, पराई लक्ष्मी स्त्री चहे-2
पर की कलह पे ध्यान धरे-ऽऽ
इसमें कोई लाभ नहीं, अपनी है नित हानि यहीं-
पहला अनर्थ हो-3 दण्ड को बतलाएँ रे-ऽऽ॥2541॥

(344) कृषि अथवा पशु पाले जो, व्यापारिक चर्चा भी हो-2
स्त्री पुरुष समागम हो-ऽऽ
इनके जो उपदेश करें, दूजा अनर्थ दण्ड कहे-2
अर्थ बिन कोई हो-3 नहिं काम सुहाए रे-ऽऽ॥2542॥

(345) फैलाता जल व्यर्थ यहाँ, पृथ्वी खोदे यहाँ वहाँ-2
पवन विलोले व्यर्थ यहाँ-ऽऽ
व्यर्थ पेड़ शाखा तोड़े, व्यर्थ काम में मन जोड़े-2
अनर्थ दण्ड हो-3 तीजा बतलाएँ रे-ऽऽ॥2543॥

(346) बिल्ली कुत्ते पालें जो, अस्त्र शस्त्र ले देवें जो-2
विष को लेते देते जो-ऽऽ
चौथा अनर्थदण्ड यहाँ, इनसे उपजें पाप यहाँ-2
इनका भी त्याग हो-3 अब मन में लाओ रे-ऽऽ॥2544॥

(347) काम भोग के शास्त्र यहाँ, पापकर्म के लेख यहाँ-2
वशीकरण के शास्त्र यहाँ-ऽऽ
सुनना या चर्चा करना, कहते अनर्थ दण्ड यहाँ-2
पापों के कार्य हो-3 सब व्यर्थ बताएँ रे-ऽऽ॥2545॥

(348) पाँच तरह के पाप यहाँ-अनर्थदण्ड ही कहें यहाँ-2
दुखदायी हैं सभी यहाँ-ऽऽ
ज्ञानी इन्हें छोड़ता है, गुणव्रत धारी होता है-2
दूजा ये गुणव्रत हो-3 गुण वृद्धि कराये रे-ऽऽ॥2546॥

(349) शक्ति जानकर त्याग करे, भोजन वस्त्र प्रमाण करे-2
भोगों में परिमाण धरे-ऽऽ
भोगोपभोग है ये गुणव्रत, तीजा है गुण वृद्धि करे-2
त्याग जीवन में हो-3 निर्मलता लाये रे-ऽऽ॥2547॥

(350) विद्यमान जो वस्तु यहाँ, त्याग करे जो अभी यहाँ-2
करें प्रशंसा सभी यहाँ-ऽऽ
मन के लड्डू खाता जो, अल्प सिद्धि को पाता वो-2
मन से जो त्यागी हो-3 वह श्रेष्ठ बताएँ रे-ऽऽ॥2548॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(351) तीन योग की शुद्धि करें, क्षेत्र काल का ध्यान धरें-2
आसन स्थिर यहाँ करें-ऽऽऽ
निज गुण में तन्मयता हो, ऐसी नित सामायिक हो-2
अनुभव की धारा हो-3 तब ही आ पाये रे-ऽऽ॥2549॥

(352) कलकल शब्द जहाँ नहिं हो, भीड़भाड़ स्थान न हो-2
मच्छर डाँस प्रकोप न हो-ऽऽ
सामायिक के योग्य यहाँ, वही क्षेत्र उपभोग्य यहाँ-2
ऐसा स्थान हो-3 सम भाव कराये रे-ऽऽ॥2550॥

(353) प्रभु वंदन त्रयकाल करें, छः छः घड़ी ध्यान धरे-2
ऐसा गणधर देव कहें-ऽऽ
सन्धिकाल में सामायिक,करने को जिनदेव कहें-2
सामायिक का ये हो-3 शुभकाल बतायें रे-ऽऽ॥2551॥

(354) पर्यंकासन, खड़गासन, समय करे निर्धारित मन-2
हाथ जोड़ प्रभु का वंदन-ऽऽ
सब सावद्य छोड़ करके, मन एकाग्र यहाँ करके-2
करता सामायिक हो-3 मुनिसम हो जाये-ऽऽ॥2552॥

(355) अशुभ योग नहिं करे यहाँ, दुष्प्रणिधान न धरे यहाँ-2
नहीं अनादर करे यहाँ-ऽऽ
भूले नहिं सामायिक को, राग-द्वेष नहिं करे यहाँ-2
सामायिक के ये हो-3 अतिचार बताएँ रे-ऽऽ॥2553॥

(356) आरंभ-सारंभ त्याग करे, भाव नहीं सावद्य धरे-2
समता भावी नित्य रहे-ऽऽऽ
परमेष्ठी का हो स्मरण, मन में हो उत्साह सघन-2
तब ही सामायिक हो-3 आनंद दिलाए रे-ऽऽ॥2554॥

(357) तेल स्नान का त्याग करे, स्त्री ससंर्ग न राग धरे-2
आठम चौदस व्रती रहे-ऽऽ
ज्ञानी श्रावक वही यहाँ, करे साधना नित्य यहाँ-2
प्रोषध का भाव हो-3 उसमें नजराये रे-ऽऽ॥2555॥

(357) प्रोषध में उपवास करे, या भोजन इक बार करे-2
निर्विकार मन भाव धरे-ऽऽऽ
आभूषण वैराग्य धरे, शांतभाव कर राग तजे-2
दूजा शिक्षाव्रत हो-3 प्रोषध कहलाए रे-ऽऽ॥2556॥

(359) श्रद्धा आदि गुणों को धर, देय दान नवभक्ति कर-2
सत्पात्रों को खुश होकर-ऽऽ
तीजा शिक्षाव्रत जानो, अपार महिमा को जानो-2
पुण्य का स्रोत हो-3 यह श्रेष्ठ बताएँ रे-ऽऽ॥2557॥

(360) दान चार परकार यहाँ, देता सारे सौख्य यहाँ-2
सभी सिद्धियाँ करे यहाँ-ऽऽ
दान परम उपकार यहाँ, सभी सुखों की खान यहाँ-2
श्रावक में ये गुण हो-3 अतिश्रेष्ठ बताएँ रे-ऽऽ॥2558॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(361) भोजन दे अति सौख्य करें, औषध से नीरोग वरे-2
शास्त्रदान से ज्ञान बढ़े-ऽऽ
अभय दान जीवन देता, दान यहाँ सब कुछ देता-2
दान बिन भव में हो-3 कुछ भी नहिं पाये रे-ऽऽ॥2559॥

(362) दान दिया आहार यहाँ, दिये हैं तीनों दान यहाँ-2
भूख प्यास नहिं व्याधि यहाँ-2
ज्ञान का नित अभ्यास करे, रक्षा अपने प्राण करे-2
सबमें आहार हो-3 ही श्रेष्ठ बताएँ रे-ऽऽ॥2560॥

(363) भक्तिभाव से दान दिया, उसने सब कुछ प्राप्त किया-2
सुखमय जीवन यहाँ जिया-ऽऽऽ
वह रत्नत्रय प्राप्त करे, सारे कर्म विनाश करे-2
इक दिन उसको ही हो-3 मुक्ति मिल जाये रे-ऽऽ॥2561॥

(364) दान सभी दे खूब यहाँ, इच्छा नहिं कुछ लोक यहाँ-2
भक्ति भाव में रखे यहाँ-ऽऽ
रत्नत्रय को साध रहा, रत्नत्रय स्थाप रहा-2
दुनियां का वैभव हो-3 पाकर शिव पाये रे-ऽऽ॥2562॥

(365) उत्तम पात्र विशेष मिला, श्रेष्ठ भक्तिकर दान दिया-2
इक दिन ऐसा काम किया-ऽऽ
इन्द्र पदों को देता है, पाप सभी हर लेता है-2
थोड़ा सा दान हो-3 बहु फल दिलवाये रे-ऽऽ॥2563॥

(366) लोभ व पाप घटाना है, तो मर्यादा लाना है-2
माह वर्ष दिन करना हो-ऽऽ
सभी दिशा परिमाण करें, बाहर जाना त्याग करें-2
इसको ही दिग्व्रत हो-3 गुरुदेव बताएँ रे-ऽऽ॥2564॥

(367) दिशा का जो परिमाण किया, उसमें भी कम और किया-2
विषय भोग को रोक दिया-ऽऽ
भोगोपभोग परिमाणों में, कम से कम का भाव किया-2
चौथा शिक्षाव्रत हो-3 यह ही कहलाए रे-ऽऽ॥2565॥

(368) बारह व्रत का पालन कर, अंत समय संल्लेखन धर-2
करे समाधि समता धर-ऽऽ
स्वर्ग सुखों को पाता है, दिव्यगति में जाता है-2
व्रत का पालन ही हो-3 निज आत्म रमाये रे-ऽऽ॥2566॥

(369) कोई सम्यग्दृष्टि यहाँ, चित्त करे दृढ़ रूप यहाँ-2
व्रत का पालन करे यहाँ-ऽऽ
इन्द्र पदों को पाता है, सुख वैभव मिल जाता है-2
व्रत के पालन बिन हो-3 पद इन्द्र न पाये रे-ऽऽ॥2567॥

(370) बारह कर आवर्त यहाँ, चउ प्रणाम दो नमन यहाँ-2
खुश हो कायोत्सर्ग यहाँ-ऽऽ
बीजाक्षर, परमेष्ठी का, चिंतन करता ध्यान यहाँ-2
उसके सामायिक हो-3 प्रतिमा बतलाएँ रे-ऽऽ॥2568॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(371) निज स्वरूप का ध्यान करे, चिंतन कर्म विपाक करे-2
सामायिक त्रय बार करे-ऽऽऽ
फिर उपसर्ग भले आये, नहीं ध्यान से डिग पाये52
उसके सामायिक हो-3 प्रतिमा बतलाएँ रे-ऽऽ।।2569।।

(372) सप्तम तेरस दे आहार, जिन मंदिर में करे प्रवास-2
अष्टम का करता उपवास-ऽऽऽ
यूँ वह प्रोषध धरे यहाँ, कर्तव्यों को करे यहाँ-2
प्रोषध का भाव हो-3 उसमें नजराये रे-ऽऽ।।2570।।

(373) गृह कार्यों का त्याग करे, रात को धर्मध्यान करे-2
सामायिक स्वाध्याय करे-ऽऽ
प्रात: पूजा पाठ करे, अष्टम को उपवास करे-2
आतम अनुभव में हो-3, ये चित्त लगाये रे-ऽऽ।।2571।।

(374) नवमी को उठ ध्यान करे, पूजा कर स्वाध्याय करे-2
मुनियों को आहार दे-ऽऽ
बाद में भोजन स्वयं करे, ऐसे प्रोषध पूर्ण करे-2
तब ही संयम में हो-3 वृद्धि नजराए रे-ऽऽ।।2572।।

(375) सप्तम तेरस भोजन कर, उस दिन व्रत को ग्रहण कर-2
करता है जो प्रोषध व्रत-ऽऽ
अष्टम चौदस त्याग करे, जघन्य प्रोषध उसे कहें-2
प्रोषध करने से हो-3 शक्ति बढ़ जाये रे-ऽऽ।।2573।।

(376) त्याग किया आरंभ यहाँ, उपशम सभी कषाय यहाँ-2
फिर धारा उपवास यहाँ-ऽऽ
ऐसा जो कर लेता है, क्षण में क्षय कर देता है-2
सारे ही कर्म हो-3 यह बात बताएँ रे-ऽऽ।।2574।।

(377) मोह त्याग नहिं करे यहाँ, व्रत करता उपवास यहाँ-2
रंच न हो निर्जरा यहाँ-ऽऽ
तन को यहाँ सुखाता है, व्यर्थ ही दुक्ख उठाता है-2
मोह त्यागी ही हो-3 उत्तम फल पाये रे-ऽऽ।।2575।।

(378) सचित्त फल और छाल यहाँ, कोपल बीज व मूल यहाँ-2
पत्ते शाखा शाक यहाँ-ऽऽ
इन्हें न ज्ञानी खाता है, सचित्त त्याग कहलाता है-2
दिल में दया का हो-3 वह भाव दिखाए रे-ऽऽ।।2576।।

(379) जिसको खुद नहिं खाता हो, उसे न कभी खिलाता हो-2
आलू कभी न लाता हो-2
खाये या खिलवाये जो, फल दोनों का एक अहो-2
करुणा हो मन में हो-3 तो भाव ये आयें रे-ऽऽ।।2577।।

(380) जिसने सचित्त त्याग किया, रसना इन्द्रिय जीत लिया-2
दया भाव को प्रकट किया-ऽऽ
जिन वचनों की धारा है, जीवन यहाँ सम्हारा है-2
हिंसा भावों से हो-3 मन दूर हटाये रे-ऽऽ।।2578।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–ऽऽ
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–ऽऽ

(381) चार प्रकार अहार यहाँ, निश में करता त्याग यहाँ–2
पर को नहीं कराये यहाँ–ऽऽ
रात्रि भुक्ति त्यागी वो, छठवीं प्रतिमा धारी वो–2
ऐसे ही लोग हो–3 अच्छा फल पायें रे–ऽऽ।।2579।।

(382) रात्री भोजन त्याग करे, वर्ष में नहिं उपवास करे–2
छः महीने का फल मिले–ऽऽ
भोजन संग आरंभ हटे, निशहिंसा से नित्य बचे–2
नर्क तिर्यंच हो–3 में कभी न जाये रे–ऽऽ।।2580।।

(383) स्त्री संसर्ग से दूर रहे, मैथुन का जो त्याग करे–2
स्त्री अभिलाषा नहीं करे–ऽऽ
ब्रह्मचर्य व्रत धारी जो, होता है ब्रह्मचारी वो–2
तीनों योगों से हो–3 व्रत निज में धारे रे–ऽऽ।।2581।।

(384) करता नहिं आरंभ यहाँ, करवाता भी नहीं यहाँ–2
अनुमोदन नहिं करे यहाँ–ऽऽ
हिंसा से भयवीत है जो, आरंभ त्यागी बनता वो–2
ज्ञान की धारा हो–3 ये त्याग कराये रे–ऽऽ।।2582।।

(385) अंतर–बाह्य परिग्रह को, त्याग करें मन वच से जो–2
पापों से बचता है वो–ऽऽ
त्याग करे और खुश हो जो, परिग्रह त्यागी प्रतिमा हो–2
पापों की जड़ ही हो–3 परिग्रह बतलायें रे–ऽऽ।।2583।।

(386) वैभव रहित दरिद्री हों, मानव स्वाभाविक ही हों–2
बाह्य परिग्रह बिन ही हों–ऽऽऽ
अंतस् परिग्रह त्याग करे, वह कोई निर्ग्रन्थ रहे–2
मोह परिणाम हो–3 दुख बीज बताएँ रे–ऽऽ।।2584।।

(387) जैसा जो होना होगा, वैसा ही आगे होगा–2
मुझसे कुछ भी नहिं होगा–ऽऽ
अनुमति भी नहिं देता है,दूर पाप से रहता है–2
अनुमति त्यागी वह हो–3 प्रतिमा कहलाए रे–ऽऽ।।2585।।

(388) राग–द्वेष से युक्त यहाँ, कार्य शुभाशुभ करे यहाँ–2
व्यर्थ पाप नित करें यहाँ–ऽऽऽ
कोई पूछे अघ कर लूँ, तो सुनकर चुप रहे यहाँ–2
अनुमति का त्यागी हो–3 वह व्यक्ति कहाए रे–ऽऽ।।2586।।

(389) बिना याचना ग्रहण करे, भिक्षा का आचरण करे–2
ऐसे भोजन प्राप्त करे–ऽऽऽ
उद्दिष्ट त्यागी कहलाए, साधु संग जो रह जाये–2
उत्कृष्ट श्रावक हो–3 वह ही कहलाए रे–ऽऽ।।2587।।

(390) व्रत से होकर शुद्ध यहाँ, आराधन नित करे यहाँ–2
होता है वह इन्द्र यहाँ–ऽऽ
सब देवों से सेवित हो, वैभव ये अनुबंधित हो–2
व्रत की महिमा तब हो–3 सब समझ में आये रे–ऽऽ।।2588।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–ऽऽ
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–ऽऽ

(391) रत्नत्रय से युक्त यहाँ, क्षमा धर्म संयुक्त यहाँ–2
सबमें ही मध्यस्थ यहाँ–ऽऽ
हरपल समता भाव धरे, सारमयी सुख भाव करे–2
धर्म यही है हो–3 आगम बतलाए रे–ऽऽ॥2589॥

(392) मुनि धर्म दश भेद यहाँ–रत्नत्रय त्रयभेद यहाँ–2
क्षमा मार्दव रूप यहाँ–ऽऽ
आर्जव शौच सत्य संयम, तप त्याग आकिंचन ब्रह्म–2
धर्म का सार हो–3 सुख ही बतलाएँ रे–ऽऽ॥2590॥

(393) देव तिर्यंच मनुष्य यहाँ, करें घोर उपसर्ग यहाँ–2
फिर भी मुनि हों शांत यहाँ–2
क्रोध रंच नहिं मन आये, निर्मल क्षमा उभर आए–2
ऐसे मुनियों में हो–3 वह क्षमा दिखाए रे–ऽऽ॥2591॥

(394) जो मुनि उत्तम ज्ञानी हैं, महा तपस्वी ध्यानी हैं–2
रंच नहीं अभिमानी है–ऽऽ
भाव विनम्र रखे उर में, मार्दव भाव दिखे उसमें–2
मार्दव का धर्म हो–3 तब ही दिख पाये रे–ऽऽ॥2592॥

(395) करे न कुटिल विचार यहाँ, करे न छल के कार्य यहाँ–2
बोले कपट न बात यहाँ–ऽऽ
दोष छिपाता नहिं अपने, रखे न मायाचार यहाँ–2
आर्जवमय धर्म हो–3 उसमें नजराए रे–ऽऽ॥2593॥

(396) समता और संतोषी जल, तृष्णा का धो देता मल–2
शौच धर्म है जिसका फल–ऽऽ
भोजन में आसक्ति न हो, निर्मलता उसके मन हो–2
शौचमय धर्म हो–3 सब लोभ मिटाये रे–ऽऽ॥2594॥

(397) हरदम सत्य वचन बोले, आगम से खुद को तौले–2
अंतस अनुभव पट खोले–ऽऽ
शुद्धातम का संवेदन, सिद्ध स्वरूपी नित चिंतन–2
सत्य धर्म तब हो–3 अनुभव में आये रे–ऽऽ॥2595॥

(398) इन्द्रिय मन वश करे यहाँ, जीव की रक्षा करे यहाँ–2
हिंसा भाव न धरे यहाँ–ऽऽऽ
मन से आतम ध्यान करे, समिति पालकर नित्य चले–2
उत्तम संयम का हो–3 तब धर्म दिखाये रे–ऽऽ॥2596॥

(399) समताभावी हुआ यहाँ, चाह न सुख की करे यहाँ–2
काय क्लेश नित सहे यहाँ–ऽऽ
सुख परलोक न चाहे जो, निर्मल तप उसमें ही हो–2
तप जो भी धारे हो–3 वह कर्म खपाये रे–ऽऽ॥2597॥

(400) मिष्ट भोज का त्याग करे, राग–द्वेष से दूर रहे–2
वसति ममत्व न भाव करे–ऽऽ
उपकरणों में राग नहीं–त्याग धर्म उस मुनि रहे–2
त्याग का भाव हो–3 मन शुद्ध बनाये रे–ऽऽ॥2598॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(401) सभी परिग्रह त्याग दिया, तन से ममत्व नाश किया-2
चेतन पर नित ध्यान दिया-ऽऽ
भाव किया एकत्व यहाँ, आकिंचन्य हो धर्म वहाँ-2
तब ही ये आतम हो-3 निज में रम पाये रे-ऽऽ॥2599॥

(402) काम कथा न करे यहाँ, रहे न स्त्री संग यहाँ-2
रूप में राग न रखे यहाँ-ऽऽ
निज आतम में रमण करे, ब्रह्मचर्य व्रत वही धरे-2
ये व्रत व्रतों का हो-3 राजा कहलाए रे-ऽऽ॥2600॥

(403) तरुणी देख न विचलित हो, मन विकार से चलित न हो-2
कभी न मन उद्वेलित हो-ऽऽ
रण में शूर वो शूर नहीं, निर्विकार वो शूर यहीं-2
ब्रह्मचर्य व्रत हो-3 उसमें बतलाएँ रे-ऽऽ॥2601॥

(404) जहाँ सूक्ष्म भी हिंसा हो, उसको तुम नहिं धर्म कहो-2
दशलक्षण मय धर्म अहो-ऽऽ
धर्म अहिंसा परम कहा, वीतरागमय रूप अहा-2
धर्म बिन कोई हो-3 सुख नहिं दे पाये रे-ऽऽ॥2602॥

(405) हिंसा करना पाप यहाँ, धर्म है दया प्रधान यहाँ-2
ऐसा विधि विधान यहाँ-ऽऽ
देव गुरु के लिये यहाँ, ठीक न हिंसा कार्य यहाँ-2
पाप हो कैसा हो-3 पर पाप कहाए रे-ऽऽ॥2603॥

(406) देव गुरु के निमित करे, हिंसा, उसको धर्म कहे-2
वो अज्ञानी मूर्ख अरे-ऽऽ
हिंसा को तो पाप कहा, कौन कहे फिर धर्म अहा-2
हिंसा में धर्म हो-3 कभी ना हो पाये रे-ऽऽ॥2604॥

(407) काल लब्धि से हीन है जो, पाते जैन धर्म नहिं वो-2
भटके हैं अनादि से जो-ऽऽ
मुश्किल से जिनधर्म मिले, जिसमें लब्धि विशुद्धि खिले-2
विरले ही ऐसे हो-3 भव में बतलाएँ रे-ऽऽ॥2605॥

(408) धर्म के हैं दश भेद यहाँ, पुण्य कराते बंध यहाँ-2
पाप कराते नाश यहाँ-ऽऽ
इनसे हरदम पुण्य मिले, पुण्य के लिये ये नहीं करे-2
तब ही आतम का हो-3 निज रूप दिखाए रे-ऽऽ॥2606॥

(409) जो चाहे नित पुण्य यहाँ, वो चाहे संसार यहाँ-2
फिर होता भव भ्रमण यहाँ-ऽऽ
पुण्य सुगति दिलवाता है, धर्म मोक्ष ले जाता है-2
पुण्य का नाश हो-3 भव पाश मिटाए रे-ऽऽ॥2607॥

(410) कषाय से जो भरा यहाँ, चाह विषयसुख रखे यहाँ-2
पुण्य करे व्रत खूब यहाँ-ऽऽ
उसे विशुद्धि कहाँ से हो, जब मन भी नहिं शुद्ध अहो-2
उसको भव भव में हो-3 भव दुख आ जाएँ रे-ऽऽ॥2608॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(411) पुण्य की इच्छा खूब करे, पुण्यबंध आसक्ति करे-2
उसे पुण्य नहिं श्रेष्ठ बंधे-ऽऽ
पुण्य फलों की चाह न कर, निज स्वभाव का आदर कर-2
तब ही उत्तम फल हो-3 वह पुण्य दिलाए रे-ऽऽ॥2609॥

(412) मन्द कषाय हृदय में हो, पुण्य बंध तब तीव्र अहो-2
पुण्य क्रिया से तीव्र न हो-ऽऽ
मंद कषाय पुण्य लाये, इच्छा पुण्य न करवाये-2
पुण्य से चक्री हो-3 पद झट मिल जाये रे-ऽऽ॥2610॥

(413) जीव दया भी धर्म यहाँ, यज्ञ में हिंसा धर्म यहाँ-2
शंका तब हो गई यहाँ-ऽऽ
जिन वच में शंका नहिं हो, तब ही यहाँ नि:शंक अहो-2
सम्यग्दर्शन में हो-3 प्रमुख बताएँ रे-ऽऽ॥2611॥

(414) दया भाव को धर्म कहा, हिंसा को नहिं धर्म कहा-2
निश्चय से ये सही अहा-ऽऽ
इसमें हो संदेह नहीं, निशंकित गुण रहे यहीं-2
ऐसा गुण मन में हो-3 निश्चलता लाये रे-ऽऽ॥2612॥

(415) संयम तप को पाया है, भोग-विषय नहिं चाहा है-2
नि:कांक्षित मन भाया है-ऽऽ
इससे सब संक्लेश मिटें, वीतराग के भाव बनें-2
ऐसा गुण मन का हो-3 संक्लेश मिटाये रे-ऽऽ॥2613॥

(416) वस्तु स्वभाव समझता है, वही घृणा नहिं करता है-2
मुनि सेवा नित करता है-ऽऽ
रोगी मुनि से ग्लानि नहीं, निर्विचिकित्सा गुणी वहीं-2
ये गुण आतम से हो-3 नित प्रेम कराये रे-ऽऽ॥2614॥

(417) लज्जा लालच भय यहाँ, इनके वश जो रहे यहाँ-2
सत्य ज्ञान फिर रहे कहाँ-ऽऽ
जिन वच को वह मानेगा, सत्य बात जो जानेगा-2
ये गुण सबका मन हो-3 मजबूत बनाए रे-ऽऽ॥2615॥

(418) ढके गैर के दोष यहाँ, निजगुण प्रकट न करे यहाँ-2
होगा, होना है जो यहाँ-ऽऽ
ऐसे भाव विचारी जो, उपगूहन गुणधारी वो-2
ये गुण हम सबको हो-3 गंभीर बनाये रे-ऽऽ॥2616॥

(419) भावों से गिर रहे हैं जो, स्थिरता नहिं मन में हो-2
उनको मार्ग दिखाता जो-ऽऽ
हो स्थिर, स्थिर करता है, गुण स्थितिकरण वरता है-2
ये गुण इस मन को हो-3 अति दृढ़ता लाये रे-ऽऽ॥2617॥

(420) बोले हरदम प्रियवचन, धर्मी से हो प्रेम सघन-2
उनकी सेवा में निशदिन-ऽऽ
धर्मी के दुख दूर करे, उसमें वत्सल भाव रहे-2
ये गुण जीवों में हो-3 अति प्रेम बढ़ाए रे-ऽऽ॥2618॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(421) ज्ञान से ज्ञान प्रकाश करे, चर्याशुद्ध विकास करे-2
सबको महिमा धर्म दिखे-ऽऽऽ
धर्मी निर्मल मन वाला, है प्रभावना गुण प्याला-2
ये गुण जीवों का हो-3 यश भव फैलाये रे-ऽऽ॥2619॥

(422) तत्त्व, तर्क से सिद्ध करे, वीतरागता सिद्धि करे-2
जिनशासन महिमा प्रकटे-ऽऽ
जीते भूख प्यास तप से, लोग देखते अचरज से-2
ये गुण प्रभाव हो-3 यशकीर्ति बढ़ाए रे-ऽऽ॥2620॥

(423) पर निंदा नहिं करे यहाँ, इन्द्रिय सुख नहिं चाह यहाँ-2
भाये निज शुद्धात्म यहाँ-ऽऽ
उसमें अष्ट सभी गुण हों, राग-द्वेष नहिं उसमें हों-2
ये गुण सबको ही हो-3 सम्यक्त्व दिलाये रे-ऽऽ॥2621॥

(424) निशंकित गुण रहे यहाँ, धर्म विषय ज्यों कहे यहाँ-2
वैसे जिन गुरु समझ यहाँ-ऽऽ
तत्त्व में वैसा भाव रहे, जैसा धर्म में यहाँ कहे-2
ये गुण श्रद्धा को हो-3 क्षायिक कर जाये रे-ऽऽ॥2622॥

(425) प्रथम धर्म का ज्ञान नहीं, धर्म समझता कष्ट यहीं-2
मोह ने जकड़ा उसे यहीं-ऽऽ
मुश्किल से उपदेश मिले, पालन वो कर नहीं सके-2
मोह पिशाच हो-3 मोहित कर जाये रे-ऽऽ॥2623॥

(426) ज्यों स्त्री सुत प्रेम करे, वैसा प्रभु से नहीं करे-2
इसीलिए दुख खूब भरे-ऽऽ
प्रभु से प्रेम जो कर लेता, क्षण में ही सुख वर लेता-2
मोह में फँसकर हो-3 क्यूँ जान गँवाए रे-ऽ॥2624॥

(427) लक्ष्मी की बहु चाह करे, प्रभु को कभी न याद करे-2
धर्म बिना धन कहाँ मिले-ऽऽ
बीज बिना हो धान्य नहीं, पुण्य बिना धन कभी नहीं-2
जानो जीवन में हो-3 निज धर्म बढ़ाओ रे-ऽऽ॥2625॥

(428) धर्म आचरण करे यहाँ, क्षमा सभी पर धरे यहाँ-2
पराया धन नहिं छुए यहाँ-ऽऽ
पराई स्त्री माँ समझे, उसके घर धन नित्य बढ़े-2
उसकी यशकीर्ति हो-3 बढ़ती ही जाये रे-ऽऽ॥2626॥

(429) धर्मी पर विश्वास करें, सभी लोग सम्मान करें-2
मन जिसका अतिशुद्ध रहे-ऽऽ
हित-मित-प्रिय वचन बोले, यश उसका जग में फैले-2
उसके वचनों को हो-3 अनुकरण में लाएँ रे-ऽऽ॥2627॥

(430) धर्मयुक्त तिर्यंच यहाँ, हो जाता है देव यहाँ-2
महिमा दिखती धर्म यहाँ-ऽऽ
नाग, श्वान भी देव हुए, धर्म से सारे सौख्य हुए-2
धर्म के आगे हो-3 सब शीश झुकाएँ रे-ऽऽ॥2628॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(431) धर्म से अग्नि शीतल हो, सर्प फूल की माला हो-2
देव भी अपना नौकर हो-ऽऽ
शत्रु सभी हों मित्र यहाँ, धर्म बनाता सुखी यहाँ-2
धर्म जीवन को हो-3 खुशहाल बनाये रे-ऽऽ॥2629॥

(432) हो शमशीर यहाँ माला, जहर बने अमृत प्याला-2
धर्म से मन में उजियाला-ऽऽ
आपत्ति, सम्पत्ति बने, बुरा समय भी श्रेष्ठ बने-2
धर्म से उत्तम हो-3 कुछ नजर न आए रे-ऽऽ॥2630॥

(433) धर्म से झूठे सच्चे हों, पाप कार्य भी अच्छे हों-2
आलसी भी धनवाले हों-ऽऽ
बुरा करें फल दे खुशियाँ, जो चाहें वो पूरा हो-2
धर्म की महिमा हो-3 भगवंत बताएँ रे-ऽऽ॥2631॥

(434) धर्म रहित जो रहा यहाँ, चक्री जाये नरक यहाँ-2
देव बने आ पेड़ यहाँ-ऽऽ
मिले न धन सम्पत्ति यहाँ, कृपण दरिद्री बनें यहाँ-2
धर्म बिन जीते हो-3 वे दुर्गति पायें रे-ऽऽ॥2632॥

(435) धर्म बिना पुरुषार्थ करे, इष्ट वस्तु नहिं प्राप्त करे-2
मेहनत का फल नहीं मिले-ऽऽ
उल्टी उसको हानि मिले, मेहनत व्यर्थ यहाँ निकले-2
धर्म नहिं हो तो हो-3 फल पूर्ण न पाये रे-ऽऽ॥2633॥

(436) धर्म अधर्म के देखो फल, फिर अपना ही देखो कल-2
आज करो फल उसका कल-ऽऽ
अच्छे फल की चाह कदा, धर्म आचरण करो सदा-2
करनी का फल ही हो-3 किस्मत कहलाये रे-ऽऽ॥2634॥

(437) कर्मबंध से जकड़े हम, मोहभाव को पकड़े हम-2
कैसे मिट पायेंगे गम-ऽऽऽ
जब तक तप नहिं धरें यहाँ, कैसे हो निर्जरा यहाँ-2
तप को जानेंगे हो-3 तब कर्म खपायें रे-ऽऽ॥2635॥

(438) इन्द्रिय को उपशम करना, है उपवास यहाँ करना-2
विषयों से हरदम बचना-ऽऽ
जो मुनि इन्द्रिय जयी जहाँ, आहारी उपवास समां-2
करते आहार हो-3 उपवास कहाये रे-ऽऽ॥2636॥

(439) इन्द्रिय मन को जीत लिया, विषय सुखों को दूर किया-2
निज स्वरूप में लीन किया-2
स्वाध्याय में तत्पर है, उसका जीवन सुखकर है-2
इन्द्रिय जो जीते हो-3 वो जिन कहलाए रे-ऽऽ॥2637॥

(440) कर्म निर्जरा करना है तो उपवास आचरना है-2
दो-त्रय अनशन करना है-ऽऽ
इक दिन का उपवास यहाँ, अनशन तप ले नाम यहाँ-2
इससे कर्मों की हो-3 निर्जरा बताएँ रे-ऽऽ॥2638॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(441) जिसने व्रत उपवास किये, आरंभ सारंभ खूब किये-2
ये उपवास तो कष्ट हुए-ऽऽ
कर्म निर्जरा नहीं हुई, व्यर्थ यहाँ उपवास किये-2
जिससे जो मिलना हो-3 वह नहिं मिल पाए रे-ऽऽ॥2639॥

(442) तृष्णा बिन आहार करे, चर्या में नित शुद्धि धरे-2
थोड़ा सा आहार करे-ऽऽ
ऊनोदर तप उसको हो, करता कम आहार है जो-2
थोड़ा सा तप भी हो-3 निर्जरा कराये रे-ऽऽ॥2640॥

(443) कीर्ति हेतु तप करता है, मायाचारी धरता है-2
मिष्ट भोज मन धरता है-ऽऽ
वो ऊनोदर यहाँ करे, ऐसा तप है व्यर्थ अरे-ऽऽ
इससे नहिं रंच हो-3 निर्जरा बताएँ रे-ऽऽ॥2641॥

(444) लेकर नियम आहार करे, नीरस सा आहार करे-2
बिन स्वादी पशु तरह चरे-ऽऽ
वृत्ति परिसंख्यान है तप, उसको है वरदान ये तप-2
उसको कर्मों की हो-3 निर्जरा बताएँ रे-ऽऽ॥2642॥

(445) भव दुख से जो दुखी यहाँ, नीरस भोजन करे यहाँ-2
विषयों को विष जान यहाँ-ऽऽ
उसके मन में शांति रहे, रस परित्याग का व्रत कहे-2
ये तप इस मन की हो-3 आसक्ति घटाए रे-ऽऽ॥2643॥

(446) राग-द्वेष उत्पन्न करे, वे शैयासन त्याग करे-2
निर्विकार निजरूप रमे-ऽऽ
इन्द्रिय विषय विरक्त रहे, शैयासन तप उसे रहे-2
ये तप प्राणी का हो-3 भव पतन बचाये रे-ऽऽ॥2644॥

(447) ख्याति लाभ नहिं चाह यहाँ, तन भोगों से दूर यहाँ-2
प्रायश्चित में कुशल यहाँ-ऽऽ
अभ्यंतर तप खूब करे, बाहर में उपवास करे-2
उसका थोड़ा तप हो-3 बहु फल दिलवाये रे-ऽऽ॥2645॥

(448) क्षमाशील निर्जन वन में, शांत भाव रखता मन में-2
महाभयानक मरघट में-ऽऽ
पर्वत पे कंदराओं में, तप करने एकांत रमें-2
उनमें शैय्यासन हो-3 तप खूब बताएँ रे-ऽऽ॥2646॥

(449) जीत लिये उपसर्ग यहाँ, शीत ऊष्ण और वात यहाँ-2
फिर भी मन नहिं खेद यहाँ-ऽऽ
भूख प्यास परिषह सहते, काय क्लेश तप वह कहते-2
ऐसे ही मुनिवर हो-3 निजकर्म खपाएँ रे-ऽऽ॥2647॥

(450) स्वयं दोष नहिं करता है, पर से नहीं कराता है-2
अनुमोदन नहिं करता है-ऽऽऽ
मन-वच-तन से त्याग करे, वही विशुद्धि प्राप्त करे-2
मन की विशुद्धि हो-3 निर्जरा कराये रे-ऽऽ॥2648॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(451) प्रमादवश गर दोष लगे, उस पर मुनि अति खेद करे–2
अपनी आलोचना करे–SS
प्रायश्चित वह करे यहाँ, अपने मन को शुद्ध करे–2
ऐसे साधू में हो–3 नहिं दोष दिखाएँ रे–SS।।2649।।

(452) प्रायश्चित कर शुद्धि करे, अपनी बुद्धि विशुद्ध करे–2
श्रद्धापूर्वक हृदय धरे–SS
फिर वह दोष न कभी करे, वही साधु गुणशील रहें–2
प्रायश्चित नामक हो–3 तप उसमें आये रे–SS।।2650।।

(453) छोटा हो या बड़ा यहाँ, प्रायश्चित तप कहा यहाँ–2
मन शुद्धि की दवा यहाँ–SSS
दृढ़ निश्चय कर करता है, वही पाप को नशता है–2
दोष मिटते ही हो–3 दुख खुद मिट जाये रे–SS।।2651।।

(454) विकथा नहीं प्रमाद करे, ज्ञान स्वरूपी ध्यान करे–2
अघ से सदा विरक्त रहे–SS
उसमें प्रायश्चित तप हो, उसका ही मन निर्मल हो–2
पापों की छाया हो–3 छू उसे न पाये रे–SS।।2652।।

(455) पाँच तरह की कही विनय, दर्शन–ज्ञान–चरित्र विनय–2
तप है और उपचार विनय–SSS
उपचार विनय बहु भेद यहाँ, कहते हैं गुरुदेव यहाँ–2
होती विनय तो हो–3 नित ज्ञान बढ़ाए रे–SS।।2653।।

(456) दर्शन–ज्ञान–चरित्र विनय, दिलवाती है रत्नत्रय–2
मिटवाती है सारे भय–SSS
बारह तप में धरे विनय, उसे प्राप्त हों तत्त्व सुनय–2
विद्या विनय की हो–3 अगले भव जाये रे–SS।।2654।।

(457) सेवक, नृप अनुकूल चले, वैसे गुरु अनुकूल चले–2
उनकी भक्ति नित्य करे–SS
रत्नत्रय धारी मुनिवर, सेवामयी प्रवृत्ति करे–2
विनय उपचार हो–3 ऐसी बतलाएँ रे–SS।।2655।।

(457) जो उपसर्ग से पीड़ित हो, क्षीण काय वृद्धापन हो–2
रोग से पीड़ित ये तन हो–SS
उनकी सेवा करता है, वही साधना करता है–2
वैयावृत्ति तप हो–3 उसमें आ जाये रे–SS।।2256।।

(459) भाव विशुद्ध धरे उर में, करे प्रवृत्ति आतम में–2
हो विरक्त भव कारण में–SS
शम–दम भाव रखे हरदम, वैय्यावृत्ति तप उसमें–2
ऐसा तप अंतस् के हो–3 कर्म मिटाए रे–SS।।2657।।

(460) दुष्ट विकल्प मिटाता है, निश्चय तत्त्व कराता है–2
ध्यान सिद्धि करवाता है–SS
स्वाध्याय तप संयम से, कहते हैं गुरुवर सबसे–2
इसके बिन जीवन हो–3 कुछ समझ न आये रे–SS।।2658।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–SS
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–SS

(461) जिनश्रुत को नित पढ़े यहाँ, मन मल शोधन करे यहाँ–2
मान प्रतिष्ठा छोड़ यहाँ–SS
उसका ज्ञान बढ़े हरदम, सह लेता वह सारे गम–2
उसके चिंतन से हो–3 चिंता मिट जाये रे–SS ।।2659।।

(462) लौकिक इच्छा रखता है, श्रुत की सेवा करता है–2
मुनि से ऐंठा रहता है–SS
उसका सारा शास्त्र पठन, समझो विषमय है भोजन–2
विद्या की सिद्धि हो–3 वो कभी न पाये रे–SS।।2660।।

(463) राग–द्वेष से प्रेरित हो, शास्त्र पढ़े सब ठगने को–2
कामयुद्ध श्रुत पढ़ता जो–SS
उसका जीवन विषफल है, शास्त्र ज्ञान सब निष्फल है–2
उसका कल्याण हो–3 अब नहिं हो पाये रे–SS ।।2661।।

(464) तन निश्चित अपवित्र यहाँ, आतम परम पवित्र यहाँ–2
चेतन तन से भिन्न यहाँ–SS
आतम ज्ञायक रूप यहाँ, जाने वह सब शास्त्र यहाँ–2
उसके जीवन में हो–3 बुध बढ़ता जाये रे–SS।।2662।।

(465) तन से भिन्न नहीं माने, ज्ञान स्वरूपी नहिं जाने–2
शास्त्र पढ़े तो क्या जाने–SS
पढ़े ना पढ़े एक समां, कहते हैं गुरुदेव यहाँ–2
तन से आतम को हो–3 श्रुत भिन्न बताए रे–SS।।2663।।

(466) तन, जल–मल से लिप्त यहाँ, रोग इलाज न करे यहाँ–2
उदासीनता रखे यहाँ–SS
तन का न संस्कार करे, भोजन की नहिं चाह करे–2
ये तप इस मन को हो–3 सहनशील बनाए रे–SS।।2664।।

(467) निज आतम में लीन रहे, शत्रु–मित्र मध्यस्थ रहे–2
ममत्व तन में नहीं करे–SS
स्थिरता मन में लाता है, तन स्थिर कर जाता है–2
व्युत्सर्ग तप हो–3 उसमें आ जाये रे–SS।।2665।।

(468) तन सेवा में लगा रहे, पिच्छी–कमंडल लिप्त रहे–2
पूजा विधि में लगा रहे–SS
बाह्य कार्य में तन्मय हो, कायोत्सर्ग तप कैसे हो?–2
उसमें चंचलता हो–3 का भाव दिखाये रे–SS।।2666।।

(469) आत्म तत्त्व में लीन यहाँ, अन्तर्मुहूर्त काल यहाँ–2
मन होता एकाग्र यहाँ–SS
इसे ध्यान हम कहते हैं, अशुभ और शुभ होते हैं–2
दोनों ही ध्यान हो–3 इंसां कर जाये रे–SS।।2667।।

(470) आर्त–रौद्र ये अशुभ कहे, धर्म–शुक्ल शुभ श्रेष्ठ कहे–2
शुक्ल ध्यान से मोक्ष लहे–SS
तीव्र कषाय आर्त करे, हो अतितीव्र तो रौद्र धरे–SS
ध्यान पे ध्यान हो–3 हम जरूर लायें रे–SS।।2668।।

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे-ऽऽ
भव में सुख पाने हो-3 की चाह जगायें रे-ऽऽ

(471) मंद कषाय में धर्म यहाँ, अतिमंद में शुक्ल यहाँ-2
बिन कषाय कैवल्य यहाँ-ऽऽऽ
तीव्र कषाय में ध्यान अशुभ, कहते हैं जिनदेव यहाँ-2
ध्यान की महिमा हो-3 अति श्रेष्ठ बताएँ रे-ऽऽ॥2669॥

(472) हिंसा में आनंद लगे, मृषा बोल में खुशी दिखे-2
उसमें मन विक्षिप्त रहे-ऽऽऽ
उसको रौद्र ध्यान होता, दुख के बीज यहाँ बोता-2
धर्मी इन सबके हो-3 त्यागी कहलाएँ रे-ऽऽ॥2670॥

(473) होता इष्ट वियोग यहाँ, कैसे पाऊँ उसे यहाँ-2
चिंतन ऐसा करे यहाँ-ऽऽ
दूजा आर्तध्यान ये है, इसमें भी दुख ही दुख है-2
ज्ञानी जन ऐसा हो-3 नहिं ध्यान लगाएँ रे-ऽऽ॥2671॥

(474) हो अनिष्ट संयोग यहाँ, कैसे हो ये दूर यहाँ-2
चिंतन ऐसा करे यहाँ-ऽऽ
पहला आर्तध्यान है ये, दुखदायी सबको है ये-2
इसको हटाना हो-3 पुरुषार्थ बताएँ रे-ऽऽ॥2672॥

(475) सोना-चाँदी रत्न यहाँ, स्त्री वस्त्राभरण यहाँ-2
रुपया पैसा धान्य यहाँ-ऽऽ
चोरी में आनंद करे, इन पर ही नित ध्यान धरे-2
रौद्र ध्यानी ही हो-3 उसको बतलाएँ रे-ऽऽ॥2673॥

(476) आर्त-रौद्र मय ध्यान यहाँ, दोनों पाप निधान यहाँ-2
दुख की हैं संतान यहाँ-ऽऽ
इन्हें दूर से छोड़ो तुम, नाता कभी न जोड़ो तुम-2
दोनों ही ध्यान हो-3 दुर्गति करवायें रे-ऽऽ॥2674॥

(477) उत्तम क्षमादि धर्म यहाँ, रत्नत्रय है धर्म यहाँ-2
धर्म है वस्तु स्वभाव यहाँ-ऽऽ
जीवों की रक्षा करना, धर्म है दया भाव रखना-2
निर्मलता मन की हो-3 यहाँ धर्म कहाये रे-ऽऽ॥2675॥

(478) धर्म में मन एकाग्र करे, इन्द्रिय विषय को त्याग करे-2
विषय कषाय विरक्त रहे-ऽऽ
धर्मध्यान उस ज्ञानी को, होता है जिनदेव कहें-2
उसमें अहिंसा हो-3 का धर्म सुहाए रे-ऽऽ॥2676॥

(479) राग-द्वेष से रहित है जो, धीर पुरुष धर्मी है वो-2
मन एकाग्र है करता जो-ऽऽ
तत्त्वों का करता चिंतन, वो समझो शुभध्यान सघन-2
धर्म का ध्यान हो-3 अतिपुण्य बढ़ाए रे-ऽऽ॥2677॥

(480) भान हुआ निज रूप यहाँ, जीती हैं इन्द्रियाँ यहाँ-2
नष्ट कर दिया मोह यहाँ-ऽऽ
वही साधु शुभ ध्यान करे, चिंतन में निज आत्म वरे-2
ध्यान उसी को हो-3 जो मोह हटाये रे-ऽऽ॥2678॥

कार्तिकेय स्वामी हमको, सद्राह दिखायें रे–ऽऽ
भव में सुख पाने हो–3 की चाह जगायें रे–ऽऽ

(481) छोड़े सभी विकल्प यहाँ, स्थिर करता निज आत्म यहाँ–2
मन चिन्त्ये चैतन्य यहाँ–ऽऽ
निज स्वरूप का चिंतन हो, उत्तम धर्म ध्यान यहाँ–2
ऐसा ही ध्यान हो–3 आनंद बढ़ाए रे–ऽऽ॥2679॥

(482) कर्मों का उपशम और क्षय, अतिविशुद्ध पैदा हो लय–2
जीव करे अनुभव निर्भय–ऽऽ
शुक्लध्यान होता है तब, होती शुक्ल लेश्या जब–2
ऐसा ही ध्यान हो–3 कैवल्य दिलाए रे–ऽऽ॥2680॥

(483) उपशम क्षपक श्रेणि चढ़कर, पृथक्त्व वितर्क ध्यान रमकर–2
मन से यहाँ विशुद्ध होकर–ऽऽ
शुक्लध्यान मुनि ध्याता है, सारे कर्म खपाता है–2
क्रम–क्रम से ऊपर हो–3 वह चढ़ता जाये रे–ऽऽ॥2681॥

(484) मोह कर्म का नाश किया, क्षीणमोह पर पहुँच गया–2
अंतिम समय को प्राप्त किया–ऽऽ
हुआ ध्यान एकत्व वितर्क, जहाँ मिट गये सारे तर्क–2
अंतर जल्पों का हो–3 अब सत्व न पाये रे–ऽऽ॥2682॥

(485) घाति कर्म मिट गये यहाँ, प्रकटा केवलज्ञान यहाँ–2
सयोगि जिन भगवान यहाँ–ऽऽऽ
सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति ध्यान, यही तीसरा शुक्लध्यान–2
अंतिम समय में हो–3 जिनवर अपनाएँ रे–ऽऽ॥2683॥

(486) योग निरोध यहाँ करते, अयोगि जिन तब सब कहते–2
शुक्ल ध्यान अंतिम करते–ऽऽ
व्युपरत क्रिया निवृत्ति से, कर्म अघाती सब मिटते–2
कर्म मिटते ही हो–3 क्षण में शिव पाये रे–ऽऽ॥2684॥

(487) बारह तप जो उग्र करे, वो मुनि कर्म विनष्ट करे–2
मोक्ष सुखों को प्राप्त करे–ऽऽ
तप बिन नहीं निर्जरा हो, इसके बिन नहिं मुक्ति अहो–2
मुक्ति के साधक हो–3 तप को अपनाएँ रे–ऽऽ॥2685॥

(488) चंचल मन ये रुक जाये, संयम व्रत उज्ज्वल आये–2
जिन आगम ध्वज लहराए–ऽऽ
मन में यही भावना की, अनुप्रेक्षा की रचना की–2
श्रद्धा और ज्ञान हो–3 नहिं भटकन पाये रे–ऽऽ॥2686॥

(489) बारह अनुप्रेक्षाएँ हैं, सत्य स्वरूप दिखाती हैं–2
जीवन को महकाती हैं–ऽऽ
सुने भाव से पढ़ता है, उत्तम सुख वह वरता है–2
सुख की चाहत में हो–3 हर जीव दिखाए रे–ऽऽ॥2687॥

(490) वासुपूज्य मल्लिनाथ प्रभो, नेमि–पार्श्व–महावीर विभो–2
पंच बालयति तीर्थ प्रभो–ऽऽऽ
चक्री– इन्द्रों के स्वामी, तीर्थंकर जग में नामी–2
इनने तप धारा हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–ऽऽ॥2688॥

गुरुवर की होती कृपा, तब हो पद्य अनुवाद।
अति प्रशन्न मन हो यहाँ मिटते वाद-विवाद।।

गुरु चरणों की वंदना, स्वर्ग सुखों की खान।
शीश झुकाकर मैं सदा, करूँ विनम्र प्रणाम।।

गुरु का हो आशीष तो, बनते सारे काम।
करूँ भक्ति से वंदना, लेके गुरु का नाम।।

पद्यानुवाद गुरु ने हमको सिखाया,
सन्मार्ग की किरण दे पथ को दिखाया।
ऐसे विराग गुरुवर जय हो तुम्हारी,
त्रयभक्ति से चरण में वंदन हमारी।।

कार्तिकेय का लिख दिया, हमने पद्या अनुवाद।
शोध पढ़े धीजन यहाँ - छोड़ें वाद-विवाद।

काव्यार्णव

भक्ति मुक्ति दिलाती है, सभी गुणों को लाती है-2
भक्ति भक्त बनाती है-SSS
भक्ति का लो आलंबन, गर चाहो सम्यग्दर्शन-2
इसकी महिमा को हो-3 सारे ऋषि गायें रे-SSS

जिनगुरु के गुण गाते हैं, वे मन से खिल जाते हैं-2
हरदम ही हर्षाते हैं-SSS
जो प्रभुगुण नहिं गाते हैं, वे सुख कभी न पाते हैं-2
खुशियों से दामन हो-3 प्रभु से भर जावे रे-SS

इष्टोपदेश

मूल ग्रंथकर्ता : आचार्य पूज्यपाद स्वामी

पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

पूज्यपाद स्वामी सबको, उपदेश सुनाएँ रे–SS
भव्यों को भव से हो–3 भव पार कराएँ रे–SS

(1) सब कर्मों का नाश किया, निज स्वभाव को प्राप्त किया–2
जिसने ये सब स्वयं किया–SS
ज्ञान स्वरूपी हुए यहाँ, दर्शनमय हो गये यहाँ–2
ऐसे परमातम हो–3 को शीश झुकाएँ रे–SS॥2689॥

(2) उपादान गर योग्य मिले, पत्थर से सोना निकले–2
कारण से ही कार्य बने–SSS
द्रव्य क्षेत्र कालादि मिले, आतम में शुद्धात्म खिले–2
गुरुवर हम सबको हो–3 ये बात बताएँ रे–SS॥2690॥

(3) व्रत ले पाये देवगति, अव्रत से हो नरक गति–2
दोनों में शुभ देवगति–SSS
इंतजार इक छाया में, इक बतलाया है धूप में–2
दोनों में भारी हो–3 अंतर बतलाएँ रे–SS॥2691॥

(4) वजन कोश दो ले जाता, अर्द्धकोश क्या घबराता–SS
शीघ्र पार वह कर जाता–SS
जिन भावों से मोक्ष मिले, उनसे क्या नहिं स्वर्ग मिले?–2
स्वर्ग तो उसको हो–3 झट से मिल जाये रे–SS॥2692॥

(5) स्वर्ग में जो भी जाते हैं, कई वर्ष सुख पाते हैं–2
व्रत महिमा बतलाते हैं–SSS
सुख के उपमातीत निमित्त, वहाँ उन्हें मिल जाते हैं–2
व्रत को अपनाना हो–3 अच्छा बतलाएँ रे–SS॥2693॥

(6) अज्ञ भ्रमित हो जाता है, भव से वह ठग जाता है–2
इन्द्रिय सुख–दुख भाता है–SSS
ये सुख दुख आपत्ति समय, मन व्याकुल कर जाता है–2
रोगों सा जीवन हो–3 भव में नजराए रे–SS॥2694॥

(7) ज्ञान, मोह से ढक जाता, निज स्वभाव नहिं लख पाता–2
पर में मूर्च्छित हो जाता–SS
जैसे कोदों खाने से, वस्तु सही नहिं लख पाता–2
ज्ञान बिन जग में, हो–3 नहिं सत्य दिखाए रे–SS॥2695॥

(8) तन, ग्रह, धन, शत्रु नारी, मित्र–पुत्र दुनियादारी–2
पर स्वभाव के अधिकारी–SS
मोही इनमें फँसता है, अपना इन्हें समझता है–2
ज्ञानी निजगुण से हो–3 ये भिन्न बताएँ रे–SS॥2697॥

(9) देश दिशा से आते हैं, तरु पर रात बिताते हैं–2
पक्षी फिर उड़ जाते हैं–SS
अपने अपने कामवशात्, अन्य दिशा चले जाते हैं–2
वैसे ही हम सब हो–3 दुनियाँ में आये रे–SS॥2698॥

(10) जो अपकार यहाँ करता, कर्मोदय से खुद गिरता–2
उस पर क्रोधी क्यों बनता–SS
जमीं खोदता फाँवड़ से, खुद झुक गया है कर्मों से–2
जो खुद झुक जाये हो–3 क्या उसे झुकाएँ रे–SS॥2699॥

पूज्यपाद स्वामी सबको, उपदेश सुनाएँ रे–SS
भव्यों को भव से हो–3 भव पार कराएँ रे–SS

(11) भवि भवदधि में डूब रहा, अज्ञानी बन जूझ रहा–2
सुचिर काल से घूम रहा–SS
राग–द्वेष डोरी ले जो, मथा मथानी जैसा वो–2
अज्ञानी हरदम हो–3 भ्रमता ही जाये रे–SS॥2700॥

(12) एक विपत्ति जाती है, दूजी बहुत आ जाती हैं–2
रहट समां नजरातीं हैं–SS
ऐसा ही यह जीवन है, जिसमें तो गम ही गम है–2
एक गम जाये हो–3 बहु फिर आ जाये रे–SS॥2701॥

(13) जिसे कमाने में दुख हो, रक्षा करने में दुख हो–2
होता नष्ट बहुत दुख हो–SS
ऐसा धन पा सुखी कहे, घी पी रोगी स्वस्थ कहे–2
धन से सुख माने हो–3 वो मूर्ख कहाए रे–SS॥2702॥

(14) जलते वन को देख यहाँ, सोचे तरु पे बैठ यहाँ–2
मरें सभी मृग आदि यहाँ–SS
खुद भी जले ये भूल रहा, मूरख पर को देख रहा–2
अपनी विपत्ति हो–3 नहिं समझ में आये रे–SS॥2703॥

(15) उम्र घटे धन बढ़ता है, ज्यों ज्यों काल गुजरता है–2
ज्ञानी सभी समझता है–SSS
लोभी जीवन से ज्यादा, धन को इष्ट समझता है–2
ये धन लोभी को हो–3 अंधा कर जाये रे–SS॥2704॥

(16) पहले खूब कमाएँगे, धन एकत्र कराएँगे–2
दान सभी कर जायेंगे–SSS
प्रथम पंक लिपटाएँगे, फिर स्नान कराएँगे–2
ऐसा जो सोचे हो–3 वह मूर्ख कहाए रे–SS॥2705॥

(17) पहले जो संतप्त रहे, तृष्णा उससे नित्य बढे–2
बहु मुश्किल से वह छूटे–SSS
ऐसे भोग विषय सारे, सुधी जनों को नहिं प्यारे–2
ज्ञानी नहिं इनमें हो–3 रुचि कभी दिखाये रे–SS॥2706॥

(18) हो पवित्र, अपवित्र यहाँ, तन का हो संयोग जहाँ–2
क्षुधा तृषा से दुखी यहाँ–SS
उसकी क्या सेवा करना, उसकी न कामना करना–2
इस तन की सेवा हो–3 भव बँध कराये रे–SS॥2707॥

(19) आतम का उपकार करे, वो तन का अपकार करे–2
पूज्यपाद गुरु यही कहें–SS
जो तन का उपकार करे, वो खुद का अपकार करे–2
अपना उपकार हो–3 शिवपुर ले जाये रे–SS॥2708॥

(20) एक तरफ मणि की ढेरी, एक तरफ पत्थर ढेरी–2
होगी एक यहाँ तेरी–SSS
जिसका ध्यान लगाओगे, उसे यहाँ तुम पाओगे–2
बुद्धू खली चाहे हो–3 ज्ञानी मणि चाहे रे–SS॥2709॥

पूज्यपाद स्वामी सबको, उपदेश सुनाएँ रे–SS
भव्यों को भव से हो–3 भव पार कराएँ रे–SS

(21) नित्य नंत सुख वाला है, अनंत दर्शन वाला है–2
जिसमें ज्ञान उजाला है–SS
अनुभव से जाना जाता, तन जितना माना जाता–2
आतम का रूप हो–3 ज्ञानी लख पाये रे–SS॥2710॥

(22) इन्द्रिय संयम धर करके, मन एकाग्रचित्त करके–2
निज आतम स्थिर करके–SS
निज आतम के द्वारा ही, आतम का अनुभव करके–2
अपना ही चिंतन हो–3 आनंद दिलाय रे–SS॥2711॥

(23) अज्ञानी की सेवा हो, फल मिलता अज्ञान अहो–2
ज्ञान से मिलता ज्ञान अहो–SS
जिस पर जो भी होता है, वही सभी को देता है–2
जग में प्रसिद्ध हो–3 यह बात बताएँ रे–SS॥2712॥

(24) आध्यात्मिक गर चिंतन हो, परिषह का अनुभव नहिं हो–2
समता उर में प्रकटित हो–SSS
आस्रव की गति रुक जाती, कर्म निर्जरा हो जाती–2
आत्मा का ध्यान हो–3 निर्जरा कराए रे–SS॥2713॥

(25) ध्यान ध्येय हो एक यहाँ, दो बिन हो संबंध कहाँ–2
ज्ञानी ऐसा कहें यहाँ–SS
मैं चटाई का कर्ता हूँ, दो पदार्थ संबंध यहाँ–2
कर्ता और कर्म हो–3 दो भिन्न बताएँ रे–SS॥2714॥

(26) बँधता ममत्व भावों से, छूटे निर्मम भावों से–2
जीता है निजभावों से–SS
जीव प्रयत्न करे सारे, निर्ममत्वता को धारे–2
मुक्ति का कारण हो–3 समता बतलाएँ रे–SS॥2715॥

(27) एक, शुद्ध निर्मम हूँ मैं, संयोगों से भिन्न हूँ मैं–2
ज्ञानी ज्ञानगम्य हूँ मैं–SSS
जान सकें आतम योगी, ध्यान सिद्धि जिसको होगी–2
ऐसे भावों से हो–3 निर्ममत्व आये रे–SS॥2716॥

(27) दुख की जड़ संयोग यहाँ, संयोगों से भोग यहाँ–2
फिर दु:खों का योग यहाँ–2
इसीलिए संयोगों को, छोड़ रहा त्रय योगों से–2
भव के संबंध हो–3 तब ही मिट पायें रे–SS॥2717॥

(29) मृत्यु नहीं तो भय कैसा? रोग नहीं तो दुख कैसा?–2
मोह नहीं तो दुख कैसा?–SS
बाल, युवा नहिं बूढ़ा मैं, ये पुद्गल पर्याय कहें–2
मेरी परिणति में हो–3 निज आत्म समाये रे–SS॥2718॥

(30) मोह भाव में जोड़े हैं, भोग भोग कर छोड़े हैं–2
जूठन में मन दौड़े हैं–SS
जूठन जानें भोग सभी, ज्ञानी चाहें नहीं कभी–2
ज्ञानी भोगों में हो–3 नहिं लगन लगाये रे–SS॥2719॥

पूज्यपाद स्वामी सबको, उपदेश सुनाएँ रे–ऽऽ
भव्यों को भव से हो–3 भव पार कराएँ रे–ऽऽ

(31) कर्म करे हित कर्मों का, जीव करे हित जीवों का–2
शक्ति प्रभाव दिखे जिसका–ऽऽ
अपना हित सब ही चाहें, जो ताकतवर हो जायें–2
बल का प्रभाव हो–3 सब ही दिखलाएँ रे–ऽऽ॥2720॥

(32) छोड़ तू पर उपकार यहाँ, खुद का कर उपकार यहाँ–2
तत्पर हो जा शीघ्र यहाँ–ऽऽ
खुद का नहिं उपकार करे, पर का करके यहाँ मरे–2
ऐसा जग दीखे हो–3 अज्ञान बताएँ रे–ऽऽ॥2721॥

(33) आत्म ज्ञान, अभ्यास किया, गुरु देशना पान किया–2
स्व–पर भेद विज्ञान किया–ऽऽ
खुद को वह पहचानेगा, वही मोक्ष सुख जानेगा–2
ऐसे ज्ञानी को हो–3 बुधफल मिल जाये रे–ऽऽ॥2722॥

(34) खुद में खुद की आशा कर, शिव सुख की अभिलाषा कर–2
अपने हित की इच्छा कर–ऽऽ
अपने हित में स्वयं लगे, तो निज आतम गुरु कहे–2
अपनी आत्मा ही हो–3 निजगुरु कहलाए रे–ऽऽ॥2723॥

(35) अज्ञानी नहिं ज्ञानी हो, ज्ञानी नहिं अज्ञानी हो–2
गुरु तो केवल निमित्त हों–ऽऽऽ
धर्मद्रव्य जैसे गुरुवर, कहते हैं सारे मुनिवर–ऽऽ
गुरुवर सहायक हो–3 हेतुक बतलाएँ रे–ऽऽ॥2724॥

(36) क्षोभ रहित हो चित्त यहाँ, तत्त्व स्थिर हो बुद्धि यहाँ–2
पाये निर्जन स्थान यहाँ–ऽऽऽ
आलस त्याग निजातम में, हो अभ्यास सुचिंतन में–2
ऐसे वह योगी हो–3 अभ्यास बढ़ाएँ रे–ऽऽ॥2725॥

(37) ज्यों ज्यों तत्त्व समाता है, अनुभूति में भाता है–2
शुद्ध रूप नजराता है–ऽऽ
त्यों त्यों सुलभ विषय भोग, रुचिकर नहिं लग पाता है–2
तत्त्वानुभूति हो–3 विष भोग मिटाए रे–ऽऽ॥2726॥

(38) जब जब भोग न रुचते हैं, सहज सुलभ जो मिलते हैं–2
विषय दुखों से लगते हैं–ऽऽ
उत्तम तत्त्व समाता तब, अनुभूति में आता तब–2
भोगों में अरुचि हो–3 अनुभूति कराए रे–ऽऽ॥2727॥

(93) ये संसार असार दिखे, जब अंतस् अनुभूति लखे–2
इन्द्रजाल की तरह लगे–ऽऽ
मन फिर नहीं भटकता है, भटके, व्याकुल होता है–2
निज को पाने की हो–3 इच्छा हो जाये रे–ऽऽ॥2728॥

(40) निर्जन स्थान जिसे भाये, अनुभव वो करना चाहे–2
एकांती रहना चाहे–ऽऽ
कुछ कहना हो कार्यवशात्, कहके शीघ्र भूल जाये–2
योगी को निर्जन हो–3 अत्यंत सुहाये रे–ऽऽ॥2729॥

पूज्यपाद स्वामी सबको, उपदेश सुनाएँ रे–ऽऽ
भव्यों को भव से हो–3 भव पार कराएँ रे–ऽऽ

(41) कहते हुए न कहता है, चलते हुए न चलता है–2
देखे, पर न देखता है–ऽऽ
जो स्थिर निज में रहता है, वो ऐसा हो सकता है–2
कर्ता दिखते भी हो–3 कर्ता न कहाए रे–ऽऽ॥2730॥

(42) यह क्या, किसका, कैसा है? किस कारण से ऐसा है–2
सब कुछ भूला वैसा है–ऽऽ
आत्म ध्यान में लीन हुआ, तन की खबर विहीन हुआ–2
ऐसा ही योगी हो–3 निर्विकल्प होवे रे–ऽऽ॥2731॥

(43) जीव जहाँ पर रहता है, प्रीति वहाँ पर करता है–2
अपना उसे समझता है–ऽऽऽ
जहाँ जीव रम जाता हैं, कहीं न जाना चाहता है–2
रहते ही रहते हो–3 उसमें रम जाए रे–ऽऽ॥2732॥

(44) विषय भोग में अंजाना, शरीरादि में बेगाना–2
राग–द्वेष नहिं मन लाना–ऽऽऽ
निज का ध्यान लगाए जो, समता भाव जगाए जो–2
कर्मों के बंधन हो–3 झट से मिट जाएँ रे–ऽऽ॥2733॥

(45) पर–पर है, दुखदायी है, निज आतम सुखदायी है–2
बात समझ ये आयी है–ऽऽऽ
तभी महान मनुष्यों ने, किया प्रयत्न इसे पाने–2
आतम में खोजे हो–3 वो निज को पाए रे–ऽऽ॥2734॥

(46) जो पुद्गल को चाहेगा, ज्ञान उसे नहिं भाएगा–2
मूर्ख यहाँ कहलाएगा–ऽऽऽ
चारों गति भरमाएगा, दुख से बच नहिं पाएगा–2
ऐसा बहिरातम हो–3 कभी मुक्ति न पाये रे–ऽऽ॥2735॥

(47) आत्म ध्यान में लीन हुए, निश्चय में लवलीन हुए–2
कर्तव्यों से उठे हुए–ऽऽ
शुद्ध ध्यान जब होता है, परमानंद सजोता है–2
ध्यान का फल तो हो–3 आनंद बताएँ रे–ऽऽ॥2736॥

(48) आत्मध्यान से कर्म जलें, आनंदित शुभ फूल खिलें–2
दुख से नित अनभिज्ञ रहें–ऽऽ
परिषह अनुभव में नहिं हों, खेद खिन्नता रंच न हो–2
आत्मध्यानी को हो–3 खुशियाँ नजराएँ रे–ऽऽ॥2737॥

(49) अंधकार का नाश करे, ज्ञान ज्योति उत्कृष्ट अरे–2
उसका नित ही दर्श करे–ऽऽ
उसके बारे में पूछे, पाने का नित यत्न करे–2
मोक्षाभिलाषी हो–3 नित भाव ये लाये रे–ऽऽ॥2738॥

(50) जीव व पुद्गल अलग–अलग, यही तत्त्व का सार समझ–2
सार छोड़ जो लगे विलग–ऽऽ
वे उसका विस्तार यहाँ, कहते हैं मुनिराज यहाँ–2
शास्त्र तत्त्वों का हो–3 विस्तार बताएँ रे–ऽऽ॥2738॥

पूज्यपाद स्वामी सबको, उपदेश सुनाएँ रे-SS
भव्यों को भव से हो-3 भव पार कराएँ रे-SS

(51) ज्ञानी, पढ़े मनन करता, समता भाव हृदय धरता-2
भाव दुराग्रह को तजता-SSS
रहे भवन में या वन में, मुक्ति पाता भव वन में-2
इष्टोपदेश हो-3 का फल बतलाएँ रे-SS।।2739।।

पूज्यपाद गुरु ने लिखा, इष्टोपदेश ग्रंथ।
चरणों में वंदन करूँ, बन जाएँ निर्ग्रन्थ।।

गुरु विराग ने दे दिया, पद्यानुवाद ज्ञान।
उनके चरण सरोज में करूँ विनम्र प्रणाम।।

अल्प बुद्धि से जो लिखा, शोध पढ़ें धीमान्।
क्षमा करें मुझको सदा, पाऊँ श्रुत वरदान।।
पद्यानुवाद गुरु ने हमको सिखाया,
सन्मार्ग दे सतत तत्त्व हमें दिखाया।

ऐसे विराग गुरुवर जय हो तुम्हारी,
वन्दू विनम्र उनको हे ज्ञानधारी।।

गुरुवर के आशीष से, किया, पद्य अनुवाद।
पूज्यपाद को नित नमूँ, छोड़ूँ वाद-विवाद।।

समण सुत्तं

संकलित ग्रंथ

पद्यानुवाद : उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(1) अरहंतों को नमन करूँ, सिद्धों का नित ध्यान करूँ–2
आचार्यों के चरण झुकूँ–ऽऽ
उपाध्याय को अभिवंदन, सभी साधु को करूँ नमन–2
पाँचों भगवन् का हो–3 नित ध्यान लगाओ रे–ऽऽ।।2740।।

(2) सभी गुनाह विनष्ट करे, दुखियों के सब कष्ट हरे–2
महामंत्र जो जाप करे–ऽऽ
सभी मंगलों में मंगल, यही मंत्र पहला मंगल–2
सब ही जीवों को हो–3 मंगल दिलवाये रे–ऽऽ।।2741।।

(3) प्रभु अरहंत परम मंगल, सिद्ध प्रभु सबको मंगल–2
साधु महंत सदा मंगल–ऽऽ
तीर्थंकर के सभी वचन, सर्वजनों को गुणवर्धन–2
सुख को दिलवायें हो–3 सब कष्ट मिटायें रे–ऽऽ।।2742।।

(4) प्रभु अरहंत परम उत्तम, सिद्धप्रभु हैं सर्वोत्तम–2
सभी साधु हैं लोकोत्तम–ऽऽ
कहा केवली प्रभु ने जो, वही धर्म सबसे उत्तम–2
श्रेष्ठ जो ध्याये हो–3 उत्तम हो जाये रे–ऽऽ।।2743।।

(5) अरहंतों की शरण रहूँ, सिद्धों की नित शरण गहूँ–2
साधु शरण मैं नित्य लहूँ–ऽऽ
कहा धर्म को जिनवर ने, उसकी शरणा साथ रखूँ–2
जिन गुरु की शरण हो–3 भवभ्रमण मिटाये रे–ऽऽ।।2744।।

(6) जो हैं मंगल रूप यहाँ, शरणोत्तम आराध्य यहाँ–2
त्रिलोक पूजित गुरु यहाँ–ऽऽ
नर–सुर–विद्याधर पूजें, कर्मशत्रु को नाश करें–2
ऐसे गुरुओं का हो–3 नित ध्यान लगाओ रे–ऽऽ।।2745।।

(7) घाति कर्म सब नाश किये, भव्यों के उर खिला दिये–2
ज्ञानी सूर्य समान हुए–ऽऽ
ज्ञान अनंत महासुखमय, पाई है त्रयलोक विजय–2
अरहंतों की सब हो–3 जयकार लगाओ रे–ऽऽ।।2746।।

(8) अष्टकर्म से रहित यहाँ, जन्म मृत्यु से पार यहाँ–2
हुए हैं जो कृतकृत्य यहाँ–ऽऽ
सकल तत्त्व के दृष्टा हैं, सभी गुणों के सृष्टा हैं–2
सिद्ध प्रभु हमको हो–3 सिद्धि दिलवायें रे–ऽऽ।।2747।।

(9) पंचाचार करें पालन, स्व–पर समय का करें मनन–2
कई गुणों से उन्नत मन–ऽऽ
पंच महाव्रत धरें सदा, भव में भव से रहें जुदा–2
जग के सब सूरि, मम कृपा दिखायें रे–ऽऽ।।2748।।

(10) भटके भव में जो प्राणी, जो देते श्रुत कल्याणी–2
ऐसे वे मुनिवर ज्ञानी–ऽऽ
उपाध्याय कहलाते हैं, उत्तम गति दिलवाते हैं–2
उनके चरणों में हो–3 हम शीश झुकाएँ रे–ऽऽ।।2749।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(11) शील गुणों को धारें जो, स्थिरता मन में पायें जो–2
राग–द्वेष से रहित हैं जो–ऽऽ
यश समूह से पूर्ण रहें, विनय हृदय में सदा धरें–2
ऐसे साधुगण हो–3 सुख हमें दिलाएँ रे–ऽऽ।।2750।।

(12) अर्हत्, अशरीरी भगवन्, हैं आचार्य परम गुणधन–2
उपाध्याय मुनि श्रेष्ठ परम–ऽऽ
पाँचों से मिल ओ बने, जो परमेष्ठी बीज कहे–2
इनका बीजाक्षर हो–3 इक ओम कहाए रे–ऽऽ।।2751।।

(13) ऋषभ–अजित संभव भगवन, सुमति पदमप्रभु अभिनंदन –2
सुपार्श्व चन्दप्रभ वंदन–ऽऽ
सारे तीर्थंकर गुणमय, कभी न होता जिनको भय –2
उनके चरणों में हो –3 हम शीश झुकायें रे–ऽऽ।।2752।।

(14) पुष्पदंत शीतल गुणधन, श्रेयस वासुपूज्यते जिन – 2
विमल अनंत–धर्म भगवन–ऽऽ
शांतिनाथ जिन शांति वरें, सबका हम गुणगान करें
चरणों में वंदन हो –3 अघ सभी मिटाये रे–ऽऽ।।2753।।

(15) कुंथुनाथ अरनाथ शुभम्, मल्लिनाथ मुनि सुव्रत धन –2
नमि नेमि प्रभु पार्श्व परम–ऽऽ
वर्धमान गुण वृद्धि करें, सभी तीर्थंकर शुद्धि करें
उनके चरणों की हो –3 हम धूल लगायें रे–ऽऽ।।2754।।

(16) निर्मल अधिक चंद्रमा से, अधिक तेजमय सूरज से –2
हैं गंभीर समंदर से–ऽऽ
गुण अनंत हैं सिद्ध किये, सिद्ध प्रभु नित रहें हिये –2
सारे प्रभु सिद्ध हो –3 मम सिद्धि दिलायें रे–ऽऽ।।2755।।

(17) सब जीवों को शरण यहाँ, करवाता भव पार यहाँ –2
होता जो लवलीन यहाँ–ऽऽ
जो पुनीत है पावन है, ऐसा ये जिनशासन है –2
हरदम समृद्ध हो –3 यह धर्म रहाये रे–ऽऽ।।2756।।

(18) विषय सुखों को क्षरण करे, जन्म मरण को हरण करे –2
ऐसे हैं जिनवचन अरे–ऽऽ
सर्व दुखों को नाशे जो, अमृत औषध भासे जो –2
ऐसा जिनशासन हो –3 अमरत्व दिलाये रे–ऽऽ।।2757।।

(19) अर्हंतों ने बोला है, गणधर द्वारा गूँथा है –2
सबसे यहाँ अनूठा हो–ऽऽ
ऐसा वह श्रुतज्ञान यहाँ खोले सबकी आँख यहाँ –2
भक्ति से श्रुत को हो–3 हम शीश नवाएँ रे–ऽऽ।।2758।।

(20) सभी दोष से रहित वचन, जिन मुख वाणी परम शुभम् –2
शुद्ध वचन ही है आगम–ऽऽ
जो सद्राह दिखाता है, सत्य अर्थ दर्शाता है –2
ऐसा वह आगम हो –3 प्रभु आप बतायें रे–ऽऽ।।2759।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(21) आगम में अनुरक्त रहे, भाव सहित आचरण करे –2
निर्मल अपने भाव करे–ऽऽ
असंक्लेश भावों से वो, जगत भ्रमण कम करते वो –2
थोड़े समय में हो –3 वो भव तिर जाये रे–ऽऽ।।2760।।

(22) भव से हो वैराग्य हमें, शिवपथ का अनुसरण करें –2
इष्ट फलों को प्राप्त करें–ऽऽ
तब प्रभाव से हे भगवन्, वीतरागमय हो मम धन –2
प्रभु की कृपा से हो–3 हम सब पा जायें रे–ऽऽ।।2761।।

(23) स्व–पर समय के ज्ञाता जो, कई गुणों से युक्त हैं जो –2
दीप्तिमान गंभीर है जो–ऽऽ
हैं सबको कल्याणमयी, है निर्ग्रंथ सुसौम्यमयी–2
ऐसे ही गुरुवर हो –3 निज सार बतायें रे–ऽऽ।।2762।।

(24) अपने को जैसा चाहो, वैसा ही पर को चाहो –2
ये है जिन उपदेश अहो–ऽऽ
अच्छा लगे तुम्हें नहिं, जो, चाहो वैसा नहिं पर को –2
धर्म ऐसा ही हो –3 सबको बतलाये रे–ऽऽ।।2763।।

(25) कर्म विमोचन संघ करे, पुंज गुणों का संघ रहे –2
दर्श ज्ञान चारित्र करे–ऽऽऽ
सबको करे समन्वित जो, वृद्धि करे रत्नत्रय जो –2
ऐसा मुनि संघ हो –3 नित पुण्य बढ़ाये रे–ऽऽ।।2764।।

(26) रत्नत्रय गण समझ यहाँ, शिवपथ गमन है गच्छ यहाँ –2
गण समूह ही संघ यहाँ–ऽऽ
शुद्ध आतम को समय कहा, निर्मल आतम समय अहा –2
संघ में ये सब हो हमको मिल जाये रे–ऽऽ।।2765।।

(27) जो भव से भयवीत यहाँ, मात–पिता के तुल्य यहाँ –2
है निश्छल व्यवहार जहाँ–ऽऽ
है विश्वासमयी शीतल, शरणमयी है सुंदर फल–2
ऐसा मुनि संघ हो –3 की शरण में आओ रे–ऽऽ।।2766।।

(28) संघ में हो जो साधु यहाँ, उसको होता ज्ञान यहाँ –2
दर्शन व्रत मजबूत जहाँ–ऽऽ
धन्य हैं वो गुरुकुल में जो, जीवन भर संघस्थ हैं जो
उनमें कषायें हो –3 आने नहिं पायें रे–ऽऽ।।2767।।

(29) गुरु के प्रति नहिं भक्ति हो, भय–बहुमान न गौरव हो –2
लज्जा नहिं स्नेह न हो–ऽऽ
भले ही वो गुरु संग रहे, गुण उसमें नहिं रंच रहें –2
गुरुकुल में रहना हो–3 सब व्यर्थ बतायें रे–ऽऽ।।2768।।

(30) संघ कमलवत होता है, जो अलिप्त रज होता है
ज्ञान प्रकाशी होता है–ऽऽ
पंच महाव्रत कणिका है, उत्तर गुण ही केसर है –2
संघ में रहकर हो–3 साधु गुण पायें रे–ऽऽ।।2769।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(31) घेरे कमल को भौंरे ज्यों, संघ को घेरें श्रावक त्यों –2
सेवा से पुण्यातम हों–ऽऽ
जिसमें श्रमणों का गण है, जिसका तेज सूर्य सम है
ऐसा मुनि संघ हो –3 गुणखान बतायें रे–ऽऽ।।2770।।

(32) नय प्रमाण का ज्ञान न हो, सत्य बोध नहिं उसको हो –2
कहते हैं गुरुदेव अहो–ऽऽ
उसे सत्य नहिं सत्य लगे, असत्य को वह सत्य कहे –2
ज्ञान ही हमको हो –3 सच को दिखलाये रे–ऽऽ।।2771।।

(33) समझो ज्ञान प्रमाण यहाँ, नय ज्ञाता अभिप्राय यहाँ –2
हैं उपाय निक्षेप यहाँ–ऽऽ
युक्ति युक्त जो ग्रहण करे, उसको सच्चा ज्ञान अरे –2
ज्ञानी ही भव में, हो –3 भव पार हो जाये रे–ऽऽ।।2772।।

(34) दो नय प्रभु ने बतलाये, निश्चय व्यवहार कहलाये –2
सभी नयों के मूल कहे–ऽऽ
द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक, दोनों निश्चय के हेतुक –2
नय ही प्रामाणिक हो–3 सद्ज्ञान कराये रे–ऽऽ।।2773।।

(35) कई धर्म इक वस्तु में, वस्तु अखण्ड है एक गिनें –2
भेद तो नय व्यवहार करे–ऽऽ
वस्तु अखण्ड कहे जो नय, ज्ञानीनिश्चय उसे कहें –2
दोनों नय द्वारा हो –3 सच ज्ञान हो पाये रे–ऽऽ।।2774।।

(36) दर्शन–ज्ञान–चरित्र कहे, उसे सभी व्यवहार कहें –2
ज्ञानी ज्ञायक शुद्ध रहे–ऽऽ
जहाँ न ज्ञान–दर्श–व्रत है, समझो वो निश्चयमय है –2
नय को जो जाने हो –3 वो भटक न पाये रे–ऽऽ।।2775।।

(37) निश्चय नय आत्माश्रित है, और व्यवहार पराश्रित है –2
पर शुद्धात्म असीमित है–ऽऽ
निश्चय नय निज लीन करे, कार्य सभी व्यवहार करे –2
निश्चय का आश्रय हो–3 मुक्ति दिलवाये रे–ऽऽ।।2776।।

(38) कोई पुरुष अनार्य यहाँ, समझाना गर उसे यहाँ –2
भाषा कही अनार्य यहाँ–ऽऽ
परमारथ उपदेश कहो बिन व्यवहार न संभव हो –2
निश्चय को जग में हो –3 व्यवहार बताये रे–ऽऽ।।2777।।

(39) असत्यार्थ व्यवहार कहा निश्चय को सत्यार्थ कहा –2
ये गुरु ने उपदेश कहा–ऽऽ
ले आश्रय भूतार्थ यहाँ, उसको हो सम्यक्त्व यहाँ –2
ऐसा जिन गुरुवर हो–3 सबको बतलायें रे–ऽऽ।।2778।।

(40) जान न पाये निश्चय जो, लेते आश्रय निश्चय को –2
वे सब निश्चयाभासी हों–ऽऽ
वे स्वच्छन्द आलसी हैं निजाचरण को नाश करें –2
डूबे हैं खुद ही हो–3 भव पार न पायें रे–ऽऽ।।2779।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(41) निश्चय नय को जानो तुम, श्रद्धा उस पर धारो तुम –2
पर व्यवहार में उतरो तुम–ऽऽ
व्यवहारी उपदेश यहाँ, उचित कहें गुरुदेव यहाँ –2
निश्चय व्यवहार हो –3 को व्यर्थ बतायें रे–ऽऽ।।2780।।

(42) कौन श्रमण किन भावों में, कौन कहे इन भावों में–2
बहुत कठिन है ज्ञात हमें–ऽऽ
चरित में स्थित रहे यहाँ, कृति कर्म व्यवहार यहाँ–2
निश्चय ही सबको हो –3 व्यवहार बतायें रे–ऽऽ।।2781।।

(43) जो निरपेक्ष कथन करता, अपना पक्ष सदा रखता –2
उन सबमें झूठा रहता–ऽऽ
नय गर हो सापेक्ष यहाँ, तो समझो वो सत्य यहाँ –2
ऐसा हम जानें हो–3 तब ही सच पायें रे–ऽऽ।।2782।।

(44) एक कथन सामान्य अहा – दूजा यहाँ विशेष कहा –2
दोनों ही हैं सत्य यहाँ–ऽऽ
जो दोनों नहिं जानेगा, वो नहिं सच पहचानेगा –2
उसको सफलता हो–3 कैसे मिल पाये रे–ऽऽ।।2783।।

(45) ये अध्रुव संसार यहाँ, कहें अशाश्वत गुरु यहाँ –2
दु:खों का अंबार यहाँ–ऽऽ
इसमें हो जो कर्म यहाँ, उनसे भव में भ्रमण यहाँ
दुर्गति में जाकर हो–3 बहु दुख उपजाये रे–ऽऽ।।2784।।

(46) काम भोग क्षण भर सुख दें, बहुत काल तक दुखी करें –2
अज्ञानी सुख इसे कहें–ऽऽ
मुक्ति विरोधी हैं ये भव, खान दुखों की हैं ये भव –2
दुख ही दुख भव में हो–3 हमको नजराए रे–ऽऽ।।2785।।

(47) केले का तरु देख यहाँ, नजराए नहिं सार यहाँ –2
खोजा हमने बहुत यहाँ–ऽऽ
त्यों इन्द्रिय विषयों में भी, कहीं दिखे नहिं सार यहाँ –2
मूरख को इनमें हो–3 सुख ही नजराए रे–ऽऽ।।2786।।

(48) चक्रवर्ती और देवों का, इनका सुख भी है धोखा –2
परमारथ से दुख होता–ऽऽ
भवसुख का परिणाम है दुख, त्यागो इन्हें मिलेगा सुख –2
मुक्ति का राही हो–3 इनको नहिं पाये रे–ऽऽ।।2787।।

(49) खुजली जिसको रहे यहाँ, खुजलाये तो दुखी यहाँ –2
माने खुद को सुखी यहाँ–ऽऽ
वैसे ही ये मोही मन, दुख को ही सुख कहते जन –2
उनको वह काम हो–3 सुख ही नजराए रे–ऽऽ।।2788।।

(50) भोगों में आसक्त रहे, मुक्तिमार्ग विपरीत रहे –2
अज्ञानी वे मूढ़ कहे–ऽऽ
कर्मों से बँध जाते हैं, फिर भव में दुख पाते हैं –2
जैसे उस कफ में हो–3 मक्खी फँस जाये रे–ऽऽ।।2789।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(51) जन्म–मरण दुख जान रहा, दुख को खूब विचार रहा –2
फिर भी नहिं विस्वस्त रहा–ऽऽ
ये माया का जाल कहो, कितना है आश्चर्य अहो –2
सब कुछ जाने पर हो–3 उन्हें त्याग न पाये रे–ऽऽ।।2790।।

(52) राग–द्वेष परिणाम यहाँ, करते हैं भव जीव यहाँ –2
कर्मों का हो बंध यहाँ–ऽऽ
इससे चउगति भ्रमण करे, जन्म धरे और मरण करे –2
जन्म मरण के हो–3 दुख जीव उठाये रे–ऽऽ।।2791।।

(53) जन्म मिले तो तन आये, तन में सब इन्द्रिय आयें –2
इन्द्रिय, विषयों में जायें–ऽऽ
राग–द्वेष विषयों से हों, इनसे कर्म के बंधन हों –2
कर्मों के कारण हो–3 भव भ्रमण बढ़ाये रे–ऽऽ।।2792।।

(54) कर्मों से यह जीव यहाँ, भ्रमता फिरता रहे यहाँ –2
सम्यक् मिथ्या भाव यहाँ–ऽऽ
एक अनादि संत रहे, एक अनादि अनंत कहें –2
दोनों ही भाव हो–3 यह जीव रचाये रे–ऽऽ।।2793।।

(55) भव में जन्म कहा है दुख, और बुढ़ापा समझो दुख –2
मृत्यु रोग पीड़ा है दुख–ऽऽ
ये संसार महादुख है जहाँ न तेरा कहीं सुख है
जीव इस भव में हो–3 दुख ही दुख पाये रे–ऽऽ।।2794।।

(56) भाव द्रव्य में नियत यहाँ, वैसा उसको समझ यहाँ –2
अन्य रूप नहिं मान यहाँ–ऽऽ
अन्य रूप जो मान रहा, वो सब उल्टा जान रहा –2
ऐसी ही बुद्धि हो–3 मिथ्या कहलाए रे–ऽऽ।।2795।।

(57) जब भी जैसे भाव करे, वैसे तब वो कर्म भरे –2
गुरुवर ऐसा कहें अरे–ऽऽ
शुभ भावों से कर्म हों शुभ, अशुभ भाव से कर्म अशुभ –2
ऐसा नियम ही हो–3 जग में बतलायें रे–ऽऽ।।2796।।

(58) तन–वाणी में मस्त हैं जो, धन स्त्री में मस्त हैं जो –2
करे कर्म का संचय वो–ऽऽ
जैसे वह शिशुराग अरे, तन–मुख से वो मिट्टी ग्रहे –2
होता प्रमत्त हो–3 तो कर्म बँधाये रे–ऽऽ।।2797।।

(59) पुत्र–मित्र सब मिल जायें, दुख नहिं कोई बँटा पायें –2
स्वयं अकेले फल पायें–ऽऽ
कर्म यहाँ जो करता है कर्म उसी पर गिरता है
कर्म कर्ता का हो–3 अनुगमन कराये रे–ऽऽ।।2798।।

(60) इच्छा से तरु पर चढ़ता, प्रमादवश नीचे गिरता –2
गिरते वो परवश होता–ऽऽ
कर्म करे तब निज वश है, कर्मोदय में परवश है –2
परवश होते ही हो–3 दुख ही दुख पाये रे–ऽऽ।।2799।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(61) कर्माधीन हो जीव कभी, जीवाधीन हों कर्म कभी –2
इक–दूजे आधीन कभी–ऽऽ
कभी धनी बलवान यहाँ, कभी ऋणी बलवान यहाँ
देने–लेने में हो–3 यह बात बतायें रे–ऽऽ।।2800।।

(62) कर्मापेक्षा एक है कर्म, द्रव्य–भाव से दो हैं कर्म –2
पुद्गल पिण्ड है द्रव्य कर्म–ऽऽ
पुद्गल में जो शक्ति रहे, उससे होते भाव कर्म –2
राग और द्वेष हो–3 कर्मों से आयें रे–ऽऽ।।2801।।

(63) जो इन्द्रिय पर विजय करे, जिन आतम का ध्यान करे –2
वह कर्मों से नहीं बँधे–ऽऽ
पुद्गल प्राण न उसमें हों, जन्म मरण नहिं उसमें हों
भव से वो साधु हो–3 जल्दी तिर जाये रे–ऽऽ।।2802।।

(64) ज्ञानदर्शनावरण करम, वेदनीय मोहनीय करम –2
आयु–नाम और गोत्र करम–ऽऽ
अंतराय ये आठ करम, करवाते संसार भ्रमण –2
सबको दुखदायी हो–3 ये कर्म बतायें रे–ऽऽ।।2803।।

(65) परदा, द्वारपाल सम है, असि, शराब और हल सम है –2
चित्र व कुम्भकार सम है–ऽऽ
अंतराय भण्डारी सम, ये स्वभाव वाले हैं कर्म –2
इनको जाने बिन हो–3 कुछ समझ न आये रे–ऽऽ।।2804।।

(66) मार्ग सुगति नहिं जाना है, मूढ़मति अंजाना है –2
खेद है ये बतलाना है–ऽऽ
घोर–भयंकर भव वन में, चिरकालीन भ्रमा इसमें –2
मिथ्यात्व भाव हो–3 अपनाने आये रे–ऽऽ।।2805।।

(67) जो मिथ्या से ग्रस्त यहाँ, दृष्टि हो विपरीत यहाँ –2
धर्म रुचे नहिं उसे यहाँ–ऽऽ
मीठा, कड़वा लगे उसे, जो होता ज्वरग्रस्त यहाँ –2
मिथ्यामति उल्टा हो–3 अनुभव करवाये रे–ऽऽ।।2806।।

(68) जीव व तन को इक माने, इन्द्रिय आसक्ति होने –2
उसको बहिरातम जानें–ऽऽ
मिथ्यादृष्टि पापों से, है आविष्ट कषायों से–2
ऐसे सब प्राणी हो–3 भव में भ्रमण बढायें रे–ऽऽ।।2807।।

(69) जो नहिं तत्त्व विचार करे, उसको नहिं हो ज्ञान अरे –2
मिथ्यादृष्टि कहें उसे–ऽऽ
शंकाशील करे पर को, निज मिथ्यात्व बढ़ाता वो –2
भव के सारे दुख हो–3 उसमें आ जायें रे–ऽऽ।।2808।।

(70) दुख का मूल है जन्म मरण, कर्मों से हो जन्म मरण –2
मोह से कर्मों का बंधन–ऽऽ
राग–द्वेष से कर्म बँधें, जीव कर्म से भ्रमण करें
राग और द्वेष हो–3 दुख सभी बुलायें रे–ऽऽ।।2809।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(71) ताकतवर हो शत्रु यहाँ, बहुत तिरस्कृत हुआ यहाँ –2
हानि न उतनी करे यहाँ–ऽऽ
जितनी राग–द्वेष करते, जिस कारण मरते फिरते –2
कर्मों की दुनिया हो–3 इनसे बन जाये रे–ऽऽ।।2810।।

(72) जीव करे संसार रमण, तब करता संसार भ्रमण –2
दुख पाता है जन्म मरण–ऽऽ
भव में कोई सुक्ख नहीं, उपादेय है मोक्ष गमन –2
ऐसा जाने बिन हो–3 सुख कहीं न पाये रे–ऽऽ।।2811।।

(73) भव से होना पार यहाँ, तुझमें हो ये चाह यहाँ –2
तो तप संयम धार यहाँ–ऽऽ
धर्म नाव को शीघ्र गहो, भव विचार सब त्याग करो –2
तब ही ये चाहत हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।2812।।

(74) राग–द्वेष और पाप यहाँ, भयकारी हैं श्राप यहाँ –2
वश में मत हो आप यहाँ–ऽऽ
सम्यक दर्श विनाशक हैं, ज्ञान व्रतों के घातक हैं –2
इनके वश जो हो हो–3 बहु दुख उपजाये रे–ऽऽ।।2813।।

(75) हों मनुष्य या देव यहाँ, तन से मन से दुखी यहाँ –2
काम भोग की चाह वहाँ–ऽऽ
इच्छाओं से दुक्ख यहाँ – वीतराग से सुखी यहाँ –2
दुख की जड़ इच्छा हो–3 गुरुदेव बतायें रे–ऽऽ।।2814।।

(76) उसका आदर खूब करो, जिससे पैदा विराग हो –3
ऐसा ही अनुकरण करो–ऽऽ
विराग से बंधन टूटें, भव का राग अनंत भ्रमें
राग मिट जाये हो–3 भव खुद मिट जाये रे–ऽऽ।।2815।।

(77) रागात्मक संकल्प यहाँ, दोषों के हैं मूल यहाँ –2
इन्द्रिय विषय न मूल यहाँ–ऽऽ
जो ऐसा संकल्प करे – वो ही समता भाव धारे –2
काम की तृष्णा हो–3 उसकी मिट जाये रे–ऽऽ।।2816।।

(78) निश्चय नज़र से देख यहाँ, तन से आतम मिली यहाँ–2
ऐसा कर स्वीकार यहाँ–ऽऽ
दुखद, ममत्व व क्लेश यहाँ – छेदन कर दे शीघ्र यहाँ–2
तब ही इस दुख का हो–3 भव अंत दिखाये रे–ऽऽ।।2817।।

(79) कर्म आस्रव को रोक यहाँ, तीनों करण सँभाल यहाँ –2
तीन योग से रोक यहाँ–ऽऽ
सभी कषायें अंत करो, अगर मोक्ष की चाह यहाँ –2
ये सब मुक्ति में हो–3 बाधक बतलाये रे–ऽऽ।।2818।।

(80) भावों से जो विरक्त है, वही शोक से विमुक्त है –2
विषयों में नहिं लिप्त है–ऽऽ
ज्यों जल से नहिं लिप्त कमल, त्यों वह भव में रहे अमल –2
भव में विरक्त हो–3 ज्ञानी हो पाये रे–ऽऽ।।2819।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(81) धर्म है उत्तम सुखकारी, संयम तप लक्षणधारी –2
परम अहिंसा उपकारी–ऽऽ
धर्म में जो नित रमा रहे, उसे नमन भी देव करें –2
धर्म है मंगल हो–3 मंगल दिलवाये रे–ऽऽ।।2820।।

(82) क्षमा आदि दशधर्म कहे, रत्नत्रय त्रयधर्म कहे –2
जीवदया भी धर्म रहे–ऽऽ
वस्तु स्वभाव है धर्म यहाँ, जीव की रक्षा धर्म यहाँ –2
धर्म से बढ़कर हो–3 कुछ नहिं बतलायें रे–ऽऽ।।2821।।

(83) धर्म क्षमा उत्तम मार्दव, शौच सत्य उत्तम आर्जव –2
उत्तम संयम गुणार्णव–ऽऽ
तप–त्याग उत्तम आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य है सर्वोत्तम –2
ये हैं दशधर्म हो–3 भव पार लगायें रे–ऽऽ।।2822।।

(84) देव–मनुज–तिर्यंचों से, भयकारी उपसर्गों से –2
क्रोध कष्टप्रद वचनों से–ऽऽ
जिसको क्रोध नहीं आये, उसमें क्षमाधर्म आये –2
ऐसी क्षमा से हो–3 निर्मलता आये रे–ऽऽ।।2823।।

(85) सभी जीव मम क्षमा करें, हम भी सबको क्षमा करें –2
वैर किसी से नहीं करें–ऽऽ
सबसे मैत्री भाव रहें, निर्मल अपने भाव करें –2
ऐसा ही भाव हो–3 निज धर्म बढ़ाये रे–ऽऽ।।2824।।

(86) मैंने रंच प्रमाद किया, उचित नहीं व्यवहार किया –2
कभी अनादर यहाँ किया–ऽऽ
निष्कषाय निश्शल्य यहाँ, क्षमा याचना करूँ यहाँ –2
ऐसे भावों से हो–3 निश्छलता आये रे–ऽऽ।।2825।।

(87) रूप जाति कुल तप का जो, ज्ञान शील पूजा का जो –2
करे गर्व नहिं बल का जो–ऽऽ
जो मुनि मद से दूर रहे, उसमें मार्दव धर्म रहे –2
भाव विनम्र हो–3 सारे गुण लाये रे–ऽऽ।।2826।।

(88) कभी नहीं अपमान करे, खुद भी नहिं अभिमान धरे –2
पर अपमान जो दूर करे–ऽऽ
सच में वो ही ज्ञानी है, वो सच में स्वाभिमानी है –2
ऐसे ही मुनि में हो–3 मार्दवता आये रे–ऽऽ।।2827।।

(89) कभी उच्च पद को पाया, कभी नीच बनकर आया –2
ऊँच–नीच मैं कहलाया–ऽऽ
आज ऊँच बन मान करे, वो फिर नीचे यहाँ गिरे –2
ज्ञानी में मान हो–3 नहिं कभी दिखाये रे–ऽऽ।।2828।।

(90) छल का नहीं विचार करे, कुटिल वचन नहिं कभी कहे –2
कभी न छल के काम करे–ऽऽ
दोष छिपाये नहिं अपने, सरल कहा उसको सबने –2
ऐसे ही मुनि में हो–3 आर्जवता आये रे–ऽऽ।।2829।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(91) हित–मित–प्रिय वचन तौले, वचनों में मिश्री घोले –2
निज–पर–हितकर बोले–ऽऽ
उसी श्रमण में सत्य धरम, कहते हैं गुरुदेव परम –2
सत्य धरम ही हो–3 निज दर्श कराये रे–ऽऽ।।2830।।

(92) झूठ बोले हो नहीं सफल, ठगी भाव से हो व्याकुल –2
कोई न झूठ जान ले कल–ऽऽ
झूठ के आश्रय कोई न हो, आश्रयहीन दुखी वह हो –2
बोले जो झूठ हो–3 वो दुख ही पाये रे–ऽऽ।।2831।।

(93) भले न मन को प्रिय लगे, कड़वी औषधि रूप लगे –2
रुचिकर हमको नहीं लगे–ऽऽ
कहने वाला साक्षी है, उसकी बात मधुर ही है –2
गुरुवर की बात हो–3 ऐसे मन लाओ रे–ऽऽ।।2832।।

(94) सत्य बोलने वाला जो, माँ सा विश्वसनीय है वो –2
गुरुवर जैसा पूज्य है वो–ऽऽ
सबको ही प्रिय लगे, उसे देख शुभ भाव बने –2
सत्यवादी को हो–3 भव सत्य दिखाये रे–ऽऽ।।2833।।

(95) तप–संयम और सारे गुण, सत्य में रहते कहें निपुण –2
ध्यान लगाकर इसको सुन–ऽऽ
ज्यों समुद्र मत्स्यों का स्थान, वैसे सत्य गुणों की खान –2
सत्य बिन ईश्वर हो–3 नहिं कहीं दिखाये रे–ऽऽ।।2834।।

(96) जैसे जैसे लाभ बढ़े, वैसे वैसे लोभ बढ़े –2
लोभ लाभ का बाप कहे–ऽऽ
सौ मुद्रा से काम जो हो, लाखों से भी पूर्ण न हो –2
लाभ से तृष्णा हो–3 बढ़ती ही जाये रे–ऽऽ।।2835।।

(97) सोने चाँदी के गिरि हों, तो भी तृप्त न लोभी हों –2
मन में, इच्छा अनंत हों–ऽऽ
मन छोटा सा भले यहाँ, इच्छाएँ हैं अंत बिना –2
जैसे इस नभ का हो–3 नहिं अंत दिखाये रे–ऽऽ।।2836।।

(98) होय बलाका अण्डे से, अण्डा होय बलाका से
दोनों ही एक–दूजे से–ऽऽ
त्यों यह तृष्णा मोह से हो, मोह यहाँ तृष्णा से हो –2
द्वय इक दूजे के हो–3 पूरक कहलाये रे–ऽऽ।।2837।।

(99) जो समता–संतोष धरे, वही लोभ पर विजय करे –2
कहते ये जिनदेव अरे–ऽऽ
भोजन में नहिं लिप्सा हो, शौच धर्म उसमें ही हो–2
लोभ–लिप्सा ही हो–3 मम शुद्धि मिटाये रे–ऽऽ।।2838।।

(100) कषाय निग्रह–व्रत धारण, पंच समितियों का पालन –2
त्रय दण्डों का कर क्षालन–ऽऽ
पंचेन्द्रिय वश में करना, इसको ही संयम कहना –2
कहते हैं गुरुवर हो–3 हितमार्ग बतायें रे–ऽऽ।।2839।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(101) इन्द्रिय विषयों का निग्रह, राग–द्वेष रूपी परिग्रह –2
त्यागे सभी कषायें गृह–ऽऽ
ध्यान करे स्वाध्याय करे, भावित जो निज आत्म करे –2
उस ही साधु में हो–3 तप धर्म बताये रे–ऽऽ।।2840।।

(102) सब द्रव्यों से मोह तजे, भोग–देह–भव राग तजे –2
शुद्धात्म का भाव करे–ऽऽ
त्याग धर्म उसमें होता, वह वैराग्य भाव बोता –2
ऐसा जिनदेव हो–3 सबको बतलायें रे–ऽऽ।।2841।।

(103) भोग–उपभोग मिलें सारे, फिर भी लगें नहीं प्यारे –2
रहे भोग से जो न्यारे–ऽऽ
जो खुद मन से त्याग करे, सच्चा त्यागी वही रहे –2
ऐसा ही त्याग हो–3 सद्धर्म दिखाये रे–ऽऽ।।2842।।

(104) सभी परिग्रह से हटकर, सुख–दुख भावों को तजकर –2
जो निर्द्वन्द्व रहे हँसकर–ऽऽ
अपना पर का भेद करे, पर में नहिं अपनत्व रखे –2
उसको आकिंचन हो–3 शुभ धर्म बतायें रे–ऽऽ।।2843।।

(105) मैं हूँ शुद्ध ज्ञानदृगमय, नित्य, अरूपी एक स्वमय –2
रोग–शोक नहिं मुझमें भय–ऽऽ
नहिं परमाणु मात्र मेरा, पर से नहिं संबंध मेरा –2
आकिंचन् उसमें हो–3 निजधर्म बतायें रे–ऽऽ।।2844।।

(106) कुछ भी जिनके पास नहीं, सुख से जीते यहाँ वही–2
उनको दुख नहिं रंच कहीं–ऽऽ
पर को अपना कहना दुख, पर को अपनाना है दुख –2
निज में ही निज का हो–3 वैभव नजराये रे–ऽऽ।।2845।।

(107) स्त्री पुत्रों से मुक्त है जो, भव से यहाँ विरक्त है जो –2
निज गुण में आसक्त है जो–ऽऽ
प्रिय–अप्रिय कुछ नहीं उसे, वैरागी बन यहाँ रहे –2
ऐसा ही साधु हो–3 मंजिल पा जाये रे–ऽऽ।।2846।।

(108) जल में कमल न लिप्त रहे, पंक से कमल अलिप्त दिखे –2
कीचड़ में उत्पन्न रहे–ऽऽ
त्यों भोगों में पैदा हो, पर भोगों में लिप्त न जो –2
उसको हम सब ही हो–3 ब्राह्मण बतलायें रे–ऽऽ।।2847।।

(109) जिसके मोह नहीं रहता, दुख का नाश वही करता –2
तृष्णा–लोभ न उर धरता–ऽऽ
मोह लोभ जब मिट जाये,फिर भव में क्या रह जाये –2
भव का जंजाल हो–3 उसका मिट जाये रहे–ऽऽ।।2848।।

(110) जीव स्वयं ही ब्रह्म अहा, निज में रमना धर्म कहा –2
जिन स्वरूपमय धर्म अहा–ऽऽ
ब्रह्मातम की चर्या को, ब्रह्मचर्य समझो उसको –2
सबसे ही उत्तम हो–3 यह व्रत बतलायें रे–ऽऽ।।2849।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(111) मनहर स्त्री के अंग दिखे, फिर भी नहिं दुर्भाव बनें –2
नहिं विकार मन में आयें–ऽऽ
ऐसे ही साधुगण जो, ब्रह्मचर्य उनमें ही हो –2
दुर्द्धर ये व्रत ही हो–3 शिवपुर दिलवाये रे–ऽऽ।।2850।।

(112) घड़ा लाख का रहे यहाँ, होता शीघ्र विनष्ट यहाँ –2
हो अग्नि संयोग यहाँ–ऽऽ
स्त्री संग मुनि सहवास करे, शीघ्र ही मुनिपद नष्ट करे –2
ऐसे ही मुनिवर हो–3 व्रत भ्रष्ट बतायें रे–ऽऽ।।2851।।

(113) जो स्त्री में आसक्त न हो, वो ही सच्चा भक्त अहो –2
सब आसक्ति से पार वो हो–ऽऽ
पार समुद्र यहाँ कर लें, नदी पार वो झट कर ले–2
कहते हैं ज्ञानी हो–3 उसको अपनाओ रे–ऽऽ।।2852।।

(1114) ब्रह्मचर्य व्रत पुरुष धरे, वो स्त्री से दूर रहे –2
निंदनीय स्त्री उसे रहे–ऽऽऽ
शील रक्षिका स्त्री हो, निंदनीय नर उसे रहे –2
तब ही निज व्रत की हो–3 रक्षा हो पाये रे–ऽऽ।।2853।।

(115) शील गुणों से युक्त यहाँ, जिनका यश सर्वत्र यहाँ –2
सीता–द्रौपदी हैं अंजना–ऽऽ
देवों से वंदनीय हैं जो, मनुज लोक की देव हैं वो –2
नारी जाति में हो–3 आदर्श बतायें रे–ऽऽ।।2854।।

(116) विषयों से कामाग्नि जले, तीन लोक को भस्म करे –2
यौवन में यह भभक उठे–ऽऽ
निजबल से मुनि विजय करें, वे धरती पर धन्य कहें –2
आतम का ज्ञानी हो–3 इससे बच पाये रे–ऽऽ।।2855।।

(117) रात बीत जाती है जो, लौट नहीं आती है वो –2
एक बार मिल पाती वो–ऽऽ
जो अधर्म नित रात करे, उसकी रातें व्यर्थ रहें –2
धर्म से जीवन हो–3 का सार दिखाये रे–ऽऽ।।2856।।

(118) करने को व्यापार भले, पूँजी लेकर तीन चले –2
एक को धन से लाभ मिले–ऽऽ
एक मूलधन ले आया, पूँजी एक गँवा आया –2
ऐसा ही काम हो–3 हम यहाँ रचायें रे–ऽऽ।।2857।।

(119) यहाँ मनुज भव पाया है – इक ने देव बनाया है –2
एक ने फिर मनु पाया है–ऽऽ
एक ने नरक जगह पाई, उसने व्यर्थ गँवाया है –2
मानुष ये जीवन हो–3 मुश्किल से पाये रे–ऽऽ।।2858।।

(120) आतम को आतम जाने, और न कोई पहचाने –2
जब स्वभाव को खुद जाने–ऽऽ
अनुभव की विधि अपनाये, तब आतम अनुभव आये –2
ऐसी विधि लाये हो–3 निजसुख उपजाये रे–ऽऽ।।2859।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(121) कामधेनु आतम ही है, नंदनवन आतम ही है –2
शाल्मलि तरु आतम ही है–ऽऽ
वैतरिणी आतम ही है, अमृतमय आतम ही है –2
जैसी भी चाहे हो–3 वैसी बन जाये रे–ऽऽ।।2860।।

(122) सुख–दुख कर्ता आतम है, फल भोक्ता भी आतम है –2
गुणी–अवगुणी आतम है–ऽऽ
अच्छे कर्म में मित्र है वो, बुरे कर्म में शत्रु है वो –2
जैसा कर जाये हो–3 वैसी बन जाये रे–ऽऽ।।2861।।

(123) कषाय इन्द्रिय से हारी, मोह से जो आतम हारी –2
शत्रु है जो आतम हारी–ऽऽ
धर्म अनुसार चलूँगा मैं, मोह कषाय जीतना है –2
हारी जो आतम हो–3 भव में दुख पाये रे–ऽऽ।।2862।।

(124) युद्ध जीतना सरल कहा, शत्रु जीतना सरल कहा –2
मंत्र जीतना सरल कहा–ऽऽ
जिसने जीता अपने को, सच में वही विजयी कहा –2
खुद को जो जीते हो–3 वो वीर कहाये रे–ऽऽ।।2863।।

(125) जो सेना से युद्ध करें, बाहर सबसे खूब लड़ें –2
इससे दुश्मन और बढ़े–ऽऽ
खुद से ही जो युद्ध करें, जीत स्वयं को सौख्य वरें –2
सच्चा सुख उसको हो–3 जग में मिल पाये रे–ऽऽ।।2864।।

(126) गैरों से जो नहीं लड़ें, खुद से लड़कर विजय करें –2
कठिन वही वो काम करें–ऽऽ
जो मुनि आत्म विजेता हो, इस पर लोक सुखी वह हो –2
खुद को जीते बिन हो–3 सुख कहीं न पाये रे–ऽऽ।।2865।।

(127) तप संयम जो अपनाता, खुद पर वही विजय पाता – 2
उचित यही मैं कर पाता–ऽऽ
गैरों से दुख पाते हैं, धर्म न जो अपनाते हैं –2
पर से दुख ही दुख हो–3 सुख निज से पाये रे–ऽऽ।।2866।।

(128) हो निर्वृत्ति असंयम में, करो प्रवृत्ति संयम में –2
सुख उपजे खुद ही निज में–ऽऽ
एक तरफ निर्वृत्ति रहे, दूजी ओर प्रवृत्ति रहे –2
तब ही जीवन में हो–3 सुख राह दिखाये रे–ऽऽ।।2867।।

(129) राग–द्वेष जब आते हैं, पाप कर्म करवाते हैं –2
दुख में सुख दिखलाते हैं–ऽऽ
जो मुनि इन्हें निरोध करे, वो ही भव से मुक्ति वरे –2
धर्म के द्वारा हो–3 ये अघ रुक पाये रे–ऽऽ।।2868।।

(130) इन्द्रिय विषय–कषाय यहाँ, इन पर रखो लगाम यहाँ –2
ये सब हैं उद्दण्ड यहाँ–ऽऽ
ज्ञान–ध्यान तप के द्वारा, निज आतम बल के द्वारा –2
वर्ना ये हमको हो–3 दुख में ले जायें रे–ऽऽ।।2869।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(131) वीतराग मुनि गुणधारी, कषाय उनसे नहिं हारी –2
चोट ध्यान में दे मारी–ऽऽ
फिर सराग मुनि को देखो, उनसे कभी न ये हारी –2
मन से कषायों हो–3 को दूर हटाओ रे–ऽऽ।।2870।।

(132) कषाय को अशांत करे, वो श्रेणी से यहाँ गिरे –2
वीतरागता यहाँ धरे–ऽऽ
तनिक कषाय रहे भीतर, उस पर क्या संतुष्ट रहे –2
थोड़ी चिन्गारी हो–3 वन भस्म कराये रे–ऽऽ।।2871।।

(133) ऋण को थोड़ा, आग को कम, घाव को छोटा कषाय कम–2
इन्हें अल्प नहिं मानें हम–ऽऽ
अल्प से ज्यादा हो जाते, फिर ये दुख ही उपजाते –2
इनके मिटने तक हो–3 पुरुषार्थ जगाओ रे–ऽऽ।।2872।।

(134) क्रोध प्रीति को नष्ट करे, मान विनय को नाश करे –2
माया मैत्री नाश करे–ऽऽ
जिसके अंदर लोभ रहे, वो सब कुछ ही नाश करे –2
इनसे बचना ही हो–3 संयम कहलाये रे–ऽऽ।।2873।।

(135) क्रोध क्षमा से जीतें हम, विनम्रता से मान को हम –2
सरल भाव से माया हम–ऽऽ
होगा जब संतोष मिले, तभी लोभ को जीते हम –2
इनको जो जीते हो–3 वो संत कहाये रे–ऽऽ।।2874।।

(136) ज्यों कछुआ निज अंग यहाँ, समेट लेता सभी यहाँ –2
अपने ही तन रहे यहाँ–ऽऽ
त्यों ही ज्ञानी संत यहाँ, इन्द्रिय संकुच करे यहाँ –2
अध्यात्म द्वारा हो–3 निज आतम ध्याये रे–ऽऽ।।2875।।

(137) जान के अंजाने में भी, कोइ अधर्म हो जाये कभी –2
तुरत कहे मिच्छामि तभी–ऽऽ
फिर वह नहीं दुबारा हो, उससे मन हअ जाये तभी
तब ही आतम पर हो – दुख नहिं आ पाये रे–ऽऽ।।2876।।

(138) रथ जो धर्म चलाता है, धैर्यशील कहलाता है –2
धर्म में लीन हो जाता है–ऽऽ
ब्रह्मचर्य में रम करके, समाधान सब पाता है –2
धर्ममय सुख में हो–3 विचरण कर जाये रे–ऽऽ।।2877।।

(139) हिंसा करना जीव यहाँ, झूठ बोलता खूब यहाँ –2
चोरी भी नित करे यहाँ–ऽऽ
मैथुन सेवन यहाँ करे, मूर्छा मन में खूब धरे –2
परिग्रह इन सबकी हो–3 जड़ गुरु बतलाये रे–ऽऽ।।2878।।

(140) जीव हो या निर्जीव यहाँ, सभी परिग्रह समझ यहाँ –2
पास रखे गर साधु यहाँ–ऽऽ
रखे पास या रखवाये, दुख से मुक्ति न वो पाये –2
दु:खों की जननी हो–3 परिग्रह बतलायें रे–ऽऽ।।2879।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(141) परिग्रह बुद्धि त्याग करे, वही परिग्रह त्याग सके –2
राग–द्वेष नहिं वही रखे–ऽऽ
जिसके पास न ग्रंथि है, वो ही मुनि निर्ग्रन्थ है –2
शिवपथ का राही हो–3 वो ही बन पाये रे–ऽऽ।।2880।।

(142) परिग्रह के दो भेद कहे, आभ्यंतर और बाह्य कहे –2
चौबीस इसके भेद कहे–ऽऽ
चौदह आभ्यंतर के हैं, दशक भेद बाहर के हैं –2
इनको जो त्यागे हो–3 निर्ग्रन्थ कहाये रे–ऽऽ।।2881।।

(143) नो नौकषाय को जानो, चार कषायों भी मानो –2
मिथ्यायुत चौदह जानो–ऽऽ
खेत वास्तु–वस्त्र पशु–वाहन, दासी शैया वर्तन धान्य –2
ये दश बाहर के हो–3 परिग्रह बतलायें रे–ऽऽ।।2882।।

(144) सर्व परिग्रह मुक्त हैं जो, शांत स्वभावमयी हैं जो –2
प्रशन्न चित्त श्रमण हैं जो–ऽऽ
चक्रवर्ति को नहिं मिलता, मुक्ति सुख मुनि को मिलता–2
ऐसा तुम जान हो–3 सब परिग्रह त्यागो रे–ऽऽ।।2883।।

(145) अंकुश से गज वश में हो, खाई से रक्षा नगर की हो –2
इन्द्रिय वश में त्याग से हो–ऽऽ
सभी परिग्रह त्यागे जो, इन्द्रिय मन उसके वश हो –2
त्यागे बिन इन्द्रिय हो–3 उद्दण्ड बतायें रे–ऽऽ।।2884।।

(146) ज्ञान विचार करायेगा, ज्ञानी सार दिखायेगा –2
धर्म अहिंसा पायेगा–ऽऽ
समता भाव अहिंसा है, उत्तम धर्म अहिंसा है –2
हिंसा अनुचारी हो–3 अज्ञान दिखाये रे–ऽऽ।।2885।।

(147) मरने की नहिं चाह करें, जीने का सब भाव करें –2
जियें यहाँ हम सभी जियें–ऽऽ
हिंसा पाप भयंकर है, कहते ये तीर्थंकर हैं –2
निर्ग्रंथ मुनिवर हो–3 हिंसा तज जाये रे–ऽऽ।।2886।।

(148) त्रस स्थावर जीव यहाँ, भरे ठसाठस लोक यहाँ –2
रखते उन पर दया यहाँ–ऽऽ
जाने या अंजाने में, हनन करायें नहीं करें –2
ऐसे निर्ग्रन्थ हो–3 शिवराह दिखायें रे–ऽऽ।।2887।।

(149) ज्यों तुमको दुख प्रिय नहीं, त्यों सबको दुख प्रिय नहीं –2
खुद से जानो सभी यहीं–ऽऽ
सबका आदर करो यहाँ, दया सभी पर करो यहाँ –2
धर्म का सार हो–3 तब समझ में आये रे–ऽऽ।।2888।।

(150) जीवदया कर जाते हैं, वे खुद पर दया दिखाते हैं –2
हिंसा अपना वध ही है–ऽऽ
आत्महितैषी होते जो, सब ही हिंसा त्यागें वो –2
ऐसे मुनिवर ही हो–3 भव भ्रमण मिटायें रे–ऽऽ।।2889।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(151) जिनको करता हनन यहाँ, तू ही है वो देख यहाँ –2
अनुभव कर तू बोल यहाँ–ऽऽ
जिस पर आज्ञा करे यहाँ, समझो तू ही वही यहाँ –2
तू ही है सब में हो–3 ये बात बताये रे–ऽऽ।।2890।।

(152) राग–द्वेष ही हिंसा है, इनका त्याग अहिंसा है –2
यही जिनेश्वर आज्ञा हो–ऽऽ
राग–द्वेष जो त्याग करे, वही श्रमण सब पाप हरे –2
मुक्ति का राही हो–3 वह संत कहाये रे–ऽऽ।।2891।।

(153) हिंसा का नहिं त्याग करे, वो कर्मों का बंध करे –2
जीव मरे या नहीं मरे–ऽऽ
बंध स्वरूप यही समझो, निश्चय नय से यही कहो –2
कहते हैं गुरुवर हो–3 सच हमें बताये रे–ऽऽ।।2892।।

(154) हिंसा से जो विरत नहीं, वो हिंसक ही रहे यहीं –2
भले ही हिंसा करे नहीं–ऽऽ
होता जहाँ प्रमाद यहाँ, समझो हिंसा वहीं यहाँ –2
उसमें नित हिंसा हो–3 गुरुदेव बताये रे–ऽऽ।।2893।।

(155) हिंसा को नहिं ज्ञानी है, कर्म क्षय को ज्ञानी है –2
उद्यत है स्वाभिमानी है–ऽऽ
निश्छल भाव से है उद्यत, श्रमण अहिंसक अप्रमत्त –2
ऐसे ज्ञानी मुनि हो–3 शिवपुर पा जाये रे–ऽऽ।।2894।।

(156) हिंसामय आतम ही है, अहिंसा भी आतम ही है –2
यह निश्चय सिद्धांत ही है–ऽऽ
जो प्रमत्त है हिंसक है, अप्रमत्त ही अहिंसक है –2
ऐसा निश्चय से हो–3 समझो समझाओ रे–ऽऽ।।2895।।

(157) ऊँचा कोई न मेरू से नहिं विशाल कोई नभ से –2
जानो ऐसा आगम से–ऽऽ
वैसे नहीं अहिंसा सम, कोई नहीं है उत्तम धर्म –2
ऐसा जिनवर हो–3 सबको बतलायें रे–ऽऽ।।2896।।

(158) जग में रंच नहीं भय है, तू खुद यहाँ अभयमय है –2
अभय प्रदाता तू ही है–ऽऽ
क्यूँ अनित्य इस लोक में तू – हिंसा में आसक्त यूँ है –2
हिंसा इंसां में हो–3 भय ही भय लाये रे–ऽऽ।।2897।।

(159) कुछ नहिं मेरे पास यहाँ, करना बहुत है काम यहाँ –2
ये नहिं करना हमें यहाँ–ऽऽ
ये विचार करते करते, आ जाता है काल यहाँ –2
ऐसे जीवन में हो–3 क्यों आलस लाये रे–ऽऽ।।2898।।

(160) ज्ञान जगत में सार यहाँ, बाकी सब निस्सार यहाँ –2
संयम–तप आधार यहाँ–ऽऽ
जो सोते वो नष्ट हुये, जागे वो उत्कृष्ट हुये
जागे रह करके हो–3 तुम कर्म मिटाओ रे–ऽऽ।।2899।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(161) धर्मी जागे अच्छा है, पापी सोये अच्छा है –2
ये नहिं जाने बच्चा है–ऽऽ
महावीर उपदेश यही, बात जगत से यही कही –2
धर्मी जागेगा हो–3 तो धर्म बढ़ाये रे–ऽऽ।।2900।

(162) आशुप्रज्ञ पंडित होते, सोते हुए जगा देते –2
नहिं प्रमाद करने देते–ऽऽ
दुर्बल है ये तन अपना, यहाँ अप्रमत हो रहना –2
वर्ना प्रमाद हो–3 बहु पाप कराये रे–ऽऽ।।2901।।

(163) प्रमाद समझो कर्म यहाँ, अप्रमाद नहिं कर्म यहाँ –2
प्रमाद से अज्ञान यहाँ–ऽऽ
जो प्रमाद से दूर रहे, उसको ज्ञानी सभी कहें –2
ज्ञानी बनने में हो–3 भव सार दिखाये रे–ऽऽ।।2902।।

(164) कर्म से कर्म नहीं क्षय हों, कर्म अकर्म से ही क्षय हों –2
संवर बिन क्षय कर्म न हों–ऽऽ
मेधावी जो होते हैं, संतोषी वो होते हैं –2
लोभ मद रीते हो–3 नहिं पाप रचाये रे–ऽऽ।।2903।।

(165) जो प्रमाद से सहित यहाँ, सभी जगह भव उसे यहाँ –2
पाप कर्म संयुक्त यहाँ–ऽऽ
निष्प्रमाद मुनि होता है, उसे नहीं भय होता है –2
नहिं हो प्रमाद हो–3 तो भय नहिं आये रे–ऽऽ।।2904।।

(166) नहीं आलसी सुखी यहाँ, मोही को वैराग्य कहाँ –2
हिंसक को हो दया कहाँ–ऽऽ
निद्रात्म जो होता है, उसको विद्याभ्यास कहाँ –2
कहते हैं गुरुवर हो–3 अज्ञान मिटायें रे–ऽऽ।।2905।।

(167) जागृत रहो हमेशा तुम, बुद्धि बढ़ाओ अपनी तुम –2
हे मानव ये भाओ तुम–ऽऽ
सोने वाला धन्य नहीं, जागा है वो धन्य यहीं –2
जागा ही सबको हो–3 सोते से जगाये रे–ऽऽ।।2906।।

(168) वस्तु उठाने रखने में, त्याग मूत्र–मल करने में –2
बैठे चलने–फिरने में–ऽऽ
जो भी श्रमण दयालु हैं, अप्रमत्त वो नित रहते हैं –2
निश्चित अहिंसक हो–3 वो ही कहलायें रे–ऽऽ।।2907।।

(169) ज्ञान को अविनय नष्ट करे, उसकी यही विपत्ति अरे –2
विनयी में नित ज्ञान भरे–ऽऽ
गुण सम्पत्ति विनय से हो, शिक्षाप्रद ये बात अहो –2
दोनों बातों को हो–3 शुभ शिक्षा पाओ रे–ऽऽ।।2908।।

(170) करता जो अभिमान यहाँ, करता रहता क्रोध यहाँ –2
आलस करे प्रमाद यहाँ–ऽऽ
रोग हमेशा जिसमें हों, उसको शिक्षा प्राप्त न हो –2
पाँचों ये कारण हो–3 अज्ञान बढ़ायें रे–ऽऽ।।2909।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(171) हँसी मजाक नहीं करना, दमन इन्द्रियों का करना –2
मन को अपने वश करना–ऽऽ
दोष कलंकित नहिं होना, शिक्षाशील यहाँ होना –2
इनसे ही शिक्षा हो–3 गुण हमें दिलाये रे–ऽऽ।।2910।।

(172) अतिरस लोलुप न होना, क्रोध न मन आने देना –2
सत्य भाव में रत रहना–ऽऽ
गूढ़ किसी की भी बातें, यहाँ किसी से मत कहना –2
शिक्षा की बातें हो–3 अज्ञान मिटाये रे–ऽऽ।।2911।।

(173) जो भी अध्ययन ज्ञान करे, चित्त वही एकाग्र करे –2
श्रुत में ही रत निरत रहे–ऽऽ
स्वयं धर्म में स्थित हो, सबको धर्मी यहाँ करे –2
ज्ञानी में ये गुण हो–3 स्वाभाविक आये रे–ऽऽ।।2912।।

(174) गुरुकुल में निजवास करे, नित्य समाधि भाव करे –2
तप–श्रुत का उपधान करे–ऽऽ
हित–मित शब्द यहाँ बोले, प्रिय सभी वह कार्य करे
भाव ज्ञानी में हो–3 ये सब आ जाये रे–ऽऽ।।2913।।

(175) जला हुआ इक दीप रहे, बहुत उसी से दीप जलें –2
स्वयं प्रकाशित दीप रहें–ऽऽ
दीपक सम आचार्य यहाँ, स्वयं दीप्तमय रहें यहाँ –2
गैरों के दीपक हो–3 गुरुदेव जलायें रे–ऽऽ।।2914।।

(176) श्रेष्ठ गुणों का आश्रय जो, सब द्रव्यों में उत्तम जो –2
परम तत्त्व तत्त्वों में जो–ऽऽ
निश्चय से तुम यह जानो, जीव द्रव्य उत्तम मानो –2
तब ही निज आतम हो–3 के गुण पा जाये रे–ऽऽ।।2915।।

(177) तीन तरह की है आतम, बहिरातम – अंतर आतम –2
कही है तीजी परमातम–ऽऽ
परमातम के भेद हैं दो, सिद्ध और अरहंत कहो –2
तीनों ही आतम हो–3 भव में नजराये रे–ऽऽ।।2916।।

(178) इन्द्रिय को आतम जाने, ऐसा बहिरातम माने –2
देह से निम्न आतम जाने–ऽऽ
इसकी अंतर आत्म कहें, कर्ममुक्त परमात्म कहें –2
बहिरातम तजके हो–3 अंतर हो जाओ रे–ऽऽ।।2917।।

(179) सर्वलोक को जाने जो, तनयुत केवलज्ञानी जो –2
कहें उन्हें अर्हंत प्रभो–ऽऽ
अष्टकर्म नहिं जिनमें हों, ज्ञान शरीरी गुणमय हों –2
वे सब सिद्धालय हो–3 में सिद्ध कहाये रे–ऽऽ।।2918।।

(180) बहिरातम को छोड़ यहाँ, अंतर आतम जोड़ यहाँ –2
परमातम कर ध्यान यहाँ–ऽऽ
ऐसा जो कर जायेगा – भव से वो तिर जायेगा –2
जिनवर ऐसा ही हो–3 सबको बतलायें रे–ऽऽ।।2919।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(181) चतुर्गति भव भ्रमण नहीं, जन्म जरा भय मरण नहीं –2
रोग शोक कुल योनि नहीं–ऽऽ
जीव मार्गणा नहिं उसमें, उनको सब शुद्धात्म कहें –2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–ऽऽ।।2920।।

(182) वर्ण नहीं रस–गंध नहीं, और कोई स्पर्श नहीं –2
स्त्री–पुरुष व षंड नहीं–ऽऽ
ये सब ही पर्याय नहीं, संस्थान–संहनन नहीं –2
शुद्धात्म में ये हो–3 कुछ नहीं दिखाये रे–ऽऽ।।2921।।

(183) जब व्यवहार अपेक्षा हो – भाव सभी आतम में हों –2
कहते हैं जिनदेव अहो–ऽऽ
शुद्ध सुनय से संसारी – सिद्ध समान जीव सब हों –2
ये सब जाने बिन हो–3 सम्यक्त्व न पाये रे–ऽऽ।।2922।।

(184) शुद्धात्म जो रहे यहाँ, अरस अरूव अगंध यहाँ –2
उसमें है संस्थान कहाँ–ऽऽ
शब्द–लिंग नहिं हैं जिसमें, गुण चैतन्य स्वरूप कहें
ऐसी शुद्धात्म हो–3 निज ध्येय बनाओ रे–ऽऽ।।2923।।

(185) तीन दण्ड से रहित है जो, द्वन्द्व–ममत्व रहित है जो
आलंबन – तन रहित है जो–ऽऽ
वीतराग निर्दोष परम, मोह रहित – निर्भय आतम –2
शुद्धात्मा ही हो–3 ऐसी कहलाये रे–ऽऽ।।2924।।

(186) ग्रंथि रहित – नीराग है जो, दोषमुक्त निःशल्य है जो –2
निर्मद है निष्काम है जो–ऽऽ
क्रोधमान जिसमें नहिं हैं, ऐसी ही शुद्धात्म है –2
ऐसी आतम ही हो–3 शिवपुर को पाये रे–ऽऽ।।2925।।

(187) प्रमत्त नहिं अप्रमत्त न जो, शुद्ध रूप में रहती जो –2
वीतरागमय ज्ञानी जो–ऽऽ
अशुद्धि रोग कृत नहिं जिसमें, ज्ञायक रूप है आत्म में –2
ज्ञायक स्वभावी हो–3 शुद्धात्म कहाये रे–ऽऽ।।2926।।

(188) नहीं शरीर न मन हूँ मैं, कारण नहीं वचन हूँ मैं –2
कर्ता कभी नहीं हूँ मैं–ऽऽ
नहीं कराने वाला हूँ, नहीं यहाँ अनुमोदक हूँ –2
केवल ज्ञायकमय हो–3 मम रूप बताये रे–ऽऽ।।2927।।

(189) स्व–पर भाव को जाने जो, शुद्धात्म पहचाने जो –2
निज को निज ही जाने जो–ऽऽ
ऐसा ज्ञानी कौन होगा, पर को कहता मेरा जो –2
कोई नहिं होगा हो–3 वे गुरु बताये रे–ऽऽ।।2928।।

(190) ममता रहित शुद्ध हूँ मैं, ज्ञान दर्श से पूर्ण हूँ मैं –2
एक रूप जिन रूप हूँ मैं–ऽऽ
शुद्ध स्वभाव में रम करके, पर का क्षय करता हूँ मैं
ज्ञानी ही ऐसे हो–3 परिणाम बनाये रे–ऽऽ।।2929।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(191) मार्ग–मार्गफल बतलायें, जिनशासन में दर्शायें–2
दोनों कथन हैं दिखलाये–ऽऽ
मार्ग को मुक्ति उपाय कहा, फल उसका निर्वाण कहा–2
दोनों इस भव से हो–3 मुक्ति दिलवाये रे–ऽऽ।।2930।।

(192) दर्शन–ज्ञान–चारित्र अहा, और ये तप शिवमार्ग कहा –2
निश्चय और व्यवहार कहा–ऽऽ
भाव शुभाशुभ बंधक हैं, ये दोनों शिव मार्ग नहीं –2
शुद्ध भाव ही हो–3 शिवपथ बतलायें रे–ऽऽ।।2931।।

(193) अज्ञानी गर ये माने, शुभ भावों से शिव जाने –2
उसे पर समय रत जानें–ऽऽ
शुभ भावों से मुक्ति हो, ज्ञानी कहते यही अहो –2
शुद्ध ही भाव हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।2932।।

(194) व्रत–तप–गुप्ति–समिति पालें, शीलव्रतों को अपना लें –2
कहा जिनपने वही करें–ऽऽ
फिर भी अभव्य अज्ञानी, मिथ्यादृष्टि कहें ज्ञानी –2
शुभभाव भव से हो–3 नहिं पार लगाये रे–ऽऽ।।2933।।

(195) जो निश्चय को नहिं माने, नहिं व्यवहार यहाँ जाने –2
उसका सब मिथ्या जानें–ऽऽ
हो रत्नत्रयधारी वो, फिर भी है भवचारी वो –2
जिनवर का ऐसा हो–3 उपदेश बताये रे–ऽऽ।।2934।।

(196) धर्म में श्रद्धा प्रीति करे, उसमें ही नित रुचि करे –2
उसका पालन नित्य करे–ऽऽ
धर्म से भोग की चाह करे, कर्मों का क्षय नहिं समझे –2
उसको अभव्य हो–3 ज्ञानी बतलायें रे–ऽऽ।।2935।।

(197) जो परद्रव्य प्रवृत्ति यहाँ, है शुभ रूप तो पुण्य यहाँ –2
अशुभ रूप है पाप यहाँ–ऽऽ
स्वद्रव्य रत परिणाम यहाँ, दु:खों का क्षय करे यहाँ –2
ऐसा अभव्य हो–3 नहिं भाव बनाये रे–ऽऽ।।2936।।

(198) पुण्य की इच्छा करता है, वो भव इच्छा करता है –2
भव से वो नहिं तिरता है–ऽऽ
पुण्य सुगति ले जाता है, मोक्ष नहीं ले जाता है –2
पुण्य के क्षय से हो–3 मुक्ति मिल जाये रे–ऽऽ।।2937।।

(199) कर्म कुशील अशुभ जानो, कर्म सुशील ही शुभ जानो –2
शुद्धातम भी पहचानो–ऽऽ
जो भव में ही भटकाये, वो सुशील क्यों कहलाये –2
भव में दुख ही दुख हो–3 हमको नजरायें रे–ऽऽ।।2938।।

(200) बेड़ी चाहे सोने की, चाहे होवे लोहे की –2
दोनों से बंधन होई–ऽऽ
वैसे ही शुभ–अशुभ करम, दोनों बाँधें खूब करम –2
ज्ञानी बेड़ी पर हो–3 श्रद्धान न लायें रे–ऽऽ।।2939।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(201) जब जानें परमार्थ यहाँ, पुण्य पाप तब कर्म यहाँ –2
दोनों लगें, कुशील यहाँ–ऽऽ
इनसे कभी न राग करें, कभी नहीं संसर्ग करें –2
वर्ना स्वाधीन हो–3 तुम रह नहिं पाओ रे–ऽऽ।।2940।।

(202) व्रत तप द्वारा स्वर्ग यहाँ, पाना उत्तम कहा यहाँ –2
नहिं कर नरक है श्रेष्ठ कहाँ–ऽऽ
धूप में खड़ा रहे कोई, उससे अच्छी छाँव यहाँ –2
कहते हैं गुरुवर हो–3 सद्राह दिखाये रे–ऽऽ।।2941।।

(203) करता जो शुभ भाव यहाँ, पाता वैभव राज्य यहाँ –2
चक्री विद्या योग्य यहाँ–ऽऽ
लेकिन सम्यक बोधि यहाँ, नहिं मिल पाती उसे यहाँ –2
शुभ भाव सम्यक् हो–3 नहिं दिलवा पाये रे–ऽऽ।।2942।।

(204) शुभ से देवलोक पाये, देव उम्र तक रह आये –2
फिर वह जन्म मनुज पाये–ऽऽ
भोग सम्पदा को पाये, दुख नहिं रंच लेश आये –2
पुण्य के बल पर हो–3 यह सब पा जाये रे–ऽऽ।।2943।।

(205) जो विशुद्ध आराधक हो, उसे ज्ञान शुभ सम्यक् हो –2
वही बोधि का साधक हो–ऽऽ
सुख के साधन उन्हें मिले, दुख उनको नहिं कभी छुएँ –2
धर्म का फल भी हो–3 उनको मिल जाये रे–ऽऽ।।2944।।

(206) सम्यक बोधि यहाँ पाते, वे ही संयम धर पाते –2
सभी भोग तज कर जाते–ऽऽ
तप से कर्म मिटाते हैं, शाश्वत पद वो पाते हैं –2
उनकी महिमा को हो–3 हम रोज सुनाये रे–ऽऽ।।2945।।

(207) द्रव्य–तत्त्व स्वीकार करें, उसको ही श्रद्धान कहें –2
सही ज्ञान को ज्ञान कहें–ऽऽ
संयम–तप आचरण करे – उसको गुरु चारित्र कहें –2
इसको व्यवहार हो–3 शिवपथ बतलायें रे–ऽऽ।।2946।।

(208) ज्ञान से सभी तत्त्व जानें, दर्शन से श्रद्धान करें –2
संयम से विधि नाश करें–ऽऽ
तप से होता शुद्ध यहाँ, करता कर्म विनाश यहाँ
ज्ञान से ये सब हो–3 संभव हो पाये रे–ऽऽ।।2947।।

(209) चारित्र के बिन ज्ञान यहाँ, सम्यक् बिन चारित्र यहाँ –
संयम बिन तप करे यहाँ–ऽऽ
व्यर्थ कहे हैं सभी यहाँ, पूरक तीनों रहें यहाँ –2
कोई किसी से हो–3 कम नहीं बतायें रे–ऽऽ।।2948।।

(210) दर्शन बिन हो ज्ञान नहीं, ज्ञान बिना चारित्र नहीं –2
चारित बिन है मोक्ष नहीं–ऽऽ
मोक्ष बिना निर्वाण कहाँ, मुक्ति बिना आनंद कहाँ –2
कहकर ये गुरुवर हो–3 आगम बतलायें रे–ऽऽ।।2949।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(211) ज्ञान व्यर्थ है क्रिया बिना, क्रिया व्यर्थ है ज्ञान बिना–2
मोक्ष नहीं है क्रिया बिना–ऽऽ
मन से पंगु न भाग सके, अंधा व्यक्ति न दौड़ सके–2
दोनों ही मरते हो–3 जब अग्नि समाये रे–ऽऽ।।2950।।

(212) ज्ञान–क्रिया जब मिलते हैं, तब निष्कर्ष निकलते हैं–2
साथ में दोनों चलते हैं–ऽऽ
अंधा पंगु मिल जायें, मिलकर नगर को पा जायें–2
ज्ञान–क्रिया से हो–3 मंजिल मिल जाये रे–ऽऽ।।2951।।

(213) निश्चय नहिं व्यवहार जहाँ, समयसार को समझ वहाँ–2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ–ऽऽ
सम्यग्दर्शन ज्ञान उसे, उसको निज में सार मिले–2
निज का स्वभाव हो–3 शुद्धात्म दिखाये रे–ऽऽ।।2952।।

(214) दर्श–ज्ञान–चारित्र यहाँ, पालन करता साधु यहाँ–2
तीनों ही हैं आत्म यहाँ–ऽऽ
निश्चय से बात समझ, कर निज आतम ध्यान यहाँ–2
आतम का सेवन हो–3 ही श्रेष्ठ कहाये रे–ऽऽ।।2953।।

(215) नहिं त्याग नहिं ग्रहण करे, निज में ही नित रमण करे–2
उसको निश्चय यहाँ कहें–ऽऽ
तीनों गुण ही युक्त रहें, आतम में संयुक्त रहें–2
उसको आगम में हो–3 शिवपथ बतलाये रे–ऽऽ।।2954।।

(216) आतम में जो लीन रहे, सम्यग्दृष्टि उसे कहें –2
यथार्थ जानें ज्ञान कहें–ऽऽ
स्थित रहे निजातम में, सम्यक् चारित उसे कहें –2
आतम को जाने हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–ऽऽ।।2955।।

(217) ज्ञान कहो तो आतम है, दर्शन चारित आतम है –2
प्रत्याख्यान ही आतम है–ऽऽ
सभी योग में आतम है, संयम भी शुभ आतम है–2
सब ही में केवल हो–3 आतम नजराये रे–ऽऽ।।2956।।

(218) रत्नत्रय में तीन रहें, सम्यग्दर्शन श्रेष्ठ कहें –2
मोक्षवृक्ष का मूल कहें–ऽऽ
रत्नत्रय द्वय भेद कहें, निश्चय और व्यवहार कहें –2
जाने जो ऐसा हो–3 वह ज्ञान बढ़ाये रे–ऽऽ।।2957।।

(219) तत्त्वों पर श्रद्धान जहाँ, सम्यग्दर्शन रहे वहाँ –2
कहते हैं जिनेदव यहाँ–ऽऽ
निश्चय से निज आतम ही, सम्यग्दर्शन यहाँ कहें –2
सम्यक्त्व पाये हो–3 वो सब पा जाये रे–ऽऽ।।2958।।

(220) निश्चय से जो मौन यहाँ, उसको सम्यग्दर्श यहाँ –2
सम्यक् ही है मौन यहाँ–ऽऽ
निश्चय सम्यक हेतु कहे, वे भी हैं सम्यक्त्व यहाँ –2
ऐसा आगम में हो–3 गुरुवर बतलायें रे–ऽऽ।।2959।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(221) जो सम्यक्त्व विहीन यहाँ, मुनि बन व्रत भी करे यहाँ –2
उग्र तपस्या धरे यहाँ–ऽऽ
लाख–करोड़ों वर्ष तपे – बोधि लाभ नहिं उसे मिले –2
भव से कभी भी हो–3 वो तिर ना पाये रे–ऽऽ।।2960।।

(222) दर्शन से जो भ्रष्ट यहाँ, वो सबसे ही भ्रष्ट यहाँ –2
पाता नहिं निर्वाण यहाँ–ऽऽ
चारित भ्रष्ट सिद्धि पाते, दर्शन भ्रष्ट नहीं पाते –2
चारित से दर्शन हो–3 को श्रेष्ठ बतायें रे–ऽऽ।।2961।।

(223) दर्शन से जो शुद्ध यहाँ, पाता वो निर्वाण यहाँ –2
कहते हैं जिनदेव यहाँ–ऽऽ
विहीन हैं जो दर्शन से, वो नहिं इष्ट लाभ पाते –2
भव से वो आकर हो–3 नहिं पार हो पायें रे–ऽऽ।।2962।।

(224) एक तरफ सम्यक्त्व मिले, एक तरफ सम्पत्ति मिले –2
दोनों में क्या श्रेष्ठ रहे–ऽऽ
दुनिया के सब वैभव से, सम्यग्दर्शन श्रेष्ठ कहें –2
उसकी महिमा से हो–3 सब कुछ पा जायें रे–ऽऽ।।2963।।

(225) अब तक सिद्ध हुये जितने, आगे भी होंगे जितने –2
सम्यक् से होंगे उतने–ऽऽ
सम्यक् बिन भव तिरे नहीं, सम्यक् बिन भव गिरे यहीं–2
और क्या ज्यादा हो–3 हम क्या बतलायें रे–ऽऽ।।2964।।

(226) कमल न जल से लिप्त रहे, पंक से सदा अलिप्त रहे –2
वैसे सम्यग्दृष्टि रहे–ऽऽ
विषय कषाय में लिप्त नहीं, सम्यग्दृष्टि रहे यहीं –2
सम्यक्त्व का भाव हो–3 ये सब करवाये रे–ऽऽ।।2965।।

(227) चेतन और अचेतन को, इन्द्रिय से भोगे उनको –2
फिर भी सम्यग्दृष्टि वो–ऽऽ
उसके सारे भोग यहाँ, कर्म निर्जरा हेतु यहाँ –2
उसके भावों में हो–3 आसक्ति न आये रे–ऽऽ।।2966।।

(228) कोई विषय सेवन करता, असेवनी सा वह रहता –2
सेवे नहिं सेवन करता–ऽऽ
शादी के सब काम करे, फिर भी कर्ता नहीं रहे –2
ज्ञानी के लक्षण हो–3 ऐसे बतलायें रे–ऽऽ।।2967।।

(229) काम भोग सब करता है, सम भावों में रहता है –2
भाव न विकृत करता है–ऽऽ
जो ममत्व का भाव करें, वे ही विकृति यहाँ धरें –2
वैरागी मन से हो–3 वो यहाँ रहाये रे–ऽऽ।।2968।।

(230) नि:शंकित नि:कांक्षित हैं, निर्विचिकित्सा शुभ गुण है –2
अमूढ़दृष्टि उपगूहन है–ऽऽ
स्थितिकरण व वात्सल्य, प्रभावना ये आठ अंग हैं – 2
सम्यग्दर्शन को हो–3 ये सब दिखलाये रे–ऽऽ।।2969।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(231) रह–परलोक– अरक्षा भय, मृत्यु–अगुप्ति–वेदनाभय –2
अकस्मात हैं सप्तम भय–ऽऽ
सात भयों से रहित हैं जो, समझो सम्यग्दृष्टि वो –2
वे ही दुनिया में हो–3 नि:शंक कहायें रे–ऽऽ।।2970।।

(232) भक्तिभाव से कर्म करे, धर्म करे नहिं चाह करे –2
वह नि:कांक्षित गुणी रहे–ऽऽ
कहते सम्यग्उदृष्टि उसे, जो भव से नहिं राग करे –2
उसकी महिमा को हो–3 सब वेद सुनायें रे–ऽऽ।।2971।।

(233) चाहे नहिं सत्कार यहाँ, पूजा वंदन भाव यहाँ –2
नहीं अपेक्षा रखे यहाँ–ऽऽ
संयत भिक्षु तपस्वी है, अन्वेषकी यशस्वी है –2
ऐसे ही साधु हो–3 भव से तिर पायें रे–ऽऽ।।2972।।

(234) चाहे सुख परलोक यहाँ, तो नहिं चाहो ख्याति यहाँ –2
लाभ और सम्मान यहाँ–ऽऽ
क्या इनसे परलोक तुझे – सुख मिल पाये तुझे यहाँ –2
इनको त्यागोगे हो–3 तो सुख मिल जाये रे–ऽऽ।।2973।।

(235) धर्म अनंत है वस्तु में, सभी धर्म को जो समझें–2
नहीं किसी में ग्लानि करें–ऽऽ
उसमें निर्विचिकित्सा गुण, कहते हैं जो ज्ञान निपुण –2
उसको समदृष्टि हो–3 गुरुदेव बतायें रे–ऽऽ।।2974।।

(236) सभी भाव को पहचानें, स्वयं ज्ञान से जो जानें –2
नहीं मूढ़ता मन लायें–ऽऽ
समदृष्टि सम्पन्न यहाँ, वे ही अमूढ़ दृष्टि यहाँ –2
भ्रान्ति से दूर हो–3 उनको बतलायें रे–ऽऽ।।2975।।

(237) ज्ञान और दर्शन पाकर, चरित्र तप को अपनाकर –2
शांति मुक्ति को धारण कर–ऽऽ
ज्ञान बढ़ाता अपना जो, वर्धमान गुण पाता वो –2
निर्लोभी मन से हो–3 आगे बढ़ जाये रे–ऽऽ।।2976।।

(238) आगम अर्थ छिपाये ना, अपसिद्धांत बताये ना –2
मिथ्या कथन सुनाये ना–ऽऽ
कभी नहीं अभिमान करे, ज्ञानी का नहिं हास्य करे –2
ज्ञानी विवेकी हो–3 यूँ ही समझाये रे–ऽऽ।।2977।।

(239) मन में दुष्प्रवृत्ति आये, उसको शीघ्र मिटा जाये –2
समदृष्टि ये कर जाये–ऽऽ
हाथ नकेल हो घोड़े की, झट वह रस्ते पर आये –2
ऐसे प्रवृत्ति हो–3 पर ध्यान ल गाये रे–ऽऽ।।2978।।

(240) महासमंदर पार किया, साहिल पर तू बैठ गया –2
अब थक कर क्यूं हार गया–ऽऽ
अब सागर को पार करो, क्षण भर नहीं प्रमाद करो –2
ऐसा ये अवसर हो–3 फिर नहिं मिल पाये रे–ऽऽ।।2979।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(241) धर्मी से अनुराग करे, श्रद्धा से अनुसरण करे –2
हित–मित–प्रिय वचन बोले–ऽऽ
लघुधर्मी को प्रिय कहे, उसमें वत्सल भाव रहे –2
इस गुण के द्वारा हो–3 गुण वृद्धि पाये रे–ऽऽ।।2980।।

(242) बाह्य रोग निर्दोष करे, जीवों पर नित दया धरे –2
संयम तप व्रत यहाँ करे–ऽऽ
धर्म प्रभाव सभी पर हो, प्रभावना वह अंग कहें –2
ऐसा ही भाव हो–3 गुण श्रेष्ठ बनाये रे–ऽऽ।।2981।।

(243) धर्मकथा में निपुण है जो, तपसी निमित्त ज्ञानी जो –2
ऋद्धि–सिद्धि का स्वामी जो–ऽऽ
विद्यासिद्धि करी हो जो, धर्म प्रभावक पुरुष है वो –2
ये सब गुण होना हो–3 सौभाग्य बतायें रे–ऽऽ।।2982।।

(244) सुनकर ही कल्याण करे, पाप कार्य सब यहाँ तजे –2
आतम का हित यहाँ करे–ऽऽ
सुनकर श्रेयस पथ जाने, स्वयं आचरण की ठाने –2
सुनकर जीवन में हो–3 कल्याण समाये रे–ऽऽ।।2983।।

(245) होता जिसको ज्ञान यहाँ, उसको तप सम्यक्त्व वहाँ –2
संयम से वो शुद्ध यहाँ–ऽऽ
हो निष्कंप विहार करे, कर्ममलों को नाश करे –2
ज्ञान की महिमा हो–3 सबमें नजराये रे–ऽऽ।।2984।।

(246) अपूर्व श्रुत का ज्ञान करे, अतिशय रस से युक्त रहे –2
नित नूतन वैराग्य धरे–ऽऽ
श्रद्धा से आनंदित हो, ज्ञान में नित अवगाहन हो –2
आह्लादित मन में हो–3 आनंद समाये रे–ऽऽ।।2985।।

(247) गिर जाने पर नहिं खोती, गर धागा में सुई होती –2
त्यों ही ज्ञान के हैं मोती–ऽऽ
सूत्र ज्ञान से युक्त है जो, वो संसार में नष्ट न हो –2
अच्छी ये बातें हो–3 गुरु हमें बतायें रे–ऽऽ।।2986।।

(248) सम्यग्दर्शन रत्न बिना, हो कितना भी ज्ञान यहाँ –2
सब आराधन हीन यहाँ–ऽऽ
श्रुत ज्ञाता हो व्यक्ति यहाँ, करते रहते भ्रमण यहाँ –2
भव में अंतिम भव हो–3 वो कभी न पाये रे–ऽऽ।।2987।।

(249) सारे श्रुत का ज्ञान यहाँ, रंच मात्र रागादि यहाँ –2
उसको आत्मा ज्ञान कहाँ–ऽऽ
ज्ञान राग को नष्ट करे, राग रहे तो ज्ञान कहाँ?–2
गुरुवर ये बातें हो–3 श्रुत में बतलायें रे–ऽऽ।।2988।।

(250) जो नहिं आतम पहचाने, वो अनात्म को नहिं जाने –2
तत्त्व द्रव्य को नहिं जाने–ऽऽ
तत्त्वों पर श्रद्धान नहीं, सम्यग्दृष्टि यहाँ नहीं –2
सम्यक्त्व के बिन हो–3 सुख कहीं न पाये रे–ऽऽ।।2989।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(251) तत्त्वों का हो ज्ञान यहाँ, होता चित्त निरोध यहाँ –2
हो विशुद्ध निज आत्म यहाँ–ऽऽ
समझो वो ही ज्ञान अहा – जिनशासन में यहाँ कहा–2
ऐसा ही ज्ञान हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।2990।।

(252) राग विमुख हो जीव यहाँ, श्रेयस में अनुरक्त यहाँ –2
जिससे मैत्री बढ़े यहाँ–ऽऽ
निर्मलता मन में आये सही ज्ञान वह कहलाये –2
ज्ञान ही भव में हो–3 सब कुछ दिखलाये रे–ऽऽ।।2991।।

(253) आतम देहातीत यहाँ, कर्मातीत अनन्य यहाँ –2
विशेषता से रहित यहाँ–ऽऽ
आदि–मध्य और अंत रहित, ऐसे देखे आत्म यहाँ
सारा जिनशासन हो–3 उसको नजराये रे–ऽऽ।।2992।।

(254) ये शरीर अपवित्र यहाँ, इससे आतम भिन्न यहाँ –2
ज्ञानी ज्ञायक रूप यहाँ–ऽऽ
सभी शास्त्रों को जाने, निज आतम को पहचाने –2
उसको ही जिनवर हो–3 ज्ञानी बतलायें रे–ऽऽ।।2993।।

(255) शुद्ध आतम का ज्ञान जिसे, शुद्ध आतम हो प्राप्त उसे –2
समझ में आती बात है ये–ऽऽ
देह युक्त आतम समझे, शुद्ध आतम नहिं उसे मिले –2
जैसा जो जाने हो–3 वो वैसा पाये रे–ऽऽ।।2994।।

(256) जो जाने अध्यात्म यहाँ, वो जाने सब बाह्य यहाँ –2
जो जाने सब बाह्य यहाँ–ऽऽ
वो जाने अध्यात्म यहाँ, दोनों हैं पूरक कहे यहाँ–2
ऐसा जो जाने हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–ऽऽ।।2995।।

(257) जो निज आतम को जाने, वो सारे जग को जाने –2
निज–पर को वह पहचाने–ऽऽ
जो सारे जग को जाने – वो निज आतम को जाने –2
आतम को जाने ले हो–3 आगम जन जाये रे–ऽऽ।।2996।।

(258) ज्ञान में हरदम लीन रहे, वो इसमें संतुष्ट रहे –2
इसमें ही वह तृप्त रहे–ऽऽ
इससे भव तिर जायेगा, उत्तम सुख तू पायेगा –2
इससे ही भव के हो–3 सब दुख मिट जायें रे–ऽऽ।।2997।।

(259) अर्हंतों के जाने जो, द्रव्य–गुणों–पर्यायों को –2
जाने वो निज आतम को–ऽऽ
निश्चय उसका मोह यहाँ, हो जाता है नष्ट यहाँ –2
मोह मिटते ही हो–3 सद्ज्ञान हो जाये रे–ऽऽ।।2998।।

(260) निधि किसी को मिल जाये, स्वजनों में भोगे जाये –2
पर को नहिं देने जाये–ऽऽ
त्यों ज्ञानी को ज्ञान मिले, निज में ही उपभोग करे –2
पर द्रव्यों से वो हो–3 फिर हटता जाये रे–ऽऽ।।2999।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(261) हो व्यवहार चरित्र जहाँ, हो तप भी व्यवहार यहाँ –2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ–ऽऽ
हो निश्चय चारित्र जहाँ, तप हो निश्चय रूप यहाँ –2
जैसा संयम हो हो–3 वैसा तप आये रे–ऽऽ।।3000।।

(262) अशुभ भाव को तजता जो, शुभ प्रवृत्ति आचरता जो –2
वो व्यवहार चरित्र अहो–ऽऽ
पाँच समिति व्रत गुप्ति त्रय, ये चारित्र कहा शुभमय –2
धारे जीवन में हो–3 वो निश्चय पाये रे–ऽऽ।।3001।।

(263) जो श्रुतज्ञान निमग्न रहे, तप संयम नहिं योग धरे –2
उसे कभी नहिं मोक्ष अरे–ऽऽ
तप संयम बिन भव में, कर्म निर्जरा नहीं अरे –2
संयम तप भव से हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।3002।।

(264) क्रिया रहित हो ज्ञान जिसे, लक्ष्य प्राप्त नहिं करा सके –2
ज्ञान का फल नहिं मिले उसे–ऽऽ
पथ का ज्ञान भले ही हो, लेकिन कदम बढ़े नहिं हों –2
मंजिल भी उसको हो–3 नहिं कभी दिखाये रे–ऽऽ।।3003।।

(265) चारित शून्य पुरुष भव में, विपुल ज्ञान भर ले मन में –2
ज्ञान यहाँ सब व्यर्थ कहें–ऽऽ
अंधों के नजदीक यहाँ, दीप जलाना व्यर्थ यहाँ –2
दीपक अंधों को हो–3 कुछ दिखा न पाये रे–ऽऽ।।3004।।

(266) जो चारित सम्पन्न यहाँ, ज्ञान भले हो अल्प यहाँ –2
अल्प ज्ञान भी सफल यहाँ–ऽऽ
बहुत ज्ञान चारित्र बिना, कभी न होता सफल यहाँ –2
ज्ञानी का संयम हो–3 मंजिल दिलवाये रे–ऽऽ।।3005।।

(267) आतम द्वारा आतम में, तन्मय हो जाना निज में –2
निश्चय नय जानें उसमें–ऽऽ
ये निश्चय चारित्र कहा, उसका ही अब कथन अहा
चारित योगी को हो–3 मुक्ति मिल जाये रे–ऽऽ।।3006।।

(268) ज्ञान शुद्ध जब आ जाये, पुण्य पाप तब तज जाये –2
कर्म नाश तब हो पाये–ऽऽ
निर्विकल्प चारित्र यही, कर्म रहित है भाव यही –2
उसको निश्चय ही हो–3 निज सुख मिल जाये रे–ऽऽ।।3007।।

(269) राग के वश जो हुआ यहाँ, भाव शुभाशुभ करे यहाँ –2
शुद्धात्मा से भ्रष्ट यहाँ–ऽऽ
पर चरित्र आचारी वो, परभावों का धारी वो –2
भव में वह साधु हो–3 नहिं मंजिल पाये रे–ऽऽ।।3008।।

(270) सभी परिग्रह मुक्त है जो, मन से रहित हुआ है जो –2
ज्ञानदर्शमय जाने जो–ऽऽ
स्वभावमय आतम जाने, स्वकीय चरिताचारी वो –2
ऋषिवर आगम में हो–3 ऐसा बतलायें रे–ऽऽ।।3009।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(271) जिसमें है परमार्थ नहीं, ज्ञान नहीं सम्यक्त्व नहीं –2
तप व्रत उसके सही नहीं–ऽऽ
सभी बालव्रत तप समझो, मुक्ति पथ नहिं इनसे हो –2
ऐसे व्रत तप से हो–3 कल्याण न पाये रे–ऽऽ।।3010।।

(272) माह–माह तप करे यहाँ, एक ग्रास को ग्रहे यहाँ –2
करे षारणा जभी यहाँ–ऽऽ
नहिं परमार्थ समझता हो, उसमें धर्म कभी नहिं हो –2
तप करके भी वो हो–3 नित कर्म बंधाये रे–ऽऽ।।3011।।

(273) मोह–क्षोभ से रहित है जो, समता भाव सहित है जो – 2
निर्मल परिणतियुत् है जो–ऽऽ
ऐसा हो चारित्र अगर – सच में उसको धर्म कहा –2
ऐसा ही धर्म हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।3012।।

(274) समता हो या चारित हो, शुद्ध भाव माध्यस्थ कहो –2
वीतरागता, धर्म कहो–ऽऽ
निज स्वभाव–आराधन हो – सभी शब्द एकार्थक हों –2
ऐसा जो जाने हो–3 वो भ्रम नहिं पाये रे–ऽऽ।।3013।।

(275) सूत्र पदार्थ यहाँ जाने, भली भाँति वे पहचाने –2
तप–संयम–समता ठाने–ऽऽ
सुख दुख में सम भाव रखे, वीतराग अनुकरण करे –2
शुद्धोपयोगी हो–3 वो संत कहाये रे–ऽऽ।।3014।।

(276) शुद्ध उपयोग श्रमण में हो, उसको ही श्रामण्य अहो –2
उसके दर्शन ज्ञान कहो–ऽऽ
अहो सिद्धपद मिलता है, उसको ही निर्वाण कहो –2
ऐसे योगी को हो–3 हम शीश झुकायें रे–ऽऽ।।3015।।

(277) जिसको शुद्धोपयोग हो, उनमें अतिशय पैदा हो –2
अनुपम अनंत वैभव हो–ऽऽ
विषयातीत परम सुख हो, अविनाशी आनंद अहो –2
ऐसी आतम को हो–3 आदर्श बनायें रे–ऽऽ।।3016।।

(278) द्रव्यों में नहिं राग करे, मोह तजे नहिं द्वेष रखे –2
सुख दुख में समभाव रखे–ऽऽ
कर्मास्रव उसको नहिं हो, वो ही अतिशय भिक्षु अहो –2
ऐसे ही भिक्षु हो–3 मुक्ति पा जाये रे–ऽऽ।।3017।।

(279) निश्चय चरित्र साध्य अहा, सराग उसका हेतु कहा –2
दोनों साधन–साध्य कहा–ऽऽ
क्रम से धारण करता जो, ज्ञान शुद्ध पा जाता वो –2
उसका ही जीवन वे हो–3 गुण से महकाये रे–ऽऽ।।3018।।

(280) अंतर शुद्धि हृदय में हो, बाहर शुद्धि नियम से हो –2
ऐसा कहते गुरु अहो–ऽऽ
अंतरंग में दोष भरे, वो बाहर में दोष करे –2
अंतस् का भाव हो–3 बाहर नजराये रे–ऽऽ।।3019।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(281) लोभ न माया, मान रहे, मद ईर्ष्या से रहित रहे –2
उसमें भाव विशुद्धि रहे–ऽऽ
भव्यों को उपदेश यही, कहते हैं जिनदेव सही –2
भावों की शुद्धि हो–3 मन शुद्ध बनाये रे–ऽऽ।।3020।।

(282) पापारंभ त्यागकर जो, हुआ चरित व्यवहारी जो –2
संयम का अनुचारी जो–ऽऽ
मोह भाव से मुक्त न हो, वो शुद्धात्म कभी नहिं हो –2
भव की राहों से हो–3 वह पार न पाये रे–ऽऽ।।3021।।

(283) शुभ चरित्र को धारे जो, अशुभ चरित को रोके वो –2
ऐसे ही हो ध्यान अहो–ऽऽ
त्यों ही शुद्धोपयोग से, शुभ प्रवृत्ति को रोके वो –2
ऐसा ही ध्यान हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।322।।

(284) निश्चय चारित्र घात जहाँ, दर्श–ज्ञान भी घात वहाँ – 2
भाव शुद्धि का घात यहाँ–ऽऽ
चारित्त का हो घात जहाँ, घात हो या नहिं घात यहाँ –2
दर्शन और ज्ञान हो–3 ये बात बताये रे–ऽऽ।।3023।।

(285) श्रद्धा–तप–सेवा धरके, क्षमा भाव धारण करके –2
त्रिगुप्ति से रक्षा करके–ऽऽ
यहाँ सुरक्षित श्रमण हो जो, सारे गुण को पाता वो –2
ध्यान के बल से हो–3 वह कर्म मिटाये रे–ऽऽ।।3024।।

(286) दृढ़ता भावों में लाकर, तप से युक्त यहाँ होकर –2
कर्म कवच का भेदन कर–ऽऽ
कर्म विजेता हो करके, निज में स्वयं रमण करके –2
भव से वह मुक्ति हो–3 झट से पा जाये रे–ऽऽ।।3025।।

(287) आसन और आहारों पर, निद्रा और विचारों पर –2
सब पर विजय यहाँ पाकर–ऽऽ
गुरु से ज्ञान यहाँ पाकर, निज आतम को निज ध्याकर –2
ध्यान करना है हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3026।।

(288) प्रकट हो पूरा ज्ञान यहाँ, नाश मोह अज्ञान यहाँ –2
क्षय हो राग–द्वेष यहाँ–ऽऽ
तब शाश्वत सुख वरता है, मोक्ष प्राप्त वह करता है –2
कहते ये गुरुवर हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3027।।

(289) गुरुओं की सेवा करना, स्वाध्याय चिंतन करना – 2
धैर्य सदा उर में रखना–ऽऽ
लौकिक नहिं सम्पर्क रखो, ध्यान यहाँ एकांत करो –2
दुख से बचने के हो–3 ये कार्य बतायें रे–ऽऽ।।3028।।

(290) तत्त्वार्थ निपुण साथी चाहे, अल्पाहार यहाँ चाहे –2
एक स्थान निवास करे–ऽऽ
गर समाधि की अभिलाषा, तो वह ऐसा कर जाये –2
तब ही अच्छे से हो–3 परिणति शुभ आये रे–ऽऽ।।3029।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(291) हित–मित अल्प अहार करें, औषधि सेवन वे न करें
स्वयं वैद्य वे होते हैं–ऽऽ
अंतुर्शद्धि नित्य करें, वे ही आतम शुद्धि करें –2
उनके जीवन में हो–3 नहिं रोग सताये रे–ऽऽ।।3030।।

(292) रस से हो उन्माद यहाँ, मद आविष्ट मनुष्य यहाँ –2
काम सताये उसे यहाँ –2
विषय कषाय उछलते हैं, निज परिणाम बिगड़ते हैं –2
मीठे फल वाले हो–3 तरु ताड़ित होवे रे–ऽऽ।।3031।।

(293) इन्द्रिय जब अल्पाहारी, शय्यासन विजयाचारी –2
है विरक्त संयमधारी–ऽऽ
राग द्वेष नहिं हरा सकें, चित्त न उसका डिगा सकें –2
जैसे औषधि से हो–3 व्याधि मिट जाये रे–ऽऽ।।3032।।

(294) जब तक नहीं बुढ़ापा हो, रोगादि नहिं तन में हों –2
नहीं इन्द्रियाँ अशक्त हों–ऽऽ
तब तक धर्माचरण करो, नहिं प्रमाद तुम रंच करो –2
इन्द्रिय असमर्थ हो–3 तो धर्म न आये रे–ऽऽ।।3033।।

(295) जन्म जरा से मुक्ति के, भव तिरने की युक्ति के –2
जीवन में गुण शक्ति के–ऽऽ
दो ही मार्ग बताये हैं, आगम में दिखलाये हैं
श्रमणों श्रावक का हो–3 गुरु मार्ग बताएँ रे–ऽऽ।।3034।।

(296) श्रावक धर्म में मुख्य यहाँ, दान और पूजा धर्म यहाँ –2
श्रावक इसके बिना कहाँ–ऽऽ
ध्यान–अध्ययन है श्रमणों को, कहते हैं जिन मुख्य यहाँ
इसके बिन साधु हो–3 नहिं श्रमण कहाये रे–ऽऽ।।3035।।

(297) शुद्धाचारी साधु यहाँ, हैं गृहस्थों से श्रेष्ठ यहाँ –2
संयम में उत्कृष्ट यहाँ–ऽऽ
शिथिलाचारी संत हैं जो, उनसे श्रावक श्रेष्ठ अहो –2
सच्चा साधु ही हो–3 भव श्रेष्ठ कहाये रे–ऽऽ।।3036।।

(298) दीक्षा में असमर्थ यहाँ, बन पाये मुनि नहीं यहाँ –2
कर्मों का हो उदय जहाँ–ऽऽ
धर्म को श्रावक अपनाये, जैसा जिनवर बतलाये –2
धर्म पाये बिन हो–3 भव तिर नहिं पाये रे–ऽऽ।।3037।।

(299) पाँच व्रतों को धारे जो, शिक्षाव्रत हैं सात अहो –2
श्रावक ये अपनाये हो–ऽऽ
इनका जो आचरण करे, जिनवर श्रावक उसे कहें –2
शास्त्रों में व्रत का हो–3 उल्लेख बतायें रे–ऽऽ।।3038।।

(300) रोज सुने उपदेश यहाँ, सम्यकदृष्टि व्यक्ति यहाँ –2
श्रावक उसको कहें यहाँ–ऽऽ
श्रुत को श्रवण करे प्रतिदिन, पूजा करता रोज यहाँ –2
उस ही श्रावक में हो–3 शुभ धर्म दिखाये रे–ऽऽ।।3039।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(301) त्यागे पाँच उदम्बर फल, सप्त व्यसन नहिं करे अमल –2
भक्ति करे जो यहाँ सफल–ऽऽ
जिसकी मति है शुद्ध यहाँ, समझो श्रावक वही यहाँ –2
श्रावक जीवन में हो–3 लघुव्रत अपनाये रे–ऽऽ।।3040।।

(302) परस्त्री सहवास यहाँ, क्रीड़ा द्यूत शिकार यहाँ –2
वचन परुषता – दण्ड यहाँ–ऽऽ
चोरी–मद्य–जुआचारी–सात व्यसन हैं व्यभिचारी–2
ये सब दुखदायी हो–3 निज में नहिं लाओ रे–ऽऽ।।3041।।

(303) माँसाहार से दर्प बढ़े, दर्प से मद्यपान बढ़े –2
फिर वह जुआ यहाँ खेले–ऽऽ
माँसाहार यहाँ करता, सभी दोष पैदा करता –2
माँस जो खावे हो–3 व्यसनी कहलाये रे–ऽऽ।।3042।।

(304) माँस यहाँ जो भी खाये, नभ से नीचे गिर जाये –2
पहले नभ उड़ता जाये–ऽऽ
माँस से पतित हुआ मानव, नीच भाव का कहलाये –2
माँस जीवन में हो–3 कोई नहिं खाये रे–ऽऽ।।3043।।

(305) मद्यपान मदहोश करे, निंदनीय फिर कर्म करे –2
वासनाएँ प्रज्ज्वलित करे–ऽऽ
इह–परलोक में दुख पाये, नरक पशुगति भरमाये –2
उसके दु:खों का हो–3 नहिं अंत हो पाये रे–ऽऽ।।3044।।

(306) शल्य रहित निष्कंप यहाँ, देती जो वैराग्य यहाँ –2
ऐसी हो जिनभक्ति यहाँ–ऽऽ
जिसके हृदय में होती है, दृढ़ता उसके होती है –2
उसको दुनिया में हो–3 भय नहीं सतायें रे–ऽऽ।।3045।।

(307) विनयशील जो व्यक्ति हो, शत्रु भी उसका मित्र हो –2
उसे कहीं भी भय नहिं हो–ऽऽ
जो श्रावक अणुव्रत धरे, गुणियों की वह विनय करे –2
तब ही जीवन में हो–3 सद्गुण आ पायें रे–ऽऽ।।3046।।

(307) हिंसा–झूठ – करे चोरी, कुशीलता मन में जोड़ी –2
परिग्रह में ममता जोड़ी–ऽऽ
पाप ये पाँचों त्याग करे, वो ही अणुव्रत यहाँ धरे –2
अणुव्रत जीवन को हो–3 खुशहाल बनायें रे–ऽऽ।।3047।।

(309) पशु–मनुष्य का बंध बंधन, नाक कान का हो छेदन–2
अधिक भार से कर पीड़न–ऽऽ
खान पान को रोके जो हिंसा का त्यागी नहिं वो –2
हिंसा का त्यागी हो–3 ये नहीं कहाये रे–ऽऽ।।3048।।

(310) पशु–कन्या हो भूमि यहाँ, इनमें झूठ न कहे यहाँ –2
झूठी गवाही दे न यहाँ–ऽऽ
किसी धरोहर नहीं हड़पे, सत्याणु व्रत उसे यहाँ –2
जिनवर सबको ही हो–3 ऐसा बतलायें रे–ऽऽ।।3049।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(311) नहीं रहस्य कहीं खोले, बिन सोचे नहिं कुछ बोले –2
मिथ्या शब्द नहीं बोले–ऽऽ
कूटलेख नहिं करता जो, जाली दस्ता रखे न जो –2
सत्याणुव्रत को हो–3 वह ही धर पाये रे–ऽऽ।।3050।।

(312) माल न चोरी का लेवे, स्तेय प्रेरणा नहिं देवे –2
टैक्स न चोरी जो करवे–ऽऽ
नहीं मिलावट कार्य करे, नियम विरुद्ध नहीं चलवे–2
उसमें अचौर्य हो–3 अणुव्रत कहलाये रे–ऽऽ।।3051।।

(313) व्यभिचारिणी से दूर रहे, स्व स्त्री में संतुष्ट रहे –2
पर का नहीं विवाह करे–ऽऽ
काम अभिलाषा नहीं रखे, अनंग क्रीड़ा नहीं करे –2
उसमें ब्रह्मचर्य हो–3 व्रत तनिक दिखाये रे–ऽऽ।।3052।।

(314) सोना–चाँदी, खेत मकां, द्विपद–चतुष्पद जीव यहाँ –2
वर्तन–वस्त्र व धान्य यहाँ–ऽऽ
धन इनका परिमाण करें, परिग्रह सीमित यहाँ रखें –2
अणुव्रत जीवन में हो–3 तब ही नजराये रे–ऽऽ।।3053।।

(315) तृष्णा जब बढ़ जाती है, सीमा नहिं बन पाती है –2
सभी दोष करवाती है–ऽऽ
नरकों में ले जाती है चित्त अशुद्ध कराती है –2
परिमित परिग्रह हो–3 अणुव्रत कहलाये रे–ऽऽ।।3054।।

(316) थोड़ा गर परिमाण करें, ऐसा नहीं विचार करे –2
अधिक बढ़ाने नहिं सोचें–ऽऽ
मन में तब संतोष धरें, निष्परिग्रही भाव करें
ऐसा ही अणुव्रत हो–3 सब पाप मिटाये रे–ऽऽ।।3055।।

(317) तीन गुणोंव्रत को धारे, सात शील जो अनुचारे –2
दण्ड अनर्थ विरति भावे–ऽऽ
शीलव्रत जो यहाँ धरे, श्रावक उसको सभी कहें –2
देशावकाशिक ये हो–3 व्रत कहलाये रे–ऽऽ।।3056।।

(318) ऊपर नीचे दिशा यहाँ, तिर्यक दिशा में गमन यहाँ–2
इसमें गमनागमन यहाँ–ऽऽ
सीमा सभी दिशाओं की, जिससे भाव– न भाव यहाँ
तब ही दिग्व्रत में हो–3 ये गुण बतलायें रे–ऽऽ।।3057।।

(319) जहाँ नहीं व्रत पल पाये, दोष भयंकर लग जाये –2
वहाँ न रहने को जाये–ऽऽ
व्रत जब भंग हो जाते हैं, अव्रत मन हो जाते हैं–2
गुणव्रत आयें तो हो–3 गुण भरते जायें रे–ऽऽ।।3058।।

(320) बिना प्रयोजन कार्य करे, उसको अनर्थदण्ड कहें –2
उनके चार प्रभेद कहें–ऽऽ
हिंसादान पाप उपदेश, अपध्यान प्रमाद कहें –2
इनका ही त्याग हो–3 गुणव्रत कहलाये रे–ऽऽ।।3059।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(321) कार्य प्रयोजन वश करता, अल्पबंध वो ही करता –2
बिना प्रयोजन बहु करता–ऽऽ
कार्य सप्रयोजन होवे – कर्मबंध तब कम होवे
उसके जीवन में हो–3 गुणव्रत आ जायें रे–ऽऽ।।3060।।

(322) वचन अशिष्ट न कभी धरे, नहिं कुचेष्ट बकवास करे –2
हिंसा साधन नहीं रखे–ऽऽ
व्यर्थ प्रयोजन कुछ न रखे, मर्यादा में सदा रहे –2
उसमें ये गुणव्रत हो–3 सबको नजरायें रे–ऽऽ।।3061।।

(323) भोगों का परिमाण करे, सामायिक नित हृदय धरे –2
प्रोषध के उपवास करे–ऽऽ
संतों की वैयावृत्ति, करते हुये अहार दे–2
शिक्षाव्रत चार हो–3 उसमें नजरायें रे–ऽऽ।।3062।।

(324) भोजन का परिमाण करे, मद्य माँस मधु त्याग करे –2
कंदमूल नहिं ग्रहण करे–ऽऽ
हिंसा का व्यापार तजे, इस व्रत में कम पाप रहे
भोगोपभोग हो–3 परिमाण कहाये रे–ऽऽ।।3063।।

(325) हिंसारंभ से बचना है, तो सामायिक करना है –2
गर आतम हित करना है–ऽऽ
श्रेष्ठ गृहस्थ उसे जानो, जिसे पाप सब तजना हो –2
मुक्ति का चाहक हो–3 समता अपनाये रे–ऽऽ।।3064।।

(326) श्रावक सामायिक करता, सब सावद्ययोग तजता –2
तब वह मुनि जैसा लगता–ऽऽ
अत: अनेक प्रकार यहाँ, सामायिक को करो यहाँ –2
ऐसा करने से हो –3 अभ्यास हो जाये रे–ऽऽ।।3065।।

(327) सामायिक जो करे यहाँ, पर चिंता मन धरे यहाँ –2
आर्तध्यान वो करे यहाँ–ऽऽ
सामायिक कितनी कर ले, सब सामायिक व्यर्थ यहाँ –2
सामायिक समता हो–3 का भाव दिखाये रे–ऽऽ।।3066।।

(328) जो प्रोषध उपवास करे, आहार और अब्रह्म तजे –2
तन शृंगार आरंभ तजे–ऽऽ
त्यागे एकदेश चारों, या फिर वो सम्पूर्ण तजे –2
उसको प्रेषध का हो–3 शुभ फल मिल पाये रे–ऽऽ।।3067।।

(329) उद्गम दोष रहित है जो, शुद्ध है द्रव्य उचित है जो –2
संयमियों को देता वो–ऽऽ
ये है अतिथि संविभाग, शिक्षाव्रत गुण देता जो –2
ऐसे व्रतों से हो–3 गुण वृद्धि पाये रे–ऽऽ।।3068।।

(330) चार भेद से दान कहे, औषधि शास्त्र अहार कहे –2
अभयदान चौथा कह ले–ऽऽ
देने योग्य संत को जो, उसको समझो दान है वो –2
दान की महिमा हो–3 सब वेद सुनायें रे–ऽऽ।।3069।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(331) भोजन मात्र जो दान करे, गृहस्थ उसी से धन्य कहे –2
शास्त्र उसी के गीत कहे–ऽऽ
पात्र–अपात्र विचार करे – इससे क्या है लाभ अरे –2
भक्ति से दान हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।3070।।

(332) साधु के अनुकूल यहाँ, घर में दान दिया न यहाँ –2
वो घर है श्मशान यहाँ–ऽऽ
धर्मी जाये नहीं वहाँ, भोजन भी नहिं करें वहाँ –2
धर्मी के घर में हो–3 ही धर्मी जाये रे–ऽऽ।।3071।।

(333) मुनि को भोजन पहले दे, बचा हुआ जो भोज करे –2
उसका जीवन सफल कहें–ऽऽ
वो भव के सब सुख पाये, क्रमशः मोक्ष यहाँ पाये –2
आहार दान हो–3 सब सुख दिलवाये रे–ऽऽ।।3072।।

(334) मृत्यु भय से भय खाये, उसकी रक्षा कर जाये –2
अभयदान यह कहलाये–ऽऽ
सभी दान में श्रेष्ठ कहा, अभयदान है दान महा –2
जीवनदायी ये हो–3 जीवन दिलवाये रे–ऽऽ।।3073।।

(335) ऋषि मुनि संयत श्रमण कहो, वीतराग अनगार कहो –2
साधु कहो भदन्त कहो–ऽऽ
ये सब शास्त्र अनुसार चलें, अपना जीवन धन्य करें –2
समताधारी जो हो–3 पथ मुक्ति पाये रे–ऽऽ।।3074।।

(336) पराक्रमी निस्संग सरल, निरीह तेजस्वी शीतल –2
अनियत आश्रयी निश्चल–ऽऽ
निरालंब गंभीर परम, कांतिमान तपसी मुनि जन –2
शाश्वत की खोज हो–3 में चित्त लगाये रे–ऽऽ।।3075।।

(337) ऐसे बहुत से साधु हैं, हैं असाधु पर साधु हैं –2
साधु को ही साधु कहें–ऽऽ
असाधु को साधु कहना, साधु को लज्जित करना –2
साधु ही साधु हो–3 सब जगह कहाये रे–ऽऽ।।3076।।

(338) ज्ञान–दर्श से युक्त यहाँ, संयम तप में लीन यहाँ –2
कई गुणों से युक्त यहाँ–ऽऽ
समझो वही हि साधु है, बाकी सभी असाधु हैं –2
साधु का वंदन हो–3 सब कर्म मिटाये रे–ऽऽ।।3077।।

(339) सिर मुंडन से श्रमण नहीं, जप तप से ब्राह्मण नहीं
वन में रहे वो श्रमण नहीं–ऽऽ
बाह्य त्याग से मुनि नहीं, नग्न होने से मुनि नहीं–2
साधु भावों से हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।3078।।

(340) समता से हो श्रमण यहाँ, ज्ञान से होता मुनि यहाँ –2
तप से तपसी कहो यहाँ–ऽऽ
ब्रह्मचर्य जब अपनाये – तब वह ब्राह्मण कहलाये –2
जो भी हो कर्म हो–3 वो नाम सुहाये रे–ऽऽ।।3079।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(341) साधु होता है गुण से, और असाधु अवगुण से –2
गुण पाओ गुरुभक्ति से–ऽऽ
निज से निज को जाने जो, समता को पहचाने जो –2
सच्चा वह साधु हो–3 जगपूज्य बताये रे–ऽऽ।।3080।।

(342) तन में जो आसक्त यहाँ, वो हो विषयासक्त यहाँ –2
कषाय से संयुक्त यहाँ–ऽऽ
वे सम्यक्त्व शून्य साधु – निज स्वरूप से सुप्त यहाँ –2
ऐसे साधु का हो–3 भव नहिं मिट पाये रे–ऽऽ।।3081।।

(343) बातें अच्छी बुरी सुनें, अच्छी बुरी वस्तु देखें –2
फिर भी कुछ भी नहीं कहें–ऽऽ
उदासीन वह रहता है, निज गुण चिंतन करता है
उस ही साधु में हो–3 वैराग्य दिखाये रे–ऽऽ।।3082।।

(344) स्वाध्याय में लगे रहें, ध्यान में हरदम लीन रहें –2
रात में ज्यादा नहिं सोवें–ऽऽ
सूत्र अर्थ चिंतन करते, निद्रा के वश नहिं होते
ऐसे ही साधु हो–3 जागृत कहलाये रे–ऽऽ।।3083।।

(345) साधु ममत्व रहित होता, गौरव का त्यागी होता –2
निरहंकार निस्संग होता–ऽऽ
त्रस स्थावर जीवों में, सबमें समदृष्टि होता–2
ऐसे ही साधु हो–3 समता धर पायें रे–ऽऽ।।3084।।

(346) लाभ–अलाभ व सुख–दुख में, जीने में या मरने में –2
निंदा और प्रशंसा में–ऽऽ
मान और अपमान में, समता भाव रखें सबमें –2
ऐसे ऋषिवर के हो–3 गुणगान कहाये रे–ऽऽ।।3085।।

(347) कषाय–दण्ड रहित होते, गारव शल्य रहित होते –2
भय नहिं शोक जिन्हें होते–ऽऽ
निदान बंध न हो जिनको, ऐसे वे मुनिवर होते –2
उनके चरणों में हो–3 हम शीश झुकायें रे–ऽऽ।।3086।।

(348) लोक में नहिं आसक्त हैं जो, तन छीले नहिं कुपित हों जो –2
चंदन लेपें खुश नहिं जो–ऽऽ
मिले अहार न मिलने पर, समता उर में रखते जो –2
हर्ष विषाद हो–3 का भाव न लाये रे–ऽऽ।।3087।।

(349) समता उर में धरे यहाँ, रोके आस्रव सभी यहाँ –2
पाप बंध नहिं उसे यहाँ–ऽऽ
वह अध्यात्म रमण योगी, ध्यान योग में लीन यहाँ –2
ऐसा ही साधु हो–3 भव से तिर पाये रे–ऽऽ।।3088।।

(350) भूख प्यास दुश्शैया से, ठंडी गर्मी और भय से –2
अरति क्लेश के भावों से–ऽऽ
दुख को सहन करेगा जो, समता भाव उसी में हो –2
ऐसे भावों से हो–3 शक्ति बढ़ जाये रे–ऽऽ।।3089।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(351) एक बार भोजन करना, तप विधान को आचरना –2
संयम जीवन में धरना–ऽऽ
ज्ञानी का उपदेश यहाँ, तप का है संदेश यहाँ –2
तप से कर्मों की हो–3 निर्जरा बताये रे–ऽऽ।।3090।।

(352) समता रहित श्रमण हो जो, जंगल में रहता हो वो –2
कायक्लेश उपवासी हो–ऽऽ
मौन रहे स्वाध्याय करे, उसके ये तप व्यर्थ कहे –2
समता से युक्त हो–3 सब तप कहलाये रे–ऽऽ।।3091।।

(353) प्रबुद्ध हो उपशांत यहाँ, संयत हो आचरण यहाँ –2
नगर में विचरण करो यहाँ–ऽऽ
शांतिमार्ग की वृद्धि कर, रंच प्रमाद यहाँ मत कर –2
तब ही मंजिल का हो–3 पथ झट मिल पाये रे–ऽऽ।।3092।।

(354) जिनवर दिखते यहाँ नहीं, एकमती हैं संत नहीं –2
कहते हैं ये लोग यहीं–ऽऽ
न्यायपूर्ण पथ मिला तुझे, अब तुम करो प्रमाद नहीं –2
वर्ना ये मौका हो–3 फिर नहिं मिल पाये रे–ऽऽ।।3093।।

(355) समझो वेश प्रमाण नहीं, कहते हैं, जिनराज यही –2
असंयतों में वेश यही–ऽऽ
वेश बदलकर जहर पिये तो क्या वो नहिं यहाँ मरे –2
ज्ञान प्रमाण हो–3 जिनदेव बताये रे–ऽऽ।।3094।।

(356) पिछी कमण्डल रखते हैं, नग्न दिगम्बर रहते हैं –2
तभी संत सब कहते हैं–ऽऽ
इनसे हो पहचान यहाँ, मैं साधु ये जान यहाँ –2
देश दुनिया में हो–3 पहचान बताये रे–ऽऽ।।3095।।

(357) गृहस्थों के और संतों के, कई भेष प्रचलित इनके –2
होते मूढ़ देख करके–ऽऽ
सभी स्वयं का भेष यहाँ, जाने मुक्ति हेतु यहाँ
सिर्फ दिगम्बर हो–3 इक हेतु बतायें रे–ऽऽ।।3096।।

(358) जो जग में निस्सार यहाँ, जिसका नहीं प्रमाण यहाँ – 2
काँचमणि सी धार यहाँ–ऽऽ
ज्ञानीजन की दृष्टि में, कोई न उनका मूल्य यहाँ –2
ज्ञानी को सार हो–3 खुद समझ में आये रे–ऽऽ।।3097।।

(359) द्रव्य लिंग परमार्थ नहीं, भाव लिंग है मुख्य यहीं–2
बात यही जिनदेव कही–ऽऽ
भाव लिंग उदाहरण है गुण दोषों का कारण है
इससे परमारथ हो–3 सबको नजराये रे–ऽऽ।।3098।।

(360) भाव विशुद्धि चाहे जो, बाह्य त्याग कर जाये वो –2
परमारथ गर चाहे वो–ऽऽ
भीतर में गर चाह यहाँ, बाह्य त्याग तो व्यर्थ यहाँ –2
मन को निर्मलता हो–3 बस त्याग दिलाये रे–ऽऽ।।3099।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(361) हों परिणाम अशुद्ध यहाँ, करे बाह्य में त्याग यहाँ –2
आत्मभाव से शून्य यहाँ–ऽऽ
बाह्य त्याग क्या कर पाये, जब भीतर इच्छा भाये –2
बाहर का त्याग हो–3 मन शुद्ध कराये रे–ऽऽ।।3100।।

(362) ममता रखे नहीं तन से, मुक्त हुआ क्रोधादिक से –2
हुआ विनिर्मल जो मन से–ऽऽ
निज आतम में लीन है जो, भावलिंगी साधु है वो –2
ऐसे ही साधु हो–3 भव से तिर पायें रे–ऽऽ।।3101।।

(363) सत्य अहिंसा व्रत सुंदर, ब्रह्मचर्य अस्तेय प्रवर –2
अपरिग्रह स्वीकार न कर–ऽऽ
ज्ञानी बन विद्वान यहाँ, मुनि बन कर आचरण यहाँ –2
तब ही संयममय हो–3 जीवन बन पाये रे–ऽऽ।।3102।।

(364) जो व्रत धारण करे यहाँ, वही व्रती निश्शल्य यहाँ –2
नहिं निदान मिथ्यात्व यहाँ–ऽऽ
तीन शल्य गर आ जायें घात व्रतों का कर जायें –2
शल्यों से व्रत का हो–3 हो विनाश जाये रे–ऽऽ।।3103।।

(365) मोक्ष सुखों को नहिं चाहे, इन्द्रिय सुख पाना चाहे –2
व्रत ले निदान कर जाये–ऽऽ
मणि की चाह छोड़कर जो, काँच के टुकड़े चाहे वो –2
व्रत की महिमा को हो–3 वो जान न पाये रे–ऽऽ।।3104।।

(366) कुल योनि और जीवस्थान, प्ररूपणा और गुणस्थान –2
पर्याप्ति मार्गणास्थान–ऽऽ
इनसे जीवों को जानें, दयाभाव निज में लाये
तब ही अहिंसा का हो–3 भाव समाये रे–ऽऽ।।3105।।

(367) सब आगम का हृदय यहाँ, शास्त्रों का है हृदय यहाँ –2
सभी व्रतों का सार यहाँ–ऽऽ
सब गुण का आधार कहा, उसे अहिंसा भाव कहा –2
धर्म आधार हो–3 अहिंसा बतलायें रे–ऽऽ।।3106।।

(368) सब आगम का हृदय यहाँ, शास्त्रों का है हृदय यहाँ –2
पाप बंध नहिं करे यहाँ–ऽऽ
बोले झूठ न बुलवाये – सत्यव्रती वह कहलाये –2
दूजा सत्यव्रत हो–3 गुण से भर जाये रे–ऽऽ।।3107।।

(369) ग्राम नगर अथवा वन में, दिखे अगर पर वस्तु तुम्हें –2
उसे कभी नहिं ग्रहण करें–ऽऽ
अचौर्यव्रत होता उसमें, कहते गुरुवर यहाँ हमें –2
इस व्रत से मन के हो–3 सब दुख मिट जायें रे–ऽऽ।।3108।।

(370) चेतन और अचेतन हो, थोड़ी हो या ज्यादा हो –2
कुछ भी वस्तु यहाँ पर हो–ऽऽ
बिना दिये नहिं लेते हैं, राग–द्वेष तज देते हैं –2
उनमें अचौर्य व्रत हो–3 शुभ नजराये रे–ऽऽ।।3109।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(371) जाने योग्य वहीं जाये, वर्जित भूमि में ना जाये –2
मित भूमि तक ही जाये–ऽऽ
यहाँ गोचरी करना हो, तब ऐसा ही पालन हो –2
अपनी मर्यादा में हो–3 वह रह आये रे–ऽऽ।।3110।।

(372) जो मैथुन संसर्ग करे, इसे अधर्म का मूल कहे –2
दोषों का आधार कहें–ऽऽ
साधु जी निर्ग्रन्थ यहाँ, मैथुन करते त्याग यहाँ –2
ब्रह्मचर्य व्रत हो–3 मुनिवर अपनाये रे–ऽऽ।।3111।।

(373) वृद्ध बालिका युवती हो, माता पुत्री बहन कहो –2
जिससे व्रत में दोष न हो–ऽऽ
ब्रह्मचर्य व्रत पूज्य यहाँ, तीन लोक में श्रेष्ठ यहाँ –2
ये व्रत ही सबको हो–3 सर्वोच्च बनाये रे–ऽऽ।।3112।।

(374) बाह्याभ्यंतर त्याग करे, नहीं परिग्रह साथ रखे –2
कोई इच्छा नहीं रखे–ऽऽ
चारित्र जीवन में लाये, श्रेष्ठ भावना कर जाये –2
उसमें महाव्रत हो–3 हमको नजराये रे–ऽऽ।।3113।।

(375) कहते हैं अरहंत यहाँ, तन भी है इक ग्रंथि यहाँ –2
रखो उपेक्षा इससे यहाँ–ऽऽ
जब तन एक परिग्रह है, अन्य की फिर क्या बात यहाँ –2
तन को भी तजदे हो–3 वह ही तिर पाये रे–ऽऽ।।1314।।

(376) असंयमी जो नहिं चाहें, श्रमण जरूर जिसे चाहें –2
उपादेय वह बतलाएँ–ऽऽ
जिसमें नहीं ममत्व यहाँ, राग–द्वेष से रहित यहाँ –2
अल्प परिग्रह हो–3 नहिं ग्रहण कराये रे–ऽऽ।।3115।।

(377) देश–काल–श्रम को जाने, अपनी ताकत पहचाने –2
योग्य शक्ति निज में ठाने–ऽऽ
शक्ति के अनुसार करे, अल्पबंध हो यहाँ उसे –2
आहार–विहार हो–3 में विचार लाये रे–ऽऽ।।3116।।

(378) कहते हैं महावीर यहाँ, वस्तु परिग्रह नहीं यहाँ –2
वस्तु तो बाहर रहे यहाँ–ऽऽ
मूर्च्छा यहाँ परिग्रह है, जानो सब ही भव्य यहाँ –2
कहते हैं ऋषिजन हो –3 सबको समझाएँ रे–ऽऽ।।3117।।

(379) संयम के उपकरण रखे, लेश परिग्रह नहीं रखे –2
संग्रह से निरपेक्ष रहे–ऽऽ
पक्षी जैसा यहाँ रहे, विचरण में नहिं राग करे –2
ऐसे ही साधु हो–3 जैनत्व दिखाये रे–ऽऽ।।3118।।

(380) मिले बहुत कुछ लाभ यहाँ, इच्छा रक्खे अहम यहाँ –2
रहे सदा संतुष्ट यहाँ–ऽऽ
अधिक ग्रहण नहीं करता है, संतोषी मन रखता है
ऐसे ही साधु हो–3 जगपूज्य बताये रे–ऽऽ।।3119।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(381) सर्व परिग्रह रहित हैं जो समता रस में मस्त हैं जो –2
निज में ही आश्वस्त हैं जो–ऽऽ
इच्छा नहिं आहार करे, जब हो जाती रात अरे –2
इच्छाएँ करके हो–3 क्यूँ कर्म बँधायें रे–ऽऽ।।3120।।

(382) त्रस स्थावर सूक्ष्म यहाँ, व्याप्त रहें जग जीव यहाँ –2
तम में दिखते नहीं यहाँ–ऽऽ
रात में शुद्ध आहार कहाँ, इसीलिए नहिं करें यहाँ –2
शुद्ध आहार हो–3 दिन में हो पाये रे–ऽऽ।।3121।।

(383) ईर्या भाषा समिति यहाँ, निक्षेपण आदान यहाँ –2
पंचम है उत्सर्ग यहाँ–ऽऽ
मन–वच–काय गुप्ति तीनों, अष्ट मातृका कहीं वहाँ –2
इनके पालन से हो–3 सब ज्ञान हो जाये रे–ऽऽ।।3122।।

(384) माँ रक्षक सुत की करती, समिति गुप्ति ऋषि की करती –2
सावधानमय जब पलती–ऽऽ
ये आठों माताएँ यहाँ, दृग–बुध–व्रत रक्षा करती –2
इनमें साधुजन हो–3 उपयोग लगायें रे–ऽऽ।।3123।।

(385) जब चारित्र प्रवृत्ति हो, पाँच समिति में वृत्ति हो –2
तभी व्रतों में तृप्ति हो–ऽऽ
तीन गुप्तियाँ आतीं हैं, विषय कषाय मिटातीं हैं –2
गुप्ति विषयों से हो–3 निर्वृत्ति दिलायें रे–ऽऽ।।3124।।

(386) गुप्ति का पालन करे यहाँ, गमनागमन हों दोष कहाँ –2
समिति में दोष न कभी यहाँ–ऽऽ
सब प्रमाद हट जाता है, कर्मबंध रुक जाता है –2
अनुचित हों दोष हो–3 तो कर्म बंधाये रे–ऽऽ।।3125।।

(387) यत्नाचार से नहीं चलें, जीव मरें या नहीं मरें–2
पर हिंसा का दोष लगे–ऽऽ
प्रयत्नशील समितियों में, उसे न हिंसा दोष लगे –2
चाहे फिर उससे हो–3 हिंसा हो जाये रे–ऽऽ।।3126।।

(388) समिति में हिंसा हो जाये, भाव हिंसा नहिं कहलाये –2
द्रव्य हिंसा वह बतलाये–ऽऽ
भाव हिंसा अव्रत से हो, जिससे भारी बंध अहो –2
चाहे फिर जीव हो–3 मर भी नहिं पाये रे–ऽऽ।।3127।।

(389) संयत हो या असंयत हो, यत्नाचार अगर नहिं हो –2
द्रव्य भाव द्वय हिंसा हो–ऽऽ
समिति पालता साधु जो, उसमें हिंसा कोई न हो –2
भाव अहिंसा हो–3 से कर्म न आयें रे–ऽऽ।।3128।।

(390) ईर्या समिति से चले यहाँ, छोटा कोई जीव यहाँ –2
मरे कुचलके अगर यहाँ–ऽऽ
फिर भी अल्पबंध नहिं हो, क्योंकि साधु समिति युत् हो –2
ऐसा आगम में हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3129।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(391) मूर्च्छा परिग्रह कही यहाँ, बाह्य वस्तु नहिं कही यहाँ –2
वैसे ही तुम जान यहाँ–ऽऽ
हो प्रमाद तो हिंसा है अप्रमाद नहिं हिंसा है –2
समिति प्रमाद से हो–3 रहित बताये रे–ऽऽ।।3130।।

(392) चिकनाई से युक्त यहाँ, कमलिनी का पत्र यहाँ –2
जल से रहे अलिप्त यहाँ–ऽऽ
वैसे समिति पालता जो, कर्मबंध से लिप्त न हो –2
साधु वह भव में हो–3 नहिं बंध बंधाये रे–ऽऽ।।3131।।

(393) यत्नाचार है धर्म की माँ, इससे बढ़ता धर्म यहाँ –2
रक्षा करता यही यहाँ–ऽऽ
यत्नाचार बढ़ाये सुख, भव के दूर हटाती दुख –2
यत्नाचारी के ही हो–3 धर्म बताये रे–ऽऽ।।3132।।

(394) यत्नाचार से चले यहाँ, बैठे–सोये रखे यहाँ –2
खाये बोले नित्य यहाँ–ऽऽ
पाप बंध नहिं उसको हो, वह साधु नहिं लिप्त अहो –2
उपयोग अच्छा तो हो–3 पाप न आये रे–ऽऽ।।3133।।

(395) आवश्यक हो कार्य यहाँ, तभी समिति से चले यहाँ –2
चार हाथ भू–देख यहाँ–ऽऽ
जीव हिंसा से बचे यहाँ – ऐसे गमन वो करे यहाँ –2
कर्मों से तब ही हो–3 साधु बच पाये रे–ऽऽ।।3134।।

(396) इन्द्रिय विषय त्याग करके, स्वाध्याय छोड़ करके –2
केवल गमन पे ध्यान रखे–ऽऽ
समिति में तन्मय होकरके, ध्यान से पथ पर यहाँ चले –2
ऐसा उपयोग हो–3 शुभ बंध कराये रे–ऽऽ।।3135।।

(397) इधर उधर पशु पक्षी हों, दाना खाने आये हों –2
या फिर कहीं इकट्ठे हों–ऽऽ
उनके सामने न जायें, साधु बात ये मन लायें –2
उनको नहि भय हो हो–3 नहिं सामने जायें रे–ऽऽ।।3136।।

(398) पूछे कोई बात यहाँ, भाषा मीठी कहो यहाँ –2
हित–प्रिय सुंदर बोल यहाँ –ऽऽ
पाप वचन नहिं व्यर्थ कहे, मर्मभेदी नहिं शब्द कहे –2
भाषा समिति तब हो–3 जीवन में आये रे–ऽऽ।।3137।।

(399) प्राणी का जो घात करे, चोट करे उपघात करे –2
ऐसे शब्द न कभी कहे–ऽऽ
ऐसा सत्य नहीं बोलो, जिससे पाप बंध होवे –2
तब ही भाषा में हो–3 सुंदरता आये रे–ऽऽ।।3138।।

(400) चोर को कभी न चोर कहो, काना को काना नहीं कहो –2
रोगी रोगी नहीं कहो–ऽऽ
कोई यहाँ नपुंसक हो, उसे नपुंसक नहीं कहो –2
सत्य है कटु है हो–3 फिर समिति न आये रे–ऽऽ।।3139।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(401) कर्कश वचन नहीं बोले, परनिंदा विकथा न करे –2
हास्य वचन भी नहिं बोले–ऽऽ
आत्म प्रशंसा वचन न हों, नहिं पैशून्य भाव में हो –2
हितकर वच बोले हो–3 वो समिति बताये रे–ऽऽ।।3140।।

(402) स्वर–व्यंजन से पूर्ण है जो, संदेहास्पद नहिं हो जो –2
आँखों देखी नित हो जो–ऽऽ
क्रोध रहित हो सहज यहाँ, सरल व्यक्त हो शब्द वहाँ –2
ऐसी भाषा ही हो–3 समिति कहलाये रे–ऽऽ।।3141।।

(403) बिना प्रयोजन देता जो, दुर्लभ ऐसे लोग अहो–2
मुधाजीवी दुर्लभ ही हो–ऽऽ
मुधा जीवी व मुदादायी, इनकी महिमा श्रुत गाई–2
दोनों ही साधु हो–3 मुक्ति को पाये रे–ऽऽ।।3142।।

(404) दोष हैं उद्गम, उत्पादन, अशन दोष के बिन भोजन –2
उपधि वसतिका करें ग्रहण–ऽऽ
इनमें समिति पालते जो, ऐषणा समिति पालते वो –2
समिति की शुद्धि हो–3 संयम शुभ लाये रे–ऽऽ।।3143।।

(405) बल आयु तन तेज बढ़े, भोजन में बहु स्वाद भले –2
इसके लिए न भोजन लें–ऽऽ
ध्यान व संयम ज्ञान बढ़े, आतम का कल्याण बढ़े –2
मुनिजन का भोजन हो–3 धर्मार्थ कहाये रे–ऽऽ।।3144।।

(406) भ्रमर पुष्प से रस लेता, लेकिन पीड़ा नहिं देता –2
तृप्त स्वयं को कर लेता–ऽऽ
वैसे श्रमण आहार करें, श्रावक को नहिं पीड़ा दें –2
ऐसी वृत्ति को हो–3 भ्रामरी बतायें रे–ऽऽ।।3145।।

(407) सहज करें आहार यहाँ, कष्ट न देते रंच यहाँ –2
प्रासुक लें आहार यहाँ–ऽऽ
वृत्ति गोचरी करते हैं, वृत्ति भामरी करते हैं –2
पूज्य साधु ही हो–3 ऐसा कर पायें रे–ऽऽ।।3146।।

(408) अधःकर्म से युक्त है जो, उनके लिए बना है जो –2
औद्देशिक आहार है वो–ऽऽ
ऐसा लें आहार श्रमण, तो वह दोषी रहें श्रमण –2
उद्गम दोषों बिन हो–3 वह शुद्ध कहाये रे–ऽऽ।।3147।।

(409) यत्नाचार जो श्रमण करे, उपकरणों का शोध करे –2
मार्जन करके यहाँ रखे–ऽऽ
आँखों से उनको देखे – शुद्ध भाव में नित्य रहे –2
आदान निक्षेपण हो–3 वह समिति बतायें रे–ऽऽ।।3148।।

(410) जहाँ नहीं त्रस स्थावर हों, जीता हरितकाय नहिं हों –2
हो एकांत व निर्जन हो–ऽऽ
साधु वहाँ मल मूत्रकरे, जहाँ न कोई देख सके –2
इसको उत्सर्ग हो–3 समिति बतलायें रे–ऽऽ।।3149।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(411) हो समरंभ, समारंभ, अथवा होवे आरंभ–2
मन में भरे नहीं दंभ–ऽऽ
जागरूक जो साधु यहाँ, गोपन मन को करे यहाँ –2
इनमें प्रवृत्ति हो–3 नित पाप उपाये रे–ऽऽ।।3150।।

(412) वचन न बोले यति यहाँ जिससे हो समरंभ यहाँ –2
अथवा हो आरंभ यहाँ–ऽऽ
ऐसे वचन पाप लायें, दुख ही पैदा करवायें –2
यतना सम्पन्न हो–3 ये दूर हटाये रे–ऽऽ।।3151।।

(413) काय से ऐसे कार्य न हों, जिससे आरंभ सारंभ हो –2
साधु दूर इन सबसे हों–ऽऽ
साधु गोपन काय करे, कभी नहीं आरंभ करे –2
यतना सम्पन्न हो–3 ये भाव बनाये रे–ऽऽ।।3152।।

(414) खेत की बाड़ खेत रक्षक, खाई नदी नगर रक्षक –2
वैसे गुप्ति पाप रक्षक–ऽऽ
गुप्ति जहाँ आ जाती है, संयम रक्षक बनती है –2
संयम की रक्षा हो–3 नित पुण्य बढ़ाये रे–ऽऽ।।3153।।

(415) आठ हैं प्रवचन माताएँ, इन्हें भाव में नित भायें –2
सही आचरण कर जायें–ऽऽ
होता उनको ज्ञान यहाँ, भव से मुक्ति प्रयाण यहाँ –2
मुक्ति को पाकर हो–3 गुणमय हो जाये रे–ऽऽ।।3154।।

(416) भेद ज्ञान अभ्यास जो हो, फिर माध्यस्थ भावयुत् हो –2
इसके बिन चारित्र न हो–ऽऽ
इसको दृढ़ करने को जो, षड आवश्यक करता वो–ऽऽ
कर्त्तव्य जीवन हो–3 को श्रेष्ठ बनाये रे–ऽऽ।।3155।।

(417) परभावों का त्याग करे, निर्मल आतम ध्यान करे –2
आत्मवंशी ही उसे कहे–ऽऽ
उसके सारे कर्म यहाँ आवश्यक ही कहें यहाँ –2
ऐसे आवश्यक हो–3 सुख शांति दिलाये रे–ऽऽ।।3156।।

(418) प्रतिक्रमण कर्त्तव्य करे, षड आवश्यक कर्म करे –2
निज स्वभाव में स्थिर करे–ऽऽ
इनसे समता आती है, सामायिक हो जाती है–2
कर्त्तव्य कर्मों का हो–3 नाश कराये रे–ऽऽ।।357।।

(419) खुद को ही जो श्रमण कहे, आवश्यक नहिं कर्म करे –2
चारित से वो भ्रष्ट कहे–ऽऽ
आवश्यक आवश्यक है, करना जो आवश्यक है –2
इनके करने से हो–3 संयम दृढ़ पाये रे–ऽऽ।।3158।।

(420) निश्चय चारित जैसा जो, प्रतिक्रमण करता है जो –2
सामायिक भी करता जो–ऽऽ
वीतराग चारित्र यहाँ, स्थित होता वही यहाँ –2
ऐसे श्रमण को हो–3 मंजिल मिल जाये रे–ऽऽ।।3159।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(421) प्रतिक्रमण है वचनमयी, प्रत्याख्यान है वचनमयी –2
नियम सभी हैं वचनमयी–ऽऽ
वचनमयी आलोचक है – ये केवल स्वाध्याय ही है–2
ये सब चारित्र हो–3 नहिं कभी कहाये रे–ऽऽ।।3160।।

(422) शक्ति और संभावना हो, ध्यानमयी प्रतिक्रमण करो –2
कहते हैं जिनदेव विभो–ऽऽ
आज शक्ति गर नहीं यहाँ तो इस पर श्रद्धान करो
ऐसा करना ही हो–3 गुरु श्रेष्ठ बतायें रे–ऽऽ।।3161।।

(423) सामायिक और प्रतिक्रमण, चौबीस तीर्थंकर स्तवन –2
कायोत्सर्ग प्रभुवंदन–ऽऽ
प्रत्याख्यान करो हरदम, आवश्यक कहते भगवन् –2
इनसे जीवन में हो–3 मुक्तिपथ आये रे–ऽऽ।।3162।।

(424) जीने में और मरने में, राग–द्वेष को करने में –2
तिनके में और सोने में–ऽऽ
शत्रु मित्र के भावों में, लाभ–अलाभ विचारों में –2
समता को रखना हो–3 सामायिक बतलायें रे–ऽऽ।।3163।।

(425) वचन बोलना त्यागें जो, आत्मध्यान अनुपागे जो –2
वीतरागता पावें वो–ऽऽ
निज आतम का ध्यान करे, परमसमाधि रहे उसे
उसमें सामायिक हो–3 स्वयमेव समाये रे–ऽऽ।।3164।।

(426) सभी यहाँ सावद्य तजे, तीन गुप्ति में निरत रहे –2
इन्द्रिय पर जो विजय करे–ऽऽ
सामायिक स्थायी हो, उसमें समता भाव रहे –2
ऐसा जिनशासन हो–3 में गुरु बतायें रे–ऽऽ।।3165।।

(427) सबसे समता भाव रखे, राग करे नहिं द्वेष करे –2
निज भावों में सदा रहे–ऽऽ
उसके सामायिक होती, हरदम स्थायी होती –2
पहली आवश्यक हो –3 समता बतलाएँ रे–ऽऽ।।3166।।

(428) ऋषभ आदि महावीर शुभम् तीर्थंकर के नाम परम –2
उनके गुण का हो कीर्तन –ऽऽ
द्रव्यों से पूजन करना, शुद्धि सहित नमन करना –2
दूजा आवश्यक हो–3 कर्तव बतलायें रे–ऽऽ।।3167।।

(429) निंदा गर्हा सहित यहाँ, तीन योग से युक्त यहाँ –2
द्रव्य क्षेत्र–काल भाव यहाँ–ऽऽ
व्रताचरण में दोषं लगें, गुरु समक्ष ही शुद्धि करें –2
तीजा आवश्यक हो–3 प्रतिक्रमण बतायें रे–ऽऽ।।3168।।

(430) निंदा गर्हा आलोचन, इसके द्वारा प्रतिक्रमण –2
त्यागे दोष भाव प्रतिक्रम–ऽऽ
वचनों से पाठादि करे – उसको कहें द्रव्य प्रतिक्रम –2
दोनों प्रतिक्रम हो–3 श्रुत में बतलाये रे–ऽऽ।।3169।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(431) वचन मात्र का त्याग करे, रागादिक को दूर करे –2
निज आतम का ध्यान करे–ऽऽ
उसको होता प्रतिक्रमण, वह ही करता कर्मशरण –2
मुक्ति के पथ पर हो–3 वह बढ़ता जाये रे–ऽऽ।।3170।।

(432) ध्यान में साधु लीन हों जब, दोषों का परित्याग हो सब –2
निज आतम में लीन हो जब–ऽऽ
अतिचारों का करे हनन, ध्यान है उत्तम प्रतिक्रमण –2
ध्यान से अच्छा हो–3 कुछ नहीं बताये रे–ऽऽ।।3171।।

(433) पक्ष–मास हैं रात और दिन, इनके होते प्रतिक्रमण –2
जिनवर के गुण का चिंतन–ऽऽ
कायोत्सर्ग यहाँ करते, तन ममत्व से दूर हटते –2
काय–उत्सर्ग हो–3 आवश्यक गाये रे–ऽऽ।।3172।।

(434) कायोत्सर्ग में संत यहाँ, सहन करे उपसर्ग यहाँ –2
समता उर में रखे यहाँ–ऽऽ
देव–मनुज–तिर्यंचकरें, कोई अचेतन द्रव्य करें –2
ममता को त्यागे हो–3 वो समता पाये रे–ऽऽ।।3173।।

(435) वचन विकल्प सभी तजके, इच्छाएँ सब तज करके –2
निज आतम में रम करके–ऽऽ
शुद्धातम को ध्याता है, प्रत्याख्यान वो भाता है –2
उसमें प्रत्याख्यान हो–3 आवश्यक आये रे–ऽऽ।।3174।।

(436) जो छोड़े निज भाव नहीं, ग्रहण करे परभाव नहीं –2
ज्ञाता–दृष्टा सभी यहीं–ऽऽ
शुद्धातम वह मैं ही हूँ, निज स्वरूपमय मैं ही हूँ –2
ज्ञानी ऐसा ही हो–3 चिंतन कर जाये रे–ऽऽ।।3175।।

(437) दुश्चरित्र मैं तजता हूँ, निर्विकल्प को भजता हूँ –2
सामायिक मैं करता हूँ–ऽऽ
मन–वच–काय शुद्ध करके, ध्यान स्वयं का करता हूँ –2
तब ही इस मन में हो–3 समता आ पाये रे–ऽऽ।।3176।।

(438) सभी कषाय निरोध जहाँ, ब्रह्मचर्य व्रत रहे जहाँ –2
अनशन–पूजन कहे यहाँ–ऽऽ
ये सब ही तप कहलाये, कर्म निर्जरा कर जाये –2
भक्त भक्ति में हो–3 तप ही कर जाये रे–ऽऽ।।3177।।

(439) तप के हैं दो भेद यहाँ, बाह्याभ्यंतर कहे यहाँ –2
द्वय के छः छः भेद यहाँ–ऽऽ
तप आतम को शुद्ध करें अंतस् गुण की वृद्धि करें –2
तप से कर्मों का हो–3 गुरु क्षरण बतायें रे–ऽऽ।।3178।।

(440) अनशन अवमौदर्य यहाँ, भिक्षा चर्या कहें यहाँ –2
तप है रस परित्याग यहाँ–ऽऽ
कायक्लेश और शैयासन, बाह्य है तप कहते भगवन् –2
बाहर के तप से हो–3 निज शुद्धि बढ़ाये रे–ऽऽ।।3179।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(441) कर्म निर्जरा हेतु यहाँ, इक–दो दिन उपवास यहाँ –2
करें त्याग आहार यहाँ–ऽऽ
उनको अनशन तप होता, बीज शक्ति के जो बोता –2
ये तप जीवन की हो–3 सब तपन मिटाये रे–ऽऽ।।3180।।

(442) शास्त्राभ्यास के हेतु करें, साधु अल्पाहार करें –2
उन्हें तपस्वी यहाँ कहें–ऽऽ
ज्ञान बिना तप व्यर्थ यहाँ, केवल भूखे ही मरना –2
ज्ञान बिन तप ये हो–3 नहिं कर्म खपाये रे–ऽऽ।।3181।।

(443) अनशन तप है वही यहाँ, नहीं अमंगल रहे जहाँ –2
इन्द्रिय की नहिं हानि जहाँ–ऽऽ
मन का नहिं उपयोग गिरे, काय की हो नहिं हानि जहाँ –2
ऐसे ही तप से हो–3 मन शांत रहाये रे–ऽऽ।।3182।।

(444) श्रद्धा तेज व शक्ति जानो, स्वास्थ काल को पहचानो –2
फिर उपवास यहाँ ठानो–ऽऽ
शक्ति से जो ज्यादा करते, वे तन–मन हानि करते –2
उपवास हरदम हो–3 निज शक्ति बढ़ाये रे–ऽऽ।।3183।।

(445) करें उपशमन इन्द्रिय का, अपनाते हैं अनशन का –2
इसको ही उपवास कहा है–ऽऽ
अत: जितेन्द्रिय साधु भी, लें आहार हैं उपवासी –2
इन्द्रिय जिताये हो–3 उपवास कहाये रे–ऽऽ।।3184।।

(446) अज्ञानी उपवास करे – एक नहीं दो चार करे –2
मन को यहाँ विशुद्ध करे–ऽऽ
रोज करे भोजन ज्ञानी, फिर भी अधिक विशुद्धि करे –2
ज्ञान ही मन की हो–3 शुद्धि कर जाये रे–ऽऽ।।3185।।

(447) जितना भोजन यहाँ करें, इक कण उसमें कम करें –2
एक ग्रास कम ही कर लें–ऽऽ
इसको ऊनोदर कहते, ये भी तप ऐसा कहते –2
ये तप भी मन की हो–3 इच्छायें घटाये रे–ऽऽ।।3186।।

(448) अहार का परिमाण करे, घर वर्तन परिमाण करे –2
अन्न व फल परिमाण करे–ऽऽ
इसको आगम भाषा में, वृत्ति परिसंख्यान कहें –2
ये तप भी मन की हो–3 इच्छाएँ मिटाये रे–ऽऽ।।3187।।

(449) दूध दही घी तेल यहाँ, मीठा और नमकीन यहाँ –2
छ: रस श्रुत में कहे यहाँ–ऽऽ
इन रस का परित्याग करें, उनमें तप हो यहाँ कहें –2
ऐसे तप से ही हो–3 मन शांति पाये रे–ऽऽ।।3188।।

(450) जहाँ पूर्ण एकांत रहे, पुरुष न स्त्री आदि रहे –2
शयनासन उस जगह करें–ऽऽ
ये ही विविक्त शैय्यासन, सबको ही जिनदेव कहें –2
ये भी तप भव का हो–3 संताप मिटाये रे–ऽऽ।।3189।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(451) गिरा कंदरा कोटर में, सरिता तट पर और वन में –2
वीरासन उग्रासन में–ऽऽ
तप को धारण करते हैं, कर्म निवारण करते हैं –2
काय क्लेश तप हो–3 उसको बतलायें रे–ऽऽ।।3190।।

(452) सुख में पाया ज्ञान यहाँ, दुख में होता नष्ट यहाँ –2
ये अनुभव की बात यहाँ–ऽऽ
दुख में पाये ज्ञान यहाँ, कभी न हो वो नाश यहाँ –2
दुख में आतम का हो–3 चिंतन कर जाओ रे–ऽऽ।।3191।।

(453) रोगी दवा यहाँ खाता, सुख या दुख दोनों पाता –2
दवा में सुख दुख नहिं होता–ऽऽ
सुख दुख अनुभव में होता, हेतु नहीं सुख दुख होता –2
ऐसा तुम जानो हो–3 चिंतन सही लाओ रे–ऽऽ।।3192।।

(454) मोह का क्षय जब साधु करे, सुख–दुख अनुभव यहाँ करे –2
बाह्य व्याधियाँ सहन करें–ऽऽ
मोह का क्षय सुखकारी है, कभी न अनिष्टकारी है –2
जो भी यह समझे हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–ऽऽ।।3193।।

(455) प्रायश्चित है और विनय, वैय्यावृत्ति स्वाध्याय –2
ध्यान और व्युत्सर्ग ये छह–ऽऽ
आभ्यंतर तप कहे यहाँ, आतम शुद्धि करें यहाँ –2
ये तप प्राणी की हो–3 भव तपन मिटायें रे–ऽऽ।।3194।।

(456) समिति शीलव्रत जो पालें, जप–संयम खुद में ढालें –2
इन्द्रिय निग्रह अवगाहें–ऽऽ
ये सब प्रायश्चित तप हैं, जो करणीय निरंतर हैं –2
इनसे प्रायश्चित हो–3 तप श्रेष्ठ कहाये रे–ऽऽ।।3195।।

(457) क्रोध कषायादिक क्षय हो, या फिर इनका उपशम हो –2
नित्य भावना यही करो–ऽऽ
निज गुण का चिंतन करना, पापों से नित ही बचना –2
निश्चय प्रायश्चित हो–3 ये ही कहलाये रे–ऽऽ।।3196।।

(458) जन्म अनंतानंत हुये, भाव शुभाशुभ खूब हुये –2
उससे अर्जित कर्म हुये–ऽऽ
तपश्चरण के द्वारा ही, सारे कर्म विनाश हुये –2
तप को प्रायश्चित हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3197।।

(459) उभय, विवेक व आलोचन, कायोत्सर्ग व प्रतिक्रमण –2
छेद मूल तप श्रद्धानम्–ऽऽ
अंतिम है परिहार वहाँ, दश प्रायश्चित भेद यहाँ –2
ये सब ही तपके हो–3 गुरु भेद बतायें रे–ऽऽ।।3198।।

(460) जिन्हें दूसरों ने जाना, उसको आभोगकृत माना –2
एक अनाभोग कृत माना–ऽऽ
दोनों कर्म शुभाशुभ हैं, दोष निवारण को गुरु हैं –2
इनकी आलोचन हो–3 गुरु समक्ष लाओ रे–ऽऽ।।3199।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(461) साधु अपने दोष यहाँ, माया–मद को छोड़ यहाँ –2
कह दे गुरु समक्ष यहाँ–ऽऽ
ज्यों बालक का भाव सरल, माँ से सब कहता निश्छल –2
साधु–बालक का हो–3 मन सरल बताये रे–ऽऽ।।3200।।

(462) काँटा तन में चुभ जाये, दुखी पूर्ण तन हो जाये –2
फिर मन कहीं न लग पाये–ऽऽ
तन से काँटा निकले जब, वह सर्वांग सुखी हो तब –2
वैसे ही शल्य हो–3 से मन हो जाये रे–ऽऽ।।3201।।

(463) दोषों को नहिं प्रकट करे, व्याकुल हो वो दुखी रहे –2
मन में जीवित शल्य रहे–ऽऽ
गुरु समक्ष सब दोष कहे, हो विशुद्ध वह सुखी रहे –2
शल्य ही मन को हो–3 बेचैन बनाये रे–ऽऽ।।3202।।

(464) परिणामों में समता हो, निज आतम को लखता हो –2
निर्मल भाव सँवरता वो–ऽऽ
आलोचना इसे कहते, जिनवर की आज्ञा है जो –2
समता का भाव हो–3 अति श्रेष्ठ कहाये रे–ऽऽ।।3203।।

(465) गुरु सामने आ जायें, हाथ जोड़ हम उठ जायें –2
उच्चासन पर बैठायें–ऽऽ
भाव पूर्वक भक्ति करें, सेवा वैयावृत्ति करें –2
इसको विनय तप हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3204।।

(466) दर्शन ज्ञान चरित्र विनय, तप औपचारिक पाँच विनय –2
इनसे मिटते सारे भय–ऽऽ
पाँचों को जो अपनाये, पंचमगति को वो पाये –2
सारे गुणों को हो–3 ये विनय दिलाये रे–ऽऽ।।3205।।

(467) एक की पूजा होती है, सबकी ही हो जाती है
सबकी एक में होती है–ऽऽ
एक का करें अनादर हम, सबका समझ अनादर तुम –2
सबकी विनय हो–3 वो भाव बनाओ रे–ऽऽ।।3206।।

(468) जिनशासन का मूल विनय, संयम तप का मूल विनय –2
विनय बिना नहिं कर्म विलय–ऽऽ
विनय बिना नहिं धर्म यहाँ, इसके बिन तप नहीं यहाँ –2
खान गुणों की हो–3 ये विनय बतायें रे–ऽऽ।।3207।।

(469) विनय से मुक्ति द्वार मिले, संयम–तप और ज्ञान मिले –2
विनय से उत्तम ध्यान मिले–ऽऽ
आराधना विनय से हो, समता भाव विनय से हो –2
इसके बिन भव में हो–3 दुख ही दुख पाये रे–ऽऽ।।3208।।

(470) विनय सहित विद्या मिलती, वो इस लोक बहुत फलती –2
अगले जन्म साथ चलती–ऽऽ
विनय बिना जो विद्या हो, वो फलदायी कभी न हो –2
जैसे जल के बिन हो–3 नहिं धान्य उपाये रे–ऽऽ।।3209।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(471) सभी तरह से यत्न करे, विनय कभी भी नहीं तजे –2
गुण की जननी विनय कहें–ऽऽ
अल्पज्ञान का अभ्यासी, विनय से मुक्ति प्राप्त करे –2
श्रेष्ठ विनय से हो–3 मुनि कर्म नशाये रे–ऽऽ।।3210।।

(472) शैया, वसति तथा आसन, आहार–औषधि–प्रतिलेखन –2
सभी साधुओं का वंदन–ऽऽ
करें सुश्रुषा और सेवा, जिसमें है गुण की मेवा –2
वैयावृत्ति तप ये हो–3 ये सब कहलायें रे–ऽऽ।।3211।।

(473) चलने से थक जाते हैं, जिनको रोग सताते हैं –2
परम दुखी कर जाते हैं–ऽऽ
राजा से हो व्यथित यहाँ, नदी रुकावट करे यहाँ –2
वैयावृत्ति ही हो–3 रक्षा कहलाये रे–ऽऽ।।3212।।

(474) शास्त्र वाचना करें यहाँ, प्रश्न पृच्छना करें यहाँ –2
अनुप्रेक्षा–आम्नाय यहाँ–ऽऽ
स्तुति धर्मकथा करना, पाँच तरीके से पढ़ना –2
कहते स्वाध्याय हो–3 ये भेद बतायें रे–ऽऽ।।3213।।

(475) नहिं सम्मान अपेक्षा हो, जिनश्रुत में नित भक्ति हो –2
कर्म मलों को धोने को–ऽऽ
जिनशास्त्रों को पढ़ता है, स्व–पर सुखामृत पाने को –2
निजगुण की चाह हो–3 गुण हमें दिलाये रे–ऽऽ।।3214।।

(476) साधु जो श्रुत ज्ञाता हो, पंचेन्द्रिय को रोके वो –2
तीन गुप्तियों से युत हो –ऽऽ
विनय समाहित होता है, मन एकाग्र तो होता है
तब ही जीवन में हो–3 आनंद समाये है–ऽऽ।।3215।।

(477) ज्ञान से ध्यान की सिद्धि हो, ध्यान से कर्म निर्जरा हो –2
तब ही मुक्ति प्राप्त अहो–ऽऽ
ज्ञान अभ्यास करें हरदम, ध्यान तभी होता आतम –2
तब ही जीवन का हो–3 फल शुभ मिल पाये रे–ऽऽ।।3216।।

(478) बारह तप में उत्तम तप, कहा है उसको स्वाध्याय तप –2
ज्ञान बिना सब ही है व्यर्थ–ऽऽ
तप स्वाध्याय सम नहिं है तप, हुआ न होगा कोई तप –2
इसके बिन ज्ञान हो–3 कोई नहिं पाये रे–ऽऽ।।3217।।

(479) व्यर्थ न तन व्यापार करे, शयनासन नहिं व्यर्थ करे –2
भिक्षु व्यर्थ नहिं खड़े रहे–ऽऽ
काष्ठ समान स्थिर रहना, ये भी तप ऋषि का कहना –2
तप है कायोत्सर्ग हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3218।।

(480) श्लेष्म आदि सब दोष मिटें, मति की जड़ता दूर हटे –2
दुख सहने की शक्ति बढ़े–ऽऽ
चित्त एकाग्र से ध्यान बढ़े, भावनाओं को लाभ मिले –2
ये सब कायोत्सर्ग हो–3 के लाभ बतायें रे–ऽऽ।।3219।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(481) तप कर चाह जो रखते हैं, दीक्षा धारण करते हैं –2
तप की शुद्धि न करते हैं–ऽऽ
तप ऐसा हम करें यहाँ, पता नहीं चल सके यहाँ –2
तप की प्रशंसा हो–3 खुद नहीं कराये रे–ऽऽ।।3220।।

(482) ज्ञान वायु जब चलती है, शील की अग्नि जलती है –2
कर्मबीज सब नशती है–ऽऽ
जैसे वन में आग लगे, कर्ममयी सब घास जले –2
ज्ञान और तप से हो–3 सब दुख मिट जाये रे–ऽऽ।।3221।।

(483) मानुष तन में सिर उत्तम, तरु में उसकी जड़ उत्तम –2
त्यों साधु को ध्यान उत्तम–ऽऽ
सब धर्मों मूल कहा ध्यान परम उत्कृष्ट अहा –2
ध्यान बिन कुछ भी हो–3 अनुभव नहिं आये रे–ऽऽ।।3222।।

(484) चित्त रहे अत्यन्त चपल, भावना चिंतन चिंता बल –2
तीन रूप में रहे विकल–ऽऽ
जब मन हो एकाग्र यहाँ, तब हो पाता ध्यान यहाँ –2
ध्यान से कर्म हो–3 सब ही मिट जायें रे–ऽऽ।।3223।।

(485) पानी का हो योग जहाँ, होता नमक विहीन वहाँ –2
इसको जानें सभी यहाँ–ऽऽ
चित्त समाधि लीन हो जब, कर्म भस्म हो जाते सब –2
आतम का अनुभव हो–3 तब निज में आये रे–ऽऽ।।3224।।

(486) राग–द्वेष नहिं जिसमें हों, योगों का व्यापार न हो –2
उसमें ध्यान की अग्नि हो–ऽऽ
सभी शुभाशुभ कर्म जलें, गुण खुद सारे प्रकट रहें –2
आतम तब निज में हो–3 निज से रम जाये रे–ऽऽ।।3225।।

(487) पूर्व व उत्तर दिशाभिमुख, आसन स्थित जिसमें सुख –2
शुद्धाचार हो पावनयुत–ऽऽ
तन को स्थित करके वो, करे समाधि भावना तो –2
अपने स्वभाव में हो–3 लीन हो जाये रे–ऽऽ।।3226।।

(488) मन वच काय को रोक यहाँ, पद्मासन में बैठ यहाँ –2
मंद मंद ले श्वाँस यहाँ–ऽऽ
सभी विकल्पों को तजकर, शुद्धात्म की चाहत कर –2
तब ही समाधि का हो–3 भाव हो पाये रे–ऽऽ।।3227।।

(489) क्षमा भाव सबसे करके, पापों की गर्हा करके –2
निष्प्रमादमय हो करके–ऽऽ
चित्त को निश्चल यहाँ करे, तब तक आतम ध्यान करे –2
जब तक कर्मों का हो–3 क्षय हो नहिं जाये रे–ऽऽ।।3228।।

(490) योगों को स्थिर यहाँ किया, चित्त ध्यान में लगा दिया –2
मन को निश्चल पूर्ण किया–ऽऽ
उनको भवन हो या वन हो, उन्हें न कोई अंतर हो –2
उनका ही ध्यान हो–3 अति श्रेष्ठ कहाये रे–ऽऽ।।3229।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(491) श्रमण तपस्वी रहे यहाँ, करे समाधि भाव यहाँ –2
इन्द्रिय राग करे यहाँ–ऽऽ
प्रतिकूलों में द्वेष नहीं, अनुकूलों में राग नहीं–2
अपने में लीन हो–3 के भाव बनाये रे–ऽऽ।।3230।।

(492) भव स्वरूप से परिचित हैं, आशा रहित व निर्भय हैं –2
वैरागी नि:संगी हैं–ऽऽ
ध्यान उन्हीं को होता है, निज में स्थित होता है –2
ज्ञान और ध्यान हो–3 वो खुद पा जाये रे–ऽऽ।।3231।।

(493) केवलज्ञान व दर्शन हो, पुरुषाकार में आतम हो –2
उसका ध्यान करेगा जो–ऽऽ
सभी द्वन्द्व से छूटे वो, कर्मबंध को काटे वो –2
ऐसा ही ध्यान हो–3 भव पार कराये रे–ऽऽ।।3232।।

(494) योगी जब भी ध्यान करे, तन आतम से भिन्न लखे –2
सब संयोग भी भिन्न दिखे–ऽऽ
ध्यान में हो नि:संग यहाँ, पर से होता भिन्न यहाँ
उसको ही पर से हो–3 मुक्ति मिल पाये रे–ऽऽ।।3233।।

(495) मैं पर का नहिं कभी यहाँ, पर मेरे नहिं रंच यहाँ –2
ज्ञानमयी मैं नित्य यहाँ–ऽऽ
ध्यान में चिंतन करता जो, वो आतम का ध्याता हो –2
साधु ही ऐसा हो–3 नित ध्यान लगाये रे–ऽऽ।।3234।।

(496) ध्यान में योगी स्थित हो, स्व संवेदन करे न जो –2
शुद्धातम को प्राप्त न हो–ऽऽ
भाग्यहीन जो पुरुष यहाँ, उसे रत्न नहिं मिलें यहाँ –2
भाग्य अच्छा हो हो–3 तो आत्म दिखाये रे–ऽऽ।।3235।।

(497) साधक ध्यान यहाँ करता, पिण्ड–पदस्थ ध्यान करता –2
रूपातीत में खुद रमता–ऽऽ
तब शुद्धातम पाता वो, सारे कर्म खपाता वो –2
सुखमय सब वैभव हो–3 उसको मिल जाये रे–ऽऽ।।3236।।

(498) दृढ़ आसन में स्थित हो, मन को स्थिर करके जो –2
ध्येय बनाते तत्त्वों को–ऽऽ
सब संकल्प मुक्त भगवन्, आत्मसमाधि का चिंतन –2
ऐसा ही ध्यान हो–3 सब कर्म मिटाये रे–ऽऽ।।3237।।

(499) भूत भविष्य न देखे जो, वर्तमान में तत्पर जो –2
सभी कल्पना रहित है जो–ऽऽ
तन और कर्म का शोषण कर, करता उनका क्षरण है जो –2
उसके जीवन में हो–3 वह ध्यान आ जाये रे–ऽऽ।।3238।।

(500) तन से हरकत कोई न कर, वानी से नहिं बनो मुखर –2
मन से चिंतन तू मत कर–ऽऽ
योग निरोध यहाँ करके, निज को निज में स्थिर करके –2
ऐसा ही ध्यान हो–3 उत्कृष्ट बताये रे–ऽऽ।।3239।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(501) ऐसा योगी ध्यान करे, कषाय नहिं उत्पन्न उसे –2
नहिं हो विषाद शोक उसे–ऽऽ
मन के दुख से दुखी न हो, ईर्ष्या पीड़ा उसे न हो –2
उसका ही चित्त हो–3 ध्यानी बन जाये रे–ऽऽ।।3240।।

(502) परीषहों को सहन करे, उपसर्गों से नहीं डरें –2
धीर–वीर वे साधक हैं–ऽऽ
देवों निर्मित माया से, मुग्ध नहीं होता उनसे –2
ध्यान से ये सब हो–3 शक्ति आ जाये रे–ऽऽ।।3241।।

(503) बहुत समय का ईंधन हो, आग अभी लग जाये तो –2
झट ईंधन जल जाये वो–ऽऽ
वैसे ध्यान की अग्नि यहाँ, कर्म जलाये सभी यहाँ –2
क्षण में ही ईंधन हो–3 को भस्म कराये रे–ऽऽ।।3242।।

(504) मोक्षार्थी मुनि जो भी हो, धर्मध्यान पहले ही हो –2
चित्त ध्यान से भावित हो–ऽऽ
फिर बारह भावना धरे, चिंतन यहाँ करे –2
तब ही वैराग्य हो–3 जीवन में आये रे–ऽऽ।।3243।।

(505) अनित्य अशरण एकत्व, लोक अशुचि व अन्यत्व –2
आस्रव संवर संसारत्व–ऽऽ
निर्जरा धर्म व बोधि यहाँ, भावनाएँ बारह यहाँ –2
उनका ही चिंतन हो–3 वैराग्य बढ़ाये रे–ऽऽ।।3244।।

(506) जन्म के साथ मरण होगा, युवा के साथ वृद्ध होगा –2
आज है कुछ कल कुछ होगा–ऽऽ
लक्ष्मी इन्द्रधनुष सम है, सब कुछ ही क्षणभंगुर है –2
सब कुछ अनित्य हो–3 जग में नजराये रे–ऽऽ।।3245।।

(507) महामोह को तज करके, इन्द्रिय विषय जान करके –2
इनको क्षणिक समझ करके–ऽऽ
मन को विषय रहित कर ले, ताकि उत्तम सुख पा ले –2
वर्ना इस भव में हो–3 सुख लेश न पाये रे–ऽऽ।।3246।।

(508) जाति जीव धन पशु यहाँ, शरण मानता इन्हें यहाँ –2
मैं इनका ये मेरे यहाँ–ऽऽ
लेकिन ये नहिं रक्षक हैं, और न ही ये शरणा हैं –2
अज्ञानी इनको हो–3 निज शरण बताये रे–ऽऽ।।3247।।

(509) सभी परिग्रह तजता हूँ, तीन शल्य से हटता हूँ –2
जान–समझ ये करता हूँ–ऽऽ
पाँच समिति त्रय गुप्ति यहाँ, शरण मुझे ये कहता हूँ
इनकी ही शरण हो–3 समता दिलवाये रे–ऽऽ।।3248।।

(510) सुंदर युवक यहाँ मरता, तन का त्याग यहाँ करता –2
मृत तन में जा कृमि बनता–ऽऽ
ऐसा ये संसार यहाँ, है इसको धिक्कार यहाँ –2
ज्ञानी इस भव में हो–3 नहिं लगन लगाये रे–ऽऽ।।3249।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(511) एक बाल की नोंक समां, जगह न कोई बची यहाँ –2
जन्म न हमने लिया जहाँ–ऽऽ
जन्म मरण के दुख भोगे, जाने कितने बार यहाँ
चेतन खुद चेतो हो–3 तुझे कौन बचाये रे–ऽऽ।।3250।।

(512) भव समुद्र दुख खान यहाँ, व्याधि मरण के कष्ट जहाँ –2
जन्म जरा जलराशि यहाँ–ऽऽ
जिसमें दारुण दुक्ख भरे, बड़े कष्ट से अंत अरे –2
थोड़े दुख सह ले हो–3 सब दुख मिट जायें रे–ऽऽ।।3251।।

(513) रत्नत्रय सम्पन्न है जो, समझो उत्तम तीर्थ है वो –2
दिव्यमयी नौका है वो–ऽऽ
पार कराये भवसागर, बैठें तिरें सभी पामर –2
ऐसे तीरथ ही हो–3 खुद तिरें तिरायें रे–ऽऽ।।3252।।

(514) कर्म स्वयं ही उपजाये, सुख–दुख स्वयं यहाँ पाये –2
फल में कोई न साथ आये–ऽऽ
कहो कौन अब अपना है, जग सारा भ्रम सपना है –2
जाने इस जग को हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–ऽऽ।।3253।।

(515) तन रागादिक भाव यहाँ, ये सब हैं संयोग यहाँ –2
आज नहीं कल साथ वहाँ–ऽऽ
ज्ञान दर्श से युक्त हूँ मैं, एक शुद्ध शाश्वत हूँ मैं –2
ये सब संयोग हो–3 संबंध स्वभाव न रे–ऽऽ।।3254।।

(516) होता पर संयोग जहाँ, दुख की संतति रहे वहाँ –2
दुख की जड़ संयोग यहाँ–ऽऽ
अब मैं नहिं संयोग करूँ, शुद्ध भाव से त्याग करूँ –2
तब ही दुक्खों का हो–3 कुछ अंत दिखाये रे–ऽऽ।।3255।।

(517) किन्हीं दुखी को देख यहाँ, दुख करता है खूब यहाँ –2
अज्ञानी वह जीव यहाँ–ऽऽ
खुद की चिंता नहीं करे, असंयमी बन यहाँ मरे –2
अज्ञानी प्राणी हो–3 यूँ करता जाये रे–ऽऽ।।3256।।

(518) ये तन मेरा अन्य यहाँ, मैं हूँ इससे भिन्न कहाँ?–2
अज्ञानी वह जीव यहाँ–ऽऽ
खुद की चिंता नहीं करे, असंयमी बन यहाँ मरे –2
अज्ञानी प्राणी हो–3 यूँ करता जाये रे–ऽऽ।।3257।।

(519) ये तन मेरा अन्य यहाँ, मैं हूँ इससे भिन्न यहाँ –2
पुत्र–स्त्री अति भिन्न यहाँ–ऽऽ
ऐसा पहले ज्ञान करो, फिर इनमें आसक्त न हो –2
ये तन सब पर है हो–3 दुख की उपजाये रे–ऽऽ।।3258।।

(520) तन स्वरूप को जाने जो, भिन्न स्वयं से माने वो –2
अनुचिंतन निज करता वो–ऽऽ
निज को पर से भिन्न करे, अपने गुण में यहाँ रमे –2
अन्यत्व भावना हो–3 तब सफल बतायें रे–ऽऽ।।3259।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(521) हड्डी मज्जा–माँस धरा, खून और मल मूत्र भरा –2
अशुचि वस्तु से भरा पड़ा–ऽऽ
नव छिद्रों से अशुद्धि बहे, इस तन में क्या सौख्य रहे –2
दुख की है खान हो–3 ये तन बतलाये रे–ऽऽ।।3260।।

(522) मोह से जो उत्पन्न यहाँ, उन भावों का त्याग यहाँ –2
सम्यभाव में लीन यहाँ–ऽऽ
उसमें आस्रव अनुप्रेक्षा, होती कहते प्रभु यहाँ –2
उससे ही भव में हो–3 आस्रव रुक पाये रे–ऽऽ।।3261।।

(523) तीन गुप्तियों का गोपन, पाँच समितियों का पालन–2
वीतरागमय आराधन–ऽऽ
अप्रमत्त मुनि होता जो, उसको कर्म न आस्रव हो –2
संवर अनुप्रेक्षा हो–3 उसमें बतलायें रे–ऽऽ।।3262।।

(524) भव में भ्रमण न पार यहाँ, ये भव है निस्सार यहाँ –2
यत्न सहित मुनि जान यहाँ–ऽऽ
मुक्ति पद का ध्यान करें, सुखपूर्वक फिर वहाँ रहें –2
जो भी जो ध्याये हो–3 उसको ही पाये रे–ऽऽ।।3263।।

(525) जन्म मरण की धार यहाँ, डुबा रही सब जीव यहाँ –2
नहीं ठिकाना कहीं यहाँ–ऽऽ
धर्मद्वीप इक श्रेष्ठ कहा, गतिमय उत्तम शरण कहा –2
इसके बिन भव में हो–3 नहिं शरण दिखाये रे–ऽऽ।।3264।।

(526) दुर्लभ मानव जन्म यहाँ, धर्म श्रवण है कठिन यहाँ –2
जिसको सुनकर जीव यहाँ–ऽऽ
क्षमा अहिंसा प्राप्त करे, तप का भी अनुकरण करे –2
धर्म से प्राणी हो–3 निज दुक्ख मिटाये रे–ऽऽ।।3265।।

(527) धर्म श्रवण भी हो जाये, महाकठिन श्रद्धा पाये –2
कठिन सुना – वो कर जाये–ऽऽ
मोक्षमार्ग को सुन करके, विचलित हो जाते उससे –2
ज्यादातर लोग हो–3 ऐसे बतलायें रे–ऽऽ।।3266।।

(528) धर्म श्रवण को करे यहाँ, श्रद्धा भी उर धरे यहाँ –2
संयम दुर्लभ कहा यहाँ–ऽऽ
बहुत लोग ऐसे होते, संयम में अभिरुचि रखते –2
सम्यक रुपेण हो–3 स्वीकार न पायें रे–ऽऽ।।3267।।

(529) भाव कहो शुद्धात्म अहा, उसको नौका समां कहा –2
इससे हो भव पार अहा–ऽऽ
जब अनुकूल पवन आती, नौका तट को पा जाती –2
त्यों ही भावना हो–3 भव हमें तिराये रे–ऽऽ।।3268।।

(530) प्रत्याख्यान व प्रतिक्रमण, मरण समाधि – आलोचन –2
द्वादश अनुप्रेक्षा चिंतन–ऽऽ
बार–बार करते रहना, जिससे भवसागर तिरना –2
इनके बिन भव दुख हो–3 कैसे मिट पाये रे–ऽऽ।।3269।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(531) धर्मध्यानयुत जो मुनि हो, पीत पद्म शुक्ल लेश्या हो –2
विशुद्ध शुभ लेश्यायें हों–ऽऽ
तीव्र मंद दोनों ही हों, भाव अनेक तरह के हों –2
भावों से भव में हो–3 लेश्या बन जाये रे–ऽऽ।।3270।।

(532) कषाय युत हों योग जहाँ, लेश्या बनती एक वहाँ –2
कर्मों का हो बंध वहाँ–ऽऽ
योग से प्रकृति प्रदेश बंधे, कषाय स्थिति अनुभाग बंधें–2
लेश्या से चारों हो–3 ही बंध बताये रे–ऽऽ।।3271।।

(533) कृष्ण–नील–कापोत यहाँ, पीत–पद्म है शुक्ल यहाँ –2
छह लेश्यायें कहीं यहाँ–ऽऽ
संसारी में होती हैं, भाव प्रदर्शित करती हैं –2
लेश्यायें दोनों हो–3 शुभ अशुभ बतायें रे–ऽऽ।।3272।।

(534) कृष्ण नील कापोत यहाँ, अशुभ हैं ये लेश्यायें यहाँ –2
दुर्गति में ले जायें यहाँ–ऽऽ
धर्मी इनका त्याग करें, अशुभ लेश्या नहीं वरें –2
नारक तिर्यक गति में हो–3 में ये ले जायें रे–ऽऽ।।3273।।

(535) पीत–पद्म और शुक्ल यहाँ, धर्ममयी ये तीन यहाँ –2
शुभ ही शुभ दिलवाये यहाँ–ऽऽ
इनसे जीव सुगति पाता, भव में कभी न भरमाता –2
देव–मानव–गति हो–3 ये हमें दिलायें रे–ऽऽ।।3274।।

(536) तीव्र–तीव्रतम–तीव्रतर, मंद मंदतम् मंदतर–2
तीन शुभाशुभ भेद प्रवर–ऽऽ
इनमें छः गुण हानि रहें, ऊँचे नीचे भाव रहें
इनसे कर्मों के हो–3 बंधन बतलायें रे–ऽऽ।।3275।।

(537) वन भटके छः राही यहाँ, भूख से व्याकुल दुखी यहाँ –2
पेड़ दिखा फल लदा यहाँ–ऽऽ
जड़ से काटो फल खायें, तना काट कर फल खायें –2
शाखा ही तोड़ो हो–3 फिर फल हम खायें रे–ऽऽ।।3276।।

(538) डाल तोड़कर खा लें हम, केवल फल को तोड़े हम –2
गिरे हुये फल खायें हम–ऽऽ
छः लोगों ने भाव रखे, छः लेश्या तू जान अरे –2
उनके उदाहरण हो–3 ऐसे समझायें रे–ऽऽ।।3277।।

(539) तीव्र वैर झगडालू हो, धर्म दया से शून्य अहो –2
उग्र स्वभावी पापी हो–ऽऽ
समझाने पर नहिं माने, अपनी–अपनी ही ताने
कृष्ण लेश्या के हो–3 ये चिह्न बतायें रे–ऽऽ।।3278।।

(540) मंद बुद्धि स्वाभाविक हो, बुद्धिहीनता लक्षण हो –2
विषयों में लोलुपता हो–ऽऽ
तत्त्वों का नहिं ज्ञान करे, रणभूमि में यहाँ मरे –2
नील लेश्या के हो–3 लक्षण बतलायें रे–ऽऽ।।3279।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(542) गैरों की निंदा करता, यहाँ बहुत ही है डरता–2
जल्दी रुष्ट हुआ करता–ऽऽ
दोष लगाता गैरों में, कहता है अच्छा हूँ मैं –2
कापोत लेश्या के हो–3 ये भाव बताये रे–ऽऽ।।3280।।

(542) तत्त्व–अतत्त्व विचार करे, दया दान में चित्त धरे –2
कार्य–अकार्य विवेक धरे–ऽऽ
लाभ–अलाभ विचारे जो, श्रेयाश्रेय बताये जो –2
पीत लेश्या के हो–3 ये चिह्न बताये रे–ऽऽ।।3281।।

(543) त्यागशील हो भद्र यहाँ, प्रामाणिक व्यवहार यहाँ –2
क्षमाशील का भाव यहाँ–ऽऽ
गुरुजन पूजा सेवा में, तत्पर हो जो सरल यहाँ –2
पद्म लेश्या के हो–3 लक्षण दिखलाये रे–ऽऽ।।3282।।

(544) भव आकांक्षा नहीं करे, पक्षपात मन नहीं धरे –2
राग–द्वेष से दूर रहे–ऽऽ
समदर्शी समभाव करे, प्रणय भाव में नहीं रमे –2
शुक्ल लेश्या के हो–3 ये चिह्न बताये रे–ऽऽ।।3283।।

(545) आत्म विशुद्धि आती है, लेश्या शुद्ध हो जाती है –2
अनुभव शुद्ध कराती है–ऽऽ
होती कषाय मंद जहाँ, परिणामों की शुद्धि वहाँ –2
तीव्र कषाय हो–3 निज शुद्धि मिटाये रे–ऽऽ।।3284।।

(546) मोहनीय कर्मोदय हो, उपशम क्षय क्षयोपशम हो –2
इन भावों से युक्त जो हो–ऽऽ
जीव की अवस्थायें जो हैं, गुणस्थान उन्हें कहते हैं –2
सम्यक्त्व अपेक्षा हो–3 ये बात बताये रे–ऽऽ।।3285।।

(547) मिथ्या सासन मिश्र यहाँ, अविरत सम्यग्दृष्टि यहाँ –2
देश विरत गुणस्थान यहाँ–ऽऽ
प्रमत्त–अप्रमत्त कहे, अपूर्वकरण गुणस्थान कहे –2
इनको जो जाने हो–3 वो खुद को जाने रे–ऽऽ।।3286।।

(548) अनिवृत्तिकरण तुम जानो, सूक्ष्म सांपराय को मानो –2
उपशांत मोह ग्यारह जानो–ऽऽ
क्षीणमोह सयोग केवली चौदहवाँ अयोग केवली –2
सिद्धप्रभु इनसे हो–3 सब रहित बतायें रे–ऽऽ।3287।।

(549) तत्त्वों पर श्रद्धान न हो, उसको ही मिथ्यात्व कहो –2
उसके हैं त्रयभेद अहो–ऽऽ
गृहीत और अगृहीत दो, तीजा संशय युक्त अहो –2
इनको जाने बिन हो–3 सम्यक्त्व न पाये रे–ऽऽ।।3288।।

(550) सम्यक्गिरि से गिरा यहाँ, मिथ्या में नहिं गया यहाँ –2
बीच में अटका हुआ यहाँ–ऽऽ
सासादन सम्यक्त्व वही, पायेगा मिथ्यात्व यहाँ –2
मिथ्यात्व पाकर हो–3 फिर भव भ्रम जाये रे–ऽऽ।।3289।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(552) गुड़ और दही ज्यों मिल जाये, स्वाद तीसरा बन जाये –2
मिश्रित स्वाद निकल आये–ऽऽ
सम्यक् और मिथ्यात्व मिले, तब मिश्रित परिणाम बनें –2
मिश्र गुणथान हो–3 तब ही बन पाये रे–ऽऽ।।3290।।

(552) इन्द्रिय विषय विरक्त न हो, त्रस स्थावर से विरत न हो –2
जिनवचनों को माने जो–ऽऽ
उन पर नित श्रद्धान करे, तत्त्वों से वह नहीं डिगे–2
अविरत समदृष्टि हो–3 गुणथान कहाये रे–ऽऽ।।3291।।

(553) त्रस हिंसा का त्यागी हो, स्थावर का नहिं त्यागी हो –2
तत्त्वों पर नित श्रद्धा हो–ऽऽ
एकदेश व्रत को धारे, देशव्रती वह भव्य कहो –2
पंचम गुणथान हो–3 उसको बतलाये रे–ऽऽ।।3292।।

(554) महाव्रतों को धारा है, शीलव्रत अनुचारा है–2
पर प्रमाद की धारा है–ऽऽ
उसे यहाँ संयमी कहा – प्रमत्तसंयत नाम दिया –2
मुनियों में ऐसा हो–3 संयम बतलायें रे–ऽऽ।।3293।।

(555) जिसका नष्ट प्रमाद हुआ, शुद्धातम का ध्यान हुआ –2
व्रत–गुण–शील से शोभ रहा–ऽऽ
आत्म ध्यान में लीन रहे, अप्रमत्त संयमी कहें –2
ऐसे श्रमण को हो–3 मंजिल मिल जाये रे–ऽऽ।।3294।।

(556) अलग–अलग समयों में हों, नये–नये परिणाम हों –2
अपूर्वकरण गुणथान हो–ऽऽ
पहले कभी न भाव हुये, वैसे ही परिणाम बनें –2
अपूर्व गुणथान हो–3 श्रेणी पर लाये रे–ऽऽ।।3295।।

(557) ऐसे मुनि परिणाम करे, कर्म उपशम या क्षय करे–2
सूक्ष्म लोभ भी क्षय करे–ऽऽ
तब दसवाँ गुणथान यहाँ, कहते हैं जिनदेव यहाँ–2
उपशम या क्षायिक हो–3 श्रेणी कहलाये रे–ऽऽ।।3296।।

(558) अनिवृत्तिकरण गुणथान यहाँ, होते हैं परिणाम यहाँ –2
एक समय में एक यहाँ–ऽऽ
निर्मलतर उन भावों से, कर्म भस्म सब करें यहाँ –2
नौवाँ गुणथान हो–3 मुनि को बतलायें रे–ऽऽ।।3297।।

(559) अंतरंग में सूक्ष्म यहाँ, रागशेष रह गया जहाँ –2
कुसुम रंग की तरह यहाँ–ऽऽ
उनमें सूक्ष्म कषाय कहा, अथवा सूक्ष्म लोभ कहा –2
दसवाँ गुणथान हो–3 तब ही कहलाये रे–ऽऽ।।3298।।

(560) फिटकरी सहित अगर हो जल, हो जाता है वह निर्मल –2
शीतकाल ज्यों सरवर जल–ऽऽ
पूर्णमोह जब शांत हुआ, उसे मोह उपशांत कहा –2
गिरकर यहाँ से हो–3 वह नीचे जाये रे–ऽऽ।।3299।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(561) पूर्ण मोह जहाँ नष्ट हुआ, चित्त उसी का शांत हुआ –2
वीतरागता प्रकट हुआ–ऽऽ
क्षीणकषायी श्रमण यहाँ स्फटिक मणी सा स्वच्छ हुआ–2
ऐसे मुनि नीचे हो–3 गिर कभी न पायें रे–ऽऽ।।3300।

(562) अंधकार अज्ञान मिटा, नवलब्धि की दिखी छटा –2
अनंत चतुष्टय को प्रकटा–ऽऽ
कहें सकल जो परमातम, ज्ञायकमय हो गई आतम –2
अरहंत भगवन् हो–3 वे मुनि कहलायें रे–ऽऽ।।3301।।

(563) हुये इन्द्रियातीत यहाँ, ज्ञानदर्श से पूर्ण यहाँ –2
घातिकर्म से रहित यहाँ–ऽऽ
सयोग केवली जिन कहते, सर्वद्रव्य युगपत् दिखते –2
अरहंत प्रभु को हो–3 हम शीश झुकायें रे–ऽऽ।।3302।।

(564) कोई न आस्रव रहा जिन्हें, कर्मबंध नहिं रहा जिन्हें –2
अयोग केवली उन्हें कहें–ऽऽ
योग रहित जो हुये यहाँ, शील के स्वामी हुये यहाँ –2
उनको अयोग हो–3 केवली बतायें रे–ऽऽ।।3303।।

(565) अयोग केवली ज्यों ही हों, त्यों ही ऊर्ध्व स्वभावी हों –2
शीघ्र यहाँ अशरीरी हों–ऽऽ
आठ गुणों से युक्त यहाँ, लोकशिखर पर गये यहाँ –2
उनको ही हम सब हो–3 प्रभुसिद्ध बतायें रे–ऽऽ।।3304।।

(566) अष्टकर्म से रहित हैं जो, अष्टगुणों से सहित हैं जो –2
नित्य निरंजन सुखमय जो–ऽऽ
हुये हैं जो कृतकृत्य यहाँ, पूर्ण हो गये सत्य यहाँ –2
लोक शिखर पर हो–3 राजित हो जायें रे–ऽऽ।।3305।।

(567) ये तन नाव समान यहाँ, जीव है नाविक समां यहाँ –2
ये संसार समुद्र यहाँ–ऽऽ
कला जो तिरने की पाते, वे महर्षिजन कहलाते–2
तिरना सीखोगे तब ही हो–3 तिर पाओ रे–ऽऽ।।3306।।

(568) जो मुक्ति का लक्ष्य रखे, बाह्य विषय नहिं चाह रखे –2
साधक बन साधना करे–ऽऽ
इस तन से तप यहाँ करे, पूर्व कर्म का क्षरण करे –2
तब ही जीवन की हो–3 सार्थकता पाये रे–ऽऽ।।3307।।

(569) धैर्यशील को मरना है, कायर को भी मरना है –2
दोनों को ही मरना है–ऽऽ
मरना यहाँ जरूरी है, तो धीरज से मरना है –2
उत्तम है ये ही हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3308।।

(570) पण्डित मरण जो करे यहाँ, शतकों मिटते जन्म यहाँ –2
कहते हैं गुरुदेव यहाँ–ऽऽ
मरना है तो ऐसे मर, हो जाये तू यहाँ अमर –2
तब ही ये मरण हो–3 सुमरण कहलाये रे–ऽऽ।।।।3309।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(571) निर्भय होता श्रमण यहाँ, करता पण्डित मरण यहाँ –2
बनकर तारण तरण यहाँ–ऽऽ
बार–बार का मरण खतम, नतंबार का मरन खतम –2
ऐसे श्रमणों में हो–3 निजधर्म दिखाये रे–ऽऽ।।3310।।

(572) दोषों का नित ध्यान रखे, छोटे दोष बड़े समझे –2
सावधान वो सदा रहे–ऽऽ
देह से लाभ दिखाई न दे, ज्ञान से तन को हि त्याग दे –2
गुण को सुरक्षित हो–3 हरदम रख जाये रे–ऽऽ।।3311।।

(573) संयम तप क्षति नहीं जहाँ, भोजन को नहिं तजे वहाँ –2
पूर्णरूप से कहा यहाँ–ऽऽ
फिर भी वह मरना चाहे, तो मुनित्व से विरत यहाँ –2
उसको ये धर्म हो–3 नहिं समझ में आये रे–ऽऽ।।3312।।

(574) दो प्रकार सल्लेखना है, एक अंतर इक बाहर है –2
दोनों ही आवश्यक है–ऽऽ
कषाय कृश अंतर की है, कृश करना बाहर की है –2
साधु दोनों को हो–3 निज में अपनाये रे–ऽऽ।।3313।।

(575) सल्लेखन रत साधु यहाँ, कषाय को कृश करे यहाँ –2
आहार को कम करे यहाँ–ऽऽ
यदि वह साधु रोगी है, क्षीण बहुत तन हुआ यहाँ –2
सारे आहार को हो–3 वह तज जाये रे–ऽऽ।।3314।।

(576) नहीं चटाई पर मन हो, नहीं घास पर ही मन हो –2
जिसका मन अति विशुद्ध हो–ऽऽ
रहे वही निज आतम में, रहता वही समाधि में –2
उसकी समाधि हो–3 उत्तम कहलाये रे–ऽऽ।।3315।।

(577) शस्त्र भूत विष – सर्व यहाँ, दुख नहिं उतना करें यहाँ –2
जितना मिथ्या करें यहाँ–ऽऽ
शल्य निदान बोधि बाधक, कहते हैं ज्ञानी साधक –2
उसके इस भव का हो–3 नहिं अंत हो पाये रे–ऽऽ।।3316।।

(578) मिथ्या माया शल्य यहाँ, बोधि दुर्लभ करे यहाँ –2
भव अनंत भी करे यहाँ–ऽऽ
ये अनिष्ट आचारी हैं, सबको ही दुखकारी हैं –2
जैसे भी होवे हो–3 बस इसे हटाओ रे–ऽऽ।।3317।।

(579) मिथ्यादर्शन शल्य यहाँ, माया निदान शल्य यहाँ –2
जन्म–मरण दे खूब यहाँ–ऽऽ
पुनर्जन्म नहिं पाना है, तो अभिमान हटाना है –2
वर्ना ये शल्य हो–3 भव में भटकाये रे–ऽऽ।।3318।।

(580) मिथ्या से अनुरक्त यहाँ, करता रहा निदान यहाँ –2
कृष्ण लेश्या सहित यहाँ–ऽऽ
कई बार है किया मरण, कभी न किया समाधि मरण –2
उनको ही बोधि हो–3 दुर्लभ बतलायें रे–ऽऽ।।3319।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(581) सम्यग्दर्शन अनुरागी, निदान शल्य के जो त्यागी –2
शुक्ल लेश्या के पागी–ऽऽ
ध्यान किये जो करे मरण, बोधि सुलभ उनको पावन –2
उनका ही जीवन हो–3 भव सफल बतायें रे–ऽऽ।।3320।।

(582) मरणकाल जब आये यहाँ, चाहे बोधि सिद्धि यहाँ –2
अनुष्ठान वो करे यहाँ–ऽऽ
सल्लेखन अभ्यास करे, सम्यक् का आभास करे –2
तब ही सुखपूर्वक हो–3 सुमरण हो पाये रे–ऽऽ।।3321।।

(583) राजपुत्र जब राज्य करे, नित्य शस्त्र अभ्यास करे –2
तभी हमेशा दक्ष रहे–ऽऽ
विजय युद्ध में पाता वो, सहज जीतकर आता वो –2
अभ्यास से ही हो–3 वो जीत के आये रे–ऽऽ।।3322।।

(584) सम्यकमय जो त्याग करे, राग–द्वेष नहिं कोई करे
नित्य ध्यान अभ्यास करे–ऽऽ
चित्र उसी का वश में हो, वही समाधि समर्थ हो
मन में संक्लेश हो–3 नहिं उसमें आये रे–ऽऽ।।3323।।

(585) मोक्षमार्ग में लग जा तू, स्थापित कर ले खुद को तू –2
ध्यान में रम ले जल्दी तू–ऽऽ
उसका ही तू अनुभव कर, उसमें ही तू विचरण कर –2
इच्छाएँ तजकर हो–3 निज में रम जाओ रे–ऽऽ।।3324।।

(586) इह–परलोक न सुख चाहे, मरणकाल समता चाहे –2
जीना मरना न चाहे–ऽऽ
सारी इच्छा त्याग करे, अंतिम पल तक ध्यान धरे –2
शुभ शुभ भावों के हो–3 नित भाव बनाये रे–ऽऽ।।3325।।

(587) परद्रव्य देहादिक में, राग हो परिवारादिक में –2
वो पड़ता है दुर्गति में–ऽऽ
निज आत्मा में लीन रहे, उसे सुगति ये गुरु कहे –2
ऐसा तुम जान हो–3 निज रमण बनाओ रे–ऽऽ।।3326।।

(58) अज्ञानी सब दुखी यहाँ, करते दुख उत्पन्न यहाँ
सुख नहिं उनको यहाँ–वहाँ–ऽऽ
है अनंत संसार यहाँ, मति मूढ़ी दुख सहे यहाँ –2
जन्में–मर जायें हो–3 सुख लेश न पाये रे–ऽऽ।।3327।।

(589) ज्ञानी करे समीक्षा को, जन्म मरण क्यूँ मेरा हो –2
स्त्री पुत्रादिक बंधन जो–ऽऽ
स्वयं सत्य की खोज करे, सबसे मैत्री भाव धरे –2
तब ही सच क्या है हो–3 ये समझ में आये रे–ऽऽ।।3328।।

(590) तत्त्व कहो परमार्थ कहो, द्रव्य स्वभाव व शुद्ध कहो –2
परम पर–अपर ध्येय कहो–ऽऽ
ये एकार्थवाच्य समझो, शब्दों से ही ज्ञान अहो –2
जाने बस वो ही हो–3 तत्त्वज्ञ कहाये रे–ऽऽ।।3329।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(591) जीव–अजीव समझ लेना, आश्रव बंध जान लेना –2
पुण्य–पाप को लख लेना–ऽऽ
संवर–निर्जर मोक्ष यहाँ तत्त्व–पदार्थ जान लेना –2
ये ही सम्यक् के हो–3 सद्बीज बताये रे–ऽऽ।।3330।।

(592) जीव का लक्षण उपयोग, अनादि निधन है संयोग –2
तन से भिन्न परम योग–ऽऽ
कर्म का कर्ता भोक्ता है, अरस अगंध अरूपी है–2
ये सब जीव का हो–3 निज रूप बताये रे–ऽऽ।।3331।।

(593) सुख–दुख का नहिं ज्ञान यहाँ, अहित से भय नहिं जिसे यहाँ –2
हित में उद्यम नहीं जहाँ–ऽऽ
उसको श्रमण अजीव कहें, जीव के लक्षण नहीं जहाँ –2
जीव सुख चाहे हो–3 दुख दूर हटाये रे–ऽऽ।।3332।।

(594) पाँच प्रकार अजीव कहा, पुद्गल धर्म अधर्म अहा –2
काल और आकाश कहा–ऽऽ
इनमें पुद्गल मूर्तिक है, बाकी सभी अमूर्तिक हैं
ऐसा जो जाने हो–3 वह ज्ञान बढ़ाये रे–ऽऽ।।3333।।

(595) जीव अमूर्तिक होता है, इन्द्रिय ग्राह्य न होता है–2
नित्य अमूर्तिक होता है–ऽऽ
रागादिक जो भाव यहाँ, ये ही बंध के हेतु यहाँ –2
इनसे संसार हो–3 निर्मित हो जाये रे–ऽऽ।।3334।।

(596) राग सहित विधि बंध करे, राग रहित विधि मुक्त करे –2
कर्मबंध का हेतु कहें–ऽऽ
निश्चय से ये बात कही, सबसे कम शब्दों में कही –2
राग बिन भव में हो–3 नहिं कर्म बंधाये रे–ऽऽ।।3335।।

(597) मोक्ष अभिलाषी भविक यहाँ, राग–द्वेष नहिं करे यहाँ –2
वीतरागता लखे यहाँ–ऽऽ
होता वीतरागमय जो, भवसागर तिर जाता वो –2
तब ही अभिलाषा हो–3 पूरी हो पाये रे–ऽऽ।।3336।।

(598) दो प्रकार का कर्म कहा, एक पुण्य एक पाप कहा –2
पुण्य रूप शुभ भाव कहा–ऽऽ
अशुभ भाव अघरूप कहा, मन्द कषायी स्वच्छ अहा –2
दोनों ही कर्म हो–3 सबमें नजरायें रे–ऽऽ।।3337।।

(599) प्रिय वचन हरदम बोलो, क्षमा हृदय अपने घोलो –2
बोलो सोच समझ बोलो–ऽऽ
गुण को ग्रहण करो हरदम, ये ही हैं गुरुदेव वचन –2
मन्द कषायी हो–3 के चिह्न बतायें रे–ऽऽ।।3338।।

(600) करे प्रशंसा अपनी जो, दोष कहे पूज्यों में जो –2
ऐसा जिसका स्वभाव हो–ऽऽ
गाँठ बैर की बाँधे जो, तीव्र कषायी जानो वो –2
उसकी दुर्गति हो हो–3 ये ऋषि बतायें रे–ऽऽ।।3339।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(601) राग–द्वेष से प्रमत्त हो, इन्द्रिय के आधीन है जो –2
आस्रव द्वार खुले नित हों–ऽऽ
वही निरंतर कर्म करे, कर्मों का नित बंध करे –2
कर्मों के आस्रव हो–3 वो रोक न पाये रे–ऽऽ।।3340।।

(602) हिंसा आदिक पाप यहाँ, आस्रव के हैं द्वार यहाँ –2
कर्म बँधाते रहें यहाँ–ऽऽ
नौका में है छिद्र अगर, डूब जाये नौका सरवर–2
वैसे ही आस्रव हो–3 भव भव में डुबोये रे–ऽऽ।।3341

(603) मन वच काय त्रियोग यहाँ, आस्रव के त्रय द्वार यहाँ –2
जैसा हो परिणाम यहाँ–ऽऽ
आत्मप्रदेश परिस्पंदन, योग कहें इसको ऋषिजन –2
योग ही सारे हो–3 कर्मों को लाये रे–ऽऽ।।3342।।

(604) जैसे जैसे योग हो कम, वैसे आस्रव बंध हो कम –2
कहते हैं ऐसा भगवन–ऽऽ
योग निरोध हो जैसे ही, बंध न हो फिर वैसे ही –2
छिद्र बिन पोत हो–3 में जल नहिं जाये रे–ऽऽ।।3343।।

(605) अविरति और मिथ्यात्व यहाँ, कषायुत और योग यहाँ –2
आस्रव के हैं हेतु यहाँ–ऽऽ
संयम विराग ज्ञान यहाँ, दर्शन योग अभाव यहाँ –2
संवर के हेतु हो–3 गुरुदेव बतायें रे–ऽऽ।।3344।।

(606) मिथ्यात्वादिक दूर ज्यों हों, आस्रव बंध न उसको हों –2
भव में कर्ममुक्त वो हो–ऽऽ
संवर तब ही आ पाये, कर्म निर्जरा हो जाये–2
तब ही जीवन में हो–3 कुछ सार दिखाये रे–ऽऽ।।3345।।

(607) सबको देखे आत्म समां, खुद को देखे प्रभु समां –2
उसमें आस्रव रहें कहाँ–ऽऽ
कर्मास्रव सब बंद हुये, कर्मों का फिर बंध कहाँ –2
संयम के द्वारा हो–3 संभव हो पाये रे–ऽऽ।।3346।।

(608) मुमुक्षुरागी जीव यहाँ, पाता है सम्यक्त्व यहाँ –2
रोके मिथ्या द्वार यहाँ–ऽऽ
दृढ़ व्रत निज में आचरता, हिंसा पापों को तजता –2
तब ही कर्मों का हो–3 आस्रव रुक पाये रे–ऽऽ।।3347।।

(609) भरा है जल तालाब यहाँ, जल का पथ कर बंद यहाँ –2
फेंके बाहर जल यहाँ–ऽऽ
सूर्य प्रताप सुखाता है, तब वह सूखने पाता है–2
जल सूख जाये हो–3 सरवर मिट जाये रे–ऽऽ।।3348।।

(610) कई भवों के कर्म यहाँ, संचित मुझमें हुये यहाँ –2
रोकें उनको अगर यहाँ–ऽऽ
तप से कर्म झरा दें सब, कर्म सरोवर सूखे तब–2
कर्म मिट जायें तो हो–3 सुख पा जाये रे–ऽऽ।।3349।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(611) जो केवल तप करता है, संवर को नहिं करता है –2
मोक्ष उसे नहिं मिलता है–ऽऽ
स्रोत न पानी का रोके, तो तालाब नहीं सूखे –2
जिन के वचनों पर हो–3 तुम विचार लाओ रे–ऽऽ।।3350।।

(612) कोटि जन्म तप यहाँ धरे, अज्ञानी तप घोर करे –2
जितने कर्म विनाश करें–ऽऽ
ज्ञानी उतने कर्म यहाँ, क्षण में ही क्षय यहाँ करें –2
ज्ञानयुत तप हो हो–3 वो कर्म खपाये रे–ऽऽ।।3351।।

(613) सेनापति जब मर जाये, सारी सेना घबराये –2
सेना खुद ही मर जाये–ऽऽ
मोहनीय मर जाने पर, कर्म हि सारे मर जायें –2
मोह कर्मों का हो–3 राजा कहलाये रे–ऽऽ।।3352।।

(614) कर्म से मुक्त हो जाता है, लोक अंत तक जाता है –2
वो सर्वज्ञ कहाता है–ऽऽ
सुख अनंत वह पाता है, अतीन्द्रिय हो जाता है –2
अंतस का वैभव हो–3 तब ही नजराये रे–ऽऽ।।3353।।

(615) चक्रवर्ती को जितना सुख, भोगभूमि में जितना सुख–2
अहमिद्रों को ज्यादा सुख–ऽऽ
इससे अनंत गुना जानो, सिद्धों का क्षण सुख जानो –2
सिद्धों जैसा सुख हो–3 कहीं कोई न पाये रे–ऽऽ।।3354।।

(616) मोक्ष अवस्था परम कहें, शब्दों से कह नहीं सकें –2
तर्क जहाँ दे नहीं सकें–ऽऽ
सब संकल्प विकल्प रहित, मलकलंक सब राग रहित –2
सुख ही सुख जानो हो–3 वह मोक्ष बतायें रे–ऽऽ।।3355।।

(617) रंच नहीं है दुक्ख जहाँ, पीड़ा का नहिं लेश जहाँ –2
जन्म नहीं है मरण वहाँ–ऽऽ
कोई जहाँ न बाधा है, इन्द्रिय सुख नहिं रहे वहाँ –2
उसको ही जग में हो–3 निर्वाण बतायें रे–ऽऽ।।3356।।

(618) इन्द्रिय का व्यापार नहीं, कोई भी उपसर्ग नहीं –2
मोह व निद्रा रंच नहीं–ऽऽ
विस्मय, तृष्णा नहीं वहाँ, भूख न मन व्यापार वहाँ –2
उसको ही श्रुत में हो–3 निर्वाण बतायें रे–ऽऽ।।3357।।

(619) कर्म नहीं हैं कोई वहाँ, रंच नहीं नोकर्म वहाँ –2
चिंतन–चिंता नहीं वहाँ–ऽऽ
आर्त्त रौद्र नहिं ध्यान कोई, धर्म–शुक्ल नहिं ध्यान वहाँ –2
उसको ही गुरुवर हो–3 निर्वाण बतायें रे–ऽऽ।।3358।।

(620) केवल दर्शन ज्ञान वहाँ, केवल सुख व वीर्य जहाँ –2
अरूपता–अस्तित्व वहाँ–ऽऽ
अष्ट अनंत है गुणधारी, सर्वगुणों के अधिकारी
ये सब गुण उनको हो–3 सब सिद्ध बताये रे–ऽऽ।।3359।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(621) जिसे महर्षि पाते हैं, और न कोई चाहते हैं –2
उसे मोक्ष हम कहते हैं–ऽऽ
जो अबाध है सिद्धि है, शिव है क्षेम प्रसिद्धि है –2
जिसको पाने पर हो–3 बाधायें जायें रे–ऽऽ।।3360।।

(622) अग्नि शिखा की गति ऊपर, बीज एरण्ड उठे ऊपर –2
तुंबी जल तैरे ऊपर–ऽऽ
शुद्ध जीव भी वैसे ही, स्वभावत: जाता ऊपर –2
गुरुवर हम सबको हो–3 श्रुत में बतलायें रे–ऽऽ।।3361।।

(623) अव्याबाध अतीन्द्रिय है, पुण्य पाप से रहित जो है –2
पुन: आगमन के बिन है–ऽऽ
नित्य अचल है अनुपम है, कोई नहीं आलम्बन है –2
परमातम तत्त्व हो–3 ऐसा बतलायें रे–ऽऽ।।3362।।

(624) धर्म–अधर्माकाश रहे, जीव और पुद्गल यहाँ रहे –2
काल सभी का समय कहे–ऽऽ
छह द्रव्यों का लोक है ये, इनके अलावा कुछ न रहे –2
सर्वदर्शी ने हो–3 ये बात बताई रे–ऽऽ।।3363।।

(625) पुद्गल धर्म अधर्म यहाँ, काल और आकाश यहाँ –2
इनमें ज्ञान न दर्श यहाँ–ऽऽ
तभी इन्हें अजीव कहा, चेतनता गुण नहीं अहा –2
जिनवर ने सबको हो–3 ये बात बताई रे–ऽऽ।।3364।।

(626) धर्म–अधर्म व काल यहाँ, जीव और आकाश यहाँ –2
पंच अमूर्तिक कहे यहाँ–ऽऽ
पुद्गल द्रव्य कहा मूर्तिक, जीव ही चेतन द्रव्य यहाँ –2
बाकी के सारे हो–3 चेतन न बताये रे–ऽऽ।।3365।।

(627) जीव व पुद्गल सक्रिय हैं, शेष चार वो निष्क्रिय हैं –2
जीव कर्म से सक्रिय हैं–ऽऽ
पुद्गल का सक्रिय साधन, काल द्रव्य कहते भगवन्–2
ऐसा जो जाने हो–3 वह स्वयं को जाने रे–ऽऽ।।3366।।

(628) धर्म अधर्म आकाश कहे – तीनों एक ही एक रहे –2
एक हैं मगर अखण्ड रहे–ऽऽ
जीव काल और पुद्गल यें तीनों द्रव्य अनंत कहे –2
ऐसा जानेगा हो–3 वो ज्ञान बढ़ाये रे–ऽऽ।।3367।।

(629) धर्म अधर्म दो द्रव्य यहाँ, दोनों लोक प्रमाण यहाँ –2
नभ है लोक–अलोक यहाँ–ऽऽ
काल द्रव्य व्यवहार यहाँ, मनुज क्षेत्र में रहे यहाँ–2
अन्य क्षेत्रों में हो–3 नहिं काल बताये रे–ऽऽ।।3368।।

(630) छहों द्रव्य इस लोक में हैं, आपस में सब स्थित हैं –2
अलग–अलग नहिं रहते हैं–ऽऽ
मिले अनादिकाल यहाँ, निज स्वभाव में रहे यहाँ –2
अपना स्वभाव हो–3 तज कभी न पायें रे–ऽऽ।।3369।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(631) धर्मास्तिकाय है शब्द रहित, रूप रहित है गंध रहित –2
रस बिन है स्पर्श रहित–ऽऽ
लोकाकाश में व्याप्त यहाँ, विशाल और अखण्ड यहाँ
असंख्यात प्रदेशी हो–3 ये द्रव्य बतायें रे–ऽऽ।।3370।।

(632) मछली जल में गमन करे, धर्म द्रव्य निमित्त बने –2
धर्मद्रव्य बिन न चल सके–ऽऽ
जीव पुद्गलों को वैसे, चलें तो यही निमित्त बने –2
सबको गतिमान यह हो–3 द्रव्य बनाये रे–ऽऽ।।3371।।

(633) धर्मद्रव्य खुद नहीं चले, न किसीको वह चलवाये –2
चले जो उसे निमित्त बने–ऽऽ
जीव व पुद्गल तभी चले, उदासीन यह हेतु बने –2
धर्मास्तिकाय हो–3 लक्षण बतलाये रे–ऽऽ।।3372।।

(634) जीव व पुद्गल जभी रुकें, द्रव्य अधर्म सहाय बनें –2
इसके बिन नहिं ठहर सकें–ऽऽ
जैसे पृथ्वी स्थिर होती, वैसे सभी वस्तु होतीं –2
द्रव्य को जानो हो–3 जो ज्ञान दिलाये रे–ऽऽ।।3373।।

(635) सबको देता अवगाहन, अमूर्त व्यापक है लक्षण –2
वो आकाश न है चेतन–ऽऽ
लोक–अलोक हैं भेद यहाँ, दोनों ही आकाश यहाँ –2
सारे ही द्रव्य हो–3 जिसमें नजरायें रे–ऽऽ।।3374।।

(636) जीव–अजीव भरे जिसमें, उसको लोक कहा जिन ने –2
द्रव्य छहों रहते उसमें–ऽऽ
एक द्रव्य रहता है जहाँ, कहते उसे अलोक यहाँ –2
उसमें आकाश हो–3 केवल नजराये रे–ऽऽ।।3375।।

(637) रूप–गंध–स्पर्श रहित, अगुरु–लघु गुण रहे सहित –2
रस गुण से भी रहे रहित–ऽऽ
वर्तना लक्षण है जिसमें, कालद्रव्य वो कहते हैं –2
इसके बिन रात हो–3 दिन नहीं बताये रे–ऽऽ।।3376।।

(638) जीव व पुद्गल रहें यहाँ, हों परिवर्तन नित्य यहाँ –2
काल द्रव्य से रहें यहाँ–ऽऽ
जब भी ये परिणमन करें, काल द्रव्य तब निमित्त बने –2
निश्चय काल ही हो–3 श्रुत में कहलाये रे–ऽऽ।।3377।।

(639) समय बताता सभी यहाँ, वर्ष माह दिन रात यहाँ –2
आवलि और उच्छ्वास यहाँ–ऽऽ
काल यही व्यवहार कहा, जिनवर ने ये यहाँ कहा –2
जानो और मानो हो–3 तब समझ में आये रे–ऽऽ।।3378।।

(640) पुद्गल के दो भेद कहे, अणुमय और स्कन्ध रहे –2
भेद हैं स्कन्ध कहे–ऽऽ
अणु के भी दो भेद कहे, कार्य हेतु परमाणु कहे –2
इनको जाने बिन हो–3 कुछ समझ न आये रे–ऽऽ।।3379।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(641) अतिस्थूल स्थूल जानो, स्थूल सूक्ष्म को पहचानो –2
सूक्ष्मस्थूल सूक्ष्म जानो–ऽऽ
सूक्ष्म अतिसूक्ष्म कहा अंतिम, भेद ये छह पुद्गल जानो –2
पृथ्वी आदिक ये हो–3 दृष्टांत बतायें रे–ऽऽ।।3380।।

(642) पृथ्वी अतिस्थूल यहाँ, जल कहते हैं स्थूल यहाँ –2
छाया स्थूल सूक्ष्म यहाँ–ऽऽ
रस–गंध–स्पर्श सूक्ष्मस्थूल, समझो कार्मण सूक्ष्म यहाँ
अणु को अतिसूक्ष्म हो–3 जिनदेव बतायें रे–ऽऽ।।3381।।

(643) आदि–मध्य और अंत रहित, अणु है एक प्रदेश सहित –2
दो प्रदेश से रहे रहित–ऽऽ
इन्द्रिय जिसे न ग्रहण करें, जिसके टुकड़े न बन सकें –2
उसको परमाणु हो–3 गुरुदेव बतायें रे–ऽऽ।।3382।।

(644) बनकर मिटना फिर बनना, टूट–टूटकर फिर जुड़ना –2
पुद्गल उसे समझ लेना–ऽऽ
गन्ध वर्ण रस है जिसमें, उसे यहाँ परमाणु कहें –2
ऐसा परमाणु हो–3 पुद्गल कहलाये रे–ऽऽ।।3383।।

(645) चार प्राण से जीता जो, भविष्य में जीवेगा जो –2
अतीत में भी जिया है जो–ऽऽ
इन्द्रिय बल आयु उच्छ्वास, चार प्राण हैं कर विश्वास –2
उसको ही भव में हो–3 गुरु जीव बतायें रे–ऽऽ।।3384।।

(646) समुद्घात को छोड़ यहाँ, छोटा बड़ा शरीर यहाँ–2
संकोच विस्तार शक्ति यहाँ–ऽऽ
तन आकार जीव होता, असंख्य प्रदेशी भी होता–2
व्यवहार निश्चय हो–3 दोनों से जानो रे–ऽऽ।।3385।।

(647) दूध में मणि को डालें हम, दूध प्रभा से हो चमचम –2
बाह्य वस्तु नहिं हो चमचम–ऽऽ
शरीर में ज्यों जीव यहाँ, रहे प्रभासित करे यहाँ –2
तन के बाहर वो हो–3 नहिं असर दिखाये रे–ऽऽ।।3386।।

(648) ज्ञान प्रमाण कही आतम, ज्ञेय प्रमाण है ज्ञान परम –2
ज्ञेय है लोकालोक शुभम्–ऽऽ
ज्ञान सर्वव्यापी जानो, आत्म सर्वव्यापी मानो–2
ज्ञानी को ये सब हो–3 खुद समझ में आये रे–ऽऽ।।3387।।

(649) दो प्रकार के जीव यहाँ, संसारी और मुक्त यहाँ –2
चेतन लक्षण रूप यहाँ–ऽऽ
तन से सहित हैं संसारी, मुक्त जीव हैं अशरीरी–2
उपयोग लक्षण हो–3 सबका बतलायें रे–ऽऽ।।3388।।

(650) संसारी द्वय भेद यहाँ, त्रस स्थावर कहे यहाँ –2
एक इन्द्रिय स्थावर यहाँ–ऽऽ
दो से पंचेन्द्रिय कहे वे, सब हैं त्रस जीव यहाँ –2
त्रस वा स्थावर हो–3 भव रूप बतायें रे–ऽऽ।।3389।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(651) लोक अनादि निधन कहा स्वाभाविक है बना हुआ –2
अकृत्रिम सम्पूर्ण कहा–ऽऽ
छः द्रव्यों से व्याप्त यहाँ, सभी द्रव्य हैं नित्य यहाँ –2
आकाश पूर्ण हो–3 इक द्रव्य बताये रे–ऽऽ।।3390।।

(652) परमाणु एक प्रदेशी है, दो त्रय नहीं प्रदेशी है –2
शब्द रूप भी वो नहिं है–ऽऽ
रूक्ष स्निग्ध हैं गुण उसमें, मिले बिछुडने गुण उसमें –2
अणु ही स्कंध हो–3 का रूप बनाये रे–ऽऽ।।3391।।

(653) बादर सूक्ष्म स्कंध सभी, करते हैं परिणमन सभी –2
जिससे पृथ्वी जल अग्नि–ऽऽ
इनके होते रूप कई, कहते हैं गुरुदेव सभी–2
सब ही स्कंध हो–3 परमाणु बनाये रे–ऽऽ।।3392।।

(654) बादर सूक्ष्म स्कन्धों से, भरा ठसाठास जग उनसे –2
खाली नहिं ये जग उनसे–ऽऽ
कुछ पुद्गल हैं कर्म बनें, कुछ पुद्गल नहिं कर्म बनें –2
लोक में सब ही हो–3 पुद्गल नजराये रे–ऽऽ।।3393।।

(655) राग–द्वेष परिणाम मिलें, तो पुद्गल ये कर्म बनें –2
कर्मयोग्य जो अणु रहें–ऽऽ
जीव न कर्म बनाता है, कर्म स्वयं बन जाता है –2
जीव जब राग हो–3 परिणाम बनाये रे–ऽऽ।।3394।।

(656) राग–द्वेष के भाव करे, इन्द्रिय विषय जो ग्रहण करें –2
पदार्थ को जाने–देखें–ऽऽ
सत्यभाव नहिं लखता है, नये कर्म से बँधता है –2
वस्तु में राग हो–3 वह करता जाये रे–ऽऽ।।3395।।

(657) कर्मयोग्य पुद्गल जग में, सभी जगह में रहते हैं –2
सर्व आकाश प्रदेशों में–ऽऽ
बनकर वे ही कर्म यहाँ, आत्मप्रदेश से बँधे यहाँ –2
कर्म जीव को हो–3 भव में भटकायें रे–ऽऽ।।3396।।

(658) अच्छे–बुरे जो कर्म करे, सुख–दुख रूपी भाव करे
वैसे उसके कर्म बनें–ऽऽ
कर्म जीव उपजाता है, वो परभव ले जाता है –2
कर्मों के कारण हो–3 सुख–दुख वह पाये रे–ऽऽ।।3397।।

(659) कर्मबंध जो किये यहाँ, उनके फल से मिले यहाँ–2
नया शरीर जो बने यहाँ–ऽऽ
पाकर नया शरीर वहाँ, नये कर्म फिर करे यहाँ–2
ऐसी संतति से हो–3 भव भ्रमण कराये रे–ऽऽ।।3398।।

(660) जिसके बिन नहिं समझ सके, लोक का नहिं व्यवहार चले –2
बात–चीत नहिं शब्द रहे–ऽऽ
अनेकांतमय धर्म है वो, विश्व में एक गुरु है जो –2
इसको जाने बिन हो–3 सच समझ न आये रे –ऽऽ।।3399।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(661) गुण का आश्रय द्रव्य यहाँ, द्रव्य के आश्रय गुण यहाँ –2
द्रव्य बिना गुण रहें कहाँ–ऽऽ
द्रव्य व गुण द्वय के आश्रय, पर्यायें सब रहें यहाँ–2
ऐसा जो जाने हो–3 वो ज्ञान बढ़ाये रे–ऽऽ।।3400।।

(662) पर्यय के बिन द्रव्य नहीं, द्रव्य बिना पर्याय नहीं –2
द्रव–ध्रुव–जनि–व्यय रहे यहीं–ऽऽ
तीनों जिसमें रहें सदा, उसको लक्षण द्रव्य कहा –2
द्रव्य की ये ही हो–3 पहचान बताये रे–ऽऽ।।3401।।

(663) व्यय के बिन उत्पाद नहीं, बिन उत्पाद हो व्यय नहीं –2
दोनों हों बिन ध्रौव्य नहीं–ऽऽ
ध्रौव्य और उत्पाद व्यय, तीनों लक्षण वाला द्रव्य –2
द्रव्य जाने बिन हो–3 कोई ज्ञान न पाये रे–ऽऽ।।3402।।

(664) स्थिति–उत्पत्ति विनाश यहाँ, द्रव्य में होते नहीं यहाँ –2
पर्यायों में रहें यहाँ–ऽऽ
पर्यायें सब द्रव्य में हों, परिवर्तन भी द्रव्य में हों –2
तीनों ही द्रव्य हो–3 में ही नजरायें रे–ऽऽ।।3403।।

(665) ध्रुव उत्पाद व व्यय होते, तीनों एक साथ होते –2
एक समय में ही होते–ऽऽ
द्रव्य में तीनों होते हैं, तीनों ही द्रव होते हैं–2
इनसे वह द्रव्य हो–3 नहिं भिन्न बतायें रे–ऽऽ।।3404।।

(666) इक पर्याय नष्ट होती, इक पर्याय यहाँ बनती –2
द्रव्य अवस्था ध्रुव रहती–ऽऽ
द्रव्य नष्ट नहिं होता है, और न पैदा होता है
द्रव्य है शाश्वत हो–3 गुरुदेव बतायें रे–ऽऽ।।3405।।

(667) जन्म से मृत्यु तक रहते, उसको पुरुष यहाँ कहते –2
है व्यवहार ये सब कहते–ऽऽ
बचपन–युवा–बुढ़ापा हो, ये सब ही पर्याय कहो –2
वैसे ही द्रव्य हो–3 पर्याय बतायें रे–ऽऽ।।3406।।

(668) दीर्घकाल तक बनी रहे, वो पर्यय सामान्य कहें –2
द्रव में एक समान रहे–ऽऽ
जो पर्याय विसदृश हैं, उनको यहाँ विशेष कहें
वस्तु से दोनों हो–3 नहिं भिन्न बताये रे–ऽऽ।।3407।।

(669) हो सामान्य विशेष यहाँ, द्रव्य का होता ज्ञान यहाँ –2
जो विरोध बिन रहे यहाँ–ऽऽ
सम्यक् का यह साधक है, जो पथ में नहिं बाधक है–2
जिसमें विरोध हो–3 भव बाध्य बतायें रे–ऽऽ।।3408।।

(670) एक पुरुष हो पिता यहाँ, पुत्र भाई भानेज यहाँ –2
हों संबंध अनेक यहाँ–ऽऽ
सभी वस्तु में बात यही, श्रुत में ये जिनदेव कही –2
इसको आगम में हो–3 अनेकांत बताये रे–ऽऽ।।3409।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(671) निर्विकल्प सविकल्प यहाँ, दोनों में जो पुरुष यहाँ–2
निर्विकल्प उसे कहें यहाँ–ऽऽ
या सविकल्प जो कहता है, स्थिर श्रुत में नहिं रहता है –2
शास्त्रों का ज्ञान हो–3 नहिं उसे बतायें रे–ऽऽ।।3410।।

(672) जैसे दूध और पानी एकमेक कहते ज्ञानी –2
वस्तु में अनेक धर्म जानी–ऽऽ
एक धर्म उसमें कहना, अन्य नहीं ऐसा कहना –2
ऐसा विभाग हो–3 नहिं उचित बताये रे–ऽऽ।।3411।।

(673) सूत्र–भाव का अर्थ करे, साधु न शंका गर्व करे–2
सत्य व अनुभय वचन कहे–ऽऽ
धनी या निर्धन कोइ रहे, समानता व्यवहार करे –2
स्याद्वाद वचन हो–3 सब ही उच्चारें रे–ऽऽ।।3412।।

(674) भ्रम संशय विपरीत न हो, उसको सम्यग्ज्ञान कहो –2
निश्चय वस्तु यथार्थ अहो–ऽऽ
ये जग में साकार कहा, कई भेद से इसे कहा –2
ऐसा ही ज्ञान हो–3 सच बात बताये रे–ऽऽ।।3413।।

(675) मति ज्ञान श्रुत ज्ञान यहाँ, अवधि मन:पर्यय यहाँ–2
पंचम केवल ज्ञान यहाँ–ऽऽ
सम्यक् पाँचों ज्ञान कहे, इनको पाकर मोक्ष लहे –2
ज्ञान जीवन का हो–3 गुरु सार बताये रे–ऽऽ।।3414।।

(676) पाँच ज्ञान जो कहे यहाँ, चार हैं क्षायोपशमिक यहाँ–2
क्षायिक केवलज्ञान यहाँ–ऽऽ
चार अपूर्ण कहे श्रुत में केवल पूर्ण कहा श्रुत में –2
ऐसा जो जाने हो–3 श्रद्धान बढ़ाये रे–ऽऽ।।3415।।

(677) ईहा और अपोह यहाँ, संज्ञा शक्ति मति यहाँ –2
गवेषणा मार्गणा यहाँ–ऽऽ
मीमांसा प्रज्ञा कह लो, मतिज्ञान के नाम यहाँ –2
ऐसा तुम जान हो–3 मति शुद्ध बनाओ रे–ऽऽ।।3416।।

(678) शब्द वचन को समझ यहाँ, अर्थ ग्रहण जो करे यहाँ –2
उस पर चिंतन करे यहाँ–ऽऽ
उसे कहा श्रुतज्ञान यहाँ, मतिज्ञान के बाद यहाँ–2
ये ही श्रुतज्ञान हो–3 सब ज्ञान कराये रे–ऽऽ।।3417।।

(679) इन्द्रिय मन अवलम्बन हो, उस पर सुंदर चिंतन हो –2
उसे यहाँ श्रुतज्ञान कहो–ऽऽ
मतिज्ञान खुद को जाने, श्रुतज्ञान सबको जाने–2।।
दोनों ही ज्ञान हो–3 भव में सब पायें रे–ऽऽ।।3418।।

(680) मतिज्ञान श्रुतज्ञान रहित, श्रुतज्ञान मतिज्ञान सहित –2
अंतर द्वय में वही निहित–ऽऽ
बिन मति के श्रुत ज्ञान न हो, मन बिन चिंतन कहीं न हो –2
ज्ञानी श्रुतज्ञान हो–3 से ज्ञान बढ़ाये रे–ऽऽ।।3419।।

श्रमणों के शुभ सूत्र हमें, गुरु बताएँ रे–2
सूत्रों की महिमा हो–3 हमको समझाएँ रे–ऽऽ

(681) मर्यादा को यहाँ लिए, द्रव्य क्षेत्र काल भाव लिए –2
रूपी का जो ज्ञान लिए–ऽऽ
उसको अवधिज्ञान कहें, अथवा सीमा ज्ञान कहें –2
इसके दो भेद हो–3 श्रुत में बतलाये रे–ऽऽ।।3420।।

(682) मन में कई विचार चलें, चिंतित–अर्द्ध विचिन्त्य रहें –2
या फिर कोई अचित्य रहें–ऽऽ
सबके मन की जाने जो, मनपर्यय वह ज्ञान अहो –2
मुनियों को ऐसा हो–3 यह ज्ञान बताये रे–ऽऽ।।3421।।

(683) शुद्ध सकल एकाकी जो, इन्द्रिय नहीं सहायक हों –2
मल कलंक से रहित है जो–ऽऽ
जाने सब ही ज्ञेय यहाँ, केवलज्ञान अनंत यहाँ–2
केवलज्ञान सम हो–3 नहिं कोई बताये रे–ऽऽ।।3422।।

(684) लोकालोक को जाने जो, भूत भविष्यत जाने जो –2
वर्तमान सब जाने जो–ऽऽ
सबका जिसमें ज्ञान यहाँ, उसमें है अज्ञान कहाँ –2
सबमें ही उत्तम हो–3 इसको बतलाये रे–ऽऽ।।3423।।

(685) वस्तु स्वभाव को जाने जो, यथार्थता पहचाने जो –2
सम्यक रूप से जाने जो–ऽऽ
वो है ज्ञेय प्रमाण यहाँ, इसके हैं दो भेद यहाँ–2
प्रत्यक्ष–परोक्ष श्रुत में हो–3 बतलायें रे–ऽऽ।।3424।।

(686) अक्ष से होता ज्ञान यहाँ, अक्ष को इन्द्रिय कहें यहाँ–2
इससे ज्ञान प्रत्यक्ष यहाँ–ऽऽ
अवधि–मन:पर्यय केवल, तीनों हैं प्रत्यक्ष विमल –2
ये ज्ञान भव में हो–3 भव पार करायें रे–ऽऽ।।3425।।

(687) पौद्गलिक द्रव्येन्द्रिय हैं, जीव से सब ही भिन्न रहें –2
इनसे ज्ञान परोक्ष कहें–ऽऽ
धूम से हो अग्नि का ज्ञान, पर निमित्त से हो अनुमान –2
ऐसा सब ज्ञान हो–3 परोक्ष बतायें रे–ऽऽ।।3426।।

(688) पर निमित्त से जो होता, मति श्रुत ज्ञान यहाँ होता –2
तभी ये ज्ञान परोक्ष होता–ऽऽ
इन्द्रिय मन पर वस्तु से, अनुमानिक मति ज्ञान होता–2
कर्मों के कारण हो–3 ये ज्ञान बताये रे–ऽऽ।।3427।।

(689) धूम अग्नि का ज्ञान यहाँ, कहते इसे परोक्ष यहाँ –2
तीन ज्ञान प्रत्यक्ष यहाँ–ऽऽ
इन्द्रिय मन का ज्ञान यहाँ, लोक में कहा प्रसिद्ध यहाँ–2
सांव्यावहारिक हो–3 प्रत्यक्ष बताये रे–ऽऽ।।3428।।

(690) आश्रय जो श्रुतज्ञान करे, वस्तु अंश को ग्रहण करे –2
ज्ञान में कई विकल्प रहे–ऽऽ
ज्ञानी इसको कहते नय, ज्ञानी ही उसको समझे –2
ज्ञान से युक्त हो–3 ज्ञानी कहलाये रे–ऽऽ।।3429।।